बीसवीं सदी का चीन

राष्ट्रवाद और साम्यवाद

कृष्णाकान्त मिश्र

बीसवीं सदी का चीन

बीसवीं सदी का चीन

राष्ट्रवाद और साम्यवाद

कृष्णाकान्त मिश्र

पूर्व रीडर, हिंदू कॉलेज. दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

ग्रंथ शिल्पी

1960

ISBN : 81-7917-070-5

श्यामबिहारी राय द्वारा ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड, बी-7,
सरस्वती कामप्लेक्स, सुभाष चौक, लक्ष्मी नगर, दिल्ली 110 092
से प्रकाशित तथा निधि लेज़र प्वाइंट, दिल्ली 110032 से टाइप सेट
होकर नाइस प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली 110 051 में मुद्रित

विषयानुक्रम

भूमिका

बीसवीं सदी का चीन : राष्ट्रवाद और साम्यवाद शीर्षक से प्रस्तुत किया गया यह अध्ययन चीन में साम्राज्यवादी हस्तक्षेप और उसके प्रतिरोध में विकसित राष्ट्रवादी और साम्यवादी जनक्रांतियों के विश्लेषण का प्रयास है। इस विषय का अध्ययन दिल्ली विश्वविद्यालय तथा अन्य विश्वविद्यालयों के बी.ए. तथा एम.ए. स्तर के छात्र इतिहास एवं राजनीति विज्ञान के पाठ्यक्रमों के अंतर्गत करते हैं। इन छात्रों की इस पुस्तक के अध्ययन में विशेष दिलचस्पी होगी।

पहले अध्याय में चीनी राष्ट्रवाद के उदय और उसके नव-जनवादी स्वरूप की व्याख्या की गई। नव-जनवादी संकल्पना का प्रतिपादन सर्वप्रथम माओ त्सेतुंग ने किया था। माओ ने पश्चिमी लोकतंत्र और चीन के क्रांतिकारी जनवाद के मौलिक अंतर का स्पष्टीकरण किया था।

दूसरे अध्याय में पश्चिमी साम्राज्यवाद के चीन पर प्रभाव की व्याख्या की गई है। माओ के अनुसार नव-जनवादी क्रांति का उद्देश्य चीनी जनता को साम्राज्यवादी, सामंतवादी और पितृसत्तात्मक शक्तियों के शोषण और उत्पीड़न से मुक्त करना था।

तीसरे अध्याय में क्वोमिन्तांग के नेतृत्व में की गई बुर्जुआ राष्ट्रीय क्रांति का विश्लेषण है जो 1911 में संपन्न हुई। इसके द्वारा चीन में मांचुओं के छिंग राजवंश का पतन हो गया किंतु दक्षिणपंथी क्वोमिन्तांग नेतृत्व ने शीघ्र ही साम्राज्यवादी, सामंतवादी और पूंजीवादी तत्वों से समझौते कर लिए जिससे किसानों, मजदूरों और मध्यम वर्ग के उत्पीड़न में कोई कमी नहीं आई।

चौथे अध्याय में 4 मई 1919 के आंदोलन के सैद्धांतिक और व्यावहारिक पक्षों का विवेचन है। इस आंदोलन ने चीन की राजनीति में एक क्रांतिकारी मोड़ को जन्म दिया। इसके फलस्वरूप चीन के छात्र, युवा और बुद्धिजीवी पहली बार सोवियत क्रांति और समाजवादी विचारधारा के प्रति आकर्षित हुए। इस आंदोलन को एक ऐसी जटिल परिघटना के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें नए चिंतन का उत्कर्ष, साहित्यिक क्रांति, छात्र आंदोलन, श्रमिकों और व्यापारियों की हड़तालें, जापानी वस्तुओं का बहिष्कार और नए बुद्धिजीवियों की सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियां शामिल थीं।

पांचवें अध्याय में क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी के पहले संयुक्त मोर्चे के निर्माण और उसकी उपलब्धियों तथा कमजोरियों का आलोचनात्मक वर्णन है।

छठे अध्याय में कम्युनिस्ट पार्टी के विकास, प्रगति, सफलता और विफलताओं का विवरण है।

सातवें अध्याय में चीन की राष्ट्रवादी और समाजवादी पार्टियों के बीच में दूसरे संयुक्त मोरचे की स्थापना और उसके योगदान के आकलन का प्रयास किया गया है। माओ के नव-जनवाद के सिद्धांत ने जटिल परिस्थिति में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी का मार्गदर्शन किया। इसका प्रतिपादन उस समय किया गया जब च्यांग काई-शेक के दुस्साहसी कार्यों से संयुक्त मोरचे का कार्यक्रम संकट की स्थिति में आ गया था। यह कम्युनिस्ट पार्टी के वैचारिक अभियान का महत्वपूर्ण अंग था।

आठवें अध्याय में चीन में किसान क्रांति की समस्या का विश्लेषण प्रस्तुत है। सर्वप्रथम माओ ने हुनान प्रांत के किसानों की परिस्थितियों के अवलोकन के आधार पर चीन के उत्पीड़ित कृषक वर्ग की क्रांतिकारी ऊर्जा का अनुमान लगाया था। माओ के चिंतन में शहरी सर्वहारा वर्ग का समीकरण गरीब किसानों के साथ किया गया। बिलकुल यही समीकारण माओ के लिए चीन में सत्ता के लिए संघर्ष और सत्ता की प्राप्ति का आधार बन गया।

नौवें अध्याय में जापानी आक्रमण के विरुद्ध चीनी जनता के संघर्ष के चरित्र का आकलन किया गया है और जापान-विरोधी युद्ध में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व और योगदान का विवेचन प्रस्तुत है। माओ का मत था कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी अपने दृष्टिकोण को केवल एक वर्ग के हितों से बांध कर नहीं रख सकती। उनकी भावनात्मक चिंता राष्ट्र के भविष्य के बारे में होती है। वे देशभक्ति और अंतरराष्ट्रवाद के बीच में टकराव की स्थिति को स्वीकार नहीं करते। इसलिए कम्युनिस्ट पार्टी ने 1931 से 1945 तक राष्ट्रीय जनवादी क्रांति की तुलना में जापान-विरोधी संघर्ष को प्राथमिकता दी।

दसवें अध्याय में चीनी समाज के मौलिक अंतर्विरोधों का माओ के दृष्टिकोण के अनुसार, विश्लेषण किया गया है। माओ ने इनकी व्याख्या अपने दो प्रसिद्ध निबंधों 'ऑन प्रैक्टिस' और 'ऑन कंट्राडिक्शन' में की है। इन निबंधों का उद्देश्य उस वक्त चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में प्रचलित मताग्रहवाद का विरोध करना और चीन की क्रांति के लिए प्रभावी रणनीति और कार्यनीतियों का निर्धारण करना था।

ग्यारहवें अध्याय में चीनी साम्यवादी दल के शुद्धीकरण अभियानों का विवेचन किया गया है। कम्युनिस्ट पार्टी ने इन अभियानों को पार्टी की विचारधारा और रणनीति में उत्पन्न वामपंथी तथा दक्षिणपंथी विचलनों के निराकरण के लिए चलाया था।

बारहवें अध्याय में चीन के गणतंत्र की स्थापना और उसके प्रारंभिक वर्षों के इतिहास की चर्चा की गई है। 1949 में चीन के जनवादी गणतंत्र की स्थापना, 1917 की रूसी अक्टूबर क्रांति के उपरांत एक युगांतरकारी घटना थी। जनवादी गणतंत्र की दो महत्वपूर्ण उपलब्धियां थीं : (1) संपूर्ण देश का सुदृढ़ रूप से राजनीतिक एकीकरण, तथा (2) युद्ध से क्षत-विक्षत अर्थव्यवस्था का पुनर्निर्माण और आर्थिक विकास के लिए दृढ़ आधार का सृजन।

तेरहवें अध्याय में माओ त्सेतुंग की नवीन उग्रवादी नीतियों का विवेचन किया गया है जिन्हें लंबी छलांग, स्थायी अथवा अबाधित क्रांति के नाम दिए गए हैं। इनकी परिणति

चीन में जन-कम्यूनों की स्थापना में हुई। स्थायी क्रांति की त्रात्स्कीवादी और माओवादी संकल्पनाओं का अंतर भी स्पष्ट कर दिया गया है। जन-कम्यून विकेंद्रीकरण की पद्धति पर आधारित मात्र प्रशासनिक संगठन नहीं थे। वे मुख्य रूप से कृषि के क्षेत्र में समाजवाद एवं साम्यवाद की स्थापना के प्रयास थे। मार्क्स के चिंतन में कम्यून अत्यधिक विकसित राज्यविहीन और वर्गविहीन समाज के स्वैच्छिक समुदाय थे जिनकी स्थापना चीन जैसी अल्पविकसित अर्थव्यवस्था और कम्युनिस्ट पार्टी के अधिनायक तंत्र के अंतर्गत संभव नहीं थी। इसलिए माओ का यह प्रयोग असफल सिद्ध हुआ।

चौदहवें अध्याय में माओ द्वारा संचालित 'महान सांस्कृतिक क्रांति' का विवरण और विश्लेषण प्रस्तुत है। इस क्रांति का उद्देश्य चीनी समाज, संस्कृति, राजनीति और अर्थनीति में व्याप्त बुर्जुआ प्रभावों और अवशेषों के विरुद्ध संघर्ष करना था तथा पार्टी में छाए ल्यूशाओछी के नेतृत्व को चुनौती देना था। माओ ने उसे रूस के क्रुश्चेव का चीनी संस्करण घोषित किया जो चीन की कम्युनिस्ट पार्टी को 'संशोधनवाद' की दिशा मे ले जा रहा था। माओ के नेतृत्व में करोड़ों चीनी नागरिकों ने इस विप्लवी आंदोलन में भाग लिया जिसके फलस्वरूप इस काल में चीन की अर्थव्यवस्था अस्तव्यस्त हो गई। हू शैंग के अनुसार सांस्कृतिक क्रांति समाजवाद के निर्माण में विशिष्ट चीनी मार्ग में पथभ्रष्ट होने का नतीजा थी। यह एक त्रुटिपूर्ण सिद्धांत के मार्गदर्शन में एक त्रुटिपूर्ण आचरण की मिसाल थी।

पंद्रहवें अध्याय में सोवियत-चीनी संघर्ष के सैद्धांतिक और व्यावहारिक पक्षों का विश्लेषण किया गया है। चीन सोवियत संबंधों में एक नाटकीय मोड़ मार्च 1966 में आया जब चीन ने 23वीं सोवियत पार्टी कांग्रेस में भाग लेने के सोवियत निमंत्रण को ठुकरा दिया। उसके बाद से सोवियत संघ और चीन के बीच पार्टी-स्तर के सभी संबंध टूट गए। 1960 और 1970 के दशकों में इस संघर्ष ने राज्य-स्तर पर शत्रुता का रूप ग्रहण किया। इस काल में चीन ने भारत, सोवियत संघ और वियतनाम के साथ सीमा-युद्ध भी लड़े। इस चरण में दोनों 'समाजवादी विशाल राष्ट्र' भयानक वैचारिक और राजनीतिक संग्रामों में लगे रहे।

सोलहवें अर्थात अंतिम अध्याय में चीनी साम्यवाद के विशेषत: माओवादी चरण की समीक्षा प्रस्तुत की गई है। माओ के चिंतन की मौलिकता का आकलन किया गया है। उसके द्वारा प्रतिपादित नव-जनवाद की संकल्पना का विवेचन किया गया है। जनता के जनवादी अधिनायकतंत्र की अवधारणा का विश्लेषण किया गया है। माओ के संक्रमणकालीन नेतृत्व के योगदान का मूल्यांकन किया गया है। माओ द्वारा प्रस्तुत निरंतर क्रांति के सिद्धांत की व्याख्या और आलोचना प्रस्तुत की गई है। महान लंबी छलांग और सर्वहारावर्गीय सांस्कृतिक क्रांति के वैचारिक और व्यावहारिक पहलुओं पर पुनर्विचार किया गया है। विकास के द्वंद्ववाद, जनता और पार्टी के संबंध, शिक्षा, संस्कृति और क्रांति, आधुनिकीकरण और राष्ट्रीय गौरव, साम्राज्यवाद और सामाजिक साम्राज्यवाद इत्यादि विषयों पर माओवादी चिंतन और आचरण की समीक्षा की गई है।

इस पुस्तक के शीघ्र और सुरुचिपूर्ण प्रकाशन के लिए मैं 'ग्रंथ शिल्पी' का आभारी हूं। आशा है, इस पुस्तक के पूरक के रूप में सुश्री कल्पना मिश्र द्वारा लिखित (जिसका अनुवाद मैंने किया है) चीन में तंग श्याओपिंग काल के उत्तर-माओवादी चरण का वैचारिक और राजनीतिक इतिहास शीघ्र ही पाठकों को उपलब्ध हो सकेगा। आशा है, इस पुस्तक के अध्ययन से इतिहास और राजनीति विज्ञान के विद्यार्थी, शिक्षक तथा सामान्य पाठक समान रूप से लाभान्वित होंगे। इस पुस्तक के लेखन में जिन्होंने मुझे प्रेरणा दी, उनमें कुछ के नाम हैं : प्रोफेसर थान चुंग, प्रोफेसर वी.पी. दत्त, स्वर्गीय श्री ओ.पी. कौशिक, डॉ. मनोरंजन महंती, डॉ. काशी राम शर्मा, सुश्री मीरा सिन्हा, डॉ. कल्पना मिश्र एवं श्री जहूर सिद्दीकी। अंत में, मैं उन सभी छात्र-छात्राओं के प्रति आभार प्रकट करता हूं जिन्होंने 1960,

और के दशकों में फ्रांस, रूस और चीनी की जन-क्रांतियों के पाठ्यक्रम का मेरे मार्गदर्शन में अध्ययन किया और अपनी आलोचनाओं और टिप्पणियों के द्वारा मेरे ज्ञान का परिमार्जन किया।

कृष्णाकान्त मिश्र

अध्याय एक

चीनी राष्ट्रवाद और नव-जनवाद

कई हजार वर्षों से चीन की राजनीति, अर्थव्यवस्था और विचारधारा सामंतवाद पर आधारित रही थी। पश्चिमी साम्राज्यवाद के आक्रमण ने चीन में राष्ट्रवादी और लोकतांत्रिक आंदोलन को जन्म दिया। माओ त्सेतुंग का विचार था कि चीन की क्रांतिकारी प्रक्रिया के दो चरण थे : जनवादी क्रांति का चरण और समाजवादी क्रांति का चरण। नव-जनवाद चीनी शैली का लोकतंत्र है। इसकी व्याख्या माओ त्सेतुंग के चिंतन में मिलती है।

माओ का प्रारंभिक परिवेश

माओ का जन्म हुनान प्रांत के श्यांगतान जनपद के शाओशान ग्राम में 26 दिसंबर 1893 को हुआ। एडगर स्नो के अनुसार उनके पिता धनी किसान थे। स्टुअर्ट श्रैम का कथन है :

> बौद्ध चिंतन में द्वंद्वात्मक तत्व हैं जो माओ के छात्र जीवन से उनकी इस प्रवृत्ति की व्याख्या कर सकते हैं कि उनकी तर्क-पद्धति तभी से विपरीतों की एकता पर आधारित थी।[1]

अपने पिता के प्रति आदर की भावना के बावजूद किशोर और युवा माओ अपने पिता के पितृसत्तात्मक व्यवहार का विरोध करते थे। उनका विशेष लगाव अपनी मां के साथ था क्योंकि उनकी दृष्टि में चीन की अन्य नारियों की भांति वह भी एक उत्पीड़ित नारी थीं। स्टुअर्ट श्रैम के अनुसार युवा माओ का दृष्टिकोण चीन की पितृसत्तात्मक संस्कृति के विरुद्ध चीनी युवाओं के स्वाभाविक विद्रोह को परिलक्षित करता था। बहरहाल उनकी क्रांतिकारिता का स्रोत तत्कालीन चीन के सामाजिक परिवेश में खोजना चाहिए।

आठ वर्ष की अवस्था में माओ को परंपरागत किस्म की पाठशाला में भेज दिया गया, जहां उन्हें कन्फ्यूशियस के ग्रंथों को बिना समझे रटाया जाता था। इसके विपरीत उनकी रुचि ऐतिहासिक उपन्यासों में थी। इनमें कन्फ्यूशियन शासकों, शासन के दुर्गुणों और कभी-कभी किसान विद्रोहों का वृत्तांत होता था। माओ ने इन पुस्तकों से परंपरा को चुनौती दिए बिना विद्रोह करना सीखा।

माओ के पिता ने तेरह वर्ष की उम्र में माओ की पढ़ाई छुड़ाकर उन्हें खेती और हिसाब-किताब के कामों में लगा दिया। उन्होंने स्वाध्याय जारी रखा और सोलह वर्ष की उम्र में माध्यमिक स्कूल में दाखिला लिया। शहर जाकर वे अपने बौद्धिक और राजनीतिक

विकास की शुरुआत कर सके। 1910 में उन्होंने दुर्भिक्ष और सरकारी दमन का प्रत्यक्ष अनुभव किया।

22 अक्तूबर 1911 को माओ त्सेतुंग अठारह वर्ष की उम्र में, अपने हुनान प्रांत की राजधानी चांगशा की पहाड़ी से एक दृश्य बड़े उत्साह से देख रहे थे। वूहान से शुरू होने वाली क्रांति बारह दिन बाद अब चांगशा पहुंच गई थी। कुछ ही घंटों में पुराने छिंग साम्राज्य का शासन ध्वस्त हो गया। माओ ने हजारों श्वेत ध्वजों को सारे नगर में फहराते हुए देखा, जिन पर लिखा था : 'महान हान गणतंत्र जिंदाबाद!'

एक प्रकार से ये शब्द तत्कालीन चीन की परिस्थिति तथा उसके विकास की दिशा का परिचय देते हैं। माओ त्सेतुंग ने अगले दशकों में चीन के रूपांतरण का प्रयास किया। गणतंत्र के लिए चीनी शब्द मिंग सु है जिसका अर्थ 'जनता का देश' होता है। यह 1911 के परिवेश में एक क्रांतिकारी विचार था। परंपरागत कन्फ्यूशियन दृष्टि के अनुसार जनता का एकमात्र राजनीतिक कृत्य अपने वैध शासक की आज्ञा का पालन करना है। उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशक में ही कुछ आवाजें उठी थीं कि चीन को पुन: समृद्ध और शक्तिशाली बनाने के लिए आवश्यक है कि सभी नागरिक देश के सामाजिक और राजनीतिक जीवन में सचेतन रूप से और उत्साह से भाग लें।

इस विचार का विकास सर्वप्रथम चीन में येन फू ने किया। उन्होंने मिल, स्पेंसर और मांतेस्क्यू की कृतियों के अनुवाद किया था जिन्हें माओ त्सेतुंग ने बड़े चाव से पढ़ा। 1898 के सुधारकों ने उनके आधार पर अपने सुधार कार्यक्रम बनाए। सुन यातसेन ने इन विचारों को अधिक उग्र और क्रांतिकारी स्वरूप प्रदान किया। उसने तुंग मेंग हुई नाम से एक राजनीतिक संस्था स्थापित की और कई असफल प्रयासों के बाद वे विदेशी मांचू राजवंश का उन्मूलन और गणतंत्र की स्थापना करने में सफल हुए। चीन को 'जनता का देश' घोषित कर दिया गया।

माओ इसी ऐतिहासिक प्रक्रिया को चांगशा की पहाड़ी पर खड़ा होकर देख रहे थे। सामाजिक समस्याओं पर माओ के विचारों ने अभी स्पष्ट रूप नहीं लिया था। लेकिन बाहरी दुनिया से चीन के संबंधों पर उनके विचार स्पष्ट और ओजपूर्ण थे। एडगर स्नो के अनुसार माओ ने इन दिनों एक पैंफलेट पढ़ा था जिसमें चीन के हाथ से कोरिया, ताइवान, इंडोचीन, बर्मा तथा अन्य क्षेत्रों के निकल जाने पर रोष प्रकट किया गया था। 1936 में उन्हें इस कृति का पहला वाक्य याद था, 'दु:ख की बात है कि चीन अब परतंत्र हो जाएगा।' पैंफलेट पढ़ने पर वह 'निराश हो गए' कि देश का भविष्य अंधकारमय है और उन्होंने 'अनुभव किया कि सभी लोगों का कर्तव्य है कि वे देश की रक्षा करें।'[2]

तत्कालीन चीन में माओ की भांति अन्य बुद्धिजीवी भी देश की आंतरिक दशा की अपेक्षा विदेशी समस्याओं के बारे में अधिक सोचते थे। राष्ट्रीय अपमान दर अपमान उन्हें व्यथित करते थे। 1840 का अफीम युद्ध, 1860 में आंग्ल-फ्रांसीसी सेना द्वारा राजभवनों का अग्निदाह, एक तुच्छ, बर्बर राज्य जापान के हाथों 1895 में पराजय, 1900 में बाक्सर विद्रोह का दमन आदि कुछ प्रमुख उदाहरण थे जिन्होंने स्पष्ट कर दिया था कि चीन को

उसकी असहाय और पराश्रित स्थिति से उबारने के लिए गंभीर उपाय करने होंगे। माओ ने किशोर के रूप में ही समझ लिया था कि पश्चिमी राष्ट्रों की शक्ति मशीनों पर ही नहीं बल्कि उनके विचारों और संस्थाओं पर भी आधारित थी। इनसे वहां के लोगों को कार्य के लिए ऊर्जा प्राप्त होती है।

1906 में चीन की प्रतिक्रियावादी महारानी त्सीशी ने भी सांविधानिक राजतंत्र का सिद्धांत मान लिया था। यह वही महारानी थी जिसने 1898 में सुधारवादी नेता तान सूतुंग का सिर कटवा दिया था। उसके कुछ वर्षों के बाद लोकतंत्र और वैयक्तिक स्वतंत्रता के स्वर फिर मुखर होने लगे। लेकिन उस समय पार्लियामेंट, उद्योगों और विचारों को राष्ट्र की रक्षा और सुदृढ़ बनाने के साधनों के रूप में देखा जाता था। कुछ रूढ़िवादी ही राष्ट्र के जीवन-मरण की समस्या की उपेक्षा करते हुए चीन की संस्कृति की रक्षा में अधिक रुचि लेते थे।

अब इस 'संस्कृतिवाद' का ह्रास हो रहा था और उसके स्थान पर आधुनिक राष्ट्रवाद का विकास हो रहा था। बुद्धिजीवियों का सर्वोपरि लक्ष्य अब चीनी राज्य को सुरक्षित रखना था। 1898 के सुधार आंदोलन के नेता कांग और ल्यांग सांविधानिक राजतंत्र के समर्थक थे। सुन यातसेन, वांग चिंगवेई और हू हानमिन गणतंत्रवाद का उपदेश देते थे। दोनों ग्रुप मार्क्स की कृतियों को पढ़ते थे और 'समाजवाद' के बारे में वाद-विवाद करते थे। लेकिन राष्ट्रीय मुक्ति के विषय में दोनों के लक्ष्य एक जैसे थे।

तुंगशान माध्यमिक स्कूल में माओ पहली बार इन विचारधाराओं के संपर्क में आए। माओ ने 1898 के सुधार आंदोलन के नेताओं के विचार पढ़े और वे खांग यूवेई और ल्यांग छीछाओ के प्रशंसक बन गए। उन्होंने इतिहास और समसामयिक विश्व के बारे में भी पढ़ा। उनका मत था कि चीन भारत, कोरिया और वियतनाम के दुर्भाग्य से तभी बच सकता है, जब यहां जार्ज वाशिंगटन जैसा कर्मठ नेता उभरे, जिन्होंने आठ वर्षों में ही अमरीका को ब्रिटेन के आधिपत्य से मुक्त कर लिया।

चीन के प्राचीन शासकों में वे सम्राट याओ और शुन से बहुत प्रभावित थे। वे छिन शी ह्वांगती और हान वूती के वीरतापूर्ण कार्यों से भी प्रेरणा लेते थे। छिन शी ह्वांगती ने ईसापूर्व तीसरी सदी में चीनी साम्राज्य को एकीकृत किया था। हान वूती ने हूणों के आक्रमण से चीन की रक्षा की थी। माओ राष्ट्रनिर्माता और योद्धाओं के रूप में ही इन सम्राटों और विजेताओं की प्रशंसा करते थे। तत्कालीन चीन के संदर्भ में सैनिक बल राजनीतिक रूप से सचेतन सभी बुद्धिजीवियों का आदर्श और लक्ष्य बन गया था।

तुंगशान स्कूल में माओ ने पहली बार वर्ग-विभाजन की पीड़ा का अनुभव किया। उनके साथी जमींदार वर्ग के छात्र थे। माओ किसान परिवार से थे और पिता के विरोध के बावजूद पढ़ रहे थे। उम्र में वे सहपाठियों से छह वर्ष बड़े थे। स्टुअर्ट श्रैम का कथन है कि माओ के आगामी सामंतवाद-विरोध में स्कूल के मनोवैज्ञानिक अनुभव की भूमिका हो सकती है लेकिन उसे तूल देने की जरूरत नहीं। 1911 में वे चांगशा में उत्तर माध्यमिक स्कूल में दाखिल हुए। चांगशा निवास ने उनके राजनीतिक और बौद्धिक विकास में एक

नए चरण की शुरुआत की।

यहां वे सुन यातसेन के अखबार को नियमित रूप से पढ़ने लगे। इसमें उन्होंने कैंटन में तुंग मेंग हुई के असफल विद्रोह की खबरें पढ़ीं। इसका नेता माओ के प्रांत हुनान का ही रहने वाला था, जिसका नाम ह्वांग शिंग था। 10 अक्तूबर 1911 में वूहान से गणतांत्रिक क्रांति प्रारंभ हो गई। आगामी महीनों में संपूर्ण देश की तरह चांगशा में भी राजनीतिक उत्साह चरम सीमा पर था। माओ ने एक निबंध लिखकर स्कूल की दीवार पर चिपका दिया। उनके इस पहले लेख में विचार उलझे हुए थे। उन्होंने सुझाव दिया कि गणतंत्र का अध्यक्ष सुन यातसेन को, प्रधानमंत्री कांग को और विदेश मंत्री ल्यांग को बनाया जाए।

माओ ने क्रांति में भाग लेने के लिए वूहान जाने का निश्चय किया परंतु उनके जाने से पहले चांगशा में क्रांति हो गई। जैसा ऊपर बताया गया है, युवा माओ ने पहाड़ी से सत्ता-परिवर्तन को देखा। स्टुअर्ट श्रैम ने लिखा है :

> उन्होंने नगर की पहाड़ी पर खड़े होकर विद्रोहियों की विजय का दृश्य देखा। जब उन्होंने 'महान हान गणराज्य' के स्वागत में लहराते हुए झंडों को देखा तो उन्होंने शायद ही कल्पना की हो कि अड़तीस वर्ष बाद ... वे स्वयं पेइचिंग में 'स्वर्गीय शांति द्वार' पर खड़े होकर चीनी जनवादी गणतंत्र की स्थापना की घोषणा करेंगे।[3]

शिक्षा और स्वाध्याय

हुनान की गणतांत्रिक क्रांति वूहान विद्रोह के बारह दिन बाद आकस्मिक रूप से घटित नहीं हुई। यह सुन यातसेन के राष्ट्रवादी संगठन तुंग मेंग हुई के नेताओं की पूर्व योजना के अनुसार हुई थी। माओ के अपने प्रांत हुनान की कुछ राजनीतिक और क्रांतिकारी परंपराएं थीं। चांगशा में विद्यार्थी के रूप में बिताए माओ के पांच साल उनकी राजनीतिक शिक्षा की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण सिद्ध हुए।

चीन में एक कहावत है : 'चीन को तभी जीता जा सकता है, जब सभी हुनानवासी मर जाएं।' दक्षिण चीन के इस शीतोष्ण क्षेत्र में ऊंची पर्वतमालाएं हैं, चार बड़ी नदियां हैं, और प्राचीन काल से यह दस्युओं और विद्रोहियों के विचरण का क्षेत्र रहा है। ताइपिंग विद्रोह के दमन में 'हुनान की सेना' की प्रमुख भूमिका रही थी जिसका सेनाध्यक्ष त्सेंग क्रोफान स्वयं इस प्रांत का वासी था। 1898 के सुधार आंदोलन का शहीद तान सूतुंग भी हुनान का निवासी था। सुन यातसेन के संगठन तुंग मेंग हुई का मुख्य नेता और फौजी कमांडर ह्वांग शिंग भी हुनान का ही था।

मांचू साम्राज्य के उन्मूलन में सुन यातसेन और ह्वांग शिंग ने 'गुप्त समाजों' और 'नवीन सेना' का उपयोग किया था। चीन के 'गुप्त समाज' परंपरागत रूप से सरकार विरोधी भूमिगत संगठन रहे थे और 'नवीन सेना' पश्चिमी पद्धति की आधुनिक सेना थी जिसे मांचू सरकार ने आधुनिक युद्ध में लड़ने के लिए गठित किया था। इन दोनों समुदायों

की भूमिका हुनान में काफी महत्वपूर्ण थी। चांगशा में 1903 में ह्वांग शिंग ने 'चीन पुनरुद्धार समाज' की स्थापना की थी।

ह्वांग शिंग ने घोषणा की थी, 'हुनान प्रांत में, सेना और छात्रों के बीच में क्रांतिकारी विचारों की तेजी से प्रगति हुई है।... मांचू-विरोधी विचारों से प्रेरणा लेकर, गुप्त समाजों ने भी अपने प्रभाव को बढ़ाया और सुदृढ़ किया है।... वे विस्फोट के लिए तैयार हैं और चिंगारी जलाने के लिए हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं।'[4]

पचीस वर्षों के बाद स्वयं माओ ने वह चिंगारी जलाई और गुप्त समाजों की क्रांतिकारी क्षमता का विस्फोट कर दिया। 1911 की चांगशा की क्रांतिकारी घटनाओं के वर्णन में माओ की 'रोमांटिक' कल्पना का भी कुछ योगदान था लेकिन क्रांति के बाद की राजनीतिक घटनाओं का उन्होंने सही विश्लेषण किया। चांगशा क्रांति के नेता च्याओ और चेन 'बुरे आदमी नहीं थे, उनके क्रांतिकारी इरादे थे, लेकिन वे गरीब थे और उत्पीड़ितों के हितों का प्रतिनिधित्व करते थे। जमींदार और व्यापारी उनसे असंतुष्ट थे।'[5]

थान यिनकाई, प्रांत के धनी वर्गों का प्रतिनिधि था। उसने उनके खिलाफ विद्रोह किया और उन्हें मार डाला। माओ ने इन क्रांतिकारी नेताओं के शवों को सड़क पर पड़ा देखा। 1911 की क्रांति में सदिच्छा से प्रेरित युवाओं के लिए कोई स्थान नहीं था। सुन *यातसेन की क्रांति में भूमिका तभी प्रभावी हुई जब उन्होंने सोवियत सलाहकारों और चीनी* साम्यवादी संगठनकर्ताओं की मदद से अपनी सेना का गठन कर लिया। माओ चांगशा में सैनिक प्रशिक्षण पाने के लिए एक फौजी यूनिट में भरती हो गए। फौज में दाखिल होने का एक ध्येय क्रांति में योगदान करना भी था। 1912 के बसंत में माओ ने सोचा कि क्रांति पूरी हो चुकी है और उन्होंने फौज छोड़ दी।

छह महीने फौज में बिताकर माओ अपनी शिक्षा और स्वाध्याय की ओर लौट आए। हालांकि 1911 की क्रांति में उनकी भागीदारी विशेष नहीं थी लेकिन सेना का अनुभव और प्रशिक्षण भी माओ की शिक्षा का एक महत्वपूर्ण चरण था। एमी श्याओ का मत है कि सैनिक जीवन के अपने अनुभव से माओ ने निष्कर्ष निकाला कि चीन में सेना ही राजनीतिक सत्ता की कुंजी है। स्टुअर्ट श्रैम का कथन है कि माओ इस निष्कर्ष पर बहुत बाद में पहुंचे जब उन्होंने चीन में युद्ध सामंतों (वार लार्ड्स) के काल में देश में अराजकता और निरंतर लड़े जाने वाले गृहयुद्धों की भीषणता को देखा।

माओ ने इन दिनों जापान से लौटे एक विद्यार्थी च्यांग कांगहू की कृतियों को पढ़ा। इनमें समाजवाद के सिद्धांतों की व्याख्या की गई थी। नवंबर 1911 में च्यांग कांगहू ने 'चीनी सोशलिस्ट पार्टी' की स्थापना की। 1912 में समाजवाद के प्रति माओ के उत्साह से यह सिद्ध नहीं होता कि वे इस समय सामाजिक क्रांति के समर्थक बन गए थे। इस काल में माओ ने पुलिस, साबुन फैक्टरी तथा कानून विद्यालय में प्रशिक्षण और अध्ययन का प्रोग्राम बनाया लेकिन बाद में वाणिज्य विद्यालय में दाखिला लिया। वहां शिक्षा अंग्रेजी में दी जाती थी। माओ का अंग्रेजी ज्ञान सीमित था। अत: उन्होंने यह स्कूल छोड़ दिया।

उन्होंने हुनान प्रांतीय पुस्तकालय में स्वाध्याय शुरू किया, जहां उन्होंने एडम स्मिथ,

मांतेस्क्यू, डार्विन, मिल, रूसो और स्पेंसर के चीनी अनुवाद पढ़े। उन्होंने रूस, अमरीका, इंगलैंड, फ्रांस आदि देशों के इतिहास और भूगोल भी पढ़े। स्वाध्याय द्वारा वे न केवल 'चीनी क्लासिक्स' के बल्कि आधुनिक सामाजिक विज्ञानों के भी ज्ञाता बन गए। 1918 के बसंत में उनकी उच्च माध्यमिक शिक्षा समाप्त हो गई। माओ को इसके आगे विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा प्राप्त करने का अवसर नहीं मिला।

इसके बाद वे थोड़े समय के लिए अध्यापक बने। शिक्षा, स्वाध्याय और अध्यापन ने माओ को समाज और राजनीति में अपनी भावी भूमिका के लिए तैयार किया। वस्तुत: चांगशा के उत्तर माध्यमिक स्कूल और उनके शिक्षक एक ऐसे छात्र समुदाय का निर्माण कर रहे थे जो बौद्धिक दृष्टि से प्रखर और राजनीतिक चेतना से युक्त था। इन स्कूलों ने 'माओ को राजनीतिक कार्यकर्ता का कौशल सीखने के लिए आदर्श प्रशिक्षण भूमि प्रदान की। वहां उन्होंने उन विचारों और विधाओं का विकास किया जिन्हें उन्होंने भविष्य में क्रियान्वित किया। वहां उन्हें वे मित्र और साथी मिले जिनमें कुछ ने 1949 की अंतिम विजय तक उनके नेतृत्व में काम किया।'[6]

चांगशा स्कूल में माओ के एक सहपाठी त्साई होसेन थे जिनकी मृत्यु बाद में क्रांतिकारी संघर्ष में हो गई। एक दूसरा सहपाठी श्याओ शूतुंग बाद में माओ का कटु विरोधी बन गया। चांगशा में ही उनका ली लीसान से परिचय हुआ जो बाद में कम्युनिस्ट पार्टी के अंदर उनके विपक्षी बने। 1936 में माओ ने एडगर स्नो को बताया कि उनकी मित्रता कभी प्रगाढ़ नहीं हुई। वस्तुत: कृषि-प्रधान चीन में उपयुक्त क्रांतिकारी रणनीति के बारे में दोनों में गंभीर मतभेद थे।

अपने शिक्षकों के प्रति माओ के मन में कृतज्ञता के भाव थे। 'दाढ़ी वाले युआन' ने उन्हें अच्छी लेखन शैली सिखाई। नीतिशास्त्र के शिक्षक यांग यांगची ने उन्हें चीनी संस्कृति के सार और पाश्चात्य आधुनिक चिंतन के महत्व से परिचित कराया। माओ ने यांग की बेटी से विवाह किया, जिसे वे बहुत प्यार करते थे। यांग ने माओ को 4 मई के आंदोलन के आदर्शों का ज्ञान कराया। माओ भी यांग को अपना आदर्श गुरु मानकर उनका आदर करते थे।

इस काल में माओ 4 मई के आदर्शों का प्रचार करने वाली पत्रिका *यूथ* के नियमित पाठक बन गए। इस समय पेइचिंग यूनिवर्सिटी के कला संकाय के प्रधान चेन तूश्यू इस पत्रिका के प्रेरणा-स्रोत थे। यही चेन तूश्यू भविष्य में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के महासचिव बने। उसका संदेश था कि चीन की मुक्ति के लिए लोकतंत्र और विज्ञान के उत्कर्ष की और समाज के पश्चिमीकरण की आवश्यकता है। शिक्षक यांग और छात्र माओ दोनों *यूथ* पत्रिका के विचारों का उत्साह से प्रचार करते थे।

परंतु यांग कट्टर पश्चिमवादी नहीं थे। उनका मत था :

> प्रत्येक देश की अपनी राष्ट्रीय भावना होती है, जैसे प्रत्येक व्यक्ति का अपना विशिष्ट व्यक्तित्व होता है। किसी भी देश की संस्कृति को किसी दूसरे देश में पूरी तरह

> स्थापित नहीं किया जा सकता। देश एक जैविक इकाई है, जिस तरह मानव शरीर एक जैविक इकाई है। यह मशीन नहीं है, जिसके कल-पुरजे पहले अलग कर लो और फिर इन्हें जोड़ दो। यदि उसे खंडित करोगे तो उसकी मृत्यु हो जाएगी।'

माओ पर यांग का गंभीर प्रभाव था। 1936 में माओ ने एडगर स्नो को बताया, 'यांग बहुत ऊंचे नैतिक चरित्र के मनुष्य थे। वे अपने छात्रों में समाज के लिए उपयोगी, न्यायप्रिय, नैतिक और सदाचारी मनुष्य बनने की इच्छा भर देते थे।'[8] श्रैम के अनुसार यह माओ द्वारा अपने गुरु के प्रति सच्ची प्रशंसा की अभिव्यक्ति थी। यांग की बेटी और माओ की प्रिय पत्नी को 1930 में क्वोमिन्तांग प्रतिक्रियावादियों ने गोली मारकर शहीद कर दिया था।

शू थेली ने भी माओ के प्रगतिशील विचारों के विकास में बहुत योगदान किया। वह शब्दों और कार्यों में समान रूप से मूर्तिभंजक था। उस काल में चांगशा के भद्र लोग और शिक्षक भी रिक्शों में, जिन्हें कुली दौड़कर खींचते थे, या पालकी में, जिसे चार कुली कंधों पर उठाते थे, यात्रा करते थे। परंतु शू थेली हमेशा पैदल चलता था। बाद में शू थेली ने माओ के साथी के रूप में साम्यवादी आंदोलन में भाग लिया।

1917 की शरद ऋतु में माओ त्सेतुंग ने *नव-जनवादी अध्ययन समाज* की गतिविधियां शुरू कीं। इसकी औपचारिक स्थापना 1918 के बसंत में हुई। स्टुअर्ट श्रैम के शब्दों में :

> उस समय यह संपूर्ण चीन में सर्वाधिक प्रगतिशील विद्यार्थी समाजों में से एक था। वस्तुतः उसके सभी सदस्य अंततः कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल हो गए। ... पिछले छह वर्षों में आधुनिक और पश्चिमी चिंतन की जिन पद्धतियों ने उन्हें प्रभावित किया था, वे एक अत्यंत प्रगतिशील विश्व दृष्टि में समन्वित हो गए। .... माओ ने लिखा : 'हमें अपनी शारीरिक और मानसिक क्षमताओं का पूर्ण विकास करना चाहिए। .... व्यक्ति का दमन और ... धर्म, पूंजीपति और स्वेच्छाचारी शासन साम्राज्य के चार दुर्गुण हैं।' ... क्लासिक्स की प्रशंसा के स्थान पर माओ क्रांति और आमूल परिवर्तन का उत्साहपूर्वक समर्थन करने लगे।'

यह चरण माओ त्सेतुंग के वैयक्तिक विकास में बहुत महत्वपूर्ण तो था ही, संपूर्ण चीन में 4 मई के बौद्धिक और सामाजिक आंदोलन से चीनी युवाओं की सोच में क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहे थे। इन युगांतरकारी घटनाओं ने माओ त्सेतुंग को अंतिम लक्ष्य और साम्यवादी भविष्य की दिशा में आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। 1918 के बसंत में वे चांगशा से पेइचिंग गए और 1919 की गरमियों में हुनान लौटे और 4 मई के विशाल छात्र प्रदर्शनों के बाद की विविध राजनीतिक गतिविधियों में संलग्न हो गए।

4 मई का आंदोलन

अब तक प्रगतिशील बुद्धिजीवी अपने देश की परंपराओं और मानसिकता को बदलने के

लिए प्रतिमान के रूप में पश्चिमी यूरोप के किसी देश की ओर देखते थे। चेन तूश्यू की तरह कुछ लोग फ्रांस के लोकतांत्रिक आदर्शों के प्रशंसक थे। अन्य बुद्धिजीवी ब्रिटिश औद्योगिक क्रांति और संसदीय शासन से आकर्षित थे। कुछ युवक पहले विश्वयुद्ध के शुरू के वर्षों में जर्मन विजय से प्रभावित होकर चीन में उसी तरह के सैन्यवाद के हिमायती बन गए थे। जब माओ त्सेतुंग पेइचिंग से लौट रहे थे तो युवाओं और बुद्धिजीवियों के चिंतन में एक गुणात्मक परिवर्तन होने वाला था। 1918 में रूस की बोल्शेविक क्रांति उनका ध्यान गंभीर रूप से आकर्षित करने लगी।

जनता के जनवादी अधिनायकत्व में माओ त्सेतुंग ने लिखा है कि रूसी क्रांति के विस्फोटों ने चीन में मार्क्सवाद के आगमन को प्रोत्साहन दिया। वे लिखते हैं :

> रूसियों के माध्यम से ही चीनियों को मार्क्सवाद का ज्ञान हुआ। अक्तूबर क्रांति के पहले चीनी न केवल लेनिन और स्तालिन से अनभिज्ञ थे, वे मार्क्स और एंगेल्स के नामों से भी अपरिचित थे। अक्तूबर क्रांति के विस्फोटों ने हमें मार्क्सवाद-लेनिनवाद का ज्ञान कराया। .... 1919 में चीन में 4 मई का आंदोलन हुआ। 1921 में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना हुई।[10]

यह सरल दृष्टिकोण है। *कम्युनिस्ट घोषणापत्र* का चीनी भाषा में आंशिक अनुवाद 1906 में प्रकाशित हुआ था। बीसवीं सदी में 'समाजवाद' पर लंबी बहसें छिड़ गई थीं। लेकिन यह सच है कि गंभीर राजनीतिक शक्ति के रूप में मार्क्सवाद रूसी क्रांति के बाद ही पहुंचा। 4 मई का आंदोलन, जैसा माओ ने बार-बार कहा है, चीन के बौद्धिक और राजनीतिक जीवन की एक युगांतरकारी घटना थी जो बुर्जुआ नेतृत्व की प्रधानता को सर्वहारा नेतृत्व की प्राथमिकता से अलग करती है। मार्क्सवाद का प्रसार इतनी तेजी से हुआ कि जल्दी ही उसने चीन के भविष्य के विषय में विवाद के संदर्भों को बदल दिया।

ली ताचाओ और चेन तूश्यू चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के दो प्रमुख संस्थापक थे। ली ताचाओ के दो लेख *मार्क्सवाद* और *बोल्शेविकवाद की विजय* शीर्षकों से जुलाई 1918 में *शिन छिंगनीन* में उसी समय प्रकाशित हुए जब माओ पेइचिंग पहुंचे। माओ ने इन्हें ध्यान से पढ़ा। माओ के शिक्षक यांग यांगची की नियुक्ति प्रोफेसर के रूप में पेइचिंग विश्वविद्यालय में हो गई थी। उन्होंने माओ को ली ताचाओ के मातहत सहायक पुस्तकाध्यक्ष की नौकरी दिला दी। उन्हें यांग के घर पर प्राय: बुलाया जाता था। वहां उनका यांग काई हुई से परिचय हुआ जो उनके गुरु यांग की पुत्री और माओ की भावी पत्नी थी।

विश्वविद्यालय में वर्गीय भावना प्रबल थी। प्रोफेसर माओ से बात नहीं करते थे। नवीन संस्कृति आंदोलन के नेता हू शिह ने माओ के प्रश्न का उत्तर देने से इनकार कर दिया। उनकी राजनीतिक शिक्षा ली ताचाओ के 'मार्क्सवादी अध्ययन मंडल' के माध्यम से हुई। स्वयं ली ताचाओ इस समय इतिहास की व्याख्या निर्धारणवादी पद्धति से करते थे। उन्होंने अभी द्वंद्ववादी पद्धति को ठीक से समझा नहीं था। अत: माओ इस समय मार्क्सवाद और लेनिनवाद के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को ठीक से विकसित नहीं कर सके।

माओ ने अपनी आत्मकथा में स्वीकार किया है कि वे इस समय अधिक उग्रवादी बनते जा रहे थे लेकिन अपने रास्ते के बारे में भ्रमित थे। वे इस समय अराजकतावाद से अधिक प्रभावित थे। लेकिन वे यह भी कहते हैं कि 1918-19 की सर्दियों में 'ली ताचाओ के प्रभाव से मार्क्सवाद की दिशा तेजी से प्रगति कर रहा था।' इसके अतिरिक्त वे कहते हैं कि 'अन्यों की तुलना में चेन तूश्यू ने उन्हें सबसे अधिक प्रभावित किया।' यह और भी भ्रम पैदा करता है क्योंकि चेन तूश्यू इस काल में 'लोकतंत्र' और 'विज्ञान' के पुजारी थे।

लेकिन उनके कथनों के ये अंतर्विरोध वास्तविक नहीं हैं। चीन में बुद्धिजीवियों की सोच तेजी से बदल रही थी। प्रांतीय युवक के रूप में माओ राजधानी के अग्रगामी चिंतन को आत्मसात करने की चेष्टा कर रहे थे। अराजकतावाद के माध्यम से वे परंपरागत समाज के बंधनों को तोड़ रहे थे। चेन तूश्यू अनेक वर्षों से उनके साहित्यिक आदर्श रहे थे। जो नए, वर्जित और जीवंत विचारों के माध्यम से माओ को मुक्त होने का मार्ग दिखा रहे थे। ली ताचाओ ने मार्क्सवादी स्टडी सर्किल के द्वारा माओ के मार्क्सवाद विषयक ज्ञान में वृद्धि की थी और वे चीन की महत्ता के बारे में ली के विचारों के प्रशंसक भी थे।

माओ त्सेतुंग विचारधारा में, ली ताचाओ की भांति मार्क्सवाद की लेनिनवादी व्याख्या के साथ-साथ विश्व क्रांति में राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलनों के महत्त्व पर विशेष बल दिया गया था। ली ताचाओ और माओ त्सेतुंग चीनी राष्ट्र की गरिमा के मूल्यों को न केवल साम्राज्यवाद-विरोधी प्रचार के रूप में बल्कि स्वतंत्र आदर्शों के रूप में भी स्वीकार करते थे। इसी समय चाउ एनलाई और माओ के मित्र त्साई होसेन के कार्य-अध्ययन योजना के अंतर्गत फ्रांस जाने का निर्णय किया।

हुनान लौटने पर वे प्रांत के निरंकुश शासक जनरल चांग चिंग याओ के विरुद्ध छात्र आंदोलन को संगठित करने में व्यस्त हो गए। यह गवर्नर जनरल त्वान छीरुई के जापान-प्रेमी आंफू गुट का प्रतिनिधि था। जापान की इक्कीस मांगों के खिलाफ, चीन के छात्र और श्रमिक आंदोलन कर रहे थे। इन मांगों की स्वीकृति चीन को जापानी उपनिवेश में बदल देती। वार्साई शांति संधि में जर्मन अर्ध-उपनिवेश शांतुंग को चीन को वापस करने के बजाए जापान को हस्तांतरित करने का प्रस्ताव था। 4 मई का आंदोलन इसी मुद्दे पर शुरू हुआ। हुनान में माओ त्सेतुंग इस जापान-विरोधी आंदोलन का नेतृत्व कर रहे थे।

माओ ने *शियांग रिवर रिव्यू* में *दि ग्रेट यूनियन आफ दि पापुलर मासेज* शीर्षक से चार लेखों की एक शृंखला प्रकाशित की। ली रुई के अनुसार ये लेख 1949 में प्रकाशित माओ की कृति *जनता का जनवादी अधिनायकत्व* के पूर्वाभास थे जिसमें माओ ने श्रमिकों और कृषकों की प्रमुख भूमिका की चर्चा की थी। स्टुअर्ट श्रैम के अनुसार यह बिलकुल अनैतिहासिक दृष्टिकोण है। इन लेखों में माओ ने कहा है कि इस महान संघ में श्रमिकों, कृषकों, छात्रों, स्त्रियां, व्यापारियों तथा अन्य वर्गों की भागीदारी है हालांकि 4 मई के आंदोलन में कृषकों की भूमिका नगण्य थी। वे रूसी क्रांति की विजय का स्वागत करते हैं लेकिन बोल्शेविकों और 4 मई के आंदोलनों में भेद नहीं करते जबकि चीन के इस

आंदोलन में मार्क्स के साथ-साथ अमरीकी दार्शनिक जॉन डिवी के विचारों से भी प्रेरणा ली गई थी।

श्रैम का मत है कि माओ के तात्कालिक चिंतन में रूसी नरोदनिकों के लोकवाद का प्रभाव दिखाई देता है। लेकिन यह कथन विवादास्पद है। ली ताचाओ ने नरोदनिकों की भांति किसानों की नैतिक श्रेष्ठता का उल्लेख किया है लेकिन माओ 4 मई के आंदोलन के समय किसानों की भूमिका में कोई विशेष रुचि नहीं ले रहे थे। माओ इस काल में चीनी जनता को दो वर्गों में बांटते हैं जिसमें एक ओर आम लोगों के विभिन्न वर्ग हैं और दूसरी ओर थोड़े से सैन्यवादी और मुनाफाखोर हैं, जो विदेशियों के पक्षधर हैं।

हू शिह और चेन तूश्यू ने अपने लेखों में *पाई-हुआ* अर्थात सरल चीनी भाषा का प्रयोग किया। माओ ने भी इसी जनभाषा में अपने लेख लिखे। माओ ने अपनी आत्मकथा में बताया, '1920 की गरमियों में मैं सिद्धांत में और कुछ सीमा तक व्यवहार में मार्क्सवादी हो गया था और इस समय के बाद मैंने अपने को एक मार्क्सवादी ही माना है।'[11] जून 1920 में उनकी नियुक्ति प्राइमरी स्कूल के डायरेक्टर के रूप में हुई। आगामी सर्दियों में यांग काई हुई से उनका विवाह हो गया। माओ त्सेतुंग ने अब चांगशा तथा हुनान में मजदूर यूनियनों के संगठन का काम शुरू कर दिया। स्टुअर्ट श्रैम का कथन है :

> माओ के जीवन में इस नए चरण के अनुरूप एक बार फिर संपूर्ण चीन की परिस्थिति भी एक नवीन चरण में विकसित हो रही थी क्योंकि 1920-21 की सर्दियों में माओ की गतिविधियां चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के निर्माण की तैयारियों से घनिष्ठ रूप से जुड़ी थीं। इसकी पहली कांग्रेस जुलाई 1921 में हुई।[12]

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना

शुरू से ही चीन की कम्युनिस्ट पार्टी एक स्वदेशी संगठन थी। तीसरे इंटरनेशनल के मार्गदर्शन के पूर्व, इसकी स्थापना स्वतंत्र रूप से वे चीनवासी कर रहे थे जिनका विश्वास था कि चीन की समस्याओं के समाधान के लिए सोवियत सिद्धांतों और पद्धतियों का महत्व है। माओ त्सेतुंग भी पार्टी के मूल संस्थापकों में एक थे।

सोवियत मार्गदर्शकों के बारे में दो बातें याद रखने योग्य हैं। एक तो वे यूरोपीय थे और एशियाई परिस्थितियों से अनभिज्ञ थे। वे पूंजीवाद के विरुद्ध विश्व क्रांति चाहते थे लेकिन वे एक राष्ट्र के शासक भी थे और दोनों के बीच असंगति होने पर वे स्वाभाविक रूप से राष्ट्रीय हित को प्राथमिकता देते थे।

1920 में तीसरा इंटरनेशनल सोवियत नीति का अनुशासित उपकरण नहीं बना था। यह लेनिन और मानवेंद्रनाथ राय के बीच लंबे विवाद में लक्षित होता है। यह विवाद भविष्य के चीनी-सोवियत विवाद का पूर्वाभास था। राय का तर्क था कि सोवियत नेता बुर्जुआजी को संतुष्ट करने के लिए आवश्यकता से अधिक तत्पर थे और एशियाई क्रांति में सर्वहारा वर्गीय नेतृत्व को विशेष महत्व नहीं देते थे। दूसरी बात यह थी कि राय के

अनुसार विश्व क्रांति की कुंजी एशियाई क्रांति में निहित थी क्योंकि यूरोपीय सर्वहारा वर्ग अकेले विश्व पूंजीवाद का उन्मूलन करने में अक्षम था।

हालांकि लेनिन सोशल डेमोक्रेटों द्वारा गैर-यूरोपीय राष्ट्रों की क्रांतिकारी क्षमता में अविश्वास की प्रवृत्ति का लंबे समय से विरोध करते रहे थे, फिर भी उन्होंने राय के विचार को अतिवादी मानते हुए कहा कि उपनिवेशों और अर्ध-उपनिवेशों में कम्युनिस्टों के लिए यह आवश्यक है कि वे 'राष्ट्रीय क्रांतिकारी' अर्थात 'बुर्जुआ लोकतांत्रिक' तत्वों के साथ सहयोग और गठबंधन करें।

चीन में छह शहरों में साम्यवादी ग्रुपों की स्थापना हो गई थी। माओ ने चांगशा में ऐसे ही एक ग्रुप तथा 'सोशलिस्ट यूथ कोर' की स्थापना की। इसके अलावा, वे इस समय मजदूर संघों की गतिविधियों का संचालन भी कर रहे थे। इस समय माओ 'तीसरे इंटरनेशनल' की रणनीति को अज्ञात रूप से और अपनी स्वतंत्र पहल के द्वारा क्रियान्वित कर रहे थे।

माओ ने कम्युनिस्ट पार्टी की पहली कांग्रेस में भाग लिया। उसके निर्णयों में 'कट्टरवादी मार्क्सवाद' की अभिव्यक्ति स्पष्ट है। पार्टी का कार्यक्रम 'सर्वहारा वर्ग की क्रांतिकारी सेना की मदद से पूंजीवादी वर्गों का उन्मूलन' और वर्गों के उन्मूलन के लिए 'सर्वहारा वर्ग के अधिनायक तंत्र की स्थापना करना था।' पार्टी के उद्देश्यों में एकमात्र ट्रेड यूनियन संगठन की समस्याओं की चर्चा की गई थी। इनमें न तो लेनिन द्वारा प्रतिपादित 'बुर्जुआ राष्ट्रवादियों' के साथ सहयोग का जिक्र था और न ही राष्ट्रीय और वर्गीय लक्ष्यों में भेद किया गया था। इसके विपरीत कांग्रेस के प्रस्ताव में घोषणा की गई :

> वर्तमान राजनीतिक दलों के प्रति स्वतंत्रता, आक्रमण और अलगाव का दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। हमारी पार्टी सर्वहारा वर्ग की प्रतिनिधि है। अन्य दलों और ग्रुपों से उसे संबंध रखने की अनुमति नहीं है।[13]

ली रुई का मत है कि इस कांग्रेस में माओ ने इस मत का विरोध किया कि सर्वहारा वर्गीय अधिनायकत्व की स्थापना पार्टी का तात्कालिक कार्य था और इस गलत उग्र वामपंथी दृष्टिकोण से भी असहमति प्रकट की कि बुद्धिजीवियों को पार्टी का सदस्य नहीं बनाना चाहिए। स्टुअर्ट श्रैम का मत है कि माओ स्वयं इस समय कट्टरपंथी चरण से गुजर रहे थे और उन्होंने मजदूरों के बीच पार्टी कार्य की प्राथमिकता के मुद्दे पर कांग्रेस के बहुमत का ही समर्थन किया।

लेकिन जल्दी ही माओ त्सेतुंग तथा समस्त पार्टी के विचारों में परिवर्तन हुआ और 'बुर्जुआ राष्ट्रवादियों' के साथ सहयोग की नीति का उत्साहपूर्वक समर्थन किया जाने लगा। परंतु यह तय नहीं था कि पार्टी वू पेइफू, चाओ हेंगती और सुन यातसेन में किसको अपना सहयोगी बनाए। कुछ कम्युनिस्ट अभी क्वोमिन्तांग के प्रधान, सुन यातसेन को उत्तरी युद्ध सामंतों से श्रेष्ठतर नहीं मानते थे। परंतु अंत में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी, सोवियत सरकार और तीसरे इंटरनेशनल तीनों ने निर्णय किया कि सुन यातसेन के नेतृत्व में

क्वोमिन्तांग ही वह राष्ट्रीय क्रांतिकारी आंदोलन है जिसके साथ कम्युनिस्ट पार्टी को गठबंधन करना चाहिए।

अंत में कम्युनिस्ट पार्टी और क्वोमिन्तांग के बीच में संयुक्त मोरचे की स्थापना की दिशा में क्रमिक प्रगति होने लगी। जनवरी 1922 में क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी के एक संयुक्त शिष्टमंडल ने मास्को और पेत्रोग्राद में 'सुदूर पूर्व के मेहनतकशों' की पहली कांग्रेस में भाग लिया। वहां जिनोवीव ने उन्हें द्विपक्षी गठबंधन करने की सलाह दी। जुलाई 1922 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी दूसरी कांग्रेस में क्वोमिन्तांग के साथ सहयोग की नीति को स्वीकार कर लिया।

श्रैम के शब्दों में, 'वस्तुत: इस नई नीति को माओ का समर्थन मिलना सुनिश्चित था क्योंकि सुन के साथ गठबंधन का उद्देश्य उनके व्यक्तित्व और हृदय के पूर्णत: अनुकूल था।'[14] 1923 में माओ की रचनाओं में साम्राज्यवाद के प्रति घोर घृणा की अभिव्यक्ति हुई। वे लिखते हैं, 'क्या चीन के लोग सिर्फ जापान से नफरत करना जानते हैं? क्या वे यह नहीं जानते कि चीन के विरुद्ध अंग्रेज साम्राज्यवादियों का आक्रमण जापानी साम्राज्यवादियों के हमले से भी कहीं अधिक पीड़ाजनक है?'[15] जहां तक अमरीका का संबंध है वह 'जल्लादों के बीच में सबसे बड़ा हत्यारा है।'[16]

जुलाई 1923 में माओ त्सेतुंग ने कहा कि राष्ट्रीय क्रांति के तात्कालिक नेता चीन के व्यापारी थे। उन्होंने लिखा :

> चीन की वर्तमान राजनीतिक समस्या राष्ट्रीय क्रांति की समस्या के अलावा और कुछ नहीं है। चीन के लोगों का यह ऐतिहासिक मिशन है कि वे जनता की शक्ति का उपयोग सैन्यवादियों और विदेशी साम्राज्यवाद के उन्मूलन के लिए करें। सैन्यवादी अपने देशद्रोही कार्यों को पूरा करने के लिए साम्राज्यवाद से सांठ-गांठ किए हुए हैं। यह क्रांति संपूर्ण जनता का कार्य है। व्यापारी, श्रमिक, कृषक, छात्र और शिक्षक सभी को इस क्रांतिकारी कार्य के एक अंश के दायित्व को संभालने के लिए आगे आना चाहिए। लेकिन ऐतिहासिक जरूरत और समसामयिक प्रवृत्तियों के संदर्भ में राष्ट्रीय क्रांति में व्यापारियों का दायित्व शेष जनता के दायित्वों की तुलना में अधिकतम तात्कालिक और महत्वपूर्ण है।[17]

साम्राज्यवाद का विरोध माओ के चरित्र के राष्ट्रवादी अंग और सैन्यवाद का विरोध उनके लोकवादी अंग की अभिव्यक्ति करते हैं। 1919 में माओ ने 'जनसमूहों के महान संघ' की संकल्पना प्रस्तुत की। 1923 में वे क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्टों के 'संयुक्त मोरचे' का समर्थन कर रहे थे और स्वीकार करते थे कि इस गठबंधन का नेतृत्व बुर्जुआ वर्ग करेगा।

जून 1923 में कम्युनिस्ट पार्टी की तीसरी कांग्रेस ने फैसला किया, 'राष्ट्रीय क्रांति में क्वोमिन्तांग को केंद्रीय शक्ति होना चाहिए और क्रांति का नेतृत्व संभालना चाहिए।'[18] कोमिन्टर्न के दबाव में पार्टी कांग्रेस ने मजदूर यूनियनों के नियंत्रण को भी क्वोमिन्तांग को सौंपने का निर्णय किया। माओ ने इस निर्णय का विरोध किया। दो महीनों के बाद इस

फैसले को बदल दिया गया।

माओ ने कम्युनिस्ट पार्टी के प्रतिनिधि के रूप में क्वोमिन्तांग की पार्टी संविधान समिति में, केंद्रीय कार्यकारिणी समिति में तथा अन्य क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान किया। उन्होंने क्वोमिन्तांग पार्टी के पुनर्गठन पर भी चार महत्वपूर्ण सुझाव दिए। उन्होंने कहा कि पार्टी के शीर्ष पर केंद्रीय और प्रांतीय संगठन निष्क्रिय नेताओं और काडरों से भरे पड़े हैं। क्वोमिन्तांग के वास्तविक संगठन और सक्रिय कार्यकर्ता या तो शहरों के दफ्तरों में हैं या ग्रामीण क्षेत्रों में जिला स्तर पर। माओ ने कहा कि पार्टी के संसाधनों का सही उपयोग होना चाहिए। 70 प्रतिशत संसाधन आठ या नौ विकसित राजनीतिक केंद्रों में और 30 प्रतिशत मध्यम स्तर के ग्यारह या बारह अन्य स्थानों में प्रयुक्त होने चाहिए।

वस्तुत: माओ त्सेतुंग के प्रयास-से क्वोमिन्तांग का जनाधार द्रुत गति से बढ़ा। नगरों और जनपदों के स्तर पर वामपंथी क्वोमिन्तांग सदस्यों ने पार्टी को एक बड़ी शक्ति बना दिया। स्टुअर्ट श्रैम का कथन है, 'इस समय माओ त्सेतुंग ने क्वोमिन्तांग से सहयोग के कार्य को इतने उत्साह से बढ़ाया कि उनकी अपनी पार्टी में ही उन पर संदेह किया जाने लगा।'[19] उनका मत है, 'मास्को, क्वोमिन्तांग और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के त्रिकोणात्मक संबंध में, माओ त्सेतुंग की स्थिति 1925-1927 के निर्णायक वर्षों में समग्रता की दृष्टि से स्तालिन अथवा चेन तूश्यू की अपेक्षा क्वोमिन्तांग के निकटतर थी।'[20]

चीनी क्रांतिकारी के रूप में वे देश की एकता, अखंडता और स्वतंत्रता को प्राथमिकता देते थे क्योंकि सामाजिक क्रांति को केवल स्वाधीन और एकीकृत चीन में ही क्रियान्वित किया जा सकता था। पहले संयुक्त मोरचे के काल में राष्ट्रीय लोकतांत्रिक क्रांति का माध्यम क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट गठबंधन ही हो सकता था, जिसका नेतृत्व तात्कालिक परिस्थितियों में एक राष्ट्रवादी दल ही संभाल सकता था।

कहना न होगा कि इस संदर्भ में स्टुअर्ट श्रैम का निष्कर्ष बहुत उपयुक्त और सारगर्भित है :

> माओ स्तालिन से सहमत होते थे जब चीनी और रूसी हितों में तादात्म्य होता था; अन्यथा, वे स्वतंत्र नीति अपनाते थे। उन्होंने देश के एकीकरण के लिए च्यांग काई शेक की योजना का समर्थन स्तालिन द्वारा उसकी स्वीकृति के बहुत पहले किया, क्योंकि उनके लिए राष्ट्रीय एकता का मामला अत्यंत महत्वपूर्ण था। तदुपरांत उन्होंने क्वोमिन्तांग से संबंध तोड़ने का निश्चय किया और कम्युनिस्टों के नेतृत्व में एक मौलिक कृषिगत क्रांति करने का निर्णय किया। स्तालिन ने बहुत देर बाद अनिच्छा से इस संबंध विच्छेद को स्वीकार किया : माओ का अंतिम लक्ष्य चीनी क्रांति को सफल बनाना था, न कि रूसी साइबेरिया की सीमाओं को सुरक्षा प्रदान करना।[21]

चीनी समाज का वर्ग विश्लेषण

मार्च 1926 में माओ त्सेतुंग ने *चीनी समाज में वर्गों का विश्लेषण* शीर्षक से एक लेख

लिखा। उस समय इस लेख को उन्होंने पार्टी में मौजूद दो विचलनों की आलोचना के रूप में लिखा। पहले विचलन के दोषी चेन तूश्यू और उसके सहयोगी थे जो क्वोमिन्तांग से गठबंधन को इतना महत्व देते थे कि वे किसानों को बिलकुल भूल जाते थे। यह दक्षिणपंथी अवसरवादी विचलन था। दूसरे विचलन के प्रतिपादकों का प्रतिनिधित्व चांग क्वोताओ करता था। ये लोग केवल मजदूर आंदोलन के विषय में चिंतित रहते थे और किसानों की उपेक्षा करते थे। यह 'वाम' अवसरवाद का प्रतीक था।

दोनों इस बात को जानते थे कि उनकी अपनी शक्ति काफी नहीं थी लेकिन उन्हें यह मालूम नहीं था कि अतिरिक्त बल कहां से प्राप्त करें और जनाधार बढ़ाने के लिए किन्हें मित्र बनाएं। माओ त्सेतुंग ने बताया कि कृषक वर्ग ही चीन के सर्वहारा वर्ग का प्रबल और संख्या में विशाल मित्र बन सकता है और इस समस्या का समाधान कर दिया कि चीनी क्रांति में श्रमिक वर्ग का मुख्य मित्र कौन था। माओ ने यह भी कहा कि राष्ट्रीय बुर्जुआजी एक ढुलमुल वर्ग है जो क्रांति का उत्कर्ष होते ही विभाजित हो जाएगा। उसका दक्षिणपंथ साम्राज्यवाद के पक्ष में चला जाएगा। 1927 की घटनाओं ने इसे सही सिद्ध कर दिया।

क्रांति के लिए यह जानना जरूरी है कि उसके शत्रु और मित्र कौन हैं। चीन में, माओ के अनुसार, पूर्ववर्ती क्रांतिकारी संघर्षों की उपलब्धियां इसलिए कम रहीं क्योंकि वे वास्तविक शत्रुओं पर आक्रमण के लिए अपने सच्चे मित्रों को एकजुट नहीं कर सके। एक क्रांतिकारी पार्टी जनता का मार्गदर्शन करती है। यदि पार्टी ही उसको गलत रास्ते पर ले जाए, तो क्रांति कभी सफल नहीं होगी। माओ का कथन है कि इसके लिए हमें चीनी समाज के विभिन्न वर्गों की आर्थिक स्थिति और क्रांति के प्रति उनकी विविध दृष्टियों का सामान्य विश्लेषण करना चाहिए।

जमींदार वर्ग तथा दलाल वर्ग : आर्थिक रूप से पिछड़े और अर्ध-औपनिवेशिक चीन में जमींदार वर्ग और दलाल वर्ग अंतर्राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के पुछल्ले हैं। वे अपने जीवन और विकास के लिए पूर्णतः साम्राज्यवाद पर निर्भर हैं। ये वर्ग चीन में उत्पादन के सर्वाधिक पिछड़े और प्रतिक्रियावादी संबंधों के प्रतिनिधि हैं और उत्पादक शक्तियों के विकास में रोड़े अटकाते हैं। इनका अस्तित्व चीनी क्रांति के उद्देश्यों से बिलकुल असंगत है। बड़े जमींदार और बड़े दलाल सदा साम्राज्यवाद का पक्ष लेते हैं और उग्र प्रतिक्रांतिकारी समूह हैं। इनके राजनीतिक प्रतिनिधि 'राज्यवादी' (Etatistes) और दक्षिणपंथी क्वोमिन्तांग में मौजूद हैं। 'राज्यवादी दल' चीनी फासिस्टों का एक छोटा 'ग्रुप' था, जिसने बाद में 'चाइनीज यूथ पार्टी' का निर्माण किया। यह कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत संघ का उग्र विरोधी एवं प्रतिक्रियावादियों के हाथों का खिलौना था।

मध्यम बुर्जुआ वर्ग : *यह वर्ग शहर और देहात में उत्पादन के पूंजीवादी संबंधों का चीन में प्रतिनिधित्व करता है। इसे राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग भी कह सकते हैं। चीनी क्रांति के प्रति* इस वर्ग का दृष्टिकोण संशयात्मक है। जब यह विदेशी पूंजी के प्रहारों और युद्ध सामंतों के

उत्पीड़न से व्यथित होता है तो यह क्रांति की जरूरत महसूस करता है और क्रांतिकारियों का पक्षधर बन जाता है। परंतु जब वह क्रांति में सर्वहारा वर्ग की उग्र भागीदारी और अंतर्राष्ट्रीय श्रमिक वर्ग द्वारा चीनी क्रांति के समर्थन को देखता है तो वह शंकालु हो जाता है क्योंकि क्रांति के बाद वह पूंजीपति के दर्जे को खो देगा।

इस वर्ग के प्रतिनिधि ताई चीताओ ने लिखा था, 'बाएं मुक्के से साम्राज्यवादियों को गिराओ और दाएं मुक्के से साम्यवादियों को धूल चटाओ।'[22] माओ के अनुसार ये शब्द इस वर्ग की दुविधा और चिंता को प्रकट करते हैं। यह वर्ग संघर्ष के सिद्धांत के अनुसार क्वोमिन्तांग के 'जनता की जीविका के सिद्धांत' की व्याख्या के विरुद्ध है। यह रूस के साथ गठबंधन और क्वोमिन्तांग में कम्युनिस्टों और वामपंथियों के प्रवेश का विरोध करता है। लेकिन चीन में राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग के शासन की स्थापना का इस वर्ग का प्रयास कभी सफल नहीं हो सकता।

वर्तमान काल में क्रांति के लाल ध्वज और प्रतिक्रांति के सफेद झंडे के बीच में जीवन-मरण का संघर्ष चल रहा है। बीच में स्थित वर्ग विघटन के कगार पर खड़े हैं। इनके कुछ अंश क्रांति में और कुछ अंश प्रतिक्रांति में शामिल होंगे। उनके लिए चीन की दशाओं में कोई स्वतंत्र बुर्जुआ क्रांति कर पाना संभव नहीं।

निम्न बुर्जुआ वर्ग : इस वर्ग में, माओ के अनुसार, भूस्वामी किसान, मास्टर कारीगर, छोटे स्तर के बुद्धिजीवी और छोटे व्यापारी शामिल हैं। विद्यार्थी, प्राइमरी और सेकेंडरी स्कूलों के अध्यापक, निम्न स्तर के सरकारी कर्मचारी, दफ्तरों के क्लर्क और टुटपुंजिया वकील इसी वर्ग के सदस्य हैं। अपने विशाल आकार और वर्गीय चरित्र की वजह से, हमें इस वर्ग पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

भूस्वामी किसान और मास्टर कारीगर दोनों छोटे पैमाने पर उत्पादन करते हैं। यद्यपि इस वर्ग के सभी तबकों का आर्थिक दर्जा निम्न बुर्जुआ वर्ग के मुताबिक है, लेकिन फिर भी उनको तीन हिस्सों में बांटा जा सकता है। पहली श्रेणी उन लोगों की है जिनके पास धन-धान्य का अधिशेष होता है, जो उपभोग से अधिक उत्पादन करते हैं या धन कमाते हैं। यद्यपि ये कभी धनवान नहीं बन सकते लेकिन वे कुबेर (मार्शल चाओ, धन का चीनी देवता) की पूजा करते हैं। वे आर्थिक हैसियत में मध्यम बुर्जुआ वर्ग के समीप होते हैं और उसके प्रचार से प्रभावित होकर क्रांति को संदेह की नजर से देखते हैं। यह निम्न बुर्जुआ वर्ग का दक्षिणपंथ है और संख्या में लघुतम है।

दूसरे तबके में वे लोग हैं जो आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर हैं। वे पहली श्रेणी से बिलकुल भिन्न हैं। कुबेर (चाओ) धनवान होने की उनकी इच्छा को कभी पूरी नहीं करता। वे निकट अतीत में साम्राज्यवाद, युद्ध-सामंतों, सामंती जमींदारों और बुर्जुआ दलालों के उत्पीड़न से दुःखी हो गए हैं। कड़ी मेहनत के बावजूद वे अपनी न्यूनतम जरूरतों को पूरा नहीं कर पाते। वे विदेशियों को 'विदेशी राक्षस', युद्ध-सामंतों को 'डाकू सेनापति' और स्थानीय अत्याचारियों और दुष्ट जमींदारों को 'हृदयहीन धनवान' कहकर

गालियां देते हैं। साम्राज्यवाद और युद्ध-सामंत विरोधी आंदोलन के बारे में उन्हें शक है कि यह सफल नहीं होगा क्योंकि उन्हें क्रांति के दुश्मन बहुत ताकतवर लगते हैं। आंदोलन के प्रति वे तटस्थ रहते हैं लेकिन वे क्रांति का कभी विरोध नहीं करते। दूसरा तबका संख्या में काफी बड़ा है और कुल निम्न बुर्जुआ वर्ग का लगभग आधा है।

इस वर्ग की तीसरी श्रेणी में, माओ के अनुसार, वे लोग हैं जिनका जीवन स्तर निरंतर नीचे गिर रहा है। पहले वे अपनी न्यूनतम जरूरतों को कठिन श्रम के द्वारा पूरा कर लेते थे, लेकिन अब वे ऐसा करने में अक्षम हैं और अभावों की जिंदगी जी रहे हैं। उनके ऋण बढ़ते जाते हैं और जीवन बहुत कष्ट में बीत रहा है। वे अपने अतीत और वर्तमान के बीच के अंतर से मानसिक परेशानी महसूस करते हैं। ये क्रांति के लिए एक महत्वपूर्ण श्रेणी के अंग हैं। इनकी संख्या विशाल है और इन्हें निम्न बुर्जुआ वर्ग का वामपंथ समझा जा सकता है।

साधारण काल में निम्न बुर्जुआ वर्ग की तीनों श्रेणियों के बीच में क्रांति के प्रति उनके रुझानों में भेद होता है। लेकिन युद्ध के समय, जब क्रांति का ज्वार ऊपर चढ़ता है, तो निम्न बुर्जुआ वर्ग का न केवल वाम पक्ष बल्कि उसके मध्यवर्ती और दक्षिण पक्ष भी क्रांति की धारा में शामिल हो जाते हैं। हम 1925 के 30 मई के आंदोलन और अनेक स्थानों में किसान आंदोलनों के अनुभवों के आधार पर माओ के इस निष्कर्ष के औचित्य को देख सकते हैं। 30 मई का आंदोलन शंघाई में ब्रिटिश पुलिस द्वारा चीनी छात्रों को बंदूक की गोलियों से हताहत करने के विरुद्ध एक राष्ट्रव्यापी साम्राज्यवाद विरोधी जन आंदोलन था।

अर्ध-सर्वहारा वर्ग : माओ के अनुसार इस वर्ग की पांच श्रेणियां हैं : (1) अर्ध-भूस्वामी किसानों का अधिकांश, (2) गरीब किसान, (3) छोटे दस्तकार, (4) दुकानों के नौकर, और (5) फेरी वाले। अर्ध-भूस्वामी और गरीब किसान दोनों मिलकर ग्रामीण जनता के विशाल बहुमत का निर्माण करते हैं। इस वर्ग के लोग भूस्वामी किसानों और मास्टर कारीगरों की तुलना में और भी ज्यादा छोटे पैमाने पर उत्पादन करते हैं। आर्थिक दशा के आधार पर अर्ध-भूस्वामियों और छोटे कारीगरों को भी तीन भागों में बांटा जा सकता है : उच्चतर, मध्यम और निम्नतम।

उच्चतर अर्ध-भूस्वामी खेती की पैदावार से अपनी जरूरतों को पूरा नहीं कर सकते। वे अतिरिक्त अनाज को ऊंची कीमतों पर खरीदते हैं, जमींदारों की भूमि पर कुछ समय काम करने को मजबूर हैं, कोई अतिरिक्त पेशा जैसे मुर्गी या सूअर पालन आदि करने के लिए विवश हैं। ये लोग भूस्वामी कृषकों की तुलना में अधिक क्रांतिकारी हैं।

निर्धन किसान असामी किसान हैं जिन्होंने जमींदारों से किराए पर भूमि ली है। इनके पास खेती के अपने औजार हैं, ये पैदावार का आधा हिस्सा जमींदार को सौंप देते हैं। इनका जीवन अर्ध-भूस्वामियों की तुलना में भी अधिक अभावग्रस्त और कष्टमय है और इसलिए उनकी अपेक्षा इनमें क्रांतिकारिता की भावना भी अधिक है। निम्नतम श्रेणी में ऐसे

किसान हैं, जिनके पास किराए की जमीन भी नहीं है। ये अपनी पैदावार का तिहाई या चौथाई हिस्सा अपने पास रख पाते हैं। इनके पास खेती के लिए अपने औजार भी नहीं होते। माओ के अनुसार इस वर्ग के लोग कर्ज में डूबे रहते हैं। क्रांति के प्रति आकर्षण इन लोगों में अधिकतम होता है।

दुकानों पर काम करने वाले नौकरों की जिंदगी भी बहुत दु:खमय और अभावग्रस्त होती है। छोटे कारीगरों और फेरी वालों की दशा भी वैसी ही होती है। उन्हें भी पूरा भोजन नहीं मिलता और वे भी अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ होते हैं। गरीब किसानों की तरह उनकी भी क्रांति में काफी दिलचस्पी होती है क्योंकि वही उनकी दयनीय जीवन दशा को बदल सकती है। माओ का विचार है कि जनवादी क्रांति में अर्ध-सर्वहारा वर्ग के सभी तबके न्यूनाधिक रूप से सर्वहारा वर्ग के घनिष्ठ मित्र हैं और उसके साथ जनवादी गठबंधन में एकजुट होने के लिए तत्पर हैं।

सर्वहारा वर्ग : चीन में आधुनिक औद्योगिक सर्वहारा वर्ग की संख्या बीस लाख है। यह संख्या थोड़ी है क्योंकि चीन आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा है। ये बीस लाख मजदूर मुख्यत: पांच उद्योगों में कार्यरत हैं : रेलवे, खदान, जल यातायात, कपड़ा और जहाज निर्माण; और भारी संख्या विदेशी पूंजीपतियों के कारखानों में गुलामी करते हैं। संख्या में सीमित होने पर, औद्योगिक सर्वहारा वर्ग आधुनिक चीन में क्रांतिकारी आंदोलन की प्रधान शक्ति बन गया है। चीनी क्रांति में इस वर्ग की महत्वपूर्ण शक्ति पिछले चार वर्षों में इसके द्वारा की जाने वाली हड़तालों की संख्या और विस्तार से प्रकट होती है। इनमें जहाज कर्मचारियों की हड़तालें, रेल मजदूरों की हड़ताल, कैंटन-शामीन हड़ताल, शंघाई और हांगकांग की आम हड़तालें, कोयले की खानों की हड़तालें शामिल हैं।

औद्योगिक श्रमिकों की भूमिका के महत्व का पहला कारण उनका संकेंद्रण है। जनता का कोई दूसरा अंश इतना संकेंद्रित नहीं है। दूसरा कारण उनकी निम्न आर्थिक स्थिति है। उनके पास उत्पादन के कोई उपकरण नहीं हैं। वे केवल अपने हाथों की मेहनत पर निर्भर हैं। अमीर बनने की उनकी सभी उम्मीदें टूट चुकी हैं। साम्राज्यवादी, युद्ध सामंत और पूंजीपति उनका निर्दयता से शोषण करते हैं। इसीलिए वे इतने अच्छे योद्धा हैं।

इसके अलावा हमें शहर के कुलियों पर भी ध्यान देना चाहिए। इनमें गोदी कर्मचारी, हाथ-रिक्शा खींचने वाले, पालकी ढोने वाले, सफाई कर्मचारी, ठेला चलाने वाले, घरेलू नौकर-नौकरानियां आदि शामिल हैं। इस वर्ग के लोग औद्योगिक मजदूरों की तरह गरीब हैं, लेकिन उनकी तुलना में उनकी भूमिका उत्पादन में कम है और उनका संकेंद्रण भी कम है। अन्य मजदूरों की तुलना में उनके काम के घंटे अधिकतम हैं; मजदूरी की दर न्यूनतम है; कार्य दशाएं सबसे ज्यादा खराब हैं; एवं काम की सुरक्षा बिलकुल नहीं है। गांवों में ऐसे कुलियों, नौकरों और मजदूरों की दशा सर्वाधिक दुखद है। किसान आंदोलन में इस तुच्छ, निम्नतम श्रेणी का उतना ही अधिक महत्व है जितना स्वयं निर्धन किसानों का।

इनके अलावा, एक लुंपन-सर्वहारा वर्ग भी है, जिसकी संख्या भी काफी है। यह ऐसे

किसानों का वर्ग है, जिनके पास भूमि नहीं है और ऐसे कारीगरों की श्रेणी है, जिन्हें काम नहीं मिलता। इनकी दशा अधिकतम शोचनीय और कष्टप्रद है। देश के प्रत्येक भाग में इनकी भूमिगत संस्थाएं हैं जो मूल रूप से आर्थिक और राजनीतिक संघर्ष के लिए इनके 'आपसी सहायता संगठन' थे। इनमें कुछ संगठनों के नाम हैं : त्रिवर्ग समाज, बंधु समाज, वृहद खड्ग समाज, विवेकशील जीवन समाज, ग्रीन बैंड समाज, इत्यादि। ये लोग वीर किंतु विध्वंसकारी योद्धा हैं। समुचित मार्गदर्शन द्वारा इन्हें क्रांतिकारी शक्ति में बदला जा सकता है।

सारांश यह है कि जनवादी क्रांति के शत्रु वे वर्ग हैं, जिनका साम्राज्यवादियों के साथ गठबंधन है—युद्ध-सामंत, सरकारी नौकरशाह, दलाल वर्ग, बड़े जमींदारों का वर्ग, और इनसे जुड़ा हुआ प्रतिक्रियावादी बुद्धिजीवियों का तबका। माओ के अनुसार जनवादी क्रांति में नेतृत्व प्रदान करने वाली शक्ति औद्योगिक सर्वहारा वर्ग है। क्रांति के निकटतम मित्र क्रमश: संपूर्ण अर्ध-सर्वहारा वर्ग और निम्न बुर्जुआ वर्ग हैं। जहां तक ढुलमुल मध्यम पूंजीपति वर्ग का संबंध है, इसका दक्षिणपक्ष क्रांति का संभावित शत्रु और वामपक्ष संभावित मित्र है। क्रांतिकारियों को इस वर्ग से सावधान रहना चाहिए और अपनी पंक्तियों में इस संदिग्ध वर्ग को भ्रांति उत्पन्न करने का मौका नहीं देना चाहिए।

किसान आंदोलन की समस्याएं

मार्च 1927 में माओ त्सेतुंग ने हुनान प्रांत के पांच जनपदों श्यांगतान, श्यांगश्यांग, हेंगशान, लीलिंग और चांगशा का 32 दिन सर्वेक्षण करने के बाद अपनी रिपोर्ट लिखी। इसमें किसानों के क्रांतिकारी संघर्ष की आलोचनाओं का उत्तर दिया गया था। दक्षिणपंथी चेन तूश्यू ने उनके विचारों को अस्वीकार कर दिया। प्रतिक्रियावादी क्वोमिन्तांग के भय से उसमें किसान संघर्षों के समर्थन की हिम्मत नहीं थी। क्वोमिन्तांग के तुष्टीकरण के लिए चेन तूश्यू और उसके अवसरवादी साथियों ने किसानों का साथ छोड़ दिया, जो क्रांति में श्रमिक वर्ग का मुख्य मित्र था। इस नीति ने कम्युनिस्ट पार्टी और सर्वहारा वर्ग को अकेला और असहाय छोड़ दिया। कम्युनिस्ट पार्टी की इस दुर्बलता से लाभ उठाकर क्वोमिन्तांग ने अपनी पार्टी से वामपंथियों को निकाल दिया और 1927 की गरमियों में प्रतिक्रांति द्वारा क्रांतिकारी आंदोलन का दमन कर दिया।

माओ ने इस रिपोर्ट में बताया कि हैंकाऊ और चांगशा के शासक किसान आंदोलन के बारे में अनभिज्ञ हैं। उन्हें अपनी गलत नीतियों को तुरंत बदलना चाहिए। उसने कहा कि जल्दी ही संपूर्ण चीन में किसान आंदोलन एक शक्तिशाली आंधी और तूफान की तरह उमड़ने वाला है। करोड़ों किसान इसमें झंझावात की भांति उठ खड़े होंगे जिसे कोई सत्ता दबा नहीं सकती। वे सभी साम्राज्यवादियों, युद्ध सामंतों, भ्रष्ट प्रशासकों, स्थानीय अत्याचारियों और दुष्ट जमींदारों का विध्वंस कर देंगे। प्रत्येक क्रांतिकारी दल और

कार्यकर्ता के सामने तीन विकल्प हैं। उनकी अगली पंक्ति में खड़े होकर उनका नेतृत्व करो? उनकी आलोचना करते हुए उनके पीछे घिसटो? या उनका रास्ता रोककर उनका विरोध करो? प्रत्येक चीनी अपना मार्ग चुनने के लिए स्वतंत्र है लेकिन इसका चयन शीघ्र करना पड़ेगा।

माओ ने बताया कि किसान संघों की स्थापना तेजी से हो रही थी। जनवरी से सितंबर 1926 तक इसके सदस्यों की संख्या तीन या चार लाख थी और दस लाख किसान उनके प्रभाव में थे। अक्तूबर से जनवरी 1927 तक सदस्य संख्या बढ़कर बीस लाख हो गई और किसान संघों के प्रभाव में लगभग एक करोड़ लोग हो गए। स्थानीय अत्याचारियों और दुष्ट जमींदारों के खिलाफ आंदोलन तेज हो गया। हजारों साल से प्रचलित उनके विशेषाधिकार, प्रतिष्ठा और शक्तियां लुप्त होने लगीं।

मध्यम और लघु जमींदारों और धनी किसानों ने किसान संघों की सदस्यता प्राप्त करने की चेष्टा की लेकिन गरीब और मंझोले किसानों ने उन्हें दुत्कार दिया। किसानों के विद्रोह ने जमींदारों के सपने चूर-चूर कर दिए। क्वोमिन्तांग दल के दक्षिणपंथी, जमींदारों और अन्य शोषक वर्गों का कहना था कि परिस्थिति भयंकर हो गई है, परंतु प्रगतिशील लोग कहते थे, सब कुछ अच्छा हो रहा था। माओ का कथन है :

> तथ्य यह है कि विशाल कृषक जनता अपने ऐतिहासिक मिशन को पूरा करने के लिए और ग्रामीण लोकतंत्र की शक्तियां ग्रामीण सामंतवाद की शक्तियों को उखाड़ने की कोशिश में लगी हैं। स्थानीय अत्याचारियों, दुष्ट भद्र वर्ग, और कानून विरोधी जमींदारों की पितृसत्तावादी सामंती श्रेणी ने हजारों साल से अपने स्वेच्छाचारी शासन स्थापित कर रखा था और साम्राज्यवाद, युद्ध सामंतवाद और भ्रष्टाचारी नौकरशाही की आधारशिला बन गई थी। इन सामंतवादी शक्तियों का उन्मूलन करना राष्ट्रवादी क्रांति का वास्तविक उद्देश्य है।[23]

किसान आंदोलन के आलोचक कहते हैं कि यह अपनी हद से आगे बढ़ रहा था या कि यह आलसी, कामचोर किसानों का तमाशा है। किसान जमींदारों की पालकियां तोड़ देते हैं, उन्हें घोड़े से उतारकर पैदल चलाते हैं, और उनके विरुद्ध हिंसक नीति अपनाते हैं। उनकी भूमि पर कब्जा कर उसे आपस में बांट लेते हैं। उन्हें गधे की टोपियां पहनाकर, मुंह पर कालिख पोतकर सारे गांव में घुमाते हैं। माओ त्सेतुंग कहते हैं :

> स्थानीय अत्याचारियों, दुष्ट भद्र लोगों और कानून विरोधी जमीदारों ने....युगों से किसानों पर भयानक अत्याचार किए हैं और अपने पैरों तले कुचला है; किसानों की तीखी प्रतिक्रिया का यही कारण है।....क्रांति कोई प्रतिभोज नहीं है, न यह लेख लिखना, या चित्र बनाना है....यह कोई सुशील, अवकाशयुक्त, विनीत, शांत, उदार, शिष्ट, संयमित और दयालु क्रिया नहीं है। क्रांति जनता का विप्लव है, हिंसा का एक कृत्य जिसमें एक वर्ग दूसरे वर्ग की सत्ता उखाड़ फेंकता है। ग्रामीण क्रांति एक ऐसी क्रांति है जिसके द्वारा कृषक वर्ग सामंती जमींदार वर्ग की सत्ता का उन्मूलन करता है।

> अधिकतम शक्ति के प्रयोग के बिना हजारों साल से स्थापित जमींदारों की सुदृढ़ सत्ता का कृषक वर्ग संभवत: उन्मूलन नहीं कर सकता।[24]

क्रांति के विषय में सभी किसानों का दृष्टिकोण एक जैसा नहीं है। धनी किसान क्रांति का विरोध करते हैं और किसान संघों के सदस्य नहीं बनते। मध्यम किसान क्रांति के प्रति तटस्थ और उदासीनता का रुख अपनाते हैं। गरीब किसान व्यवहार से क्रांतिकारी है :

> निर्धन किसान....कम्युनिस्ट पार्टी से अधिकतम सहानुभूति रखते हैं।....वे किसान संघों की रीढ़ की हड्डी हैं।....गरीब किसान वर्ग के बिना ग्रामीण क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिस्थिति पैदा करना असंभव था।[25]

किसान संघों का पहला काम जमींदारों की राजनीतिक शक्ति और प्रतिष्ठा को नष्ट करना है। इसके कई तरीके हैं—उनके लेखा-जोखा विवरणों में गलतियां निकालना, उन पर जुर्माने करना, राहत कार्यों के लिए उनसे चंदे वसूल करना, प्रतिरोध करना, उनके विरुद्ध विशाल प्रदर्शन करना, उन्हें गधे की टोपियां पहनाकर गांव में घुमाना, उन्हें गांव या जनपद से निर्वासित करना, जन-अदालत के द्वारा दंडित करना, घोर अपराध के लिए मृत्युदंड देना, इत्यादि।

किसान संघों का दूसरा काम उनके आर्थिक शोषण का अंत करना है। इसके भी कई तरीके हैं—अनाज को क्षेत्र से बाहर भेजने, उसकी कीमतें बढ़ाने और जमाखोरी का निषेध, लगानों और डिपोजिटों की वृद्धि पर प्रतिबंध, लगानों और डिपोजिटों को घटाने के लिए आंदोलन, जमीनों से बेदखली का निषेध, ब्याज घटाने और मूल के भुगतान के स्थगन के लिए आंदोलन।

जिले और तहसील के स्तर पर सामंती शासन का अंत कर दिया गया । सामंती सेनाओं का उन्मूलन और किसान सेनाओं का निर्माण किया गया। जनपद के मजिस्ट्रेट और उनके मातहत अधिकारियों की सत्ता समाप्त हो गई। क्रांतिकारी जन संगठनों की सत्ता स्थापित कर दी गई। न्यायाधीशों के सम्मुख मुकदमों की पेशी बंद हो गई। पुलिस, सुरक्षा गार्ड और सरकारी कर्मचारी लोगों से पैसा वसूल करने में अक्षम हो गए।

चीन में राजनीतिक सत्ता के समानांतर कुल सत्ता (Clan Authority) और देवताओं की सत्ता भी स्थापित थी। एक चौथी सत्ता स्त्रियों पर पुरुषों की सत्ता थी। कुल सत्ता का प्रयोग पितरों और पूर्वजों के मंदिरों के माध्यम से उनके पुरोहित करते थे। इसी प्रकार देवताओं की सत्ता का प्रयोग स्वर्ग और पाताल के देवी-देवताओं के माध्यम से उनके मंदिरों के पुजारी करते थे। किसान संघों ने इन अंधविश्वासों को समाप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

किसान संघों ने शिक्षा प्रसार और राजनीतिक प्रचार में भी महत्वपूर्ण योगदान किया था। उनके नारे थे—साम्राज्यवाद मुरदाबाद, भ्रष्ट अधिकारी मुरदाबाद, अत्याचारियो और दुष्ट जमींदारो मुरदाबाद। वे स्वतंत्रता, समानता और सुन यातसेन के तीन सिद्धांतों से

परिचित थे। उन्होंने जुआ खेलने, अफीम के नशे, अश्लील नाटकों, पालकियों, शराब के उत्पादन, दावतों पर अपव्यय, बैलों के वध और आवारागर्दी पर पाबंदी लगा दी। डकैती का उन्मूलन, भारी करों की समाप्ति, शिक्षा आंदोलन, सहकारिता आंदोलन, सड़क निर्माण और बांधों की मरम्मत कृषक संघों की कुछ महत्वपूर्ण नीतियां थीं।

जब च्यांग काई शेक और वांग चिंगवेई ने चीनी क्रांति के साथ विश्वासघात किया तो किसान संघों को अवैध घोषित कर उनका विघटन कर दिया गया। त्रासदी की इस स्थिति में माओ ने निर्णय किया कि राजनीतिक सत्ता केवल बंदूक की नली के द्वारा प्राप्त हो सकती है। माओ त्सेतुंग ने कहा कि हमें कम्युनिस्ट पार्टी की सैनिक शक्ति का प्रयोग सभी जमींदारों की जमीनों को जब्त करने के लिए और उन्हें किसानों में बाटंने के लिए करना चाहिए।

यह एक नए प्रकार की जन-सेना के निर्माण का प्रारंभ था जिसके द्वारा कृषि क्रांति को प्रोत्साहन दिया जा सकता था। माओ ने व्यवहार से शिक्षा लेने के अपने कौशल को दिखाया। उन्होंने जनवादी क्रांति के लिए एक नई रणनीति का सुझाव दिया। उन्होंने कहा कि नगरों पर आक्रमण करने की नीति छोड़कर ग्रामीण क्षेत्रों में आगे बढ़ना चाहिए। अनेक स्थानों में पार्टी की जुझारू ताकतों ने लडाइयां लड़ीं तथा ग्रामीण क्षेत्रों में लाल सेना का निर्माण किया। इस प्रकार नए क्रांतिकारी आधार क्षेत्रों का विकास हुआ।

ग्रामीण जनपदों में क्वोमिन्तांग सरकार का आधिपत्य दुर्बल था और वर्गीय अंतर्विरोध तीव्र हो चुके थे। इसलिए माओ त्सेतुंग को अपनी गतिविधियों का क्षेत्र ग्रामीण जनपदों की दिशा में मोड़ना पड़ा।

च्यांग्शी से येनान तक

माओ त्सेतुंग के अनुसार सैनिक संघर्ष को कृषि क्रांति से पृथक करना संभव नहीं था। हुनान-च्यांग्शी सीमांत क्षेत्रों में साठ प्रतिशत से अधिक भूमि जमींदारों के कब्जे में थी और किसानों के पास चालीस प्रतिशत से भी कम जमीन थी। यह भूमि प्रणाली चीन की व्यवस्था का आधार थी। माओ ने भूमि के पुनर्वितरण के लिए गरीब किसानों की कमेटियां बना दीं। सभी निवासियों को, चाहे वे स्त्रियां हों या पुरुष, जमीन के बराबर हिस्से बांट दिए गए। माओ के अनुसार लाल सेना के तीन बुनियादी कार्य थे :

1. संघर्ष के लिए जनता को संगठित करना, कृषि क्रांति को पूरा करना और सोवियत सरकारों की स्थापना करना।
2. छापामार लड़ाई जारी रखना, किसानों को हथियार देना और लाल सेना का विस्तार करना।
3. छापामार युद्ध के क्षेत्रों का विस्तार करना और सारे देश में उनके राजनीतिक प्रभाव को फैलाना।

हू शेंग संपादित *कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास* में लिखा है :

> कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में जनवादी क्रांति ने एक अनुपम रणनीति का अनुसरण किया। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवेश कर नगरों की चारों दिशाओं से घेराबंदी कर लेना और सशस्त्र शक्ति के द्वारा राज्य की सत्ता पर कब्जा करना....माओ त्सेतुंग ने इस प्रक्रिया में सर्वश्रेष्ठ और महान योगदान किया।[26]

क्रांति की प्रमुख शक्ति के रूप के कृषकों पर निर्भरता के सैद्धांतिक आधार की व्याख्या करते हुए माओ त्सेतुंग ने कहा :

> अर्ध-औपनिवेशिक चीन में, किसान संघर्ष मजदूरों के नेतृत्व के अभाव में कभी सफल नहीं हो सकता, परंतु यदि किसी समय किसान संघर्ष मजदूरों की ताकतों की परिधि से आगे निकल जाए तो इससे क्रांति को कोई हानि नहीं पहुंचती।[27]

जून 1930 में माओ त्सेतुंग ने 'वामपंथी' दुस्साहस पर आधारित ली लीसान की 'लाइन' का विरोध किया। ली लीसान का मत था कि न केवल चीनी क्रांति का बल्कि विश्व क्रांति की लड़ाई का निर्णायक दौर आ पहुंचा है। हालांकि दुस्साहस की इस नीति का वर्चस्व केवल तीन महीनों तक चला, उसने पार्टी और कृषि क्रांति की प्रक्रिया को बहुत हानि पहुंचाई। कोमिन्टर्न ने चाउ एनलाई और छू छिनपाई को शीघ्र चीन भेजकर ली लीसान के विचलन को सुधार दिया।

च्यांगशी सोवियत का संविधान चीन में नव-जनवादी शासन प्रणाली का पहला उदाहरण था। माओ त्सेतुंग को चीन के इस पहले जनवादी गणतंत्र का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। इस गणतंत्र की रक्षा के लिए माओ ने एक लाख से अधिक क्रांतिकारी किसानों की एक विशाल और शक्तिशाली लाल सेना का निर्माण कर लिया था। अब चीन में एक सशस्त्र क्रांति एक सशस्त्र प्रतिक्रांति के विरुद्ध लड़ रही थी।

क्वोमिन्तांग की सेनाओं ने हुनान-च्यांगशी सीमांत क्षेत्र में सोवियत गणतंत्र पर विजय पाने के लिए बार-बार आक्रमण किए। लाल सेना ने छापामार युद्ध द्वारा इन हमलों को चार बार विफल कर दिया। जब जापानी साम्राज्यवादियों ने 18 सितंबर 1931 को मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया तो, माओ के कथनानुसार, चीन के अंतर्गत वर्गीय अंतर्विरोधों की तुलना में राष्ट्रीय अंतर्विरोध ज्यादा तीव्र हो गए। परंतु चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने घोषणा की कि क्वोमिन्तांग शासन तंत्र का पतन तुरंत होने वाला था और चीन में राजनीतिक संघर्ष का मुख्य स्वरूप 'क्रांति और प्रतिक्रांति के बीच में जीवन-मरण का द्वंद्व युद्ध था।' 1933 के उत्तरार्ध में च्यांग काई शेक ने स्वयं अपने सेनापतित्व में केंद्रीय सोवियत क्षेत्र के विरुद्ध घेराबंदी और दमन' का पांचवां अभियान शुरू किया।

माओ का विचार था कि 'वामपंथी' नीति जिसके अंतर्गत जमींदारों को भूमि के पुनर्वितरण के बाद कोई भूमि नहीं दी जाती थी और धनी किसानों को बंजर धरती दी जाती थी, तत्कालीन परिस्थितियों में दुस्साहसी थी। इसलिए उन्होंने इसका विरोध किया। इस

दुस्साहसी नीति के कारण हुनान-च्यांग्शी सीमांत क्षेत्र में अव्यवस्था फैल गई। इसलिए क्वोमिन्तांग के पांचवें अभियान में लाल सेना सोवियत क्षेत्र की रक्षा करने में असमर्थ हो गई।

कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में लाल सेना के 86,000 सैनिकों ने क्वोमिन्तांग की घेराबंदी तोड़कर उत्तर-पश्चिमी सीमांत क्षेत्र की दिशा में अपनी ऐतिहासिक लंबी यात्रा (Long March) शुरू की। इसका परिणाम च्यांग्शी सोवियत गणतंत्र के विघटन और जनवादी क्रांति की अस्थायी विफलता में प्रकट हुआ। माओ ने कहा :

> हमारी रणनीति का सिद्धांत है कि हम अपने मुख्य सैन्य बलों को उत्तर में आक्रमण करने के लिए संकेंद्रित करें, गतिशील युद्ध द्वारा विशाल संख्या में शत्रुओं का विध्वंस करें और .... सिचुआन-शांशी-कांसू के सोवियत आधार क्षेत्र का निर्माण करें।[28]

च्यांग्शी-हुनान आधार क्षेत्र में चीनी सोवियत गणतंत्र की स्थापना क्यों संभव हुई, इसके विषय में माओ त्सेतुंग का मत है :

> विश्लेषण द्वारा हमें पता चलता है कि इस संगठन का एक कारण चीनी दलाल और जमींदार वर्गों में निरंतर फूट और आपसी संघर्ष था। जब तक ये विभाजन और युद्ध जारी रहते हैं, मजदूरों और किसानों की एक सशस्त्र स्वतंत्र सरकार का अस्तित्व तथा विकास संभव है। इसके अलावा, इसके अस्तित्व और विकास के लिए निम्नलिखित परिस्थितियों का होना भी आवश्यक है :(1) एक सुदृढ़ जनाधार, (2) एक सुदृढ़ पार्टी संगठन, (3) एक काफी मजबूत लाल सेना, (4) सैनिक कार्यवाहियों के लिए उपयुक्त धरातल, और (5) जीवित रहने और पोषण के लिए पर्याप्त आर्थिक संसाधन।[29]

माओ त्सेतुंग ने लाल सेना के लिए रणनीतिक सुझाव दिए :

1. सेना को शत्रु से मजबूती से लड़ना चाहिए, पीछे नहीं हटना चाहिए।
2. कृषि क्रांति को गहरा करना चाहिए।
3. सेना को पार्टी संगठनों के विस्तार में मदद करनी चाहिए।
4. शत्रु की संख्या और शक्ति देखकर रक्षात्मक या आक्रामक रणनीति निश्चित करनी चाहिए।
5. सेना को संकेंद्रित रखना चाहिए, और
6. लहरों की तरह बढ़कर आधार क्षेत्र का विस्तार करना चाहिए।

केंद्रीय समिति को पत्र भेजकर माओ ने बताया :

> राजनीतिक शिक्षा पाकर लाल सेना केसिपाही वर्ग-चेतन हो गए हैं, भूमि वितरण, राजनीतिक सत्ता की स्थापना, मजदूरों और किसानों को सशस्त्र करना इत्यादि सभी नीतियों का सारांश समझ गए हैं। वे यह भी जानते हैं कि स्वयं अपने लिए, मजदूर

वर्ग के लिए और किसानों के लिए लड़ रहे हैं। इसलिए वे बगैर शिकायत किए कठोर संघर्ष की कठिनाइयों को सह सकते हैं।[30]

लाल सेना में जनवादी सिद्धांत को लागू किया जाता था। माओ ने इसी रिपोर्ट में लिखा था :

> पार्टी की भूमिका के अतिरिक्त, लाल सेना का, खराब भौतिक स्थितियों के बावजूद, इतनी ज्यादा मुठभेड़ों में संलग्न रहना सैनिकों के प्रति जनवादी व्यवहार के कारण संभव हो सका है। अफसर सैनिकों को पीटते नहीं हैं, अफसरों और जवानों के साथ बराबरी का बरताव होता है, सैनिकों को सभा करने और अपने विचारों की अभिव्यक्ति की स्वंतत्रता है, तुच्छ औपचारिकताओं का अंत कर दिया गया है, और लेखा-जोखा का निरीक्षण सभी के लिए खुला है।.... नए बंदी सैनिक अनुभव करते हैं कि हमारी सेना और क्वोमिन्तांग की फौज के बीच बहुत अंतर है। वे भावात्मक स्तर पर स्वतंत्र होने का अनुभव करते हैं हालांकि लाल सेना की भौतिक स्थितियां श्वेत सेना की तुलना में हीनतर हैं। वे सैनिक जो श्वेत सेना में साहसहीन थे अब लाल सेना में शामिल होकर साहसी बन गए हैं। जनवाद का प्रभाव ऐसा ही होता है।[31]

जहां तक सामरिक नीति का प्रश्न है, माओ त्सेतुंग और चू तेह ने लाल सेना की छापामार युद्ध शैली का वर्णन इन शब्दों में किया, 'जब शत्रु आगे बढ़ता है, तो हम पीछे हट जाते हैं; जब शत्रु शिविर में ठहरता है, तो हम उसे निरंतर परेशान करते हैं; जब शत्रु थक जाता है, तो हम आक्रमण करते हैं; जब शत्रु पीछे हटता है, तो हम उसका पीछा करते हैं।'[32] सैनिक संघर्ष को कृषि क्रांति के कार्य से पृथक नहीं किया जा सकता था। माओ त्सेतुंग ने कृषि क्रांति को छापामार युद्ध शैली से समन्वित कर दिया था। इसी समन्वित रणनीति का उपयोग क्वोमिन्तांग के विरुद्ध और जापानी आक्रमण के विरुद्ध माओ त्सेतुंग ने समान रूप से किया। अत: च्यांगशी-हुनान क्षेत्र में चीनी सोवियत गणतंत्र की स्थापना अस्थायी भले हो, लेकिन जनवादी क्रांति की रणनीति के विकास के लिए उसका महत्व स्थायी था।

पहला चीनी सोवियत गणतंत्र

नवंबर 1931 में माओ त्सेतुंग ने रुईचिन, च्यांगशी में पहले चीनी सोवियत गणतंत्र की स्थापना की घोषणा कर दी। यह 1927 के मध्य काल के वैध साम्यवाद की समाप्ति के बाद साम्यवादी आंदोलन के उत्कर्ष को लक्षित करता था। कोमिन्टर्न अभी तक इस नीति को 'त्रात्स्कीवाद' का नाम देती रही थी। अभी तक सोवियत संघ कम्युनिस्ट छापामारों द्वारा आधार क्षेत्रों की स्थापना को मान्यता नहीं देता था।

अत: माओ त्सेतुंग ने क्वोमिन्तांग के आक्रमणों को विफल करते हुए जब च्यांगशी में सोवियत शासन की स्थापना की तो स्तालिन को भी कुछ संकोच के साथ माओ की नई रणनीति से अपनी सहमति प्रकट करनी पड़ी। कैंटन कम्यून के असफल होने पर और

नगरों पर आक्रमण करने की कोमिन्टर्न-ली लीसान लाइन के परित्याग के बाद माओ की नीति को शंघाई स्थित पार्टी की केंद्रीय समिति का समर्थन भी मिल गया।

1905 की रूसी क्रांति के समय लेनिन के सूत्र के अनुसार च्यांग्शी सोवियत गणतंत्र को माओ त्सेतुंग ने 'सर्वहारा और कृषक वर्गों का जनवादी अधिनायकत्व' बताया। लेनिन की इस परिभाषा से अभिप्राय मजदूरों और किसानों अर्थात 'सोशल डेमोक्रेटों' और 'सोशल रिवोल्यूशनरियों' के मंयुक्त शासन से था। परंतु चीनी सोवियत सरकार, ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक के अनुसार केवल कम्युनिस्टों की एकदलीय तानाशाही थी। माओ ने अभी नव-जनवादी सिद्धांत का प्रतिपादन नहीं किया था। इसलिए च्यांग्शी सरकार में संयुक्त (Coalition) सरकार का कोई लक्षण नहीं था।

इन लेखकों के अनुसार च्यांग्शी आधार क्षेत्र पूर्णत: ग्रामीण था। इसलिए वहां औद्योगिक मजदूर नहीं थे। इस अर्थ में वह श्रमिकों और कृषकों की मिली-जुली सरकार नहीं हो सकती थी। परंतु यह सही नहीं है क्योंकि सोवियत क्षेत्र में छोटे शहर और कसबे शामिल थे। इसलिए दस्तकारों, खेतिहर मजदूरों, छोटे कारखानों के श्रमिकों का वहां अस्तित्व था जिन्हें चुनावों में अन्य किसानों की तुलना में अधिक प्रतिनिधित्व दिया गया था।

सोवियत गणतंत्र की कृषि नीति उग्रवादी थी। सोवियत भूमि कानून पारित कर दिया गया था। इसके अनुसार जमींदारों की जमीनों को मुआवजा दिए बिना छीन लिया जाता है। इन अधिकृत भूखंडों का गरीब और मंझोले किसानों के बीच वितरण कर दिया जाता था। माओ त्सेतुंग ने ली लीसान की 'समूहीकरण' की नीति को अस्वीकार कर दिया था। परंतु मंझोले किसानों की भूसंपत्ति की रक्षा की गई थी और समतावादी सिद्धांत को अनुपयुक्त बताया गया था। कुछ क्षेत्रों में धनी किसानों और जमींदारों ने सोवियत सत्ता के समर्थन की घोषणा कर दी थी। इनके साथ नरमी का बरताव किया जाता था। ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक का निष्कर्ष है :

> यह बिलकुल स्पष्ट है कि रुईचिन में सोवियत सरकार का बिखरे हुए पर्वतीय क्षेत्रों पर सुदृढ़ नियंत्रण नहीं था....प्रगतिशील कानूनों का उन स्थानों में प्रभाव कम था जहां 'सोवियतों' का प्रशासन भद्र वर्ग करता था.. .सोवियत भूमि कानून में भी किसानों के 'प्रत्यक्ष' और 'स्वैच्छिक' समर्थन की शर्त थी जिसके बिना उसके अमल पर प्रतिबंध था....क्वोमिन्तांग सैन्य बलों के निरंतर आक्रमण के संदर्भ में, सोवियत गणतंत्र अपने अस्तित्व के हित में अधिक लोगों को रुष्ट और असंतुष्ट नहीं कर सकता था।[33]

सोवियत गणतंत्र के संविधान की प्रस्तावना में कहा गया कि अखिल चीनी सोवियत कांग्रेस मुक्त क्षेत्रों में इसे तुरंत लागू करेगी और क्वोमिन्तांग सरकार को युद्ध में पराजित करने के बाद इसे संपूर्ण चीन में लागू किया जाएगा। *सोवियत गणतंत्र की स्थापना का उद्देश्य संपूर्ण चीन में साम्राज्यवादी हस्तक्षेप और सामंतवादी प्रभुत्व को समाप्त करना था।* इस गणतंत्र में राजसत्ता श्रमिकों, कृषकों, लाल सेना के सैनिकों और अन्य मेहनतकश वर्गों में निहित थी। सैन्यवादियों, सरकारी नौकरशाहों , जमींदारों और पुरोहितों को राजनीतिक

अधिकारों से वंचित कर दिया गया था। तिब्बती, मंगोल आदि अल्पसंख्यकों को हान प्रजाति के समान अधिकार दिए गए थे।

संविधान में श्रमिकों के जीवन स्तर में सुधार, आठ घंटों के कार्य दिवस, न्यूनतम वेतन, सामाजिक सुरक्षा और राज्य द्वारा सहायता के प्रावधान किए गए थे। पूंजीवाद पर नियंत्रण करने और भारी करों से मुक्ति के वायदे भी किए गए थे। अनुच्छेद (9) में कहा गया था :

> चीन की सोवियत सरकार संपूर्ण चीन में श्रमिकों और कृषकों की क्रांति की अंतिम विजय के लिए प्रत्येक संभव प्रयास करेगी। वह घोषणा करती है कि क्रांतिकारी वर्ग संघर्ष में योगदान करना संपूर्ण श्रमजीवी जनता का कर्तव्य है।....क्रांति की रक्षा के लिए शस्त्र धारण करने का अधिकार केवल श्रमिकों, कृषकों तथा श्रमजीवी जनता को प्राप्त होगा। सभी प्रतिक्रांतिकारी और शोषण करने वाले तत्वों को पूर्णत: शस्त्रविहीन कर दिया जाएगा।[34]

अनुच्छेद (10) में श्रमिकों, कृषकों और श्रमजीवी तत्वों को अभिव्यक्ति और सभा करने की स्वतंत्रता दी गई लेकिन प्रतिक्रियावादी तत्वों को नागरिक स्वतंत्रताओं से वंचित रखा गया :

> सोवियत गणतंत्र के व्यापक जनतंत्र की अभिव्यक्ति सर्वप्रथम चुनावों में होती है।.... उसके बाद, सोवियत लोकतंत्र की अभिव्यक्ति नगर और जनपद परिषदों द्वारा होती है।...सोवियतों की लोकतांत्रिक प्रकृति इस तथ्य से प्रकट होती है कि क्रांतिकारी जनसमूहों को भाषण, एकत्र होने, सभा, प्रकाशन और हड़ताल करने की स्वतंत्रताएं प्राप्त हैं।[35]

माओ का नव-जनवाद

नव-जनवाद के बारे में शीर्षक से माओ त्सेतुंग ने एक लेख येनान से प्रकाशित *चीनी संस्कृति* नामक पत्रिका में 19 जनवरी 1940 को प्रकाशित किया। यद्यपि जापान विरोधी युद्ध के कारण चीन में उत्साह और देशभक्ति का वातावरण था, परंतु कुछ बुद्धिजीवी शत्रु से समझौते और साम्यवाद विरोध की बात कर रहे थे। संयुक्त मोरचे में दरार पड़ने लगी थी। माओ ने इस लेख में देश की राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रवृत्तियों की व्याख्या करते हुए अपने नव-जनवाद के सिद्धांत का प्रतिपादन किया।

माओ त्सेतुंग ने कहा कि वैज्ञानिक पद्धति 'सत्य को तथ्यों में खोजती है।' चीन इस समय गंभीर विपत्तियों को झेल रहा है। केवल वैज्ञानिक पद्धति और उत्तरदायित्व की भावना से इनका हल निकाला जा सकता है। अनेक वर्षों से कम्युनिस्ट सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक क्रांति के लिए संघर्ष कर रहे हैं। हम एक नए समाज, नए राज्य

और नए राष्ट्र का निर्माण करना चाहते हैं।

कई हजार वर्षों से चीन की राजनीति, अर्थनीति और संस्कृति सामंतवादी रही है। विदेशी पूंजीवाद के आक्रमण तथा चीनी समाज में पूंजीवादी तत्वों के उदय से चीन में उपनिवेशी (जापान-अधिकृत क्षेत्रों में), अर्ध-उपनिवेशी और अर्ध-सामंती व्यवस्था स्थापित हो गई है। हमें इस व्यवस्था की आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक पद्धतियों के विरुद्ध लड़ना है। माओ त्सेतुंग का कथन है :

> अपने ऐतिहासिक क्रम के अनुसार चीनी क्रांति को दो चरणों से गुजरना है, पहला चरण जनवादी क्रांति का और दूसरा चरण समाजवादी क्रांति का है। अपनी प्रकृति के अनुसार ये दो बिलकुल भिन्न प्रक्रियाएं हैं। यहां जनवाद या लोकतंत्र पुराने ढंग का नहीं है, यह पारंपरिक लोकतंत्र नहीं है, यह नए प्रकार का लोकतंत्र है जिसको *नव-जनवाद* का नाम देना चाहिए।[36]

इसलिए चीन की नई राजनीति नव-जनवाद की राजनीति है. चीन की नई अर्थनीति नव-जनवाद की अर्थनीति है; और चीन की नई संस्कृति भी नव-जनवाद की संस्कृति है। चीनी क्रांति की ये ऐतिहासिक विशेषताएं हैं। जो राजनीतिक दल, समूह या व्यक्ति चीनी क्रांति में भाग लेते समय इस तथ्य को ध्यान में नहीं रखेगा वह उसे विजय की दिशा में नहीं ले जा सकता। जनता उसे दूर फेंक देगी।

नव-जनवाद चीनी शैली का लोकतंत्र है, जो अफीम युद्धों से अब तक जारी साम्राज्यवादी आक्रमणों, प्रथम विश्वयुद्ध और अक्तूबर समाजवादी क्रांति, तथा साम्राज्यवाद के विरुद्ध चीनी जनता के संघर्ष से उत्पन्न हुआ है। यह चीनी क्रांति का पहला चरण है। इसके द्वारा चीन की उपनिवेशी, अर्ध-उपनिवेशी और अर्ध-सामंती सामाजिक व्यवस्था का उन्मूलन कर एक स्वाधीन और जनवादी समाज की स्थापना की जाएगी। दूसरे चरण में समाजवादी सामाजिक व्यवस्था का निर्माण और विकास किया जाएगा। इस समय चीनी क्रांति पहला कदम उठा रही है।

चीनी क्रांति की शुरुआत एक तरह से अफीम युद्ध (1839–1842) में दिखाई पड़ती है जब चीनी समाज सामंतवाद से अर्ध-उपनिवेशवाद और अर्ध-सामंतवाद की ओर उन्मुख हुआ। उसके बाद ताइपिंग आंदोलन, चीन-फ्रांस युद्ध, चीन-जापान युद्ध, 1898 का सुधार आंदोलन, 1911 की क्रांति, 4 मई का आंदोलन, उत्तरी अभियान, कृषि क्रांति का युद्ध, वर्तमान जापान विरोधी संघर्ष हुए।

माओ त्सेतुंग का मत है, 'फिर भी, चीन की बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति में, 1914 में प्रथम साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध और 1917 में रूसी अक्तूबर क्रांति के बाद, जब भूमंडल के छठे भाग में समाजवादी राज्य स्थापित हुआ, एक गुणात्मक परिवर्तन हुआ।' इसके पहले चीन की बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति पुरानी विश्व बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति का अंग थी। इन घटनाओं के बाद इसका चरित्र बदल गया है। आज क्रांति की शक्तियों के संबंधों में परिवर्तनों की वजह से चीन की लोकतांत्रिक क्रांति 'सर्वहारा वर्गीय समाजवादी विश्व

क्रांति का अंग बन गई है।'[37]

इस क्रांति की सामाजिक प्रकृति क्या है? माओ के अनुसार बुनियादी तौर पर अब भी यह बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति है जिसका उद्देश्य पूंजीवादी विकास की बाधाओं को हटाना है लेकिन इसका लक्ष्य भविष्य में बुर्जुआ अधिनायकत्व के राज्य की स्थापना करना नहीं है। इसका उद्देश्य नव-जनवादी समाज के अंतर्गत ऐसे नए राज्य की स्थापना करना है जो सभी क्रांतिकारी वर्गों का संयुक्त अधिनायक तंत्र होगा। समाजवादी क्रांति के पूर्व जनवादी क्रांति के चरित्र में मौलिक अंतर नहीं हो सकेगा हालांकि इसकी प्रगति की प्रक्रिया में मित्रों और शत्रुओं की शक्तियों के संतुलन के अनुसार नीतिगत परिवर्तन किए जाएंगे।

वर्तमान चीनी क्रांति नई शैली की लोकतांत्रिक क्रांति है, यह नई शैली की सर्वहारा वर्गीय क्रांति नहीं है। फिर भी यह नव-जनवादी क्रांति विश्व सर्वहारा वर्गीय क्रांति से अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है। माओ त्सेतुंग का मत है :

> इस क्रांति के पहले चरण का उद्देश्य निश्चित रूप से चीनी बुर्जुआजी के अधिनायकत्व में पूंजीवादी समाज का निर्माण करना नहीं है, बल्कि इसका ध्येय सभी क्रांतिकारी वर्गों के संयुक्त अधिनायकत्व के द्वारा नव-जनवादी समाज की स्थापना करना है। पहले चरण की पूर्ति के बाद इसे दूसरे चरण में विकसित किया जाएगा अर्थात चीनी समाजवादी समाज का निर्माण किया जाएगा।[38]

नव-जनवाद की राजनीति

चीन में यह बात स्पष्ट हो गई थी कि जो लोग वास्तव में साम्राज्यवाद और सामंतवाद के उन्मूलन में जनता का नेतृत्व करेंगे, जनता उनमें ही निष्ठा रखेगी। जनता के इन दो शत्रुओं में साम्राज्यवाद ही इस समय प्रमुख शत्रु है। अत: आज उन्हें ही जनता अपना रक्षक समझेगी जो जापानी साम्राज्यवाद को पराजित करने में जनता को नेतृत्व प्रदान करने में सक्षम हैं, और जो व्यवहार में लोकतंत्र को क्रियान्वित कर सकते हैं। यदि बुर्जुआ वर्ग अपने इस कर्तव्य का पालन करता है तो वह निश्चय ही प्रशंसा का पात्र है। अन्यथा, इसका पूरा उत्तरदायित्व सर्वहारा वर्ग के कंधों पर पड़ेगा।

इसलिए परिस्थितियां कुछ भी हों, चीनी सर्वहारा वर्ग, किसान वर्ग, बुद्धिजीवी श्रेणी और अन्य निम्न बुर्जुआ तत्व ही वे प्रधान शक्ति हैं जिन पर चीन का भाग्य निर्भर है। ये वर्ग या तो जाग गए हैं या जाग रहे हैं और चीन के लोकतांत्रिक गणराज्य के सरकारी और राज्यगत ढांचे के बुनियादी अंग होंगे। चीन का लोकतांत्रिक गणराज्य, जिसकी रचना करना कम्युनिस्ट पार्टी का लक्ष्य है, सभी साम्राज्यवाद विरोधी और सामंतवाद विरोधी लोगों के अधिनायक तंत्र का स्वरूप ही ग्रहण कर सकता है अर्थात यह नव-जनवादी गणतंत्र ही होगा। दूसरे शब्दों में, इसके आधार डॉ. सुन यातसेन द्वारा प्रस्तावित जनता के तीन सिद्धांत

होंगे जिन्हें उनके सच्चे क्रांतिकारी अर्थ में क्रियान्वित किया जाएगा। इसमें उनकी तीन महान नीतियां शामिल हैं : सोवियत संघ से मित्रता, कम्युनिस्टों से गठबंधन और मजदूरों तथा किसानों के कल्याण के लिए कार्य करना।

माओ त्सेतुंग का मत है कि नव-जनवादी गणतंत्र को एक तरफ पश्चिमी शैली के बुर्जुआ लोकतंत्रों से अलग करना चाहिए जो वास्तव में बुर्जुआ वर्ग के अधिनायक तंत्र हैं और दूसरी ओर इसे सोवियत शैली के गणतंत्र से भी अलग करना चाहिए जो सर्वहारा वर्गीय अधिनायकत्व के अधीन है। सोवियत शैली का गणतंत्र भविष्य में सभी प्रगतिशील, समाजवादी देशों में स्थापित होगा। परंतु वर्तमान ऐतिहासिक युग में इसे भूतपूर्व औपनिवेशिक और अर्ध-उपनिवेशी देशों में लागू नहीं किया जा सकता। इन देशों की राज्य प्रणाली क्रांति के उपरांत नव-जनवादी गणराज्य प्रणाली ही हो सकती है। माओ के अनुसार यह संक्रमणकालीन व्यवस्था है, लेकिन फिर भी नव-जनवादी चरण इन देशों के गणतंत्रों के लिए एक आवश्यक और अनिवार्य चरण है।

अत: राज्य की प्रणालियों को आधारभूत रूप से, उनकी सामाजिक प्रकृति के अनुसार, तीन वर्गों में बांटा जा सकता है :

1. बुर्जुआ अधिनायकत्व के गणतंत्र।
2. सर्वहारा अधिनायकत्व के गणतंत्र।
3. अनेक वर्गों के संयुक्त अधिनायकत्व के गणतंत्र।

माओ के अनुसार पहले वर्ग में पुराने लोकतांत्रिक देश हैं। दूसरे साम्राज्यवादी युद्ध के छिड़ने के बाद, पूंजीवादी देशों में लोकतंत्र की सांस बची नहीं है। ये देश या तो वीभत्स और रक्तरंजित बुर्जुआ तानाशाही में बदल चुके हैं या बदल रहे हैं। कुछ देशों में जमींदारों और पूंजीपतियों की मिली- जुली तानाशाही है। उनका वर्गीकरण भी इसी वर्ग में हो सकता है।

दूसरे वर्ग मे सोवियत गणतंत्र है। पूंजीवादी देशों में, माओ के अनुसार, एक राजनीतिक मंथन हो रहा है। वहां भी कालांतर में सोवियत शैली के गणतंत्र स्थापित हो जाएंगे। आगामी युग में यह विश्व भर में गणराज्य की प्रमुख पद्धति बनेगी।

तीसरे वर्ग में वे संक्रमणकालीन गणतंत्र हैं, जिनकी स्थापना क्रांति के बाद भूतपूर्व उपनिवेशों या अर्ध-उपनिवेशों में की जाएगी। स्थानीय कारणों से इनकी विशेषताओं में कुछ भिन्नता भी हो सकती है लेकिन राज्य और शासन के रूप बुनियादी तौर पर एक ही तरह के होंगे अर्थात उनका स्वरूप एक नव-जनवादी गणतंत्र का होगा जो अनेक साम्राज्यवाद विरोधी वर्गों के संयुक्त अधिनायकत्व के अधीन होगा।

वर्तमान चीन में (1940) नव-जनवादी राज्य की प्रणाली जापान विरोधी संयुक्त मोरचे का स्वरूप ग्रहण करेगी। यह जापान विरोधी, साम्राज्यवाद विरोधी और संयुक्त मोरचे में एकजुट अनेक क्रांतिकारी वर्गों का एक गठबंधन है। राज्य की प्रणाली अनेक क्रांतिकारी वर्गों के संयुक्त अधिनायकत्व और शासन प्रणाली लोकतांत्रिक केंद्रवाद के

सिद्धांतों और व्यवहार पर आधारित है।

नव-जनवाद की यही राजनीति है। नव-जनवाद का यही गणतंत्र है। यह जापान विरोधी संयुक्त मोरचे का गणतंत्र है। यह जनता के तीन सिद्धांतों का गणतंत्र है। इसमें डॉ. सुन यातसेन की तीन नीतियां समन्वित हैं। यह चीन का ऐसा गणतंत्र है जो केवल नाम का नहीं बल्कि वास्तविक है। वर्तमान काल में (1940), माओ के अनुसार, क्वोमिन्तांग शासित गणतंत्र नाममात्र का गणराज्य है, उसमें लोकतंत्र की वास्तविकता का अभाव है। कम्युनिस्टों का कर्तव्य है कि गणतंत्र के इस नाम को वे वास्तविक बनाने की कोशिश करें।

नव-जनवादी राजनीति चीनी गणतंत्र के आंतरिक राजनीतिक संबंधों में परिवर्तन करना चाहती है। क्रांतिकारी चीन, जो जापानी साम्राज्यवाद से संघर्ष कर रहा है, नए लोकतांत्रिक संबंधों के सृजन में असफल नहीं होना चाहिए। साम्यवादी दल ने मुक्त क्षेत्रों में नव-जनवादी राजनीतिक पद्धति को लागू कर दिया है। उसका लक्ष्य राष्ट्रीय स्तर पर नव-जनवादी राजनीति द्वारा नव-जनवादी गणराज्य की स्थापना करना है।

नव-जनवादी अर्थनीति

यदि ऐसे गणतंत्र की स्थापना चीन में की जानी है, तो वह न केवल अपनी राजनीति में बल्कि अपनी अर्थनीति में भी नव-जनवादी होना चाहिए। यह गणराज्य बड़े बैंकों, बड़े औद्योगिक और वाणिज्यिक उद्यमों का स्वामी होगा। माओ त्सेतुंग कहते हैं :

> सभी उद्यमों का, जैसे बैंकों, रेल मार्गों, वायु मार्गों का संचालन और प्रशासन राज्य करेगा, चाहे वे चीनियों के या विदेशियों के स्वामित्व में हों, जिनका चरित्र या तो एकाधिकारी है या वे निजी प्रबंधन की दृष्टि से बडे आकार के हैं, जिससे निजी पूंजी जनता की जीविका पर प्रभुत्व स्थापित न कर सके। पूंजी पर नियंत्रण का यह मुख्य सिद्धांत है।[39]

क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट सहयोग के काल में यह क्वोमिन्तांग की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस के घोषणापत्र का अंश है और यह नव-जनवादी गणतंत्र की आर्थिक प्रणाली के लिए बिलकुल सही नीति है। सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में नव-जनवादी गणतंत्र में इन्हीं प्रमुख उद्यमों का समाजवादी चरित्र होगा और ये अर्थव्यवस्था की प्रधान शक्ति होंगे। परंतु नव-जनवादी राज्य सामान्य रूप से पूंजीपतियों की निजी संपत्ति को न तो जब्त करेगा और न पूंजीवादी उत्पादन के विकास पर प्रतिबंध लगाएगा, जब तक ये पूंजीवादी उद्यम जनता को जीविका पर दुष्प्रभाव नहीं डालते, क्योंकि चीन की अर्थव्यवस्था (1940) अभी भी बहुत पिछड़ी हुई है।

माओ का मत है कि नव-जनवादी गणतंत्र जमींदारों की भूमि के अधिग्रहण के लिए और उस भूमि को गरीब किसानों में बांटने के लिए सभी आवश्यक कदम उठाएगा। जमींदारों की जमीनों को मुआवजा दिए बगैर जब्त कर लिया जाएगा किंतु जो जमींदार

देशभक्त हैं और अपनी जमीन पर खुद खेती करना चाहते, उन्हें अपने भरण-पोषण के लिए भूमि आवंटित की जा सकती है। डॉ. सुन यातसेन ने 'जमीन जोतने वाले को दो' का सही नारा दिया था। कम्युनिस्ट उसे क्रियान्वित करेंगे और ग्रामीण क्षेत्रों में सामंती संबंधों का अंत कर देंगे।

नव-जनवादी क्रांति के चरण में भूमि किसान की निजी संपत्ति होगी। ग्रामीण क्षेत्रों में धनी किसानों की अर्थनीति को जारी रखा जाएगा। 'भूमि स्वामित्व के समानीकरण' की नीति का अभिप्राय यही है। 'भूमि जोतने वाले की' यह नव-जनवादी अर्थनीति का सही नारा है। सामान्य रूप से इस नव-जनवादी चरण में समाजवादी कृषि की स्थापना नहीं की जाएगी। परंतु 'भूमि जोतने वाले की' के सिद्धांत के आधार पर विभिन्न प्रकार के सहकारी उद्यमों का विकास किया जाएगा, जिनमें समाजवाद के तत्व अंतर्निहित हो सकते हैं।

नव-जनवादी अर्थव्यवस्था के विकास के दो बुनियादी सिद्धांत होंगे : (1) 'पूंजी पर नियंत्रण' और (2) 'भूमि का समानीकरण'। इसमें 'थोड़े से लोग निजी रूप से अर्थव्यवस्था के स्वामी' नहीं हो सकते। माओ का कथन है कि हम चीन में यूरोपीय या अमरीकी शैली के पूंजीवादी समाज की स्थापना कभी नहीं होने देंगे। चीन में जमींदारों और पूंजीपतियों को 'जनता की जीविका पर प्रभुत्व' कायम करने का मौका नहीं दिया जाएगा। चीन में अर्ध-सामंती समाज को जीवित रहने की अनुमति नहीं दी जाएगी। माओ त्सेतुंग का कथन है :

> क्रांतिकारी चीन, जापानी आक्रमण के विरुद्ध युद्धरत चीन, के लिए जरूरी है कि वह ऐसे ही आंतरिक आर्थिक संबंधों की स्थापना निश्चित रूप से करे। नव-जनवाद की ऐसी ही अर्थनीति है। एवं नव-जनवाद की राजनीति भी नव- जनवाद की अर्थव्यवस्था की संकेंद्रित अभिव्यक्ति है।[40]

क्या चीन पूंजीवादी मार्ग अपना सकता है ? इस मार्ग पर पश्चिमी देशों ने चलकर पूंजीवादी अर्थनीति का विकास किया है। परंतु चीन का राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय परिवेश इसकी अनुमति नहीं देते। माओ कहते हैं कि आधुनिक चीन का इतिहास साम्राज्यवादी आक्रमणों का इतिहास है। इन्होंने चीन को अपने पूंजीवाद के विकास का अवसर नहीं दिया।

फिर क्या चीन अभी समाजवाद के मार्ग पर चल सकता है ? अभी यह भी संभव नहीं है। निस्संदेह वर्तमान जनवादी क्रांति इस दिशा में पहला कदम है और भविष्य में समाजवाद की स्थापना का चरण भी निश्चित रूप से आएगा। चीनी क्रांति के नव-जनवाद और समाजवाद दो भिन्न चरण हैं और पहले चरण की अवधि काफी लंबी हो सकती है।

कम्युनिस्ट पार्टी का न्यूनतम कार्यक्रम नव-जनवादी अर्थनीति को क्रियान्वित करना है। यह उसका क्वोमिन्तांग के साथ संयुक्त मोरचे का कार्यक्रम है। भविष्य में उसका लक्ष्य समाजवाद का निर्माण करना है। दोनों चरणों में अभिन्न संबंध है क्योंकि नव-जनवादी और समाजवादी क्रांतियां दोनों सर्वहारा वर्ग और साम्यवादी दल के नेतृत्व में हो रही हैं। नव-जनवादी अर्थनीति मुख्यत: किसानों की सामंतवाद से मुक्ति की अर्थनीति है।

नव-जनवादी संस्कृति

संस्कृति के स्वरूप उसकी विशेषताओं और उस पर पड़ने वाले प्रभावों की चर्चा के क्रम में माओ त्सेतुंग का मानना है :

> कोई भी संस्कृति किसी विशिष्ट समाज की राजनीति और अर्थनीति का वैचारिक प्रतिबिंब होती है। चीन में संस्कृति का एक साम्राज्यवादी स्वरूप है। यह चीन पर साम्राज्यवादियों के राजनीतिक और आर्थिक नियंत्रण या आंशिक नियंत्रण का प्रतिबिंब है। इस संस्कृति का प्रचार साम्राज्यवादियों द्वारा स्थापित संस्थाओं के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप से किया जाता है लेकिन कुछ निर्लज्ज चीनी भी साम्राज्यवादी संस्कृति के भक्त हैं।[41]

जहां तक नई संस्कृति का संबंध है, यह नव-जनवाद के नई राजनीति और नई अर्थनीति का वैचारिक प्रतिबिंब है। संस्कृति और विचारधारा के क्षेत्र में 4 मई के आंदोलन दो ऐतिहासिक युगों के बीच की विभाजन रेखा है। 4 मई के आदोलन के बाद परिस्थिति बिलकुल भिन्न हो गई। इसके बाद साम्यवादी दल के नेतृत्व में साम्यवादी सांस्कृतिक चिंतन के युग का अभ्युदय हुआ। इस चिंतन का आधार साम्यवादी विश्व दृष्टि और सामाजिक क्रांति के दर्शन में निहित था।

4 मई के आंदोलन के पहले चीनी संस्कृति पुराने लोकतंत्र और बुर्जुआ विश्व दृष्टि पर निर्भर थी। इस आंदोलन के बाद की चीनी संस्कृति नव-जनवादी संस्कृति है जो सर्वहारावर्गीय समाजवादी सांस्कृतिक क्रांति का अंग है। 4 मई के आंदोलन के पहले बुर्जुआ वर्ग नेतृत्व प्रदान करता था। इस आंदोलन के बाद इस वर्ग का सांस्कृतिक चिंतन उसके राजनीतिक चिंतन से भी पिछड़ गया।

अब राजनीतिक और सांस्कृतिक चिंतन में नेतृत्व सर्वहारा वर्ग कर रहा है। वर्तमान चीन (1940) के संदर्भ में नव-जनवादी संस्कृति जनता की साम्राज्यवाद विरोधी तथा सामंतवाद विरोधी संस्कृति है। यह जापान विरोधी संयुक्त मोरचे की संस्कृति है। चीन अभी नव-जनवादी सांस्कृतिक क्रांति के चरण से गुजर रहा है। अभी उसकी संस्कृति समाजवाद पर आधारित नहीं हो सकती। यह सर्वहारा वर्ग की पूंजीवाद विरोधी संस्कृति नहीं हो सकती।

नव-जनवादी संस्कृति का चरित्र राष्ट्रवादी है। यह साम्राज्यवादी उत्पीड़न का विरोध करती है। यह चीनी राष्ट्र की गरिमा, स्वतंत्रता और उसकी विशिष्टताओं का अनुमोदन करती है। यह अन्य राष्ट्रों की नव-जनवादी और समाजवादी संस्कृतियों से संपर्क बढ़ाना चाहती है। लेकिन चीनियों को पश्चिमी संस्कृति के दुष्प्रभावों से बचना चाहिए। पश्चिमी देशों की पूंजीवादी संस्कृति ने चीन के लोगों के चिंतन को विकृत किया है। संस्कृति के विदेशी मार्क्सवादी स्वरूपों की भी चीनियों को अपने देश की परिस्थितियों के संदर्भ में समीक्षा करनी चाहिए। चीनी संस्कृति का रूप राष्ट्रीय और अंतर्वस्तु नव-जनवादी होनी चाहिए।

नव-जनवादी संस्कृति वैज्ञानिक होनी चाहिए। यह सामंतवादी और अंधविश्वासी विचारों का विरोध करती है। यह 'ठोस तथ्यों से सत्य की खोज करती है।' यह वस्तुपरक तथ्य और सिद्धांत तथा आचरण की एकता का प्रतिपादन करती है। इस अर्थ में चीनी सर्वहारा वर्ग के वैज्ञानिक चिंतन का प्रगतिशील चीनी बुर्जुआ वर्ग के भौतिकवादी और प्रकृतिवादी वैज्ञानिक चिंतन के साथ साम्राज्यवाद विरोधी, सामंतवाद विरोधी और अंधविश्वास विरोधी संयुक्त मोरचे के अंतर्गत साहचर्य स्थापित हो सकता है। नव-जनवादी संस्कृति प्राचीन चीनी दर्शन, साहित्य और संस्कृति के प्रगतिशील अंशों को उसके प्रतिक्रियावादी तत्वों से अलग करती है और उनका नव-जनवादी संस्कृति के सृजन में उपयोग करती है लेकिन वह धर्म और आत्मवाद को अस्वीकार करती है।

नव-जनवादी संस्कृति का चरित्र लोकवादी भी है। यह संपूर्ण श्रमजीवी जनता, खासकर मजदूरों और किसानों के हितों का समर्थन करती है। यह उनके मानकों और अभिमतों के अनुसार ज्ञान का विभेदीकरण और संयोजन करती है। इसका उपयोग क्रांतिकारी 'काडरों' और क्रांतिकारी जनता को शिक्षित और सचेत करने के लिए किया जाता है। नव-जनवादी संस्कृति का जनता में व्यापक प्रसार होना जरूरी हैं। क्रांतिकारी संस्कृति जनता के हाथ में एक शक्तिशाली क्रांतिकारी शस्त्र है। क्रांतिकारी सांस्कृतिक कार्यकर्ता संस्कृति के मोरचे पर जुझारू सेनाध्यक्ष हैं। क्रांतिकारी सिद्धांतों के बिना क्रांतिकारी आंदोलन असंभव होता है। संस्कृति का जनाधार होना चाहिए। उसकी अभिव्यक्ति जन भाषा में होनी चाहिए। वस्तुत: साधारण लोग ही क्रांतिकारी संस्कृति के समृद्ध संसाधन हैं।

माओ त्सेतुंग का निष्कर्ष है, 'यह राष्ट्रवादी, वैज्ञानिक, और लोकवादी संस्कृति जनता की साम्राज्यवाद विरोधी, सामंतवाद विरोधी संस्कृति है। यह नव-जनवाद की संस्कृति है। यह जनता के तीन नए सिद्धांतों की और चीनी राष्ट्र की संस्कृति है।' वे आगे कहते हैं, 'नव-जनवादी राजनीति, नव-जनवादी अर्थनीति और नव-जनवादी संस्कृति का समन्वित रूप ही नव-जनवादी गणतंत्र है। यह नाम और अंतर्वस्तु दोनों में सच्चा गणतंत्र है। हम इसी प्रकार का नया चीन बनाना चाहते हैं।'[42] माओ के नव-जनवाद के सिद्धांत ने एक जटिल परिस्थिति में कम्युनिस्ट पार्टी का मार्गदर्शन किया।

पूर्वी यूरोप के जन लोकवाद से तुलना

पूर्वी यूरोप में सोवियत सेनाओं की विजय ने एक नया परिदृश्य उपस्थित किया। इसके फलस्वरूप पोलैंड, रूमानिया, यूगोस्लाविया, चेकोस्लोवाकिया, बल्गेरिया आदि देशों में जन लोकवादी गणतंत्रों की स्थापना हुई। सोवियत सिद्धांतकारों ने इन्हें सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का प्रारंभिक रूप या पहला चरण बताया। पूर्वी यूरोप के इन लोकवादी गणतंत्रों की प्राय: चीन के नव-जनवादी गणतंत्र से तुलना की जाती है।

जनता के लोकवाद के बारे में पूर्वी यूरोपीय देशों की और नव-जनवादी गणतंत्र की

माओवादी धारणाओं के बीच काफी समानता है। दोनों का सारांश साम्राज्यवाद और सामंतवाद का विरोध करना है। दोनों संकल्पनाओं का तात्पर्य उस अवस्था से है जो सोवियत शैली के समाजवाद और सर्वहारा वर्गीय अधिनायक तंत्र से पहले की अवस्था है। चीन और पूर्वी यूरोप दोनों स्थानों पर इस अवधि में श्रमिक वर्ग ने मुख्य भूमिका निभाई और कम्युनिस्ट पार्टी को प्रभुत्व स्थापित करने का अवसर प्रदान किया। क्रांतिकारियों ने सत्ता ग्रहण के बाद दोनों प्रणालियों में बुर्जुआ वर्ग को आंशिक रूप से सहन किया। लेकिन कम्युनिस्ट पार्टी के वर्चस्व के कारण दोनों स्थितियों में सहजता से समाजवाद में संक्रमण हो गया।

चीन की भांति पूर्वी यूरोप में भी कम्युनिस्ट तथा अन्य लोकतांत्रिक शक्तियों के बीच में संयुक्त मोरचे का गठन हुआ। इसी प्रकार दोनों स्थानों पर सहकारी, पूंजीवादी और समाजवादी स्वामित्व के तीन रूपों की व्यवस्था की गई। सर्वहारा वर्ग के अधिनायक तंत्र में संक्रमण के लिए इन देशों को भी चीन की तरह उपयुक्त तैयारियां करनी थीं। अलबानिया और रूमानिया जैसे कृषिप्रधान देशों में समाजवादी रूपांतरण के प्रयास किए जाने से पहले जनवादी क्रांति के विशिष्ट कार्यों की पूर्ति के लिए और भी आवश्यक कदम उठाने थे।

परंतु इस तुलना की अपनी सीमाएं हैं। पूर्वी यूरोप के लोकवादी गणतंत्रों की क्रांति सोवियत सेना के आधिपत्य से प्रेरित थी और उनका नेतृत्व और मार्गदर्शन सोवियत संघ करता था। चीन की नव-जनवादी क्रांति दीर्घकालीन गृहयुद्ध और जापान विरोधी संघर्ष का नतीजा थी। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने स्वयं अपने सशस्त्र संघर्ष द्वारा राजसत्ता पर कब्जा किया था। यह एक संप्रभुता-संपन्न राष्ट्र की पूर्णत: स्वाधीन और स्वावलंबी क्रांति थी। माओ त्सेतुंग ने स्वतंत्र रूप से 1940 में नव-जनवाद के सिद्धांत का प्रतिपादन किया और इसे समाजवाद से पहले का संक्रमण काल बताया।

इसके विपरीत, यूगोस्लाविया को छोड़कर, अन्य पूर्वी यूरोप के देशों में सोवियत सेनाओं ने स्थानीय कम्युनिस्टों को सत्ता में बैठा दिया और उसके बाद सोवियत सिद्धांतकारों ने 'जनता के लोकवाद' की शब्दावली में उसकी व्याख्या की और उसे सोवियत पद्धति के सर्वहारा वर्गीय अधिनायक तंत्र का प्रारंभिक चरण घोषित कर दिया। अत: पूर्वी यूरोपीय क्रांतियां पराश्रित क्रांतियां थीं और उनका चरित्र वह नहीं था जो चीन की नव-जनवादी क्रांति का था जिसके फलस्वरूप चीन में जनवादी गणराज्य की स्थापना हुई। 1978 में मनोरंजन महंती का इस संदर्भ में निष्कर्ष था :

> चीन ऐतिहासिक दृष्टि से पूर्वी यूरोप की तुलना में काफी पिछड़ा हुआ था जबकि पूर्वी यूरोप समाजवाद के चरण में प्रवेश के लिए तैयार था। 1950–51 के दौरान इन देशों में नए संविधानों की रचना के प्रयास किए गए क्योंकि 'जनता के जनवाद वाले देशों ने समाजवाद में पुनर्निर्माण की अवधि को पार कर लिया था।' दरअसल बाद के वर्षों में यह प्रमाणित हो गया, जब पूर्वी यूरोप के देशों में तेजी के साथ उद्योगीकरण का कार्य संपन्न हुआ।....चीन के धीमे आर्थिक विकास के बावजूद समाजवाद में संक्रमण

और सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का सुदृढ़ीकरण पूर्वी यूरोप के अनेक देशों की तुलना में बहुत तेजी और मजबूती के साथ हुआ।[43]

नव-जनवाद की समीक्षा

यह बात आकस्मिक नहीं कि माओ त्सेतुंग ने नव-जनवाद के सिद्धांत का प्रतिपादन उस समय किया जब च्यांग काई शेक के दुस्साहसी *कार्यों से संयुक्त मोरचे का कार्यक्रम संकट की स्थिति में पहुंच गया था। अतः यह साम्यवादी* दल के वैचारिक अभियान का एक *महत्वपूर्ण अंग था।* स्टुअर्ट *श्रैम का मत है :*

> 'नव-जनवाद के बारे में' शीर्षक लेख में....वे अधिक सतर्क हैं....और स्वीकार करते हैं कि नेतृत्व क्वोमिन्तांग के पास रहना चाहिए यदि वह सक्षम हो....लेकिन यदि क्वोमिन्तांग देश के समक्ष अपने कर्तव्य को पूरा न कर सके तो कम्युनिस्ट क्रांति का संपूर्ण दायित्व अपने कंधों पर लेने के लिए तैयार हैं।[44]

वह आगे कहता है :

> जनवरी 1940 में *आन न्यू डेमोक्रेसी* में 'नव-जनवाद के बारे में' शीर्षक लेख में उन्होंने यहां तक कहा कि चीन को शीघ्र ही विवश होकर सोवियत संघ और आंग्ल-अमरीकी साम्राज्यवाद (जर्मन साम्राज्यवाद नहीं) के बीच में बढ़ते हुए संघर्ष में एक पक्ष (सोवियत संघ) का साथ देना पड़ेगा।[45]

इन उदाहरणों से सिद्ध होता है कि नात्सी-सोवियत अनाक्रमण संधि और चीनी साम्यवादियों के विरुद्ध जापान और क्वोमिन्तांग के हमलों ने माओ त्सेतुंग के मुक्त आधार क्षेत्रों के लिए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर अस्तित्व का संकट पैदा कर दिया। अलगाव की इस संकटपूर्ण स्थिति में गुणात्मक परिवर्तन पर्ल हार्बर पर जापानी आक्रमण और उसके पहले सोवियत संघ पर जर्मन आक्रमण द्वारा आया। ब्रांट, श्वार्ज तथा फेयरबैंक का कथन है :

> पहली दृष्टि में माओ त्सेतुंग की कृति 'नव-जनवाद के बारे में' संपूर्ण संयुक्त मोरचे *की रणनीति का सैद्धांतिक औचित्यीकरण प्रतीत होती है....वास्तव में यह कृति....*उस समय लिखी गई....जब क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट गठबधन शिथिल हो रहा था और उसमें अपशकुनी दरारें पड़ने लगी थीं। माओ के कम्युनिस्ट विरोधियों पर, जो क्वोमिन्तांग में रहकर एक दल की तानाशाही की मांग करते थे, आक्रमण इस गठबंधन के भविष्य के विषय में उनकी वास्तविक चिंता को प्रकट करते हैं। इसलिए संभव है कि *आन न्यू डेमोक्रेसी* को केवल संयुक्त मोरचे की नीति को ढांचा देने के लिए नहीं लिखा गया हो, बल्कि भविष्य में गठबंधन के संभावित विघटन के मौके के लिए पार्टी को तैयार रहने के लिए भी लिखा गया हो।[46]

संदर्भ और टिप्पणियां

1. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 20.
2. वही, पृ. 23.
3. वही, पृ. 27.
4. वही, पृ. 30.
5. वही उद्धृत, पृ. 33.
6. वही, पृ. 36.
7. वही, पृ. 40.
8. एडगर स्नो, *रेड स्टार ओवर चाइना*, पृ. 143.
9. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 44.
10. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड IV, पृ. 413
11. एडगर स्नो, *रेड स्टार ओवर चाइना*, पृ. 153.
12. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 57–58.
13. चेन कुंगपो, *दि कम्युनिस्ट मूवमेंट इन चाइना*, पृ.106–109
14. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 73.
15. *श्यांग-ताओ चो-पाओ*, नं. 38, 29 अगस्त 1923, पृ. 286–287
16. स्टुअर्ट श्रैम, *पॉलिटिकल थाट आफ माओ*, पृ. 266.
17. वही, पृ. 140.
18. स्टुअर्ट श्रैम, *माआ त्सेतुंग*, पृ. 14.
19. वही, पृ. 76.
20. वही, पृ. 80.
21. वही, पृ. 81.
22. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड I, पृ. 14.
23. वही, पृ. 27.
24. वही, पृ. 28.
25. वही, पृ. 32–33.
26. हू शेंग (सं.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 141.
27. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड I, पृ. 123.
28. *सेलेक्टेड डाक्यूमेंट्स आफ दि सेंट्रल कमेटी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 141.
29. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड I, पृ. 73.
30. वही, पृ. 81.
31. वही, पृ. 83.
32. हू शेंग (सं.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 129.
33. कानरेड ब्रांट इत्यादि, *ए डाक्यूमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 219.
34. वही, पृ. 226.
35. वही, पृ. 230–232.
36. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड II, पृ. 341–342.
37. वही, पृ. 343.
38. कानरेड ब्रांट इत्यादि, *ए डाक्यूमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म* में उद्धृत, पृ. 265.

39. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, पृ. 353.
40. वही, पृ. 354.
41. कानरेड ब्रांट इत्यादि, *ए डाक्यूमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 271.
42. वही, पृ. 275.
43. मनोरंजन महंती, *माओ त्सेतुंग का राजनीतिक चिंतन*, पृ. 46–47.
44. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 215.
45. वही, पृ 224.
46. कानरेड ब्रांट इत्यादि, *ए डाक्यूमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 260.

अध्याय दो

पश्चिमी साम्राज्यवाद का प्रभाव

अर्ध-उपनिवेशी अर्थव्यवस्था

बीसवीं सदी के आरंभ में महादेश चीन साम्राज्यवादी ताकतों का *अर्ध-उपनिवेश* (सेमी कॉलोनी) बन चुका था। चीन को ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, रूस आदि महाशक्तियों ने अपने *प्रभाव क्षेत्रों* में बांट लिया था। अमरीका ने *खुले द्वार* (ओपेन डोर) की नीति घोषित की थी जिसका अर्थ था कि उसे संपूर्ण चीन में वही सुविधाएं मिलनी चाहिए जो किसी अन्य महाशक्ति को अपने *प्रभाव-क्षेत्र* में प्राप्त थीं। विदेशी मांचू विजेताओं के छिंग राजवंश का शासन अपनी दुर्बलता के बावजूद पेइचिंग में अब भी कायम था। चीनी साम्राज्य की परंपरागत कृषि प्रणाली यूरोपीय अर्थ में *सामंतवादी* नहीं थी क्योंकि वहां यूरोप की तरह *कृषि दासों* (सर्फ) और *भूस्वामियों* के वर्ग नहीं थे। न वहां विशाल जमींदारियां थीं। लगभग 80 प्रतिशत चीनी अपेक्षाकृत छोटी इकाइयों पर खेती करते थे या खेतिहर मजदूर थे। माओ त्सेतुंग के मतानुसार पारंपरिक चीन में दो हजार साल से सामंतवाद स्थापित था क्योंकि वहां निश्चित रूप से एक अल्पसंख्यक परोपजीवी वर्ग बहुसंख्यक किसान वर्गों के अधिशेष का शोषण करता था।

इस संबंध में बैरिंगटन मूर का मत है कि कुछ पश्चिमी विद्वान चीनी साम्राज्य के नौकरशाही चरित्र पर जोर देते हैं और शाही सेवा तथा भूसंपत्ति की उपेक्षा करते हैं। इस व्याख्या के दो उद्देश्य हैं : आर्थिक शक्ति से राजनीतिक शक्ति की मार्क्सवादी व्युत्पत्ति की आलोचना करना और आधुनिक कम्युनिस्ट राज्यों की यह कहकर आलोचना करना कि उनका, पूर्वी स्वेच्छाचारी तंत्र की तथाकथित प्रणाली में, पतन हो गया है। इसके विपरीत, मार्क्सवादी, और विशेषकर चीनी कम्युनिस्ट, परंपरागत चीनी साम्राज्य के युग को और क्वोमिन्तांग काल को भी सामंतवाद का ही एक स्वरूप मानते हैं जिसमें जमीन के अधिकांश के मालिक जमींदार थे जिनकी मुख्य आय लगान से प्राप्त होती थी। .... हम आगे देखेंगे कि जमींदारी व्यवस्था पर मार्क्सवादी जोर बिलकुल उचित है।[1]

अत: उन्नीसवीं सदी के अंतिम दशकों में, बाह्य कारकों के हस्तक्षेप के बावजूद, चीन की अर्थव्यवस्था अब भी बुनियादी तौर से सामंती थी। कन्फ्यूशियस की शिक्षाएं देश के कामगारों को अब भी प्रभावित करती थीं, लेकिन विदेशी विस्तारवादियों की नीतियां अर्थव्यवस्था में हस्तक्षेप करने लगी थीं। चीन की अर्थव्यवस्था के कुछ क्षेत्रों में उन्नति हो रही थी तो अन्य क्षेत्रों में अवनति हो रही थी या स्थिरता कायम थी। 1840-1842 और

1856-1860 के अफीम युद्धों, 1850-1877 के किसान विप्लवों और प्रजातीय विद्रोहों और छिंग शासन के दंडकारी अभियानों ने चीन की अर्थव्यवस्था को तहस-नहस कर दिया था। करोड़ों दस्तकार और किसान इन युद्धों और विद्रोहों में मारे गए थे। एक रूसी यात्री के अनुसार घनी आबादियों वाले इलाके वीरान पड़े थे, सड़कें टूट गई थीं, नहरों में पानी नहीं था, पुलों को नष्ट कर दिया गया था, सिंचाई की प्रणाली अस्त-व्यस्त थी, पूंजी और श्रम की कमी से शहरों की अर्थनीति डांवाडोल थी।[2]

चीन को बलपूर्वक विश्व की औपनिवेशिक व्यवस्था और विश्व बाजार का अंग बना लिया गया था। परंपरागत प्रणाली के स्थान पर पूंजीवाद की नींव रखी जा रही थी और विभिन्न संक्रमणकालीन पद्धतियां उभरने लगी थीं। इन परिवर्तनों ने करोड़ों किसानों, दस्तकारों और व्यापारियों की जिंदगियों पर असर डाला था। इन्होंने सामंतवाद के लिए संकट पैदा कर दिया था। मध्ययुगीन नौकरशाही से जुड़ी सामंती व्यवस्था का विघटन होने लगा था। मंचूरिया के विशेष दर्जे का अंत, किसानों का सीमांत क्षेत्रों में पलायन, पशुओं की संख्या में कमी, भूमि की उर्वरता में ह्रास, फसलों की उत्पादकता का घटना, पण्य-मुद्रा संबंधों का ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तार, व्यापारिक कृषि की शुरुआत इत्यादि ने चीन के ग्रामीण समाज के मध्ययुगीन ठहराव को तोड़ दिया था :

> वस्तुत:, यह तथ्य कि सामंतवाद के बुनियादी संकट के परिवेश को बाहर से लाया गया था, सिद्ध करता है कि एशिया पर पूंजीवादी आक्रमण का 'सामाजिक क्रांति' के रूप में मार्क्स द्वारा वर्णन उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध और बीसवीं सदी के पूर्वार्ध के चीन के संबंध में पूर्णत: उपयुक्त और सही है।[3]

विदेशी आर्थिक विस्तार और छिंग शासन की आर्थिक नीति में परिवर्तन से चीन के आधुनिकीकरण की नींव पड़ी। विदेशी 'सेक्टर' की वृद्धि छिंग साम्राज्य का संकट बढ़ा रही थी और नए आर्थिक ढांचों का स्रोत भी थी। इसका मुख्य प्रभाव आंतरिक और विदेशी व्यापार पर पड़ रहा था। असमान संधियों की प्रणाली और चीन की जनता का अर्ध-उपनिवेशी शोषण मुख्यत: ब्रिटिश बुर्जुआ वर्ग को लाभ पहुंचाते थे। अंग्रेजों की मुक्त व्यापार की नीति का लाभ अन्य देशों के व्यापारी भी उठाते थे। विदेशियों के लिए महत्वपूर्ण आर्थिक क्षेत्रों में व्यापार के लिए आने-जाने पर प्रतिबंध नहीं था। सीमा-शुल्क बहुत कम थे और विदेशी व्यापारियों को अनेक आंतरिक करों से छूट मिली हुई थी। निम्न सीमा-शुल्कों ने यूरोपीय, अमरीकी और जापानी व्यापारियों के लिए अपनी वस्तुओं को चीन के बाजारों में बेचना बहुत लाभकर बना दिया था। 1859 से 1909 तक ब्रिटिश इंस्पेक्टर-जनरल आफ कस्टम्स, राबर्ट हार्ट, सीमा-शुल्क की दरें निर्धारित करता था। चीनी सरकार का उस पर कोई नियंत्रण नहीं था। 1898 तक राबर्ट हार्ट के अधिकार क्षेत्र में चीन के 33 बंदरगाह आ गए थे। यही नहीं, सीमा-शुल्कों को मुख्यत: ब्रिटिश बैंकों में जमा किया जाता था।

असमान संधियों द्वारा जिन बंदरगाहों पर विदेशियों के कब्जे थे, वहां 1897 तक विदेशी कंपनियों ने 595 उद्योग स्थापित किए, जिनमें 374 अंग्रेजों के थे। इनमें प्रमुख

जार्डाइन मैथिसन एंड कंपनी और रसेल एंड कंपनी थे, जिन्होंने अपनी पूंजी अफीम के व्यापार से संचित की थी। विदेशी कंपनियां चीनी दलालों की मदद से व्यापार करती थीं। इस तरह धनी चीनी बिचौलियों और दलालों के वर्ग का विकास हुआ। चीन के अधिकांश व्यापारी कंप्राडोर (दलाल) बुर्जुआ वर्ग में शामिल हो गए, और विदेशी उपनिवेशवाद के उपकरण बन गए। कंप्राडोरों ने विदेशी सेक्टर और पारंपरिक स्थानीय आर्थिक सेक्टर में तालमेल किया और स्थानीय व्यापारिक और महाजनी पूंजी को विश्व व्यापार से जोड़ दिया। इन्हीं दलालों और बिचौलियों से आधुनिक चीन के पहले औद्योगिक वर्ग का जन्म हुआ। कंप्राडोर वर्ग राष्ट्रीय पूंजीवाद के लिए 'प्राथमिक पाठशाला' था जिसने निर्यात और आयात के जरिए चीन की अर्थव्यवस्था का उपनिवेशीकरण और अंतर्राष्ट्रीकरण किया।

विदेशी बैंकों की स्थापना सभी संधि-बंदरगाहों (ट्रीटी पोर्ट्स) में उन्नीसवीं सदी के अंत तक हो गई थी। *हांगकांग एंड शंघाई बैंकिंग कारपोरेशन* चीन में ब्रिटिश साम्राज्यवाद का पहला वित्तीय उपकरण (फाइनेंशियल इंस्ट्रूमेंट) था। चांदी के व्यापार पर विदेशी बैंकों का पूरा नियंत्रण था। वे छिंग सरकार को ऋण भी दे रहे थे। चीन की सैनिक और प्रशासनिक आवश्यकताओं के लिए सरकार को इन बैंकों ने अनेक ऋण दिए थे। 1894-1895 के चीन-जापान युद्ध में चीन की पराजय हुई तो जापान ने चीन से दंडस्वरूप मुआवजे की भारी रकम मांगी। इन बैंकों ने चीन के सीमा-शुल्कों को गिरवी रखकर चीनी सरकार को ऋण दिए जो मुआवजे के रूप में जापान को हस्तांतरित कर दिए गए।

जब पूंजीवाद के साम्राज्यवादी चरण की शुरुआत हुई, तो चीन में पूंजी का निर्यात विदेशी आर्थिक विस्तार का मुख्य साधन बन गया। 1895 में शिमोनोसेकी की संधि के बाद, कच्चे माल, भूमि और श्रम की कम कीमतों और मुनाफों और ब्याज की ऊंची दरों की वजह से छिंग साम्राज्य विदेशी विनिवेश के लिए लाभदायक बन गया। विदेशी पूंजी खासकर कपड़ा उद्योग, खदानों, यातायात और संचार के क्षेत्रों में लगाई गई। अप्रत्यक्ष विनिवेश के रूप में ऋणों ने भी नई भूमिका निभाई :

> 1895 और 1898 के बीच छिंग सरकार पर 37 करोड़ *लियांग* के सात ऋणों को लाद दिया गया। यह रकम 1895 के पहले के सभी ऋणों की नौ गुना थी; इन ऋणों को सैनिक खर्चों और मुआवजे की रकम देने के लिए लिया गया था।[4]

चीन की सरकार ने हथियारों के निर्माण के लिए 1894 तक 19 कारखानों का निर्माण किया था। चीन का प्रत्येक सैनिक-प्रशासकीय गुट अपनी फौजों के लिए आधुनिक शस्त्रास्त्र बनाना चाहता था। उद्योगों के लिए मशीनों की आपूर्ति में इन कारखानों की कोई भूमिका नहीं थी। सरकार द्वारा नियंत्रित सैनिक और असैनिक उद्योग राज्य पूंजीवाद के ही प्रारंभिक और विकृत स्वरूप थे, जिन्होंने अपने पिछड़ेपन के बावजूद निजी संपत्ति की भागीदारी द्वारा मिश्रित उद्योगों की स्थापना का रास्ता खोला। शंघाई की कपड़ा मिलें मिश्रित उद्योग की मिसालें थीं। सरकार और कंप्राडोर पूंजी दोनों का उद्देश्य मुनाफा कमाना अधिक और जनता की जरूरतों की आपूर्ति कम था। फिर भी बीसवीं सदी के प्रारंभ तक राज्य-

संचालित और मिश्रित उद्योग चीन की अर्थव्यवस्था में प्रमुख भूमिका निभाते थे। अपने सभी दोषों के बावजूद, राज्य पूंजीवाद ने चीन के सामाजिक-आर्थिक विकास में सकारात्मक योगदान किया था।

अन्य अर्ध-उपनिवेशी देशों की तरह चीन में भी निजी पूंजी ने कपड़ा उद्योग, आटा मिलों, तेल, माचिस, छापाखाना, जहाजों की मरम्मत आदि व्यवसाय शुरू किए। इस प्रकार चीनी समाज में एक स्वदेशी औद्योगिक वर्ग का उदय हुआ। प्रमुख औद्योगिक घराने थे चू ताचून, यांग त्सुंगलियान, हुआंग त्सुओछिंग और यान शिनहू जिन्होंने 1880 के दशक में कारखाने लगाने शुरू किए। इस प्रकार अर्ध-उपनिवेशी चीन में राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग का उदय हुआ, जिसने 1911 की बुर्जुआ लोकतांत्रिक क्रांति में योगदान किया। बाद में माओ त्सेतुंग ने इस वर्ग को जनवादी संयुक्त मोरचे में भी शामिल किया। 'राष्ट्रीय पूंजी का यह शैशव काल था और इस चरण की सभी कठिनाइयों का उसे सामना करना पड़ रहा था।.... राज्य सेक्टर की....1895 में कुल पूंजी निजी सेक्टर से 20 गुना अधिक थी।'[5] माओ त्सेतुंग के मतानुसार इस नौकरशाही पूंजी ने पहले *युद्ध सामंतों* (वार लॉर्ड्स) और साम्राज्यवादियों से गठबंधन किया और बाद में क्वोमिन्तांग तानाशाही और जापानी साम्राज्यवाद का साथ दिया। राष्ट्रीय पूंजी की दुर्बलता के कारण थे---उद्योग की असमान सुविधाएं, विदेशी वस्तुओं से प्रतियोगिता, ऊंचे आंतरिक कर, यातायात की कठिनाइयां, सरकारी भ्रष्टाचार, छिंग शासन पर विदेशी साम्राज्यवादियों का नियंत्रण, इत्यादि।

बीसवीं सदी के प्रारंभ में चीनी जनता के तीन शत्रु थे। बहुसंख्यक किसानों के शत्रु थे चीन के जमींदार-सामंत; मजदूरों के शत्रु थे नौकरशाही पूंजीपति, संपूर्ण चीनी जनता के शत्रु थे विदेशी पूंजीपति और साम्राज्यवादी तथा चीनी स्त्रियों के एक अतिरिक्त शत्रु थे चीनी पुरुष। अत: चीन की जनता को चार प्रतिक्रियावादी विचारधाराओं से लड़ना था : साम्राज्यवाद, सामंतवाद, नौकरशाही पूंजीवाद और पितृसत्ता; जनवाद के ये ही चार बड़े लक्ष्य थे।

सुधार आंदोलन : 1895–98

सामाजिक परिदृश्य में नई ताकतें उभर रही थीं। छिंग साम्राज्य का सरकारी तंत्र, कूटनीति और उसकी सेना और नौसेना साम्राज्यवादी आक्रमण का सामना करने में असमर्थ थे। प्रतिक्रियावादी मांचू-चीनी कुलीन वर्ग पूंजीवादी संबंधों के विकास में बाधा डाल रहा था। इसलिए 1895 के वसंत में चीनी बुर्जुआ वर्ग और जमींदार वर्ग के एक हिस्से ने एक सुधार आंदोलन की शुरुआत की जिसने 1898 में खास जोर पकड़ा। जापान के हाथों चीनी साम्राज्य की पराजय ने भी पुरातन प्रणाली के खिलाफ लोकतांत्रिक सुधारवादी चिंतन और आंदोलन को बढ़ावा दिया। 1884-85 के चीन-फ्रांस युद्ध ने भी राष्ट्रवादी भावनाओं को दक्षिणी और पूर्वी तटवर्ती प्रांतों में, खासकर क्वांतुंग में, उभारा था। यहां पश्चिमी बुर्जुआ

सामाजिक-राजनीतिक विचार चीनी बुद्धिजीवियों को प्रभावित कर रहे थे। यहां 1894 में चीन के राष्ट्रपिता डॉ. सुन यातसेन ने पहले क्रांतिकारी गणतंत्रीय मांचू विरोधी संगठन की स्थापना की।

कांग यूवेई ने 1895 में यहां से ही सुधार आंदोलन के प्रधान के रूप में उसका नेतृत्व किया। 1885 में कांग ने सार्वभौमिक विश्व राज्य के आदर्शवादी सिद्धांत का प्रतिपादन किया जिसमें कन्फ्यूशियन, बौद्ध और ताओवादी सिद्धांतों, समतावादी किसान समाजवाद आदि पश्चिमी विचारधाराओं का समन्वय किया गया था। कांग यूवेई ने काल्पनिक साम्यवाद के सिद्धांत का प्रतिपादन किया, निजी संपत्ति के उन्मूलन और संघबद्ध, समाजीकृत उत्पादन का सुझाव दिया। 1888 में उसने राजमाता और युवा सम्राट क्वांगशू को एक पत्र लिखकर बताया :

> सैनिक दुर्बल हैं, खजाना खाली है, अधिकारियों में उत्साह की कमी है, लोगों की आदतें खराब हैं, अनुशासन खत्म हो गया है, लोग निराश हो चुके हैं, राजदरबार महलों और बागों के निर्माण में व्यस्त है....दरबारी और अधिकारी सभी चुप हैं.... सेना और नौसेना को प्रशिक्षण नहीं मिला है, राजकोष और नागरिकों के संसाधन खत्म हो गए हैं।[6]

इसके अतिरिक्त, कांग ने सम्राट को चीन में पूंजीवादी शक्तियों की आक्रमणकारी नीतियों के खिलाफ चेतावनी दी। उसने कहा कि चीनी राज्य के स्वतंत्र अस्तित्व को गंभीर खतरा है। उसने चीन के बुर्जुआ वर्ग के विकास में बाधाओं की ओर भी ध्यान दिलाया। उसने अनियंत्रित विदेशी आयात की अलोचना की। कांग ने चेतावनी दी कि यदि मांचू सरकार ने इन विदेशी खतरों की ओर ध्यान न दिया तो उसे जल्दी जनता के विद्रोह का सामना करना पड़ेगा। कांग ने रूढ़िवाद, नौकरशाही के भ्रष्टाचार और पतनशील मांचू एकतंत्र के दोषों की कठोर आलोचना की। यद्यपि सेंसर विभाग ने कांग के ज्ञापन को सम्राज्ञी और सम्राट तक पहुंचने में बाधा डाली, किंतु उसकी प्रतिलिपियां काफी संख्या में राजधानी पेइचिंग में वितरित हुईं। कांग का दृष्टिकोण अपनी बुर्जुआ पृष्ठभूमि के कारण कन्फ्यूशियस की नैतिकता और पश्चिमी विज्ञान के तालमेल पर जोर देता था। कांग की कृतियों में बुर्जुआ चीनी राष्ट्रवाद का समर्थन किया गया था। उनमें मांचू शासकों, पूंजीवादी शक्तियों और ईसाई धर्म की कठोर आलोचना थी।

जैसे ही शिमोनोसेकी की कड़ी जापानी शर्तों के बारे में जानकारी हुई, पेइचिंग में एक प्रतिरोध आंदोलन शुरू हो गया। लगभग 1,200 सिविल सर्विस के उम्मीदवारों ने कांग यूवेई के नेतृत्व में 10,000 शब्दों का ज्ञापन छिंग सरकार को भेजा। ज्ञापन के पहले भाग में शांति संधि का अनुमोदन न करने की मांग थी : (1) सम्राट अपनी गलतियों के लिए क्षमा मांगें और हार के लिए दोषी प्रशासकों, जनरलों, ऐडमिरलों और कूटनीतिज्ञों को कठोर दंड दें; (2) राजधानी को अंदरूनी क्षेत्र में ले जाया जाए; (3) सेना और नौसेना का पश्चिमी तरीकों से पुनर्गठन किया जाए और शस्त्रास्त्रों का उत्पादन बढ़ाया

जाए। ज्ञापन के दूसरे भाग में नए सामाजिक वर्गों–उभरते हुए बुर्जुआ वर्ग और सौदागर बने जमींदारों का सुधार कार्यक्रम था। ज्ञापन में छिंग शासन की सामंती नीतियों की, साम्राज्यवादी देशों पर निर्भरता और उद्योगों, शिक्षा आदि की उपेक्षा की तीव्र निंदा की गई। ज्ञापन में मांग की गई कि निजी उद्यमों को विदेशी प्रतियोगिता और राज्य के भ्रष्टाचार से संरक्षण दिया जाए। छिंग शासन की आत्मबल वृद्धि की नीति की भी निंदा की गई क्योंकि वह निजी उद्योगपतियों का सर्वनाश कर रही थी और प्रादेशिक नौकरशाही तथा फौजी गुटों को ही मजबूत करती थी।

उनके कार्यक्रम के मुद्दे थे : खेती, उद्योग और व्यापार की उन्नति, गरीब वर्गों को सहायता, विदेशी पूंजी के विरुद्ध संघर्ष, संरक्षणात्मक सीमा-शुल्क, स्वदेशी व्यापार को प्रोत्साहन, कृषि का मशीनीकरण, रेशम, चाय, कपास और गन्ने की खेती को बढ़ावा, इत्यादि। इसके अलावा अन्य मांगें थीं : शिक्षा का व्यापक प्रसार, तकनीकी और प्रौद्योगिक शिक्षण संस्थाओं की स्थापना, इतिहास और भूगोल का अध्ययन, आधुनिक विज्ञानों की शिक्षा का विस्तार, कन्फ्यूशियनवाद की शिक्षा और ईसाई संस्कारों का विरोध, इत्यादि। संक्षेप में यह ज्ञापन चीन के बुर्जुआ वर्ग और जमींदार वर्ग के एक हिस्से का घोषणापत्र था। यद्यपि कांग यूवेई ने सुधार आंदोलन के लिए सैद्धांतिक आधार प्रस्तुत कर दिया था लेकिन उसे जोर पकड़ने में कुछ समय लगा। 'आत्मबल वृद्धि समाज' को जापान से हार के बाद पेइचिंग और शंघाई में दबा दिया गया हालांकि कुछ प्रांतों में सुधार कार्यक्रम जारी रहा। हुनान में कुछ सुधार लागू किए गए। गवर्नर जनरल चांग चीतुंग ने चांगशा में आधुनिकीकरण को बढ़ावा दिया। स्कूल-कालेज खोले गए, सड़कों पर रोशनी, टेलीग्राफ, नदी यातायात आदि का प्रबंध किया गया। अधिकारियों और जमींदारों ने सरकार के कार्यक्रम को समर्थन दिया।

जब साम्राज्यवादी शक्तियों ने 1897 में संकट का वातावरण तेज किया तो कांग यूवेई को एक मौका मिला। 1898 में साम्राज्यवादी ताकतों ने चीन के विभाजन की तैयारी की तो सत्ताईस वर्षीय युवा सम्राट क्वांगशू ने कांग यूवेई से अनुरोध किया कि वह अपने सुधार कार्यक्रम को प्रारंभ करे। कांग ने प्रशासन में सुधार के सुझाव दिए। उसने कहा कि परंपरागत प्रतिबंध दर प्रतिबंध शासन में गत्यावरोध पैदा करते हैं। उसने मंत्रिमंडल प्रणाली की सरकार स्थापित करने का सुझाव दिया और बारह विभागों में प्रशासन को बांटने की राय दी। प्रत्येक विभाग के प्रधान का पद उस विषय के विशेषज्ञ को सौंपा जाए। जापान और पश्चिमी देशों की तरह संसदीय प्रणाली लागू की जाए। विद्वानों और जमींदारों के सहयोग से उद्योग और कृषि का विकास तुरंत शुरू किया जाए। संविधान बनाकर राष्ट्रीय महासभा अर्थात संसद का यथाशीघ्र चुनाव कराया जाए। उसने लोकतंत्र, भाषा और लिपि के सरलीकरण, लैंगिक समानता और पश्चिमी वेशभूषा अपनाने के सुझाव भी दिए।

11 जून से 21 सितंबर 1898 तक सौ दिनों तक सुधारों के बारे में क्वांगशू ने चालीस से ज्यादा अध्यादेशों को जारी किया। कांग यूवेई, लियांग छीचाओ तथा अन्य सुधारवादी क्वांगशू को अनधिकृत रूप से सलाह दे रहे थे। अध्यादेश के विविध विषय थे–आधुनिक

स्कूल-कालेजों की स्थापना, परीक्षा प्रणाली में सुधार, अतिरिक्त क्षेत्रीयता का क्रमश: उन्मूलन, कृषि को प्रोत्साहन, व्यापार, उद्योग, आधुनिक चिकित्सा, आविष्कारों का विकास, सेना, नौसेना, पुलिस और डाक-तार प्रणाली का आधुनिकीकरण, इत्यादि। इनमें से कुछ सुधारों को ही लागू किया गया। अधिकारी राजमाता त्सीशी की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा कर रहे थे। राजमाता ने 1889 में सरकारी कामकाज से अवकाश ले लिया था लेकिन वह विश्वस्त सूत्रों से क्वांगशू के सुधार कार्यों पर नजर रखे हुए थी।

पेइचिंग में रूढ़िवादी विपक्ष सुधारों की निंदा कर रहा था। सम्राट क्वांगशू को छोड़कर सभी सुधारवादी नस्ल से चीनी थे। अत: मांचू सरदार राजमाता के कान भर रहे थे कि सुधार कार्यक्रम का उद्देश्य मांचू सत्ता को उखाड़ना था। जब वैतनिक कार्यहीन पदों के अंत का अध्यादेश जारी हुआ तो प्रभावित मांचू अफसर बहुत नाराज हुए। बौद्ध मठों के स्कूलों में रूपांतरण ने भिक्षुओं को रुष्ट कर दिया। सेना में सुधारों ने पुराने मांचू बैनरों और हरे झंडे के चीनी अर्ध-सैनिकों को नाराज कर दिया। परीक्षा के सुधारों ने कन्फ्यूशियन डिग्रीधारियों को भयभीत कर दिया। भ्रष्टाचार विरोधी अध्यादेश ने तमाम नौकरशाहों को डरा दिया। 1898 में मुद्दा यह नहीं था कि सुधार हो या नहीं बल्कि यह कि सुधार की गति तेज हो या धीमी। क्वांगशू और कांग यूवेई ने देखा कि संपूर्ण अधिकारी वर्ग और राजमाता त्सीशी उनके सुधारों का विरोध करते थे।

राजमाता त्सीशी को लगा कि कांग यूवेई के सुधार उसके शासन तंत्र के दोनों स्तंभों : कन्फ्यूशियस की शिक्षापद्धति और संस्थागत भ्रष्टाचार का उन्मूलन कर देंगे। उसने विरोधी प्रवृत्तियों को उभरने का इंतजार किया और फिर 21 सितंबर 1898 को शीर्षस्थ मांचू सेनाध्यक्ष जुंग-लू की मदद से युवा सम्राट क्वांगशू को हिरासत में ले लिया और सत्ता पर कब्जा कर लिया। इस तरह उसकी तीसरी 'रीजेंसी' शुरू हुई।[7] कांग और लियांग ने जापान में शरण ली और तान सूतुंग तथा पांच सुधारवादियों को मृत्युदंड दे दिया गया। क्वांगशू मृत्युपर्यंत नजरबंद रहा। 1908 में राजमाता त्सीशी की मौत के एक दिन पहले रहस्यमय परिस्थितियों में उसकी मृत्यु हो गई।

सुधार के सौ दिनों के बाद यथास्थिति बहाल कर दी गई। कुछ सुधार जारी रहे जैसे आधुनिक स्कूलों की स्थापना, कुछ कार्यहीन पदों का अंत, इत्यादि। 1898 की 'राजमहल क्रांति' का असर यह हुआ कि चीन में जापानी शैली की ऊपर से मेइजी क्रांति असफल हो गई। राजमाता के द्वारा सत्ता पलट ने साबित कर दिया कि चीन में वास्तविक सामाजिक क्रांति केवल नीचे से आ सकती थी। 1898 में चीन बुर्जुआ क्रांति के लिए तैयार नहीं था। साठ वर्षों तक विदेशी हस्तक्षेप और आक्रमण के बावजूद, परंपरागत चीनी व्यवस्था बुर्जुआ आधनिकीकरण के खिलाफ सशक्त विरोध करने में समर्थ थी।

चीन के प्रभाव क्षेत्रों में विभाजन

1885 में चीन-फ्रांस युद्ध के बाद एक दशक तक चीन के वैदेशिक संबंधों में तुलनात्मक

दृष्टि से शांतिकाल रहा। रूस, फ्रांस और जापान चीन के सीमांत क्षेत्रों में हस्तक्षेप की योजनाएं बना रहे थे। अत: चीन ने कोरिया में अपनी सामरिक और नौसैनिक स्थिति मजबूत करने का प्रयास किया। चीन में राष्ट्रीय भावना विकसित हो रही थी और आत्मरक्षा के लिए सरकार सेना और शस्त्रास्त्रों के आधुनिकीकरण का कार्यक्रम तैयार कर रही थी। परंतु केंद्रीय नेतृत्व के अभाव में यह कार्य प्रादेशिक अधिकारियों की पहल पर निर्भर था। उदाहरणार्थ, जब ताइवान को फूचियन से अलग कर दिया गया तो वहां के गवर्नर ने भूमि सर्वेक्षण, जनसंख्या पंजीकरण, कर पद्धति और नौसेना के विकास से जुड़े विषयों पर विशेष ध्यान दिया किंतु पेइचिंग सरकार ने 1891 में उसे बरखास्त कर दिया। इसी प्रकार चांग चीतुंग ने प्रादेशिक स्तर पर वू हान शहरों (वूचांग, हांयांग और हैंकाऊ) में सुधारों का कार्यक्रम चलाया। हुनान और हुपेई के गवर्नर-जनरल के रूप में भी उसने सुधारों को बढ़ावा दिया।

परंतु केंद्रीय सरकार ने सैनिक और असैनिक सुधारों में रुचि नहीं दिखाई। अत: 1895 में जापान ने चीन को युद्ध में पराजित कर दिया। जापान का ताइवान पर कब्जा हो गया और हरजाने की भारी रकम भी अदा करनी पड़ी। इसके अलावा जापान ने चीनी मुख्य भूमि के फूचियन प्रांत में अपने प्रभाव क्षेत्र की स्थापना की मांग भी पेश की। जापान की विजय ने छिंग कर प्रणाली के विघटन को और ब्रिटेन के अनौपचरिक व्यापारिक साम्राज्य की कमजोरी को, जो असमान संधियों की प्रणाली पर आधारित था, उजागर कर दिया। इसके बाद पूर्वी एशिया में अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में अशांति और अस्थिरता का एक नया दौर शुरू हुआ।

1890 के दशक में आंग्ल-रूसी प्रतिद्वंद्विता समस्त एशिया महाद्वीप में चल रही थी। मध्य पूर्व, अफगानिस्तान, ईरान, मध्य एशिया, तिब्बत, मंगोलिया, मंचूरिया और कोरिया में यह प्रतिद्वंद्विता जोरों पर थी। ब्रिटेन का भारत, मलाया और बर्मा पर आधिपत्य था और थाईलैंड, चीन इत्यादि देशों में उसकी व्यापारिक प्रधानता थी। फ्रांस और ब्रिटेन की प्रतिद्वंद्विता अफ्रीका, दक्षिण-पूर्वी एशिया और दक्षिणी चीन के प्रांतों में थी।

रूस का विस्तार तेजी से उत्तर एशिया, मध्य एशिया, पूर्वी साइबेरिया तथा आमूर क्षेत्र में हो रहा था। आमूर क्षेत्र और समुद्री प्रांत पर कब्जा करने के बाद रूसी विस्तार रुक गया था। रूसियों को यातायात और खाद्य आपूर्ति की समस्याओं को सामना करना पड़ रहा था। 1867 में अमरीका ने अलास्का को रूस से खरीद लिया और इस प्रकार उसने भी प्रशांत महासागर और सुदूर पूर्व में अपनी उपस्थिति दर्ज कर दी। स्पेन से फिलीपींस द्वीपसमूह को जीतकर अमरीका ने सुदूर पूर्व में अपनी स्थिति और ज्यादा सुदृढ़ कर ली।

रूस ने घोषणा की कि वह पूर्व के देशों में पश्चिमी संस्कृति फैलाना चाहता है। उसने ट्रांस-साइबेरियन रेलवे का निर्माण किया और चाहता था कि उसे मंचूरिया के रास्ते प्रशांत महासागर से जोड़ा जाए। 1895 में रूसी और फ्रांसीसी बैंकों ने चीन को जापान के लिए हरजाने की रकम की आधी राशि ऋण में दी। 1896 में चीन ने मंचूरिया में 950 मील के रेल मार्ग के निर्माण की अनुमति दे दी। जून 1896 में रूस और चीन ने एक गुप्त

संधि के जरिए जापान के विरुद्ध परस्पर सहायता के लिए गठबंधन कर लिया। दिसंबर 1897 में रूसी नौसेना चीन के पोर्ट आर्थर में तैनात कर दी गई। चीन ने मार्च 1898 में मंचूरिया के दक्षिणी भाग को 'लीज' पर रूस को 25 वर्षों के लिए सौंप दिया। इस प्रकार दक्षिणी मंचूरिया पर रूस का प्रभाव-क्षेत्र स्थापित हो गया। रूस द्वारा यह गतिविधि चीन में साम्राज्यवादी घुसपैठ के नए चरण की नवीन पद्धति की मिसाल थी। इस पद्धति में ऋण, रेल मार्ग, पट्टे के क्षेत्र, सीमा-शुल्कों में कमी, स्थानीय क्षेत्राधिकार, पुलिस शक्ति, खदानों की खोज, इत्यादि सुविधाओं के द्वारा 'प्रभाव-क्षेत्र' की स्थापना की जा सकती थी।

इसके फलस्वरूप, चीन के विभाजन के लिए महाशक्तियों में प्रतिद्वंद्विता तेज हो गई। ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, जापान, रूस और कुछ सीमा तक अमरीका ने विभिन्न प्रकार से चीन के विभाजन से लाभ उठाने के लिए एक दूसरे को चुनौतियां दीं, एक दूसरे की मदद की, आपस में सहयोग किया और एक दूसरे के विस्तार को रोकने के प्रयास भी किए। परंतु वे सब मिलकर चीन की मुख्य भूमि को आपस में बांट लेना चाहते थे और अपने लिए बड़े से बड़े हिस्से की मांग कर रहे थे। सभी चीन के स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में विघटन की उम्मीद लगाए बैठे थे। घटनाक्रम इस प्रकार रहा। शांतुंग क्षेत्र में दो जर्मन पादरियों की हत्या हो गई तो जर्मन नौसेना ने क्याओचाओ खाड़ी में त्सिंगताओ बंदरगाह पर कब्जा कर लिया। यह घटना नवंबर 1897 में हुई। दिसंबर में रूसी नौसेना ने पोर्ट आर्थर पर कब्जा कर लिया। अप्रैल 1898 तक फ्रांसीसी नौसेना ने कैंटन के दक्षिण में क्वांगचाउ बंदरगाह पर कब्जा कर लिया जो फ्रांसीसी हिंदचीन में समीप था। ब्रिटेन ने हांगकांग के पास चीनी मुख्य भूमि पर आठ गुना नए क्षेत्रों को पट्टे पर ले लिया और शांतुंग में ही वेईहाईवेई बंदरगाह पर ब्रिटिश नौसेना ने कब्जा कर लिया। इन सभी मांगों और कब्जों को चीन के साथ संधियों द्वारा 99 साल के पट्टों के आधार पर कानूनी मान्यता दे दी गई।

इस प्रकार चीन की मुख्य भूमि का साम्राज्यवादी ताकतों ने आपस में बंदर-बांट कर लिया। चीन की प्रभुसत्ता और सीमा-शुल्क लेने के अधिकार को कायम रखा गया परंतु प्रमुख क्षेत्रों पर विदेशी प्रभुत्व और शोषण की योजनाओं को क्रियान्वित करने का प्रबंध भी कर दिया गया। यद्यपि इन षड्यंत्रों के विस्तृत विवरण आज भी इतिहासकारों को भ्रमित कर देते हैं, किंतु कुछ तथ्य बिलकुल साफ हैं। किसी भी साम्राज्यवादी शक्ति ने सीधी, स्पष्ट नीति का पालन नहीं किया। उन पर प्रतिद्वंद्वी दबावों और आंतरिक मतभेदों का असर था। रूसी विस्तार को 1895-1896 में ब्रिटेन और जर्मनी दोनों ने इसलिए समर्थन दिया ताकि अन्य क्षेत्रों में रूसी विस्तार को रोका जा सके। पोर्ट आर्थर और त्सिंगताओ पर जर्मन और रूसी कब्जे एक दूसरे की सहमति से हुए थे। यही बात अन्य महाशक्तियों पर भी लागू होती है।

दूसरे, यूरोपीय ताकतों में गठबंधन भी विस्तार के स्वरूप को निश्चित करता था। फ्रांस और रूस मित्र थे, समुद्री व्यापार में वे पीछे थे, इसलिए उन्होंने भूमि के रास्ते चीन में अपना विस्तार किया। रूस उत्तर से मंचूरिया में आगे बढ़ा तो फ्रांस दक्षिण में हिंदचीन

से दक्षिणी चीन के क्वांतुंग प्रांत में घुसा। समुद्री ताकतों में ब्रिटेन का चीन के साथ वैदेशिक व्यापार में 80 प्रतिशत हिस्सा था। वह यांगत्सीक्यांग क्षेत्र में मुख्य चीन के दो-तिहाई क्षेत्र पर अपने प्रभाव का दावा कर रहा था। इसके विपरीत जर्मनी समुद्र की ओर से आने वाला नया देश था। वह शांतुंग प्रांत में अपने प्रभाव-क्षेत्र की स्थापना से संतुष्ट था।

ब्रिटेन प्रकट रूप से अब भी 'खुले द्वार' की नीति का अनुसरण करता था किंतु वस्तुतः उसने भी एक विशाल प्रभाव-क्षेत्र पर अपना दावा पेश कर दिया था। उसका सिद्धांत था कि ब्रिटेन के पास उसके दो प्रतिद्वंद्वियों से अधिक प्रभाव-क्षेत्र होना चाहिए। उसने पहले भी इसी सिद्धांत की घोषणा नौसैनिक शक्ति के विषय में की थी। जब फ्रांस ने क्वांगतुंग, क्वांगसी और यून्नान प्रांतों पर अपने प्रभाव-क्षेत्र की घोषणा की तो ब्रिटेन ने संपूर्ण यांगत्सी घाटी में, शंघाई के पीछे के क्षेत्र में अर्थात संपूर्ण चीन के आधे बाजार पर अपने प्रभाव-क्षेत्र की स्थापना का ऐलान कर दिया। ब्रिटेन का हिस्सा चीन के व्यापार में अब भी अधिकतम था लेकिन यून्नान, शांतुंग और मंचूरिया में फ्रांस, जर्मनी और रूस के अतिक्रमण ने इंगलैंड की स्थिति को पहले से कमजोर कर दिया था। फेयरबैंक आदि का मत है :

> 1898 के विभाजन के नतीजे राजनीतिक परिदृश्य में सर्वाधिक स्पष्ट थे। इन्होंने संधि प्रणाली के एक नए और अधिक गंभीर चरण का प्रारंभ किया क्योंकि 'प्रभाव-क्षेत्रों' की स्थापना बिलकुल उस दिशा में बढ़ते हुए कदम थे जिनसे चीन को पूर्ण यूरोपीय उपनिवेशों की शृंखला में कभी भी बदला जा सकता था। अभी तक ब्रिटेन के नेतृत्व में व्यापारिक शक्तियां चीन के विदेशी व्यापार, बंदरगाहों और अंदरूनी जलमार्गों पर प्रभुत्व स्थापित किए थीं। अब जर्मनी और रूस संपूर्ण प्रांतों पर अपनी प्रभुता कायम कर रहे थे और वहां रेलमार्ग बिछा रहे थे, उद्योग लगा रहे थे, खदानें खोद रहे थे और बंदरगाहों पर कब्जा कर रहे थे।....संक्षेप में, साम्राज्यवाद ने छिंग साम्राज्य को विनाश के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया था। इसने प्रत्यक्ष रूप से सुधार आंदोलन और बाक्सर विद्रोह के लिए प्रेरणा प्रदान की।[8]

बुर्जुआ क्रांतिकारी आंदोलन का प्रारंभ

फ्रांस-चीन युद्ध में चीन की हार ने और वियतनाम पर फ्रांस के कब्जे ने चीन के बुद्धिजीवी वर्ग को क्षुब्ध कर दिया। सुन यातसेन ने लिखा, 'फ्रांस के हाथों 1885 में जब हमारी पराजय हुई, तभी से मैंने छिंग राजवंश के विनाश का संकल्प लिया और उसके खंडहरों पर चीनी गणतंत्र के निर्माण का निर्णय किया।'[9] देश की हार पर चीनी क्रांतिकारी चिंता करते हुए इस नतीजे पर पहुंचे कि सरकार विदेशी आक्रमणों को रोक नहीं सकेगी और न चीन की क्षेत्रीय अखंडता की रक्षा कर सकेगी। क्रांतिकारी संगठनों में एक संगठन के संस्थापक जनवादी क्रांतिकारी सुन यातसेन थे। उनका जन्म क्वांगतुंग प्रांत के एक किसान परिवार में

12 नवंबर 1866 में हुआ था। उन्होंने हवाई और हांगकांग में स्कूली और मेडिकल शिक्षा पाई। मेडिकल कालेज में उनका परिचय चेन शाओपो, चेंग शीलियांग, यांग हाओलिंग और लू हाओतुंग से हुआ। डॉ. सुन तथा उनके मित्रों ने यूरोप और अमरीका के उदारवादी, लाकतांत्रिक विचारों में काफी दिलचस्पी ली और चीन में लोकतांत्रिक क्रांति करने के बारे में गंभीरतापूर्वक सोचने लगे।

सुन यातसेन और उनके साथियों ने स्वत:स्फूर्त मांचू विरोधी किसान विद्रोहों से प्रेरणा ली। वे खासकर ताइपिंग किसान विद्रोह की बहुत प्रशंसा करते थे। उन्हें मांचू विरोधी गुप्त संगठनों के इतिहास में भी गहरी दिलचस्पी थी। 1892 में डॉ. सुन तथा उनके साथियों ने कैंटन स्थित फौजी टुकड़ियों से संपर्क बनाया और बम तथा अन्य हथियार बनाना सीखा। 1894 में सुन तथा अन्य बुद्धिजीवियों ने ली होंगचांग को एक ज्ञापन दिया जिसमें सरकार की नीतियों की आलोचना की : 'राज्य कभी समृद्ध और शक्तिशाली नहीं बन सकता, जब तक लोगों को अपनी प्रतिभा को पूरी तरह से दिखाने का मौका नहीं मिलता, जमीन की पैदावार नहीं बढ़ती, प्रकृति के संसाधनों का पूरा उपयोग नहीं किया जाता और जब तक वस्तुओं का अप्रतिबंधित प्रवाह नहीं होता।'[10] 1894–1895 में जापान ने चीन को युद्ध में हरा दिया तो सुन यातसेन की टिप्पणी थी, 'किंग राजवंश का जादू हमेशा के लिए टूट गया।'[11] उन्होंने तुरंत एक क्रांतिकारी संगठन कायम करने का फैसला किया।

हवाई में काफी संख्या में चीनी मूल के लोग रहते थे। सुन ने हवाई जाकर उनका समर्थन प्राप्त किया। होनोलुलू में उन्हें एक मांचू विरोधी गुप्त संगठन का सहयोग भी मिला। नवंबर 1894 में उन्होंने बीस लोगों की गुप्त सभा में शिंगचोंगहुई (चीन पुनरुद्धार समाज) की स्थापना की। 'समाज' ने घोषणा की, 'शत्रु हमारी पितृभूमि की सीमाओं पर खतरा पैदा कर रहा है। चीनी राज्य, जो कभी महान था, राष्ट्रकुल में अपनी प्रतिष्ठा खो बैठा है और विदेशी हमारी संस्कृति और रीतियों से घृणा करते हैं।'[12] देश की प्रभुसत्ता पर खतरे के संदर्भ में, सभी देशवासियों से अनुरोध किया गया कि वे एकजुट होकर देश के पुनरुद्धार के लिए काम करें। हवाई से लौटकर सुन और उनके साथियों ने हांगकांग में 'पुनरुद्धार समाज' की शाखा स्थापित की। 27 जनवरी 1895 को 'समाज' का मुख्यालय खोला गया। कैंटन में भी चीन की मुख्य भूमि पर उसकी शाखा कायम की गई। 'समाज' के सदस्यों में मुख्यत: बुद्धिजीवी और व्यापारी थे। चीन से बाहर के चीनियों ने 'समाज' को अस्सी प्रतिशत आर्थिक सहायता प्रदान की। शुरू में समाज की मांगें सामान्य और अस्पष्ट थीं। राजनीतिक और सामाजिक लोकतंत्र, सामंतवाद का नाश, पश्चिमीकरण को प्रोत्साहन ऐसी मांगों के उदाहरण थे।

'समाज' के सदस्य छिंग राजतंत्र के उन्मूलन और लोकतांत्रिक शासन की स्थापना के लिए गुप्त शपथ भी लेते थे। वे प्रण करते थे कि 'मांचुओं को निकाल बाहर करेंगे, चीन का पुनरुद्धार करेंगे, और लोकतांत्रिक सरकार की स्थापना करेंगे।' चीन पुनरुद्धार समाज ने क्वांगतुंग प्रांत में सशस्त्र विद्रोह की योजना बनाई। अन्य गुप्त संगठनों से संपर्क स्थापित

किया गया। हथियारों का निर्माण किया गया। सुन यातसेन ने लिखा :

> हुनान और हुपेई के मध्यवर्ती प्रांतों में तीन-चौथाई जनसंख्या गुप्त संगठनों से जुड़ी हुई है....दक्षिण-पूर्वी प्रांतों में भी गुप्त संगठनों का काफी जोर है,तथा चीन के अन्य भागों में भी उनका अस्तित्व है, लेकिन इतना ज्यादा नहीं। गुप्त संगठनों के सभी सदस्य विद्रोह के लिए तैयार हैं लेकिन उन्हें हथियारों की जरूरत है और अनुकूल परिस्थितियों का इंतजार है।[13]

'पुनरुद्धार समाज' ने क्वांगतुंग प्रांत के श्यांगशान, हुईचोउ और शुनते जनपदों में अपने प्रतिनिधि भेजे और गुप्त संगठनों के नेताओं से संपर्क बनाया। योजना थी कि हांगकांग से सशस्त्र विद्रोही हजारों की संख्या में आकर कैंटन और आपस के इलाकों में सरकारी दफ्तरों पर कब्जा कर लेंगे और पास के जनपदों से कई हजार सशस्त्र विप्लवी उनकी सहायता के लिए आएंगे। यदि विद्रोह सफल हुआ, तो छिंग विरोधी सरकार और उसके अध्यक्ष की घोषणा कर दी जाएगी। विदेशी महाशक्तियों से 'तटस्थता' का अनुरोध किया जाएगा। परंतु 'पुनरुद्धार समाज' अपनी योजना को क्रियान्वित न कर सका। 26 अक्तूबर को विद्रोही संगठनों के बहुत कम सैनिक कैंटन पहुंचे। हांगकांग से विद्रोही जत्था समय पर पहुंच न सका। पुलिस ने संदिग्ध क्रांतिकारियों को रात में ही गिरफ्तार कर लिया और हथियारों के भंडार पर कब्जा कर लिया। हांगकांग से 3,000 विद्रोहियों में से केवल 200 कैंटन पहुंचे जिन्हें पुलिस ने फौरन पकड़ लिया। सुन यातसेन तथा अन्य विद्रोही नेताओं को भागकर जापान में शरण लेनी पड़ी। 'पुनरुद्धार समाज' का यह विद्रोह असफल हुआ लेकिन इसने सशस्त्र क्रांति के विचार को चीनी जनता के सम्मुख एक रास्ते के रूप में प्रस्तुत कर दिया।

विद्रोह की असफलता के बाद सुन यातसेन ने यूरोप की यात्रा की। लंदन में उन्हें छिंग कूटनीतिक मिशन ने बंधक बना लिया लेकिन वे उनके चंगुल से मुक्त हो गए। 1897 में उन्होंने एक कृति *किडनेप्ड इन लंदन* प्रकाशित की जिसमें उन्होंने अपने अनुभवों और विचारों को लिखा। उन्होंने पश्चिम के भौतिक विज्ञानों और सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक सिद्धांतों की प्रशंसा की और लिखा कि चीन में उनके अनुकरण की नहीं बल्कि अनुकूलन की जरूरत है। उन्होंने हेनरी ज्यार्ज (1839–1897) के भूमि राष्ट्रीकरण के सिद्धांत का अनुमोदन करते हुए लिखा कि जनवादी भूमि सुधारों के बिना चीन की किसान समस्या का समाधान नहीं हो सकता। संविधान,कानून और राज्य के बारे में वे मांतेस्क्यू के बुर्जुआ लोकतांत्रिक सिद्धांतों से भी प्रभावित हुए।

1897 के अंत में सुन यातसेन जापान पहुंचे जहां उन्होंने 'चीनी पुनरुद्धार समाज' की शाखाएं फिर स्थापित करने की योजना बनाई। उन्होंने सुधारवादियों और क्रांतिकारियों के बीच सहयोग स्थापित करने की कोशिश भी की जो सफल नहीं हुई। कांग यूवेई और उनके साथी सोचते थे कि यदि राजमाता को हटाकर क्वांग शू के नेतृत्व में सांविधानिक राजतंत्र की स्थापना कर दी जाए तो यह चीन की समस्याओं का सर्वोत्तम समाधान होगा। परंतु

डॉ. सुन और उनके क्रांतिकारी साथी गणतंत्रीय क्रांति को ही चीन की समस्याओं का एकमात्र समाधान मानते थे। लियांग छीचाओ ने क्रांतिकारियों और सुधारवादियों के बीच में मध्यस्थता करने का प्रयास किया जो सफल नहीं हुआ। 1899 में सुधारवादी नेता तांग काईचांग ने यांगत्सी घाटी में 'आजाद फौज' के जरिए विद्रोह करने की योजना बनाई। तांग का इरादा सम्राट क्वांग शू की सत्ता को फिर से कायम करना था। तांग गुट ने शंघाई में 100 लोगों की सभा में 'चीन की संसद' की स्थापना की घोषणा की और रोंग होंग को 'संसद का प्रधान' निर्वाचित किया और राजमाता त्सीशी की सरकार को गैरकानूनी घोषित कर दिया।

24 अगस्त 1900 विद्रोह शुरू करने की तारीख थी। कांग यूवेई ने विद्रोह के लिए आर्थिक सहयता देने का वचन दिया था, जिसको वे पूरा न कर सके। 21 अगस्त को ही वाइसराय चांग चीतुंग की पुलिस ने मुख्यालय पर हमला कर सभी षड्यंत्रकारियों को पकड़ लिया। चांग चीतुंग ने तांग काईचांग और उनके 16 साथियों को देशद्रोह के अपराध में 23 अगस्त को फांसी पर लटका दिया। उधर डॉ. सुन का क्रांतिकारी गुट भी एक नए विद्रोह की तैयारी में जुटा था। क्रांतिकारियों को यांगत्सी घाटी के गुप्त संगठनों का समर्थन प्राप्त था। सशस्त्र विद्रोह की योजना 'पुनरुद्धार समाज' की तोकियो शाखा बना रही थी। अक्तूबर 1899 में हांगकांग में क्रांतिकारियों और गुप्त संगठनों के नेताओं के बीच में गुप्त बातचीत हो रही थी। इसमें एक संयुक्त मांचू विरोधी क्रांतिकारी संगठन की स्थापना की गई और सुन यातसेन को उसका अध्यक्ष घोषित किया गया।

पुनरुद्धार समाज को आशा थी कि जापान और ब्रिटेन क्रांतिकारियों को आर्थिक सहायता दे सकते हैं। यामागाता का उदार मंत्रिमंडल क्रांतिकारियों को सहायता देकर दक्षिणी चीन में जापान के प्रभाव को बढ़ाना चाहता था। डॉ. सुन ने ब्रिटेन को आश्वासन दिया कि चीन में गणतंत्र की स्थापना से चीन के साथ ब्रिटेन के आर्थिक-राजनीतिक संबंधों में सुधार होगा। परंतु उत्तरी चीन में विशाल साम्राज्यवाद विरोधी यिहतुआन आंदोलन शुरू हो गया था। डॉ. सुन यातसेन का मत था कि यिहतुआन आंदोलन की प्रेरणा छिन दरबार से मिली थी। इस आंदोलन को बाक्सर विद्रोह भी कहते हैं। बाक्सर क्रांतिकारी सभी पश्चिमी चीजों को यानी रेल मार्गों, मशीनों, हथियारों, आदि को नष्ट कर रहे थे।

बाक्सर आंदोलन के शीघ्र विस्तार, महाशक्तियों और छिंग सरकार के बीच बढ़ते हुए संघर्ष और विदेशी सशस्त्र हस्तक्षेप के कारण 'चीन पुनरुद्धार समाज' के नेतृत्व को अपने विद्रोह की तारीख को संशोधित करना पड़ा। जून 1900 के प्रारंभ में सुन यातसेन ने विद्रोह का केंद्र कैंटन से हटाकर क्वांगतुंग के तटवर्ती क्षेत्र में निश्चित किया। सुन यातसेन ने जापान से क्रांतिकारियों के पक्ष में हस्तक्षेप करने का अनुरोध भी किया। क्रांतिकारी जापान और ब्रिटेन को अनेक रियायतें देने के लिए भी तैयार थे। अगस्त 1900 में चेंग शीलांग को विद्रोह शुरू करने का आदेश दे दिया गया। इस विद्रोह में 20,000 सशस्त्र सैनिकों ने भाग लिया। इनमें गुप्त संगठनों के सिपाही भी शामिल थे। जापान ने हथियार भेजने से इनकार कर दिया। अंत में सुन यातसेन ने चेंग को अपनी सेना खत्म करने की अनुमति दे दी। इस

प्रकार 'चीन पुनरुद्धार समाज' का दूसरा सशस्त्र विद्रोह भी असफल हो गया।

लेकिन 1900 की इस विफलता से डॉ. सुन यातसेन को निराशा नहीं हुई। उन्होंने लिखा :

> 1900 की पराजय के बाद, मैंने कभी लोगों को हमारी बुराई करते हुए नहीं सुना। अधिकांश शिक्षित लोग भी अपनी सहानुभूति का प्रदर्शन करते थे और उन्हें अफसोस था कि हमारा प्रयास सफल नहीं हुआ। इसका अर्थ था कि परिस्थिति बिलकुल बदल गई थी। इससे हमें उत्साह मिला। हमें लगा कि ये जनता की क्रमिक जागरूकता के पहले लक्षण थे।[14]

हुइचोउ विद्रोह छोटे क्रांतिकारी गुट का अंतिम विद्रोह था जब देश में क्वांगतुंग प्रांत एकमात्र क्रांति का केंद्र था। 1900 के बाद अन्य प्रांतों में क्रांतिकारी आंदोलन बढ़ा और क्रांति के एक नए चरण की शुरुआत हुई।

यिहतुआन विद्रोह : 1898-1900

यिहतुआन विप्लव 1898 में शुरू हुआ और मार्च 1900 तक जारी रहा। इसे बाक्सर विद्रोह भी कहते हैं। उत्तर चीन के दो प्रांत, शांतुंग और चिहली, इस विद्रोह से सर्वाधिक प्रभावित हुए। शांतुंग प्रांत के यांताइ बंदरगाह को 1867 में मुक्त व्यापार के लिए खोल दिया गया था, जिसका स्थानीय उद्योगों पर तथा किसानों और दस्तकारों की जीविका पर बहुत खराब असर पड़ा था। विदेशी मिशनरियों द्वारा चीनी धर्मों और रीति-रिवाजों के उपहास ने भी स्थानीय जनता में विदेशियों के प्रति रोष पैदा कर दिया था। 1895 में जापान के हाथों हार से भी स्थानीय जनता में खिन्नता थी।

इन कारणों से उत्तरी चीन में यिहतुआन विद्रोह भड़क उठा। जर्मनी द्वारा किया चाऊ खाड़ी पर कब्जे से भी लोग बहुत नाराज थे। चिहली और शांतुंग में विदेशी ताकतें विदेशी तकनीशियनों की देखरेख में रेलवे लाइनें बिछा रही थीं। ब्रिटिश ऋणों से पेइचिंग-तियांचिन और तियांचिन-शंहाईक्वान रेल मार्ग का निर्माण हो रहा था। रेलवे लाइन बनते ही लाखों मल्लाह, कुली और गाड़ीवान बेकार हो जाते थे। रेल मार्गों के लिए जमीन के अधिग्रहण से प्रभावित किसानों और जमींदारों को कोई मुआवजा नहीं दिया जाता था। हजारों की संख्या में विदेशी बैंक, कंपनियां और कारखाने खोल रहे थे। इनके लिए और चर्चों के लिए सस्ती कीमत देकर विशाल भूमि पर कब्जा किया जा रहा था। धर्मांतरित ईसाइयों और विदेशी पादरियों को विदेशी सत्ताएं संरक्षण दे रही थीं।

अक्तूबर 1898 में पेइचिंग में परिस्थितियां इतनी गंभीर थीं कि विदेशी कूटनीतिक प्रतिनिधियों को अपनी रक्षा के लिए संधि-बंदरगाहों से अतिरिक्त फौज बुलानी पड़ी। उन्होंने छिंग सरकार को यिहतुआन विद्रोहियों के दमन की मांग करते हुए विरोधपत्र भेजा। आगंतुक विदेशी फौज में ब्रिटिश, रूसी, जर्मन, फ्रांसीसी, इलातवी, जापानी और अमरीकी

जत्थे शामिल थे।

चीन की जनता ने महसूस किया कि साम्राज्यवादी शक्तियों की आक्रामक नीति चीन की प्रभुसत्ता पर प्रहार थी और चीन के विभाजन का खतरा पैदा हो गया था। इसके अलावा, शांतुंग प्रांत में प्रति वर्ष बाढ़, चक्रवात, अकाल आदि प्राकृतिक विपदाओं से भी लोग परेशान थे। उत्तरी चीन में विद्रोह का नेतृत्व एक गुप्त पंथ कर रहा था, जिसका नाम यिहतुआन था। इसे यिहछुआन भी कहते थे जिसका अर्थ था धार्मिक समरसता मुक्के और इसी कारण उन्हें विदेशियों ने बाक्सर नाम दिया। वस्तुतः इस विद्रोह में बहुत से गुप्त संगठन शामिल थे जिनमें यिहछुआन, शेंछुआन, हांगछुआन, मेहुआछुआन और ताताओ प्रमुख थे। इस पंथ में बौद्ध, कन्फ्यूशियस और ताओ धर्म का समन्वय था। यि अर्थात पवित्रता और ह अर्थात संयम कन्फ्यूशियस के अनुसार दो सद्‌गुण हैं।

यिहतुआन अनेक देवी-देवताओं, संतों, महात्माओं की पूजा करता था किंतु युद्ध के देवता कुआंती का पद सर्वोच्च था। वे चीन के इतिहास और मिथकों से प्रेरणा ग्रहण करते थे। उनकी विचारधारा पुनरुत्थानवादी थी क्योंकि वे चीन के प्राचीन गौरव को वापस लाना चाहते थे। इस दृष्टि से वे आधुनिकता के विरोधी थे। यिहतुआन की सामाजिक पृष्ठभूमि विविध प्रकार की थी किंतु किसानों की बहुलता थी। दस्तकार, मजदूर, मल्लाह, गाड़ीवान, भारवाहक और कुली भी काफी संख्या में इस विद्रोह में शामिल थे। फौज से बरखास्त सिपाही, साधु और भिक्षु, छोटे जमींदार, सरकारी क्लर्क और कर्मचारी, लुंपन सर्वहारा आदि भी विद्रोह से जुड़े थे। उनकी विविध सामाजिक पृष्ठभूमि विद्रोहियों के राजनीतिक कार्यक्रमों, उनके झंडों, घोषणाओं और गानों में दिखाई पड़ती थी। उनका एक नारा था, 'चीन की रक्षा करो और समुद्र पार से आने वाले डाकुओं को देश से निकाल बाहर करो।'[15] एक अन्य घोषणा में चर्चों को जलाने और ईसाइयों को देश से निकालने का आह्वान था।

कुछ विद्रोही मांचू शासकों के स्थान पर नस्ल से चीनी राजवंश की स्थापना करना चाहते थे। अधिकांश विद्रोहियों का नारा इससे भिन्न था, 'छिंग का समर्थन करो, विदेशियों को मौत दो।' एक अन्य नारा था, 'जब विदेशियों का नाश हो जाएगा, तो छिंग का प्रभुत्व सारे देश में कायम हो जाएगा।' ये नारे शांतुंग और चिहली सूबों के अलावा अन्य प्रांतों में भी, खासकर हुपेई तथा सिचुआन में भी गूंज रहे थे। विद्रोहियों के विचार परंपरावादी थे। वे जादू-टोने में यकीन करते थे और अंधविश्वासी थे। वे यूरोपीय संस्कृति और विज्ञान के भी कट्टर विरोधी थे। वे यूरोपीय शैली की इमारतों, बिजली के तारों, तार के खंभों, इंजनों, जहाजों आदि विदेशी चीजों को विनष्ट करते थे। वे सुधार आंदोलन का तीव्र विरोध करते थे। उनके परंपरा-प्रेम, अज्ञान, अनुदार रूढ़िवाद और छिंग राजवंश के प्रति निष्ठा ने 'यिहतुआन' विद्राहियों को राजतंत्र और सामंतशाही का समर्थक बना दिया।

अप्रैल 1898 में चिहली और शांतुंग में, खासकर सीमांत क्षेत्रों में, हिंसात्मक विदेशी-विरोधी दंगे भड़क उठे जो धीरे-धीरे अन्य जनपदों में फैल गए। 1899 में विद्रोहियों की संख्या 40,000 हो गई। विद्रोहियों ने जर्मन इंजीनियरों और तकनीशियनों तथा पादरियों को

अपने हमलों का मुख्य निशाना बनाया। प्रांतों के अधिकारियों की नीतियां स्पष्ट नहीं थीं। कुछ अधिकारी उन्हें प्रोत्साहन देते थे तो कुछ उनका कठोर दमन करते थे। यिहतुआन विद्रोह के प्रारंभिक चरण में भी छिंग सरकार का इरादा था कि विद्रोहियों का अपने लाभ के लिए उपयोग किया जाए। चांग रूमे की रिपोर्ट के आधार पर विद्रोहियों को 'रूरल मिलीशिया' में भरती किया गया। परंतु शांतुंग के नए गवर्नर युआन शिकाई ने 27 दिसंबर 1899 को यिहतुआन को अवैध संगठन घोषित कर दिया और विद्रोहियों का कठोरता से दमन किया।

चिहली में विद्रोहियों की संख्या एक लाख हो गई। यहां नाविक की पुत्री हुआंग लियान ने यिहतुआन के स्त्री जत्थे का नेतृत्व किया। विद्राहियों के अलग-अलग गिरोहों के अलग-अलग नेता स्वतंत्र रूप से कार्य करते थे। संयुक्त कमान के अभाव में उनकी कार्यवाहियों का लक्ष्य और स्वरूप स्थानीय रहता था। मुख्यत: वे विदेशी संस्थानों और चर्चों पर हमला करते थे। तियांचिन में जब उन्होंने देखा कि चर्च में जमा अनाज अकाल-पीड़ितों को ऊंचे दामों में बेचा जा रहा है तो लोगों की अपील पर यिहतुआन ने प्रांतीय फौज पर हमला किया और उसे हराकर चर्चों और दुकानों में जमा अनाज अकाल- पीड़ितों के बीच बांट दिया।

21 मई 1900 को विदेशी राजनयिकों ने छिंग सरकार को छह सूत्री विरोधपत्र भेजा और मांग की कि यिहतुआन के 'डाकुओं' को कठोरता से दबा दिया जाए। 31 मई और 3 जून को विदेशी सैनिकों को तियांचिन से पेइचिंग पहुंचाने के लिए छिंग सरकार ने विशेष रेलगाड़ियां चलाईं। 10 जून को विदेशी मिशनों ने सरकार को चेतावनी दी कि वे अपनी रक्षा के लिए राजधानी में अतिरिक्त फौज बुला सकते हैं। 16 जून को विदेशी दूतावासों ने चिहली के वाइसराय को युद्ध की संभावना की चेतावनी भेज दी। ताकू के किलों पर विदेशी फौज ने कब्जा करके चीन के खिलाफ अघोषित युद्ध आरंभ कर दिया।

छिंग सरकार दोहरी और असंगत नीति का अनुसरण कर रही थी। राजदरबारी भी दो गुटों में बंटे हुए थे। कुछ मांचू और चीनी अधिकारी निजी कारणों से विदेशियों से नाराज थे और राजमाता त्सीशी को विदेशियों के विरुद्ध उकसाते थे कि वह विद्रोही यिहतुआन आंदोलन का समर्थन करे। दूसरा गुट विदेशियों से संबंधों को बिगाड़ने के खिलाफ था और विदेशियों के विरुद्ध संघर्ष में यिहतुआन का उपयोग करना अनुचित समझता था। उधर महारानी त्सीशी विद्रोहियों का अपने लाभ के लिए इस्तेमाल करना तो चाहती थी लेकिन उसे डर था कि यिहतुआन किसी भी समय अपनी नीति बदल कर मांचू विरोधी संघर्ष भी शुरू कर सकता था। मांचू दरबार की कोशिश थी कि विदेशियों के विरुद्ध संघर्ष कहीं राजतंत्र विरोधी और सामंतशाही विरोधी युद्ध का स्वरूप न ग्रहण कर ले। इसलिए सरकार यिहतुआन के उन स्थानीय संघर्षों को दृढ़ता से दबा देती थी जहां वे कोई जमींदार विरोधी हरकत करते थे।

19 जून 1900 की चेतावनी के जवाब में 21 जून को महारानी त्सीशी ने विदेशी महाशक्तियों के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। एक अन्य अध्यादेश द्वारा महारानी ने

यिहतुआन को समर्थन और प्रोत्साहन देने का निर्णय किया। मांचू राजकुमार चुआंग त्साईशुन को विद्रोही यिहतुआन का सेनाध्यक्ष नियुक्त किया गया। इस प्रकार छिंग सरकार और विद्रोही यिहतुआन के सहयोग को औपचारिकता प्राप्त हो गई। इसके बावजूद छिंग शासन की दोहरी नीति जारी रही। दक्षिण-पूर्वी चीन के वाइसराय और गवर्नर यिहतुआन का दमन करते रहे। पेइचिंग सरकार ने साम्राज्यवादी देशों से कूटनीतिक संबंध कायम रखे। 24 जुलाई को साम्राज्यवादी फौज ने तियांचिन पर कब्जा कर लिया। उसके बाद विदेशी सेना पेइचिंग पर हमले के लिए आगे बढ़ी।

यद्यपि उनका घोषित उद्देश्य राजधानी की राजनयिक बस्ती को मुक्त कराना था किंतु विभिन्न साम्राज्यवादी ताकतें अपने खास लक्ष्यों को प्राप्त करने की कोशिश कर रही थीं। ब्रिटिश मध्य और दक्षिण चीन में अपने नियंत्रण को मजबूत करना चाहते थे और वहां के प्रांतीय गवर्नरों के माध्यम से कठपुतली सरकारों की स्थापना की कोशिश में लगे थे। रूस ने एक पृथक युद्ध के द्वारा संपूर्ण मंचूरिया पर कब्जा कर लिया। जर्मनी शांतुंग से आगे बढ़कर यांगत्सी घाटी में प्रवेश कर उसे अपने प्रभाव-क्षेत्र में शामिल करने का प्रयास कर रहा था। फ्रांस इंडोचीन से लगे हुए सूबों में अपने नियंत्रण को सुदृढ़ कर रहा था। ब्रिटेन के विरोध में जर्मनी और फ्रांस ने अपनी नौसेना शंघाई भेज दी थी। अमरीकी चीन की एकता की रक्षा के बहाने संपूर्ण चीन पर अपने मुक्त व्यापार-उपनिवेशवाद को लादना चाहते थे। जापान उत्तरी चीन और दक्षिणी मंचूरिया एवं कोरिया में अपना प्रभाव बढ़ाना चाहता था।

यिहतुआन उत्तरी चीन में 50,000 विदेशी सैनिकों के आक्रमण का मुकाबला कर रहा था। चीनी जनता विद्रोहियों का समर्थन कर रही थी। अंत में साम्राज्यवादियों की प्रतिद्वंद्विता और यिहतुआन की बहादुरी ने विदेशी ताकतों के मंसूबों को पूरा नहीं होने दिया। 3 अगस्त को जर्मन कमांडर के नेतृत्व में आठ राष्ट्रों के गठबंधन ने अपनी फौज को पेइचिंग रवाना कर दिया। रास्ते में यिहतुआन ने उससे युद्ध किया किंतु 13 अगस्त को साम्राज्यवादी फौज राजधानी में दाखिल हो गई। भारी प्रतिरोध के बावजूद अगले दो हफ्तों में उसने राजधानी और इर्द-गिर्द के गांवों पर कब्जा कर लिया। विदेशी सैनिकों ने अनेक इमारतों, मुहल्लों, बाजारों और पड़ोस के गांवों में हत्याकांड और लूटपाट के बाद आग लगा दी। 7 सितंबर को छिंग सरकार ने युद्ध के लिए यिहचुआन को दोषी ठहराते हुए एक आदेश जारी किया। उसके बाद उत्तरी चीन में विदेशी सेना और मांचू सरकार ने मिलकर सैकड़ों विद्रोहियों को पकड़कर मौत के घाट उतार दिया।

ग्यारह साम्राज्यवादी राज्यों और चीन के बीच 7 सितंबर 1901 को बाक्सर संधिपत्र पर दस्तखत हो गए। इसने चीन के अर्ध-औपनिवेशिक दर्जे की पुष्टि कर दी। संधि की शर्तों में 10 उच्च अधिकारियों के लिए मृत्युदंड तथा अन्य सौ को उचित दंड, औपचारिक क्षमायाचना, 45 नगरों में सिविल सर्विस परीक्षाओं का निलंबन, पेइचिंग में कूटनीतिक बस्ती का विस्तार और सैनिकीकरण, किलों, रेलवे स्टेशनों और पेइचिंग-तियांचिन मार्ग पर विदेशी फौज का कब्जा, निर्यात करों में वृद्धि तथा हरजाने की विशाल रकम शामिल

थी। फेयरबैंक आदि का निष्कर्ष है :

> बाक्सर विद्रोह और संधि ने छिंग राजवंश के विदेशी संबंधों को पतन के अंतिम बिंदु पर पहुंचा दिया था और अब वह लंबे समय तक कायम नहीं रह सकता था। फिर भी उसका कोई विकल्प उभरकर नहीं आया था।[16]

एक सोवियत इतिहासकार के अनुसार, 'यिहतुआन आंदोलन चीन में साम्राज्यवादी उत्पीड़न के विरोध में मुख्यत: संचालित आम जनता का आंदोलन था।....बाक्सरों के वैचारिक सांगठनिक दोषों और मांचू शासकों की दोगली नीति ने उसे सफल नहीं होने दिया।' दक्षिण-पूर्वी प्रांतों के सामंती गवर्नरों ने विदेशी ताकतों से साजिश कर यिहतुआन विद्रोह को चीन के शेष प्रांतों में फैलने से रोक दिया।

किसान विद्रोहियों के पास हथियारों की कमी थी। वे आधुनिक हथियारों से लैस साम्राज्यवादी फौज का मुकाबला नहीं कर सकते थे। छिंग अधिकारी भी उन्हें अकसर धोखा देते थे। जादू-टोना और अंधविश्वास बाक्सरों की खास कमजोरी थी। वह पारंपरिक शैली का आखिरी किसान विद्रोह था।

लेनिन ने दिसंबर 1900 में *इस्क्रा* के पहले संस्करण में चीन में साम्राज्यवादी ताकतों की नीतियों की निंदा करते हुए लिखा था :

> चीन के लोग उन लोगों से नफरत क्यों न करें जो चीन में अपने लाभ के लिए आए हैं, जिन्होंने अपनी तथाकथित उच्च सभ्यता का दुरुपयोग धोखाधड़ी, लूटपाट और हिंसा के लिए किया है, जिन्होंने चीन के खिलाफ युद्ध इसलिए लड़े ताकि वे चीन पर अफीम के व्यापार को थोप सकें और लोगों को उसके नशे की लत लगा सकें.... जिन्होंने छल करते हुए ईसाई धर्म के प्रचार के नाम पर अपनी लूटपाट की नीति को क्रियान्वित किया?[17]

उन्होंने कहा कि सभी देशों के समाजवादियों को एकजुट होकर चीन की जनता के संघर्ष से सहानुभूति प्रकट करनी चाहिए। जर्मनी और फ्रांस के समाजवादी दलों ने भी चीन में साम्राज्यवादियों के खूनी हमले की कठोर निंदा की। लेनिन ने अपने लेख में लिखा :

> वर्ग चेतना युक्त श्रमिकों का यह कर्तव्य है कि वे पूरी ताकत से उनका विरोध करें जो राष्ट्रों के बीच घृणा फैला रहे हैं और श्रमजीवी जनता का ध्यान अपने वास्तविक शत्रुओं से हटाकर दूसरी दिशा में ले जा रहे हैं।[18]

नेपोलियन ने कहा था कि चीनी दैत्य को सोने दो; जिस दिन वह जाग उठेगा, दुनिया को हिला देगा। यिहतुआन आंदोलन चीनी दैत्य की नींद में पहली करवट थी। अपनी तमाम खामियों के बावजूद, यह एक जन उभार था जिसका मुख्य निशाना विदेशी साम्राज्यवादी ताकतें थीं।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. बैरिंगटन मूर, *सोशल आरिजिंस आफ डिक्टेटरशिप एंड डेमोक्रेसी*, पृ. 162–163.
2. एम.आई. वेन्यूकोव, *ओचेर्की सोव्रेमेन्नोगो किताया*, पृ. 201–210.
3. एस.एल. तिखविंस्की (संपा.), *माडर्न हिस्टरी आफ चाइना*, पृ. 314.
4. वही, पृ. 318.
5. वही, पृ. 328.
6. वही, पृ. 332.
7. जान के. फेयरबैंक इत्यादि, *ईस्ट एशिया : ट्रेडीशन एंड ट्रांसंफार्मेशन*, पृ. 663.
8. वही, पृ. 629.
9. सुन यातसेन, *सेलेक्टेड वर्क्स*, खंड I, पृ. 168.
10. वही, पृ. 7.
11. वही, पृ. 169.
12. एस.एल. तिखविंस्की (संपा.), *माडर्न हिस्टरी आफ चाइना*, पृ. 365.
13. वही. पृ. 366.
14. वही, पृ. 380.
15. वही, पृ 387.
16. जान के. फेयरबैंक इत्यादि, *ईस्ट एशिया : ट्रेडीशन एंड ट्रांसफार्मेशन*, पृ. 640.
17. वी.आई. लेनिन, 'दि वार इन चाइना', *कलेक्टेड वर्क्स*, पृ. 373.
18. वही, पृ. 377.

अध्याय तीन

1911 की गणतांत्रिक क्रांति

बुर्जुआ क्रांति के पहले का चीनी समाज

उन्नीसवीं सदी के अंत और बीसवीं सदी के आरंभ में विश्व पूंजीवाद ने साम्राज्यवादी चरण में प्रवेश किया। साम्राज्यवादी देशों ने आक्रामक युद्धों के द्वारा अफ्रीका और एशिया पर औपनिवेशिक प्रभुत्व लाद दिया और उनके आपसी अंतर्विरोध और तेज होने लगे।

आक्रमण और उत्पीड़न की शिकार चीन की जनता ने साम्राज्यवाद और उसकी कठपुतली छिंग सरकार के खिलाफ संघर्ष शुरू कर दिया। यिहतुआन विद्रोह को दबाने के लिए ब्रिटेन, अमरीका, रूस, जर्मनी, फ्रांस, जापान, इटली और आस्ट्रिया-हंगरी ने हमलावर फौजें भेजीं। उसके बाद विद्रोहों का सिलसिला जारी रहा और 1911 में बुर्जुआ क्रांति ने 2,000 साल पुराने सामंती राजतंत्र का अंत कर दिया। साम्राज्यवादी हमलावरों और चीनी राष्ट्र के बीच अंतर्विरोध लगातार बढ़ रहे थे। साम्राज्यवादी शोषण के खिलाफ चीन के लोग बार-बार प्रतिरोध आंदोलन कर रहे थे। राष्ट्र के जीवन-मरण के इस संघर्ष में छिंग राजतंत्र साम्राज्यवादियों की मदद कर रहा था।

मंचूरिया, हांगकांग, मकाओ, ताइवान, पेंगहू द्वीपसमूह, कोलून, कियाचाऊ खाड़ी, लूशुन, तालियन, वेईहाईवेई पर साम्राज्यवादियों ने कब्जा कर लिया था। 82 बंदरगाहों को मुक्त व्यापार के लिए खोल दिया गया था और 16 नगरों में विदेशी शासित क्षेत्र थे। पेइचिंग में विदेशी 'लीगेशन क्वार्टर' राजधानी में साम्राज्यवादी हुकूमत का प्रतीक था। साम्राज्यवादी ताकतें जमींदारों, कंप्राडोरों और सौदागर-महाजनी पूंजी के सहयोग से, चीन की जनता का शोषण कर रही थीं। चीन में 200 करोड़ डालर का विदेशी निवेश था जो देशी पूंजी से दस गुना अधिक था। चीन के भारी उद्योगों, यातायात और संचार, तथा वस्तुओं के व्यापार का 80-90 प्रतिशत विदेशियों के नियंत्रण में था।

अपमान संधियों और ऋणों तथा हरजानों के जरिए, विदेशियों ने चीन के सीमा शुल्कों और आंतरिक करों पर भी कब्जा कर लिया था। उनके युद्धपोत चीन के क्षेत्रीय समुद्र, नदियों और झीलों में प्रवेश कर सकते थे और उनकी सेनाएं चीन के बड़े-छोटे नगरों और सभी सामरिक स्थानों पर तैनात थीं। पेइचिंग में उनका 'कूटनीतिक क्षेत्र' सरकार के ऊपर सरकार की भूमिका निभाता था। केवल नाम के लिए चीन एक स्वतंत्र देश था।

छिंग सरकार जनता पर कर लगातार बढ़ा रही थी। 1901 में वार्षिक राजस्व सिर्फ आठ करोड़ चांदी के औंस था जो 1910 में बढ़कर 30 करोड़ हो गया। उधर प्रांतीय गवर्नर

भी जनता पर धड़ाधड़ नए टैक्स लाद रहे थे जो केंद्रीय सरकार द्वारा निश्चित सीमा से दस गुना अधिक थे। श्रमजीवी जनता तो बुरी तरह पिस ही रही थी, भारी टैक्सों की मार ने मध्यम वर्ग और छोटे-बड़े जमींदारों को भी परेशान कर दिया। प्रतिक्रियावादी और भ्रष्टाचारी छिंग शासन तंत्र जनता से अलग-थलग पड़ गया। चीनी राष्ट्र और सरकार के बीच के अंतर्विरोध विस्फोटक हो गए।

सरकार जनता से वसूले धन का अधिकांश कर्जों और हरजानों की अदायगी में साम्राज्यवादियों को सौंप रही थी। इसलिए जनता औरं छिंग शासन के बीच का अंतर्विरोध चीनी राष्ट्र और साम्राज्यवाद के बीच के अंतर्विरोध की शक्ल ले रहा था और इसके साथ ही वह जनवादी वर्गों और सामंतशाही के बीच का अंतर्विरोध भी बनता जा रहा था। माओ त्सेतुंग ने बताया है :

> 1911 की क्रांति साम्राज्यवाद के विरुद्ध क्रांति थी। चीनी जनता ने छिंग शासन तंत्र को क्रांति का निशाना बनाया क्योंकि वह साम्राज्यवाद का वफादार कुत्ता था।[1]

श्रमजीवी जनता छिंग सरकार के शोषण और उत्पीड़न से सर्वाधिक दुःखी थी, इसलिए उसने सबसे पहले विद्रोह का झंडा उठाया। 1901 से 1910 के बीच लगभग 1,000 स्वतःस्फूर्त संघर्ष देश के विभिन्न भागों में हुए। इनमें करोड़ों लोगों ने भाग लिया। 1905 में 80, 1909 में 130 और 1910 में 280 संघर्ष दर्ज किए गए। प्रत्येक वर्ष उनकी संख्या और तीव्रता बढ़ रही थी। छिंग सरकार की नींव हिल गई थी। डॉ. सुन यातसेन ने छिंग शासन की तुलना ऐसी जर्जर इमारत से की, जिसे खड़ा रखना किसी के वश में नहीं था।[2]

जनसंघर्षों ने 1911 की क्रांति की सफलता के लिए उपयुक्त माहौल बनाया लेकिन ढुलमुल चीनी बुर्जुआ नेतृत्व पूर्ण विजय की दिशा में क्रांति को ले जाने के लिए न तो इच्छुक था और न ही सक्षम। *नव-जनवाद* के बारे में माओ त्सेतुंग ने इस वर्ग के लक्षण बताए हैं :

> यह क्रांति में भाग लेता है तो भी यह साम्राज्यवाद से पूर्ण संबंध विच्छेद नहीं करना चाहता और, इसके अलावा, यह जमीन के लगान के जरिए ग्रामीण क्षेत्रों के शोषण से घनिष्ठ रूप से जुड़ा होता है, इसलिए यह साम्राज्यवाद के उन्मूलन के लिए न तो इच्छुक होता है और न ही सक्षम और सामंती शक्तियों के पूर्ण उन्मूलन में तो उसको रुचि और भी कम होती है। इसलिए चीन की बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति के दो बुनियादी मसलों और कामों में से किसी एक का भी समाधान करने में राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग असमर्थ होता है।[3]

वस्तुतः राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग का चरित्र दोहरा था। उसका साम्राज्यवाद और सामंतवाद से गंभीर अंतर्विरोध था। अपनी समृद्धि और विस्तार की कोशिश में उसे विदेशी आयातों से प्रतियोगिता करनी पड़ती थी और विदेशी पूंजी के प्रहारों को सहना पड़ता था। देशद्रोही छिंग सरकार ने घरेलू बाजार को विदेशी माल से भर दिया था और स्वदेशी उत्पादों पर भारी

टैक्स लगाए थे। इसलिए राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग साम्राज्यवाद और छिंग सरकार का विरोधी था। इस अंतर्विरोध का निर्धारण तत्कालीन चीन के अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामंती चरित्र द्वारा हुआ था।

एक ओर राष्ट्रीय पूंजीपति क्रांति में भाग लेता था तो दूसरी ओर वह अपने दुश्मन से समझौता भी करता था। उसके जनता से दोहरे संबंध थे—वह किसानों और मजदूरों के साथ मिलकर साम्राज्यवाद से लड़ता था और साम्राज्यवाद से गठबंधन कर किसानों और मजदूरों के विरुद्ध लड़ता था :

> राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग का यह दोहरा चरित्र 1911 की क्रांति की पूरी प्रक्रिया में दिखाई पड़ा था। इसलिए, क्रांति कुछ हद तक सफल हुई, लेकिन अंत में उसे विफल होना ही था। निर्णायक कारक जनता के प्रति उसका दृष्टिकोण था।[4]

तुंग मेंग हुई की स्थापना और कार्यक्रम

चीन की आंतरिक परिस्थितियां बीसवीं सदी के पहले दशक में तेजी से बदल रही थीं। 'चीन पुनरुद्धार समाज' के बाद 'चीन पुन: संस्थापन समाज' (क्वांग फू हुई), 'चीनी राष्ट्र पुनरुद्धार समाज' (हुआ शिंग हुई) इत्यादि अन्य क्रांतिकारी संस्थाएं स्थापित हुईं। नई परिस्थितियों में यह जरूरी था कि इन क्रांतिकारी संस्थाओं का एकीकरण किया जाए। तुंग मेंग हुई (चीन क्रांतिकारी संघ) इस वस्तुपरक परिस्थिति का एकमात्र समाधान था। इसकी स्थापना के साथ चीन की बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति का नेतृत्व संगठित हो गया।

30 जुलाई 1905 को तोकियो में विभिन्न क्रांतिकारी संस्थाओं के 70 प्रतिनिधियों ने तुंग मेंग हुई की स्थापना की। तुंग मेंग हुई का अंग्रेजी अनुवाद यूनिटी लीग, यूनाइटेड लीग या रिवोल्यूशनरी लीग किया गया है। हिंदी में हम इसे एकता संघ या क्रांतिकारी संघ कहेंगे। 13 अगस्त को तोकियो में 1,300 छात्रों के सम्मेलन में सुन यातसेन ने घोषणा की कि सुधारवादियों की यह धारणा गलत है कि 'चीन केवल सांविधानिक राजतंत्र स्थापित कर सकता है, लोकतांत्रिक गणराज्य नहीं।'[5]

20 अगस्त को चीन क्रांतिकारी संघ ने सुन यातसेन को महानिदेशक चुन लिया और अपना घोषणापत्र जारी किया। नवंबर में *मिन पाओ* का प्रकाशन शुरू हुआ। नवंबर में डॉ. सुन ने अपने तीन सिद्धांतों—राष्ट्रवाद, लोकतंत्र और जन-जीविका का प्रतिपादन किया। 'राष्ट्रवाद' का तात्पर्य था कि मांचू शासन का अंत करो और चीनी राष्ट्र का पुनरुद्धार करो। 'लोकतंत्र' का तात्पर्य था कि राजतंत्र के स्थान पर चीनी गणराज्य की स्थापना करो। 'जन-जीविका' का अर्थ था कि समानता के आधार पर भूमि का वितरण करो। 1911 की क्रांति के ये मार्गदर्शक सिद्धांत थे।

बाद में 'क्रांतिकारी संघ' ने आठ दस्तावेजों पर आधारित 'क्रांति का कार्यक्रम' जारी किया जिसमें 'सैनिक शासन का घोषणापत्र' और 'विश्व के लिए घोषणापत्र' शामिल थे।

इन दस्तावेजों में शासन की नीतियों तथा देश के विभिन्न भागों में सशस्त्र विद्रोहों की योजनाओं का वर्णन था। 'संघ' की स्थापना बुर्जुआ क्रांति की दिशा में महत्वपूर्ण कदम था। सुन यातसेन के तीन सिद्धांत आंदोलन की परिपक्वता को प्रकट करते थे।

सुन यातसेन ने कहा कि राष्ट्रवाद के सिद्धांत का अर्थ मांचू प्रजाति या अन्य प्रजातियों से घृणा नहीं था और न ही उसमें हान जाति की श्रेष्ठता की धारणा है। डॉ. सुन ने कहा, 'हम सभी मांचुओं से नफरत नहीं करते, केवल उनसे जिन्होंने हान लोगों को सताया है। हमें उन मांचुओं से कोई बदला नहीं लेना है, जो आगामी क्रांति में बाधा नहीं डालते।' उन्होंने आगे कहा, 'यह संस्था राजनीतिक सांविधानिक लोकतंत्र की स्थापना करेगी। हमारा वर्तमान राजनीतिक दृष्टिकोण है कि अगर हान प्रजाति का राजा भी हो, तब भी क्रांति आवश्यक होगी।'[6]

यहां सुन यातसेन राष्ट्रवादी और लोकतांत्रिक क्रांतियों को समन्वित कर रहे थे और छिंग राजतंत्र के आगामी उन्मूलन के लिए सैद्धांतिक बुनियाद पेश कर रहे थे जो चीन में 2000 साल पुराने सामंती राजतंत्र की प्रणाली को सदा के लिए समाप्त कर देगा।

जनता की जीविका का सिद्धांत, हालांकि काल्पनिक और आदर्शवादी था, फिर भी भूस्वामित्व का समानीकरण एक शक्तिशाली नारा था जिसमें सामंतशाही के विरोध की धारणा निहित थी और यह किसानों में उम्मीद और जोश भर देता था।

दूसरी बात यह थी कि चीन की 'रिवोल्यूशनरी लीग' ने छोटे और अलग-थलग क्रांतिकारी ग्रुपों को 'तुंग मेंग हुई' के झंडे के नीचे एकजुट कर दिया था। इस तरह एकीकृत क्रांतिकारी पार्टी अस्तित्व में आ गई थी। पुराने क्रांतिकारी गुट ग्रुप संगठन के रूप में काम करते थे। 'तुंग मेंग हुई' का एकताबद्ध सांगठनिक स्वरूप था और नियमित राजनीतिक कार्यक्रम था। वह नए युग और नई तर्ज का क्रांतिकारी राजनीतिक दल था।

फिर भी यह 'रिवोल्यूशनरी लीग' बुर्जुआ और निम्न-बुर्जुआ वर्ग के क्रांतिकारियों और जमींदार वर्ग के मांचू विरोधी तत्वों का एक ढीला गठबंधन थी। इसलिए बहुत से सदस्य डॉ. सुन के तीन सिद्धांतों से व्यवहार के स्तर पर सहमत नहीं थे। वे राष्ट्रवाद और लोकतंत्र को तो स्वीकार करते थे लेकिन भूस्वामित्व के समानीकरण का विरोध करते थे। राजनीतिक मतभेद संगठन में अस्थिरता पैदा कर रहे थे।

वस्तुत: क्रांतिकारी लीग के 'प्रोग्राम' में भी कमजोरियां थीं। राष्ट्रवाद की व्याख्या में छिंग कुलीन तंत्र का विरोध तो था लेकिन 'साम्राज्यवाद' का उल्लेख नहीं था। इसलिए उसमें साम्राज्यवाद और चीनी राष्ट्र के बीच मुख्य अंतर्विरोध की उपेक्षा की गई थी। यद्यपि सुन यातसेन देशभक्त थे लेकिन उन्हें तथा अन्य नेताओं को साम्राज्यवाद के बारे में कुछ भ्रम भी थे। इसलिए वे साम्राज्यवाद विरोधी विचारों को 'प्रोग्राम' की शक्ल नहीं दे सके। यह सामंती भावना से प्रेरित सदस्यों के बारे में और भी अधिक सच था, जो न तो 'गणतंत्र की स्थापना चाहते थे और न ही भूस्वामित्व का समानीकरण।' वे हान और मांचू प्रजातियों के अंतर्विरोध को ही चीनी समाज का मुख्य अंतर्विरोध बताते थे। यह 1911 की क्रांति के साम्राज्यवाद विरोधी तत्व को विकृत कर देता था।

'विश्व के लिए घोषणापत्र' में साम्राज्यवाद से समझौते की चर्चा की गई थी :

1. अन्य देशों से चीन की पुरानी संधियां कायम रहेंगी;
2. हरजानों और विदेशी कर्जों की अदायगी जारी रहेगी; और
3. विदेशियों के सभी वर्तमान विशेषाधिकारों की रक्षा की जाएगी।[7]

इसका उद्देश्य था कि बुर्जुआ क्रांतिकारी अपने आंदोलन के लिए साम्राज्यवादियों का समर्थन या तटस्थता चाहते थे। छिंग सरकार साम्राज्यवादियों की कठपुतली थी। उनके खिलाफ साम्राज्यवादियों का समर्थन मांगना बुर्जुआ क्रांतिकारियों की वैचारिक नासमझी प्रकट करता है।

इसी प्रकार छिंग सरकार के कुलीन वर्गीय अधिकारियों और सेनाध्यक्षों से अपील की गई थी कि वे क्रांतिकारियों का साथ दें। यह अपील तुंग मेंग हुई की अपरिपक्वता दरशाता है और सुन यातसेन के सामंतवाद विरोधी सिद्धांत की अवहेलना भी। बुर्जुआ क्रांतिकारी मांचू और हान जमींदारों की वर्गीय एकता को समझ नहीं पा रहे थे। हालांकि वे 'भूस्वामित्व के समानीकरण' के क्रांतिकारी नारे को उछाल रहे थे, लेकिन वे किसानों द्वारा जमींदारों की जमीन पर कब्जे के क्रांतिकारी कार्य का कठोर विरोध करते थे। वे राज्य द्वारा जमींदारों की भूमि के अधिग्रहण की बात करते थे। उनकी भूमि सुधार योजना का लाभ बुर्जुआ राज्य को मिल सकता था, लेकिन किसानों को नहीं। यह संकेत देता था कि बुर्जुआ क्रांतिकारी सामंतवाद के खिलाफ किसानों के जनवादी आंदोलन को नेतृत्व करने में असमर्थ थे। तुंग मेंग हुई की कमजोरियां उसके कार्यक्रम में ही निहित थीं।

छिंग शासन के सांविधानिक सुधार

इस संदर्भ से थोडा स्काचपोल की यह टिप्पणी गौर करने लायक है। उनका मानना है :

> 1901 और 1911 के बीच तीव्र गति से अध्यादेशों द्वारा विभिन्न प्रकार के सुधारों को लागू किया गया। कन्फ्यूशियन परीक्षा प्रणाली में पहले संशोधन किए गए और फिर 1905 में उसे खत्म कर दिया गया। आधुनिक स्कूल, जो विशेषीकृत पश्चिमी शैली की शिक्षा देते थे, स्थानीय क्षेत्रों, प्रांतों और पेइचिंग में स्थापित किए गए जिनमें नए शासकीय अभिजन प्रशिक्षित किए जा सकते थे। सैनिक अकादमियों की स्थापना आधुनिक फौजी अफसरों की 'ट्रेनिंग' के लिए हुई। आंतरिक मामलों, युद्ध, शिक्षा, विदेशी मामलों और वाणिज्य के लिए विशेषीकृत मंत्रालयों की स्थापना की गई। एक वास्तविक राष्ट्रीय बजट प्रणाली का निर्माण किया गया। अंत में, छिंग सरकार ने 1908 से प्रतिनिधि सभाओं के सृजन का प्रावधान किया जिनके माध्यम से उसे आशा थी कि वह कुलीन जमींदार वर्ग को सलाहकार की भूमिका देकर शाही सरकार के पक्ष में लामबंद कर लेगी। स्थानीय सभाओं की स्थापना 1908 में ही कर दी गई।

प्रांतीय सभाओं के चुनावों को 1909 में करने का निश्चय किया। 1910 में राष्ट्रीय महासभा का निर्वाचन होना था जिसे 1917 में संसद की स्थापना के लिए योजना बनानी थी।[8]

जब 1905 में जापान के सांविधानिक राजतंत्र ने रूस के निरकुंश राजतंत्र को युद्ध में हरा दिया तो छिंग सरकार और कुछ उदारवादी बुद्धिजीवियों और जमींदारों ने चीन की राजनीतिक समस्याओं का हल सांविधानिक सुधारों में ढूंढ़ना शुरू कर दिया :

उन्हें आशा थी कि संविधानवाद उभरते हुए प्रांतीय हितों को राजवंशीय शासन में हिस्सा प्रदान कर देगा और उन्हें सरकार के प्रति वफादार रखेगा। 1906 और 1911 के बीच प्रशासनिक आधुनिकीकरण और संविधानवाद के दोहरे कार्यक्रम का अनुसरण किया गया। परंतु इन परिवर्तनों ने सत्ता संघर्ष को जन्म दिया। यह संघर्ष केंद्रीय सरकार के अंतर्गत और केंद्र तथा प्रांतों के बीच था। राजधानी में मांचू राजकुमारों ने महत्वपूर्ण पदों पर अपना रुतबा कायम रखा और उसे बढ़ाया एवं वास्तविक बुनियादी सुधारों को रोक दिया। पेइचिंग में इस मांचू समर्थक और चीनी विरोधी नीति ने शेष चीन में शत्रुता और राष्ट्रवाद की भावना को बल दिया।[9]

संविधानवाद ने चीन के बुर्जुआ जमींदारों और मांचू-चीनी नौकरशाही के बीच एक गठबंधन स्थापित किया जिसका ध्येय उभरते हुए क्रांतिकारी आंदोलन का विरोध करना था। 'संविधान तैयार करने' के नाम पर मांचू गुट राज्य के शासन तंत्र का केंद्रीकरण करना चाहता था और सत्ता पर एकाधिकार करना चाहता था। वह सेना और प्रांतीय वित्त पर अपना पूरा नियंत्रण चाहता था। प्रशासनिक और सांविधानिक सुधारों के माध्यम से छिंग शासक चीनी प्रशासकों को महत्वपूर्ण पदों से हटा रहे थे और उन पर मांचू नस्ल के राजदरबारियों को नियुक्त कर रहे थे। छिंग सरकार 'मांचू-चीनी' समानता की बात करती थी लेकिन उसने मंत्रिपरिषद में आठ मांचू, चार चीनी और एक मंगोल नस्ल के कुल 13 मंत्रियों को नियुक्त किया। प्रधानमंत्री राजकुमार छिंग भी मांचू था। शक्तिशाली चीनी प्रांतीय वाइसरायों को, उनके पदों से हटाकर पेइचिंग में बुला लिया गया जिससे उन्हें मांचू प्रशासकों की निगरानी में रखा जा सके। चिहली, हुनान और हुपेई के वाइसरायों के साथ ऐसा ही व्यवहार किया गया। चिहली के वाइसराय युआन शिह-काई को भी पद से हटाकर संविधान की तैयारी के काम में लगा दिया।

परंतु अंतिम विश्लेषण में कहा जा सकता है कि इस नीति ने मांचू गुट को बिलकुल अलग-थलग कर दिया, उनकी सत्ता के आधार को संकुचित कर दिया और मांचू-चीनी सामंतवादियों के बीच की खाइयों को और ज्यादा चौड़ा कर दिया।[10] वस्तुत: छिंग शासन तंत्र के खिलाफ क्रांतिकारी आंदोलन की बढ़ती हुई तीव्रता ने संविधानवादी शिविर की राजनीतिक गतिविधि को तेज कर दिया। इस खेमे में व्यापारी-औद्योगिक बुर्जुआजी और उदारवादी चीनी जमींदारों का एक बड़ा हिस्सा शामिल था। उनके वर्गीय हित सामंती

मांचू-चीनी शासक वर्ग के हितों से टकराते थे क्योंकि वे पूंजीवादी संबंधों के विकास में बाधक थे। छिंग दरबार की पराजयवादी नीति भी उन्हें नापसंद थी। परंतु वे इस विवाद के क्रांतिकारी हल के लिए भी तैयार नहीं थे। अत: वे सांविधानिक राजतंत्र की स्थापना की मांग करते थे।

संविधानवादियों ने अपना आंदोलन चलाने के लिए 'एसोसिएशन फॉर टि स्टडी आफ पॉलिटिकल प्राब्लम्स' बनाया और उसकी तरफ से 'संविधान सुधार आयोग' मे मांग की कि तीन वर्षों के भीतर संसद की स्थापना की जाए और उसके सत्र की बैठक बुलाई जाए। संविधानवादियों ने प्रांतों में भी अपने संगठन की शाखाएं खोल दीं और संविधान के पक्ष में हस्ताक्षर अभियान शुरू किया। हजारों नागरिकों ने अनेक प्रांतों से संविधान की मांग पर दस्तखत किए। अगस्त 1908 में छिंग सरकार ने संविधानवादियों के 'एसोसिएशन' पर पाबंदी लगाई। परंतु प्रांतों में आंदोलन जारी रहा क्योंकि वे 'एसोसिएशन' से जुड़े नहीं थे और इसलिए उन पर छिंग सरकार का प्रतिबंध लागू नहीं होता था। अनेक प्रांतों के वाइसराय भी संविधानवाद के समर्थक थे।

छिंग सरकार और संविधानवादियों के बीच सहयोग और संघर्ष दोनों था—सहयोग इसलिए कि दोनों संविधान द्वारा क्रांति को रोकना चाहते थे और संघर्ष इसलिए क्योंकि दोनों के हितों में टकराव था। संविधानवादियों को आशा थी कि वे संविधान के द्वारा छिंग दरबार की रूढ़िवादी शक्तियों पर अंकुश लगा सकेंगे और खुद राज्य की सत्ता में भागीदार बन सकेंगे। राजदरबारी सोचते थे कि वे सांविधानिक शासन के माध्यम से मांचू गुट के शासन को वैधता प्रदान कर देंगे लेकिन हान जमींदारों-अधिकारियों को वास्तविक सत्ता से वंचित रखेंगे।

जब छिंग सरकार पर जनसंघर्षों का दबाव बढ़ा तो 1908 में उसने 'प्रांतीय सलाहकार सभाओं के लिए विनियम' और 'संविधान के सामान्य सिद्धांत' शीर्षक से दो अध्यादेश जारी किए। अध्यादेश में कहा गया कि आगामी नौ वर्षों में संविधान लागू कर दिया जाएगा। 'सामान्य सिद्धांतों' में 14 अनुच्छेद थे जिनमें एक सामंती सम्राट के विशाल अधिकारों और नागरिकों के अनेक कर्तव्यों का विवरण था। 'छिंग दरबार केवल सांविधानिक शासन के नाम का उपयोग कर रहा था लेकिन उसका इरादा व्यवहार में निरंकुश राजतंत्र को कायम रखना था। तथाकथित तैयारी का समय उसका प्रतिक्रांतिकारी आवरण था।'[11]

'सामान्य सिद्धांतों' की घोषणा के तुरंत बाद महारानी डोवाजेर की मृत्यु हो गई। तीन साल के मांचू राजकुमार पूयी को राजगद्दी पर बिठाया गया। अक्तूबर 1910 में छिंग सरकार ने केंद्रीय सलाहकार सभा के निर्माण की घोषणा की। कुछ संविधानवादियों को इसका सदस्य बनाया गया। विभिन्न प्रांतों ने संविधान को जल्दी लागू करने के लिए केंद्रीय सरकार को ज्ञापन भेजे लेकिन शासकीय मांचू गुट ने इन सभी ज्ञापनों को अस्वीकार कर दिया। मांचू सरकार और संविधानवादियों के बीच का अंतर्विरोध अधिक तीव्र हो गया।

जब मंत्रिमंडल में संविधानवादियों के एक भी प्रतिनिधि को शामिल नहीं किया गया तो प्रांतीय सभाओं ने ज्ञापन दिया कि मंत्रिमंडल निर्माण के आदेश को रद्द कर दिया जाए।

इस अनुरोध को भी अस्वीकार कर दिया गया। तदुपरांत संविधानवादियों ने तीन संगठनों के निर्माण की घोषणा की जिनका चरित्र राजनीतिक दल जैसा था—'संविधान समाज के मित्र', 'सांविधानिक शासन के प्रोत्साहन के लिए संघ' और '1911 क्लब'। इन संगठनों के दोहरे उद्देश्य थे :

1. इनके माध्यम से छिंग सरकार से निरंतर सांविधानिक सुधारों के विषय में सौदेबाजी जारी रखी जा सकती थी, और
2. अगर क्रांतिकारी स्थिति उत्पन्न हो जाए तो सच्चे अवसरवादी के रूप में क्रांतिकारियों की पंक्तियों में शामिल होने के विकल्प का इस्तेमाल हो सकता था।

छिंग सरकार का इरादा था कि वह दिखावटी सुधार द्वारा संविधानवादियों को अपने पक्ष में कर ले जिससे वह क्रांति का विरोध कर सके और अपने प्रतिक्रियावादी शासन को कायम रख सके। 'परिणाम उसकी इच्छाओं के प्रतिकूल हुआ। क्रांतिकारी शक्तियां कमजोर नहीं हुईं, दरबार का परदाफाश हो गया, संविधानवादियों से उसका टकराव हो गया, उसने अपने समर्थकों को खो दिया और वह बिलकुल अकेला पड़ गया।' संविधानवादी अवसरवादी निकले। '1911 की क्रांति के बाद, वे क्रांतिकारियों की कतारों में घुस गए और क्रांति के खिलाफ साजिश में जुट गए। उनकी दीमक की तरह कुरेदने की नीति आंशिक रूप से 1911 की क्रांति की विफलता के लिए उत्तरदायी थी।'[12]

रेल मार्गों का राष्ट्रीकरण

संविधानवादियों के ज्ञापनों की छिंग सरकार द्वारा बार-बार अस्वीकृति इस शासन तंत्र के लिए साम्राज्यवादियों के समर्थन से अभिन्न रूप से जुड़ी थी। जब पहली शाही मंत्रिपरिषद का निर्माण हुआ तो उसने तुरंत 'रेल मार्गों के राष्ट्रीकरण' का अध्यादेश पारित कर दिया। यह 'राष्ट्रीकरण' बिलकुल विचित्र था। छिंग सरकार ने रेल मार्गों के निर्माण के अधिकार इस आदेश द्वारा प्रांतीय सरकारों से छीन लिए और फिर उनकी नीलामी विदेशी कंपनियों को कर दी। यह साम्राज्यवाद के सामने घुटने टेकने की नीति थी। रेल कंपनियां अनेक प्रांतों में मुख्यत: संविधानवादियों के नियंत्रण में थीं। इसलिए 'राष्ट्रीकरण' से उनके हितों पर गहरी चोट पहुंची। इसलिए इस सवाल पर उन्होंने जन आंदोलन छेड़ दिया। उनका सीमित उद्देश्य सिर्फ अपने 'शेयरों' की रक्षा करना था। परंतु वे जन आंदोलन पर अपना नियंत्रण नहीं रख सके। वह छिंग शासन के पतन की दिशा में पहला क़दम बन गया।

रेल आंदोलन व्यापक जन आंदोलन क्यों बन गया? इसके गंभीर ऐतिहासिक कारण थे। उन्नीसवीं सदी के अंत में साम्राज्यवादियों द्वारा चीन की लूटपाट बढ़ रही थी। उन्होंने प्रभाव-क्षेत्रों की स्थापना कर चीन में पूंजी का निर्यात किया और उसकी अर्थनीति पर कब्जा कर लिया। आर्थिक लूटपाट का मुख्य साधन रेल मार्गों के निर्माण के लिए ऋण देना

या प्रत्यक्ष निवेश था। इससे वे मुनाफा तो कमाते ही थे प्रबंधन, व्यापार पर नियंत्रण, तार-संचार, खनिज और वन संबंधी उद्योगों के विकास के अधिकार भी प्राप्त कर लेते थे। रेल मार्गों की सुरक्षा के लिए साम्राज्यवादी अपनी फौजों को भी तैनात कर देते थे। इसलिए चीन में विदेशियों द्वारा बिछाए हुए रेल मार्ग चीन की अर्ध-औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के प्रतीक बन गए थे।

फेयरबैंक आदि का निष्कर्ष है, 'विदेशियों के नियंत्रण में रेल मार्ग—रूसी और जापानी मंचूरिया में, जर्मन शांतुंग में, और फ्रांसीसी युन्नान में—अब आर्थिक साम्राज्यवाद के उपकरण बन गए थे।[13] इसलिए साम्राज्यवादी ताकतों के प्रभाव-क्षेत्र चीन के रेल मार्गों पर उनके नियंत्रण के साथ-साथ बढ़ते गए थे। अमरीकी साम्राज्यवाद इस दौड़ में पीछे रह गया था। वह रेल मार्गों के निर्माण की ओर खास ध्यान दे रहा था और इसे अपने साम्राज्यवादी विस्तार का आधार बना रहा था। 1896 में उसने 'अमेरिकन चाइना डेवलपमेंट कंपनी' की स्थापना रेल निर्माण अधिकारों को प्राप्त करने के लिए ही की थी। उसका इरादा कैंटन-हैंकाऊ रेलवे के निर्माण का था। हुनान, हूपे और क्वांगतुंग के चीनी जमींदारों और प्रशासकों ने कैंटन-हैंकाऊ रेलवे के निर्माण के लिए प्रार्थनापत्र दिया। लेकिन छिंग सरकार ने इसका अनुबंध अमरीकी कंपनी के साथ कर लिया।

अमरीकियों ने जनता के प्रतिरोध के डर से निर्माण का काम धीमी गति से शुरू किया और अंत में कंपनी के दो-तिहाई शेयर बेल्जियनों को बेच दिए। अमरीकी कंपनी के इस आचरण के विरोध में हुनान, हूपे और क्वांगतुंग में जोरदार आंदोलन शुरू हुआ। उन्होंने अमरीकी वस्तुओं का बहिष्कार शुरू किया जिससे अमरीकी कंपनी को अनुबंध रद्द करने के लिए राजी होना पड़ा। परंतु रेल निर्माण के लिए इन प्रांतों के बुर्जुआ जमींदार वर्गों के पास पर्याप्त पूंजी नहीं थी। छिंग सरकार ने ब्रिटेन, जर्मनी और फ्रांस से ऋण लेने की योजना बनाई। अमरीकी राष्ट्रपति टाफ्ट ने इसका विरोध किया। अंत में कैंटन- हैंकाऊ रेलवे के निर्माण के लिए अमरीका, ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी का सयुंक्त निगम (कनसोर्टियम) बना दिया गया। इस तरह फिर इस रेल मार्ग के निर्माण का दायित्व विदेशियों को मिल गया।

इसके जवाब में रेल मार्ग रक्षा आंदोलन शुरू हो गया, खास तौर से सिचुआन में, जहां जनसभाएं हुईं और पेइचिंग को दु:ख भरे प्रार्थनापत्र भेजे गए, लेकिन व्यर्थ। सिचुआन का आंदोलन तेज हो गया। दुकानें और स्कूल बंद हो गए। टैक्सों का भुगतान रोक दिया गया। किसानों का समर्थन जुटाया गया। सितंबर में, सरकार ने फौज भेज दी, प्रदर्शनकारियों को गोलियों से मारा गया और कुलीन वर्ग के नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। ये नेता सुशिक्षित, संपन्न और जमींदार-व्यापारी घरानों के थे, जिन्होंने जापान में शिक्षा पाई थी और अब प्रांतीय सभा के प्रतिनिधि थे। उन्होंने रेलवे परियोजनाओं में पूंजी लगाई थी। उनका विदेशी विरोधी नारा था, 'सिचुआन सिचुआनवासियों के लिए'। यह नारा प्रांतीय शासक वर्ग के हितों का प्रतिनिधित्व करता था, जो अब घनघोर राजवंश विरोधी हो गए थे।[14]

मेरी सी. राइट का कथन है, 'सिचुआन विद्रोह ने....ऐसे अनेक व्यापक विप्लवों को हवा दे दी जिनका रेलवे के मुद्दे से कोई संबंध नहीं था।'[15] सिचुआन में रेल आंदोलन अपेक्षाकृत व्यापक, गंभीर और दीर्घकालिक था। जब छिंग सरकार ने क्वांगतुंग, हुनान, हूपे और सिचुआन में रेल निर्माण के अधिकारों की नीलामी कर दी और विदेशी कंपनियों ने उन्हें खरीद लिया तो सिचुआन के शेयर होल्डरों ने चेंगतू में सभा की और पू तियनचुन के नेतृत्व में आंदोलन चलाने का फैसला किया। लगभग एक लाख लोगों ने इस आंदोलन में भाग लिया। 'चाइना रिवोल्यूशनरी लीग' ने भी रेल रक्षा आंदोलन का सक्रिय समर्थन किया। 25 सितंबर 1911 को जुंगशियन जनपद ने आजादी की घोषणा कर दी। वहां लोगों ने एक क्रांतिकारी सरकार स्थापित कर दी। सारे प्रांत में विद्रोह फैल गया। एक चीनी लेखक का मत है :

> सिचुआन की क्रांति ने संपूर्ण चीन में क्रांतिकारी परिस्थिति पैदा कर दी। और छिंग सरकार द्वारा जब सेना के एक भाग को हूपे से सिचुआन स्थानांतरित कर दिया गया, तो उस प्रांत में प्रतिक्रियावादी शासन की स्थिति कमजोर हो गई जिसने आगामी वूचांग विद्रोह के लिए अनुकूल स्थितियां बना दीं।[16]

वूचांग विद्रोह का राष्ट्रव्यापी प्रभाव

जब हूपे, हुनान, क्वांगतुंग और सिचुआन प्रांतों में रेल आंदोलन जोरों पर था, तभी बुर्जुआ क्रांतिकारी वूचांग में सशस्त्र विद्रोह की तैयारियां कर रहे थे। उनके उत्साहपूर्ण कार्य ने वूहान के तीन नगरों के इस विद्रोह को 1911 की क्रांति की निर्णायक घटना बना दिया। वूहान का महत्व वहां की वस्तुगत स्थितियों और क्रांतिकारियों के आत्मगत प्रयासों के कारण है।

वस्तुगत स्थितियों के बारे में कहा जा सकता है कि वूहान में वर्गीय और राष्ट्रीय अंतर्विरोध तेज हो चुके थे और क्रांति का जनाधार मजबूत था। जब उन्नीसवीं सदी के अंत और बीसवीं सदी के शुरू में साम्राज्यवादियों ने चीन के अंदरूनी क्षेत्रों में हमला किया तो वूहान उनकी लूटपाट का केंद्र बन गया। आंकड़े बताते हैं कि वूहान द्वारा विदेशी व्यापार का मूल्य 1898 में पांच करोड़ चांदी के औंस था जो 1902 में बढ़कर दस करोड़ और 1910 में 15 करोड़ हो गया। तीन साल में यह तिगुना हो गया और इस प्रकार वूहान शंघाई के बाद दूसरा सबसे बड़ा व्यापारिक बंदरगाह बन गया। साम्राज्यवादी देश अपने माल को थोपकर उसके बदले सस्ते दामों में कच्चे माल पर कब्जा कर लेते थे और अंदरूनी चीन के निवासियों को सताते थे।

साम्राज्यवादी हमला तीव्र होने पर सामंती शासक शीघ्र ही विदेशी हितों के दलाल बन गए। उनके उद्योगों में सभी चीजें *आयातित थीं—मशीनें, तकनीशियन*, फैक्टरी की इमारतों के लोहे के ढांचे, लोहे के खंभे, भट्ठियों की नींवें, सीमेंट, इत्यादि। शुरू से ही ये

उद्योग विदेशी एकाधिकारी पूंजी के नियंत्रण में आ गए। किसान लोगों को भी विदेशी और चीनी प्रतिक्रियावाद का शिकार बनाया गया। वस्तुगत स्थितियों के अलावा क्रांतिकारियों ने वूचांग विद्रोह के लिए लगभग एक दशक से जनचेतना जगाने की भी लगातार कोशिशें जारी रखी थीं। हूपे में स्थित 'छिंग नवोन सेना' के बीच भी क्रांतिकारियों ने राजनीतिक चेतना फैलाई थी। निर्धन किसानों और ग्रामीण शरणार्थियों में भी क्रांतिकारियों ने जनाधार बना लिया था। इसलिए वूचांग में क्रांति का विस्फोट कोई आकस्मिक घटना नहीं थी। थोडा स्काचपोल ने लिखा है :

> सिचुआन में विप्लवी उपद्रवों को दबाने के लिए सेना को बाहर से बुलाया गया, कुछ सेना वूहान क्षेत्र से भी आई, जहां 10 अक्तूबर को नाटक के अगले अंक की शुरुआत हुई। जब कुछ सैनिक अफसरों को 9 अक्तूबर को मांचू विरोधी षड्यंत्र का पता चला, तो कुछ फौजी यूनिटों में वूचांग में दोषी अफसरों को दंड से बचाने के लिए 10 अक्तूबर को विद्रोह शुरू हो गया। मांचू गवर्नर भयभीत होकर भाग निकला और एक ब्रिगेड के कमांडर को स्थानीय क्रांति का नेता नियुक्त कर दिया गया। वूचांग विद्रोह एक प्रेरणादायक उदाहरण बन गया।[17]

आगामी दो सप्ताहों में एक प्रांत के बाद दूसरे प्रांत में 'आजादी' की घोषणा में दो प्रमुख तत्वों ने नेतृत्व प्रदान किया : सैनिक गवर्नरों ने जो 'न्यू आर्मी' बलों के कमांडर थे और प्रांतीय असेंबलियों के जमींदार-प्रशासक-व्यापारी नेताओं ने।[18]

10 अक्तूबर से नवंबर के अंत तक चीन के 24 प्रांतों और क्षेत्रों में से 14 ने छिंग सरकार के प्रति अपनी निष्ठा की समाप्ति की घोषणा कर दी। जिन प्रांतों मे स्वतंत्रता की घोषणा नहीं की गई, वहां 'न्यू आर्मी' के सैनिकों और क्रांतिकारियों ने संघर्ष जारी रखा। रेल कर्मचारियों, मजदूरों और किसानों ने भी इस देशव्यापी आंदोलन में भाग लिया। छिंग सैनिकों को ले जाने वाली गाड़ियों की पटरियां उखाड़कर उन्हें उलट दिया गया। शांतुंग और चिहली में भी क्रांतिकारियों ने आंदोलन करते हुए मांग की कि 'न्यू आर्मी' पेइचिंग पर 'मार्च' करे जिससे छिंग शासक भी डर गया।

वूचांग विद्रोह की सफलता के बाद अस्थायी सरकार के गठन की समस्या आई। क्रांतिकारियों ने प्रांतीय सभा के नेताओं को और प्रांतीय सरकार के प्रशासकों को नई सरकार के गठन में सहयोग करने के लिए निमंत्रण दिया। उन्होंने ली युआनहोग और तांग हुआलोंग के नेतृत्व में अस्थायी सरकार का निर्माण कर दिया। 16 अक्तूबर को उसने कार्यभार संभाल लिया। ली एक अनुदार फौजी कमांडर था और तांग एक प्रमुख व्यापारी। उन्होंने तुरंत क्रांतिकारियों को सत्ता से अलग कर दिया और मांचू राजतंत्र से समझौते के लिए उचित अवसर की प्रतीक्षा करने लगे। परंतु अन्य प्रांतों में क्रांति के सफलता के कारण वे ऐसा नहीं कर सके।[19]

विजयी वूचांग विद्रोह का राष्ट्रव्यापी प्रभाव हुआ। आगामी दो महीनों में अधिकांश प्रांतों ने छिंग राजवंश की सरकार को उखाड़ फेंका। 22 अक्तूबर को हुनान और शांशी

प्रांतों में क्रांति सफल हो गई। 29 अक्तूबर को शांशी स्वतंत्र हो गया; 31 अक्तूबर को युन्नान आजाद हो गया और 1 नवंबर को चियांग्सी भी। इसी तरह 4 नवंबर को शंघाई, 5 को चेकियांग, 7 को क्वांग्सी, 8 को अन्हुई, 9 को क्वांगतुंग, 11 को फूचियन, 13 को शांतुंग और 27 को सिचुआन प्रांत स्वतंत्र हो गए। दिसंबर में मंचूरिया के तीन सूबों ने भी आजादी की घोषणा कर दी और आंदोलन मंगोलिया, तिब्बत और सिंकियांग में भी प्रवेश कर गया। 2 दिसंबर को क्रांतिकारियों ने कड़े संघर्ष के बाद नानकिंग पर भी कब्जा कर लिया। अब केवल तीन सूबों—होपे, होनान और कांगसू में छिंग शासन कायम था।

सोवियत इतिहासकारों का मत है, 'इस संघर्ष की जल्दी सफलता का मुख्य कारण यह तथ्य था कि 'नवीन सेना' के बहुत बड़े हिस्से ने मांचुओं के खिलाफ बगावत की और क्रांति के प्रारंभिक चरण में उन्होंने हमले में पहल की।'[20] 1 जुलाई 1911 को छिंग साम्राज्य की 'नवीन सेना' में 11 डिवीजन और 25 मिश्रित ब्रिगेडें थीं। इसमें 1,60,000 पैदल सैनिक, 14,000 घुड़सवार, 1,000 तोपें और 130 मशीनगनें थीं। अधिकांश सैनिक युवा किसान तथा दस्तकार थे। मध्य और दक्षिण चीन में 'नवीन सेना' की जो इकाइयां तैनात थीं, उनमें डॉ. सुन यातसेन की क्रांतिकारी लीग और दूसरे क्रांतिकारी संगठनों ने काफी प्रचार कर रखा था। वे मांचू सरकार के विरोधी और गणतंत्रीय क्रांति के समर्थक बन गए थे।

माओ त्सेतुंग का मत है, 'सही अर्थ में, साम्राज्यवाद और सामंतवाद के विरुद्ध बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति डॉ. सुन यातसेन ने शुरू की थी।'[21] 'नवीन सेना' के युवा सैनिक डॉ. सुन के विचारों से प्रभावित होकर ही संपूर्ण चीन में विद्रोह कर रहे थे। 1905 और 1911 के बीच में मजदूरों और खासकर किसानों ने अनेक जनसंघर्षों में भाग लिया था। 1911 की गणतंत्रीय क्रांति में भी इसी वर्ग के सैनिकों ने तथा स्वयं किसानों और मजदूरों ने उत्साह से भाग लिया था, हालांकि क्रांतिकारी सरकारों के गठन में बुर्जुआ-जमींदार वर्गों की ही प्रधानता रहती थी।

माओ त्सेतुंग ने चीन की लोकतांत्रिक क्रांति के बारे में लिखा था :

> मुख्य शक्ति क्या है ? चीन की साधारण जनता। क्रांति की प्रेरक शक्तियां हैं—सर्वहारा वर्ग, किसान तथा अन्य वर्गों के सदस्य जो साम्राज्यवाद और सामंतवाद का विरोध करना चाहते हैं। ये क्रांतिकारी शक्तियां ही साम्राज्यवाद और सामंतवाद का विरोध करती हैं। लेकिन इन सब में, बुनियादी ताकत, क्रांति की रीढ़ क्या है ? मजदूर और किसान, जो देश की जनसंख्या का 90 प्रतिशत हिस्सा है।[22]

तिखविंस्की का मत है, 'मध्य चीन में साधारण जनता क्रांति कर रही है, ग्रामीण लोग फावड़े-कुल्हाड़ियां लेकर झुंडों में शहर पहुंच रहे हैं, क्रांतिकारियों के लिए रसद ला रहे हैं, फौज में भरती हो रहे हैं, यातायात के लिए घोड़े और गाड़ियां दे रहे हैं। शहरों में हथियारों के गोदाम खाली हैं। लोगों में हथियारों को बांट दिया गया है। क्रांतिकारियों द्वारा आजाद शहरों में देशभक्त 'मार्च' कर रहे हैं। लोगों ने झंडों पर लिख रखा है, 'चीन मुक्त

है'। इसके आगे सोवियत इतिहासकार लिखता है, 'क्रांतिकारी सेना को आम जनता ने जो निःस्वार्थ सहायता दी उसी ने छिंग राजतंत्र को सत्ता से हटा दिया।'[23] चीन की क्रांतिकारी घटनाओं का मूल्यांकन करते हुए लेनिन ने लिखा :

> यदि आम जनता का यह विशाल भावनात्मक और क्रांतिकारी उभार न हुआ होता तो चीनी लोकतंत्र पुरानी व्यवस्था के उन्मूलन और गणतंत्र की स्थापना में सक्षम नहीं हो सकता था।[24]

छिंग राजवंश के शीघ्र पतन में उदारवादी बुर्जुआ और जमींदार वर्ग का भी योगदान था। जब उन्होंने देखा कि छिंग राजतंत्र संविधान और राष्ट्रीय संसद द्वारा चीन को क्रमिक विकास के जरिए बुर्जुआ राज्य में बदलने के लिए तैयार नहीं है तो वे क्रांतिकारी संघर्ष में कूद पड़े। उनका ध्येय था कि वे क्रांति की सीमाओं के विस्तार को रोक सकें। प्रांतों में नई सरकारों में थोड़े से क्रांतिकारियों के अलावा बहुमत उदारवादियों, पूर्ववर्ती छिंग प्रशासकों और सैनिक अफसरों का ही होता था। 'उदारवादियों तथा सामंती- नौकरशाही तत्वों के गठबंधन की पूरी कोशिश क्रांतिकारियों को सभी प्रांतों में सत्ता से वंचित रखने की ही होती थी। हुनान में प्रतिक्रांतिकारी सत्ता पलट ऐसे ही षड्यंत्र का एक उदाहरण था।'[25] उनका सिद्धांत था कि 'जब तक धनी अभिजात वर्ग के लोग, 'सिविल' अधिकारी और फौजी अफसर क्रांति में शामिल नहीं होते, इस क्रांति को सफल नहीं बनाया जा सकता।'[26] सभी गुटों में सहमति केवल एक बात पर थी कि मांचू नस्ल के सभी 'सिविल' और फौजी उच्चाधिकारियों को सत्ता से हटा दिया जाए।

उनकी सहमति एक और मुद्दे पर थी : 'बुर्जुआ जमींदार गणतंत्रीय शासक इस बात पर दृढ़ थे कि किसानों और शहरी गरीबों को स्वतंत्र क्रांति से रोका जाए। पूंजीपति और जमींदार शिनहाई क्रांति (1911 की क्रांति) की पूर्वसंध्या पर जनता के स्वतःस्फूर्त आंदोलन के ऊंचे ज्वार से डरे हुए थे।' 12 अक्तूबर को वूचांग की अस्थायी क्रांतिकारी सरकार ने एक आदेश में कहा, 'हमें चिंता है कि.... अगर हम न्याय के लिए अपने संघर्ष के झंडे को ऊंचा करते हैं, तो भूखे और नंगे लोग इस मौके का फायदा उठाएंगे और लूटपाट शुरू कर देंगे।' इसका इलाज यही है कि 'तुरंत आत्मरक्षा के लिए 'मिलीशिया' की स्थानीय इकाइयां बनाई जाएं।' आदेश में कहा गया, 'गरीबों को हथियार देकर लड़ने के लिए कहो, इस तरह आवारा लोगों को खाना मिल जाएगा, और धनी परिवार अपनी संपत्ति की रक्षा कर सकेंगे।'[27] यह 1911 की क्रांति के वर्ग-चरित्र का परदाफाश करता है।

युआन शिहकाई की प्रतिक्रांति

जब वूचांग विद्रोह की खबर पेइचिंग पहुंची तो छिंग शासक घबरा गए और 14 अक्तूबर को रीजेंट त्साई फेंग ने युआन शिहकाई को फिर हूपे और हुनान का वाइसराय नियुक्त कर दिया। वह इससे संतुष्ट नहीं हुआ क्योंकि उसकी महत्वाकांक्षा प्रतिक्रांतिकारी शासक के

रूप में संपूर्ण चीन पर प्रभुत्व स्थापित करने की थी। उसने मांग की कि उसे छिंग मंत्रिमंडल के पुनर्निर्माण के लिए तथा सेना और नौसेना पर नियंत्रण के लिए पूरी शक्तियां दी जाएं। 30 अक्तूबर को छिंग मंत्रिपरिषद ने इस्तीफा दे दिया और युआन शिहकाई को प्रधानमंत्री नियुक्त कर दिया गया। इस प्रकार छिंग सामंतों ने युआन के सामने आत्मसमर्पण कर दिया।

युआन शिहकाइं ने फेंग क्वो-चांग को दक्षिणी चीन के हैंकाऊ शहर पर हमला करने का आदेश दिया। वूहान में इस समय क्रांतिकारी सेना का कमांडर चांग चिंग-लियांग था। प्रतिक्रियावादी चांग ने फेंग के आक्रमण का विरोध नहीं किया। क्रांति के शत्रु वूहान की सेना में पहले ही घुसपैठ कर चुके थे। अतः फेंग की प्रतिक्रांतिकारी सेना ने हैंकाऊ पर कब्जा कर लिया और तीन दिनों तक घरों, दुकानों और बाजारों में आगजनी और कत्लेआम का माहौल रहा। हैंकाऊ के पतन के बाद युआन ने पेइचिंग जाकर 14 नवंबर को अपनी मंत्रिपरिषद का निर्माण किया। इसके पहले उसने उत्तरी चीन के क्रांतिकारी सैनिक नेता वू लूचेन की हत्या कराने के लिए किराए के हत्यारे भेज दिए। वू चेंग 1903 से पेइचिंग में छिंग सेना में सैनिक प्रशिक्षण का 'सुपरिंटेंडेंट' था। वूचांग विद्रोह की पूर्वसंध्या पर उसके हाथ में उत्तरी सेना के छठे डिवीजन की कमान थी और उसने 'न्यू आर्मी' को छिंग शासन के विरुद्ध विद्रोह के लिए प्रेरणा दी थी। युआन ने उसकी हत्या करा दी। उसके बाद लुआनचाऊ में 'न्यू आर्मी' के क्रांति समर्थक अफसरों को बरखास्त कर दिया।

'युआन शिहकाई के चिंग शासन के उत्तराधिकारी बन जाने और प्रतिक्रांति के राजनीतिक प्रधान बनने का मुख्य कारण था कि उसे साम्राज्यवाद का समर्थन प्राप्त था।' माओ ने बाद में *आन न्यू डेमोक्रेसी* में लिखा :

> चीन में पूर्ववर्ती क्रांतियां असफल हुईं क्योंकि साम्राज्यवाद ने उनका गला घोंट दिया, और असंख्य क्रांतिकारी शहीद हो गए, जिन्हें अपने 'मिशन' की नाकामयाबी का गहरा पश्चाताप था।[28]

यही बात 1911 की क्रांति के बारे में सच थी। बुर्जुआ क्रांतिकारियों को भ्रम था कि पश्चिमी लोकतंत्र उनका समर्थन करेंगे लेकिन शुरू से ही साम्राज्यवादियों ने निर्लज्ज होकर छिंग *राजतंत्र को समर्थन दिया।* उसके बाद उन्होंने *युआन शिहकाई को,* प्रतिक्रांति के नेता के रूप में, पूरा समर्थन दिया। उत्तर के लड़ाकू सामंतों (वार लार्ड्स) को केंद्र बनाकर, प्रतिक्रांतिकारी युआन विदेशी साम्राज्यवाद का चीन में नया दलाल बन गया। बुर्जुआ क्रांतिकारियों ने शीघ्र ही युआन की प्रतिक्रांतिकारी ताकतों के सामने घुटने टेक दिए। इस प्रकार क्रांति के फलों *को चीन के बड़े सामंतों और बड़े व्यापारिक दलालों ने शीघ्र ही छीन लिया।*

प्रांतों में प्रतिक्रांतिकारियों ने सत्ता छीनने के तीन तरीके अपनाए। पहला तरीका हूपे में अपनाया गया। यहां विद्रोह 'न्यू आर्मी' और 'सीक्रेट सोसायटीज' की मदद से किया गया था। परंतु सुदृढ़ नेतृत्व के अभाव में, राजनीतिक और सैनिक सत्ता पुराने अधिकारियों, संविधानवादियों और अन्य प्रतिक्रियावादियों के हाथों में आ गई। वस्तुतः 'चाइना क्रांतिकारी

लीग' ने अपने 'क्रांतिकारी कार्यक्रम' के द्वारा हान जमींदारों और अफसरों के विषय में भ्रम फैलाए थे। इसलिए जन्म से ही हूपे की नई सैनिक सरकार में प्रतिक्रियावादियों ने उसके सैनिक और असैनिक प्रशासन पर कब्जा कर लिया। ऐसा ही शांसी, चेकियांग, फूचियन और कुछ अन्य प्रांतों में हुआ।

दूसरा तरीका हुनान का था। यहां क्रांति उसी तरीके से हुई लेकिन यहां स्वयं क्रांतिकारियों, च्याओ ता-फेंग और चेन त्सोशिन, ने नई सरकार का नेतृत्व संभाल लिया। परंतु क्रांतिकारियों ने हुनान की छिंग समर्थक सेना का विघटन करने के बजाए उसे पुराने रूप में ही नई सेना में शामिल कर लिया। प्रतिक्रियावादियों ने इस फौज के सैनिकों द्वारा दोनों क्रांतिकारी नेताओं, च्याओ ताफेंग और चेन त्सोशिन की हत्या करा दी। संविधानवादी नेता, थान येनकाई, स्वयं हुनान का सैनिक गवर्नर बन गया। ऐसा ही क्वेइचाऊ और कुछ अन्य स्थानों पर हुआ।

तीसरा तरीका क्यांगसू में अपनाया गया। यहां स्थानीय व्यापारियों और जमींदारों ने प्रांत के गवर्नर चेंग थेचुआन को क्रांतिकारी फौज के पहुंचने से पहले 'आजादी' की घोषणा करने के लिए राजी कर लिया। उसके बाद पूर्ववर्ती छिंग गवर्नर स्वयं चीनी गणतंत्र की सैनिक सरकार का गवर्नर बन गया। कुछ दिनों के बाद ऐसा ही क्वांगसी प्रांत के छिंग गवर्नर, शेन फिंग-कुन ने किया। परंतु यहां छिंग सेना के सेनाध्यक्ष ने कुछ दिनों के बाद उससे सत्ता छीन ली। लगभग ऐसा ही क्वांगतुंग, सिचुआन और अन्हुई प्रांतों में भी हुआ। प्रांतीय सरकारों का स्वरूप कैसा भी हो, उनमें एक बात समान थी :

> मजदूरों और किसानों के जन आंदोलनों का हर जगह दमन कर दिया गया।.... जनता की क्रांतिकारी 'मिलीशिया' को निःशस्त्र कर दिया गया लेकिन छिंग फौज की इकाइयां ज्यों की त्यों गणतंत्र की नई सेना में शामिल हो गईं।....कहीं-कहीं उन्हें सिर्फ 'राष्ट्रीय सेना' का नया नाम दे दिया गया। ....मजदूरों, किसानों और निम्न वर्गों के आंदोलनों पर हर जगह प्रतिबंध लगा दिए गए। शुरू से ही नवजात बुर्जुआ-क्रांतिकारी, आंदोलन भी जल्दी छेड़ते थे, और उससे पीछे और भी जल्दी हट जाते थे। वे लोगों को वास्तविक विजय तक ले जाने में असमर्थ थे। इन्हीं वस्तुगत परिस्थितियों में सुन यातसेन ने युआन शिहकाई के खिलाफ अपने आगामी संघर्ष में हर कदम पर उसे रिआयतें देने का सिलसिला जारी रखा।[29]

क्रांति का संकट इस तथ्य से प्रकट होता है, 'जबकि क्रांतिकारी सेना आगे बढ़ रही है, लेकिन क्रांतिकारी पार्टी का लोप हो रहा है।'[30] 1911 क्रांति की महत्वपूर्ण घटना यह है कि एक तरफ अनेक प्रांतों में क्रांतिकारी सरकारों की स्थापना हो रही थी, दूसरी ओर *'चाइना रिवोल्यूशनरी लीग' का शीघ्रता से विघटन हो रहा था। राष्ट्रव्यापी क्रांतिकारी* राज्य-सत्ता का प्रयोग करने वाला कोई नहीं था। यह बुर्जुआ क्रांति की कमजोरी को प्रकट करता था। वूचांग और शंघाई पर आधारित बुर्जुआ गुटों में सत्ता के लिए संघर्ष छिड़ गया था। शंघाई गुट का नानचिंग पर कब्जा होने पर उसका पलड़ा भारी हो गया।

25 दिसंबर 1911 को सुन यातसेन यूरोप से चीन वापस आए। 29 दिसंबर को नानचिंग की क्रांतिकारी 'सेनेट' ने उन्हें राष्ट्रपति निर्वाचित कर लिया। 1 जनवरी 1912 को उन्होंने 'प्रेसीडेंट' के रूप में शपथ ली और चीन के गणतंत्र की स्थापना की घोषणा कर दी। परंतु अभी पेइचिंग में छिंग सरकार कायम थी, जिसका प्रधानमंत्री युआन शिहकाई था। डॉ. सुन ने युआन को सूचित किया कि यदि वह 'गणतंत्र' का समर्थन करे तो उसे राष्ट्रपति बना दिया जाएगा। इसका जवाब, युआन के प्रतिक्रांतिकारी गुट ने आक्रमण के द्वारा दिया। उधर साम्राज्यवादियों ने कहा कि वे नए चीनी गणतंत्र को मान्यता तभी देंगे जब युआन शिहकाई के नेतृत्व में उत्तरी तथा दक्षिणी चीन का एकीकरण हो जाएगा।

संविधानवादी और प्रतिक्रियावादी, जो नानचिंग की अस्थायी सरकार में मंत्री बन गए थे, 'चाइना रिवोल्यूशनरी लीग' के औपचारिक विघटन की मांग करने लगे। सुन यातसेन की आलोचना करते हुए उन्होंने कहा कि वह कुछ ज्यादा ही 'आदर्शवादी' थे और फिर भी 'उच्च पद और धन' की आकांक्षा रखते थे। अंत में युआन को आश्वासन दे दिया गया कि यदि वह छिंग सम्राट से पदत्याग करा ले तो उसे चीनी गणतंत्र के राष्ट्रपति के रूप में निर्वाचित कर लिया जाएगा।

12 फरवरी को छिंग सम्राट पू यी (शुआन युंग) ने राजगद्दी छोड़ने का ऐलान कर दिया। दूसरे दिन युआन शिहकाई ने अस्थायी नानचिंग सरकार से मांग की कि उसे तुरंत राष्ट्रपति का पद दिया जाए। 14 फरवरी को सुन यातसेन ने त्यागपत्र दे दिया और युआन को राष्ट्रपति के पद पर चुन लिया गया।

1911 की क्रांति की असफलता

सुन यातसेन की इच्छी थी कि उनके इस्तीफे के बाद भी क्रांति के बुर्जुआ-लोकतांत्रिक स्वरूप को बनाए रखा जाए। उनके तीन प्रस्ताव थे : (1) अस्थायी सरकार नानचिंग में ही रहे, (2) राष्ट्रपति और मंत्रिमंडल तभी पद छोड़ें जब युआन नानचिंग आकर अपना पद ग्रहण करे, और (3) नया राष्ट्रपति अस्थायी संविधान और अस्थायी सरकार के आदेशों और विनियमों का सम्मान करे। सुन यातसेन चाहते थे कि युआन पेइचिंग छोड़ दे क्योंकि वह छिंग सामंती शक्तियों का पुराना अड्डा था और नानचिंग में क्रांतिकारी ताकतें ज्यादा मजबूत थीं।

युआन शिहकाई ने उत्तरी चीन की सेना में कई स्थानों पर गदर करा दिए। इन गदरों को दबाने के बहाने जापान तथा अन्य साम्राज्यवादी ताकतों ने अपनी फौजों को पेइचिंग भेजने का निर्णय किया और ऐसा लगा कि आठ ताकतें 1900 के संयुक्त आक्रमण को दोहराएंगी। वस्तुतः वे भी युआन के षड्यंत्र में भागीदार थीं। स्वदेशी और विदेशी प्रतिक्रियावादी तत्वों से घिर कर, सुन यातसेन की स्थिति और भी असहाय हो गई। नानचिंग सेनेट के संविधानवादी और प्रतिक्रियावादी सदस्य पेइचिंग में युआन की गणतंत्रीय

सरकार की स्थापना के लिए राजी हो गए। 5 अप्रैल को सेनेट ने प्रस्ताव पारित कर अस्थायी सरकार को पेइचिंग ले जाने का फैसला किया।

इस प्रकार बुर्जुआ और निम्न बुर्जुआ क्रांतिकारियों ने साम्राज्यवाद के द्वारा समर्थित बड़े जमींदारों और पूंजीवादी दलालों के सामने पूर्ण समर्पण कर दिया और पेइचिंग में अधिकृत रूप से युआन शिहकाई की अध्यक्षता में प्रतिक्रांतिकारी तानाशाही स्थापित हो गई। माओ त्सेतुंग ने 1911 की क्रांति का मूल्यांकन निम्नलिखित शब्दों में किया :

> डॉ. सुन यातसन के द्वारा शुरू की गई क्रांति की कुछ सफलताएं हैं तो कुछ विफलताएं भी हैं। क्या 1911 की क्रांति कामयाब नहीं हुई? क्या उसने सम्राट के शासन का अंत नहीं किया? फिर भी यह इस अर्थ में असफल थी कि उसने सम्राट को तो हटा दिया लेकिन चीन में साम्राज्यवादी और सामंती उत्पीड़न जारी रहा, जिसकी वजह से साम्राज्यवाद विरोधी और सामंतवाद विरोधी कार्य अधूरा रह गया।[31]

चीन का समाज सामंती रहा था। 1840 के अफीम युद्ध के बाद वह अर्ध- औपनिवेशिक और अर्ध-सामंती हो गया। 1911 की क्रांति ने 2,000 वर्ष पुराने निरंकुश सामंती राजतंत्र का अंत कर दिया। उसके बाद राजतंत्र को वापस लाने की सभी योजनाएं विफल हो गईं। युआन शिहकाई 1915 में सिर्फ.83 दिनों के लिए सम्राट बन सका। 1917 में चांग शुन ने फिर से छिंग सम्राट को गद्दी पर बैठाया लेकिन वह केवल 11 दिनों तक राज कर सका। फिर भी चीन में लोकतांत्रिक गणतंत्र की प्रणाली सही अर्थ में कायम नहीं हो सकी।

विश्वासघाती युआन शिहकाई से लेकर जनद्रोही और स्वेच्छाचारी च्यांग काईशेक तक सभी ने गणतंत्र के बिल्ले का उपयोग अपने युद्ध-सामंती, पूजीवादी-फासीवादी अधिनायकतंत्र पर परदा डालने के लिए किया। 'चीन की रिपब्लिक' का साइनबोर्ड 1911 के बाद सभी देशद्रोही सरकारों ने अपने दरवाजे पर लगा रखा था। यह सिद्ध करता है कि नाम का बदलना महत्वपूर्ण नहीं है—महत्वपूर्ण है व्यवस्था का बदलना। सी.पी. फिट्जगेराल्ड का मत है, 'गणतंत्र की नियति थी कि वह न तो लोकतंत्र में विकसित हुआ और न एक नए राजवंश में। उसका अंत अराजकता में हुआ।'[32]

1911 की क्रांति की विफलता ने चीन की जनता को एक गंभीर ऐतिहासिक सबक सिखाया। उन्होंने समझ लिया कि साम्राज्यवाद के खिलाफ दृढ़ संघर्ष करना होगा। चीनी जनता की मुक्ति के लिए सामंतशाही को निर्मूल करना होगा क्योंकि वही साम्राज्यवादी शासन की जड़ है। माओ त्सेतुंग ने *आन दि पीपुल्स डिक्टेटरशिप* में लिखा था :

> क्रांति का पूरा इतिहास सिद्ध करता है कि श्रमिक वर्ग के नेतृत्व के बिना क्रांति असफल होती है और मजदूर वर्ग का मार्गदर्शन मिलने पर क्रांति की विजय होती है। *साम्राज्यवाद के युग में, किसी भी देश में अन्य कोई वर्ग वास्तविक क्रांति के लिए* नेतृत्व प्रदान कर विजय नहीं दिला सकता। यह इस तथ्य से स्पष्ट रूप से साबित हो जाता है कि चीन में निम्न बुर्जुआ और बुर्जुआ वर्गों के नेतृत्व में चलने वाली सभी क्रांतियां असफल हो गईं।[33]

जब साम्राज्यवादी शक्तियों ने युआन शिहकाई को ऋण दिया तो लेनिन की टिप्पणी थी :

> चीन के लोकतंत्र के विरुद्ध एक नए ऋण का अनुबंध हुआ है। यूरोप युआन शिहकाई के पक्ष में है, जो एक सैनिक तानाशाही कायम करने की कोशिश में है....अगर चीन की जनता इस ऋण को अमान्य घोषित कर दे तो क्या होगा? चीन, आखिर, एक गणतंत्र है और वहां पार्लियामेंट का बहुमत इस कर्ज के खिलाफ है। अरे, तब अग्रगामी 'यूरोप' चिल्लाकर कहेगा, 'सभ्यता', 'व्यवस्था', 'संस्कृति' और 'पितृभूमि'। तब उसकी तोपें चलेंगी और युआन शिहकाई, उस दु:साहसी देशद्रोही और प्रतिक्रियावाद के दोस्त, के साथ गठबंधन कर 'पिछड़े' एशिया के गणतंत्र को ध्वस्त कर दिया जाएगा।[34]

परंतु लेनिन चीन की क्रांति के प्रगतिशील पक्ष को पहचानते थे :

> चीन के गणतंत्र का भाग्य, जिसके खिलाफ 'सभ्य' लकड़बग्घे अपने दांतों को तेज कर रहे हैं, कुछ भी क्यों न हो, पर कोई शक्ति एशिया में परंपरागत कृषिदासता को वापस नहीं ला सकती और न एशियाई और अर्ध-एशियाई देशों में जनता के भव्य लोकतंत्र का विनाश कर सकती है।[35]

रूस की सोशल-डेमोक्रेटिक लेबर पार्टी ने अपने प्रस्ताव में कहा, 'चीनी जनता के क्रांतिकारी संघर्ष का विश्वव्यापी महत्व है क्योंकि वह एशिया में मुक्ति का दूत है और यूरोपीय बुर्जुआजी के शासन को दुर्बल कर रहा है।'[36]

युआन शिहकाई की गणतंत्र विरोधी शक्तियों को साम्राज्यवादियों का समर्थन प्राप्त था। उन्हीं के समर्थन से उसने संपूर्ण चीन में जनता के आंदोलनों और जनवादी शक्तियों का दमन शुरू कर दिया। लेनिन ने इसका सिद्धांतीकरण अपने मई 1913 के लेख में किया जिसका शीर्षक था *बैकवर्ड यूरोप एंड एडवांस्ड एशिया*। उसने कहा कि यूरोप का बुर्जुआ वर्ग एशिया के बढ़ते हुए जनवादी आंदोलन से डरता है और 'हरेक ऐसी चीज का समर्थन करता है जो पिछड़ी, सड़ी-गली और मध्ययुगीन हो।'[37] वह चीन में प्रतिक्रियावादियों की मदद सिर्फ इसलिए कर रहा था जिससे उसके पूंजीवादी निवेशकों के हितों की रक्षा की जा सके। आज एशिया प्रगति के पथ पर है लेकिन 'सभ्य' यूरोपीय ताकतें उसे 'पिछड़ा' बनाकर रखना चाहती हैं। सी.पी. फिट्जगेराल्ड का मत है :

> यह मान लेना चाहिए कि गणतंत्र ने संदेह करने वालों की धारणा की पुष्टि कर दी और अपने कुछ मित्रों को निराश कर दिया। 1912 में निर्वाचित पार्लियामेंट लोकतंत्र का मजाक थी। वोटों को खुलेआम बेचा जाता था और बाजार में उनकी कीमत का ऐलान होता था। सदस्य केवल अपने लिए विशाल वेतनों में रुचि लेते थे। चीन के इतिहास में जड़ों के बगैर, परंपरा और ईमानदारी के बिना, लोकतंत्र का शासनतंत्र गैर-जिम्मेदारी और भ्रष्टाचार की शर्मनाक तसवीर बन गया था। सचमुच, 'सामंत चाऊ की पोशाकें पहनकर एक बंदर मंच पर खड़ा हो गया था।'[38]

उसने आगे कहा कि चीनी जनता दिखावटी लोकतंत्र से क्षुब्ध हो गई, 'संसद के नाम पर उन्होंने अंतहीन और निर्लज्ज भ्रष्टाचार देखा; लोकतंत्र के नाम पर उन्होंने दुर्बल और खराब शासन, अनधिकृत सैनिक कब्जे, कानून के उल्लंघन, हर तरह के उत्पीड़न और राष्ट्रीय पतन के अतिरिक्त और कुछ नहीं देखा।' 1920 तक 'यह बात साफ हो चुकी थी कि पश्चिमी लोकतंत्र समस्या का हल नहीं था और क्रांतिकारी तत्व ने भी चुपचाप उसका परित्याग कर दिया।'[39]

बैरिगंटन मूर के शब्दों में :

> 1911 में मांचू राजवंश और 1912 में गणतंत्र की घोषणा ने इस तथ्य को केवल सांविधानिक मान्यता दे दी कि वास्तविक शक्ति क्षेत्रीय अधिपतियों के पास पहुंच गई थी जहां वह डेढ़ दशक तक मौजूद रहेगी।[40]

संदर्भ और टिप्पणियां

1. हिस्टरी आफ माडर्न चाइना सीरीज, *दि रिवोल्यूशन आफ 1911* में उद्धृत, पृ. 5
2. वही, पृ. 6.
3. वही उद्धृत, पृ. 6 –7.
4. वही, पृ. 8–9.
5. वही, पृ 36.
6. वही, पृ. 38.
7. वही, पृ. 42.
8. थोडा स्क चपोल, *स्टेट्स एंड सोशल रिवोल्यूशन्स*, पृ. 77.
9. जे.के. फेयरबैंक इत्यादि, *ईस्ट एशिया–ट्रेडीशन एंड ट्रांसफार्मेशन*, पृ. 736.
10. एस.एल.तिखविंस्की (संपा.), *माडर्न हिस्टरी आफ चाइना*, पृ. 432.
11. *दि रिवोल्यूशन आफ 1911*, पृ. 88.
12. वही, पृ 91.
13. जे.के. फेयरबैंक इत्यादि, *ईस्ट एशिया—ट्रैडीशन एंड ट्रांसफार्मेशन*, पृ 736.
14. वही, पृ. 738–39.
15. मेरी सी. राइट (संपा.), *चाइना इन रिवोल्यूशन*, पृ. 50.
16. *दि रिवोल्यूशन आफ 1911*, पृ. 103.
17. थोड़ा स्काचपोल, *स्टेट्स एंड सोशल रिवोल्यूशन्स*, पृ. 79.
18. जे.के. फेयरबैंक, *दि यूनाइटेड स्टेट्स एंड चाइना*, पृ. 192.
19. एस.एल. तिखविंस्की (संपा.), *माडर्न हिस्टरी आफ चाइना*, पृ. 540–41.
20. वही, पृ. 542.
21. *दि रिवोल्यूशन आफ 1911*, पृ. 10 पर उद्धृत।
22. वही, उद्धृत, पृ. 69.
23. एस.एल. तिखविंस्की (संपा.), *माडर्न हिस्टरी आफ चाइना*, पृ. 544.
24. वी.आई लेनिन, *कलेक्टेड वर्क्स*, खंड 18, पृ. 166

25. एस.एल. तिखविंस्की (संपा.), *माडर्न हिस्टरी आफ चाइना*, पृ. 546.
26. वही, पृ. 547.
27. वही, पृ. 548.
28. *दि रिवोल्यूशन आफ 1911*, उद्धृत, पृ. 123.
29. वही, पृ. 139–40.
30. वही, पृ. 142.
31. वही, उद्धृत, पृ. 158.
32. सी.पी. फिट्जगेराल्ड, *दि बर्थ आफ कम्युनिस्ट चाइना*, पृ. 43–44.
33. *दि रिवोल्यूशन आफ 1911*, उद्धृत पृ. 163–64.
34. वी.आई.लेनिन, *क्लेक्टेड वर्क्स*, खंड 19, पृ. 100.
35. वही, खंड 18, पृ. 584.
36. वही, खंड 17, पृ. 485.
37. वही, खंड 19, पृ. 99.
38. सी.पी. फिट्जगेराल्ड, *दि बर्थ आफ कम्युनिस्ट चाइना*, पृ. 48.
39. वही, पृ. 53–54.
40. बैरिंगटन मूर, *सोशल आरिजिंस आफ डिक्टेटरशिप एंड डेमोक्रेसी*, पृ. 186.

अध्याय चार

4 मई 1919 का आंदोलन

आंदोलन की परिभाषा और व्याख्या

4 मई 1919 को, छात्रों ने राजधानी पेकिंग में जापान के सामने चीनी सरकार की अपमानजनक नीति के खिलाफ प्रदर्शन किया। इनके फलस्वरूप चीन में हड़तालें और उनसे जुड़ी घटनाएं शुरू हो गईं जिन्होंने सामाजिक और बौद्धिक क्रांति को जन्म दिया। छात्रों और युवाओं ने इसे तुरंत 4 मई के आंदोलन का नाम दे दिया। इस शब्द का कुछ समय बाद मूल अर्थ की अपेक्षा अधिक व्यापक अर्थ हो गया। इस अध्याय में हम 4 मई आंदोलन की व्याख्या उसके विस्तृत अर्थ में करेंगे। इस अध्याय में 1917 से 1921 तक की घटनाओं के संदर्भ में 4 मई आंदोलन की समीक्षा की जाएगी।

1915 में जापान की 21 मांगों के सामने युआन शिहकाई के आत्मसमर्पण और 1919 में वार्साई शांति सम्मेलन द्वारा शांतुंग समस्या का समाधान जापान के पक्ष में होने से चीन की जनता क्षुब्ध और नाराज थी। छात्रों ने तथा नए बुद्धिजीवी नेताओं ने बौद्धिक और सामाजिक सुधारों द्वारा आधुनिक चीन के पुनर्निर्माण का आह्वान किया और जापान विरोधी अभियान को प्रोत्साहन दिया। उन्होंने विज्ञान और लोकतंत्र के सिद्धांतों को अपनाने की पेशकश की। परंपरागत चीनी नैतिक प्रथाओं, साहित्य, इतिहास, दर्शन, धर्म तथा सामाजिक-राजनीतिक संस्थाओं की इन्होंने कठोर आलोचना की। उदारवाद, क्रियावाद, उपयोगितावाद, अराजकतावाद, समाजवाद और साम्यवाद की पश्चिमी विचारधाराओं ने इस आंदोलन को प्रेरणा दी। 4 मई का आंदोलन इन परिवर्तनों का एक प्रेरणा-सूत्र बन गया। इन्हें मजदूर वर्ग, नए उद्योगपतियों और व्यापारियों का भी समर्थन मिला। फलतः चीन की सरकार को अपनी नीतियां बदलनी पड़ीं।

छात्रों और बुद्धिजीवियों ने सांस्कृतिक और बौद्धिक सुधारों के अमल में योगदान किया। कुछ समय बाद आंदोलन राजनीतिक हो गया और नए बुद्धिजीवियों का संयुक्त मोरचा टूट गया। उदारवादियों का जोश खत्म हो गया और वे राजनीतिक गतिविधि से अलग हो गए। परंतु इसके वामपक्ष ने राष्ट्रवादियों के साथ गठबंधन कर लिया और युद्ध-सामंती पेकिंग सरकार के उन्मूलन के लिए क्वोमिन्तांग से मिलकर काम करने लगा। जब क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट संयुक्त मोरचा बना तो आंदोलन का एक हिस्सा समाजवाद और साम्यवाद से जुड़ गया।

4 मई आंदोलन का व्यापक असर हुआ। उसने छात्रों और मजदूरों के आंदोलनों को

बढ़ावा दिया। उसने क्वोमिन्तांग के पुनर्गठन, कम्युनिस्ट पार्टी की उत्पत्ति तथा अन्य सामाजिक और राजनीतिक 'ग्रुपों' के निर्माण में योगदान किया। इस आंदोलन ने साम्राज्यवाद विरोधी तथा युद्ध-सामंत विरोधी भावनाओं को बढ़ावा दिया। जनभाषा में नए साहित्य का सृजन हुआ और इसके द्वारा जनशिक्षा के प्रसार की सुविधा हो गई। चीनी प्रेस और जनमत का बहुत तेजी से विकास हुआ। इस आंदोलन ने पितृसत्ताक परिवार को झटका दिया और नारी अधिकारों का समर्थन किया। कन्फ्यूशियनवाद की सत्ता को लकवा मार गया और पश्चिमी विचारों को बल मिला।

शुरू में और कुछ लोगों की दृष्टि में 4 मई आंदोलन 4 मई 1919 की घटना और 3 जून 1919 की गिरफ्तारियों तक सीमित था। परंतु अब इसके संकीर्ण अर्थ को भुला दिया गया है। इस संबंध में दूसरा विवाद यह है कि इसकी परिभाषा छात्रों और बुद्धिजीवियों के सामाजिक-राजनीतिक कार्यों तक सीमित रखी जाए या नए साहित्य और नए चिंतन के आंदोलनों को भी, जो 1917 से शुरू हुए और जिन्हें बाद में नई संस्कृति आंदोलन कहा गया, इसकी परिभाषा और व्याख्या में शामिल कर लिया जाए? कुछ लोगों का मत है कि नई संस्कृति आंदोलन ने 4 मई के आंदोलन में कुछ मदद की लेकिन इन दोनों आंदोलनों को एक दूसरे से अलग समझना चाहिए। चाओ त्सेत्सुंग का मत है :

> इस व्याख्या के समर्थकों ने छात्रों के कार्यों और उनके चिंतन के विकास के बीच अटूट संबंध पर ध्यान नहीं दिया। उन्होंने इस दृष्टिकोण को इस इरादे से अपनाया क्योंकि वे नई संस्कृति आंदोलन के महत्व को घटाना चाहते थे और छात्रों पर अराजकता जैसे कारकों के असर को बढ़ा-चढ़ाकर पेश करना चाहते थे। उनके मत को अधिकांश लोग स्वीकार नहीं करते जिन्होंने 4 मई आंदोलन के इतिहास को निकट से देखा और पढ़ा है।[1]

इसकी व्यापक परिभाषा बिलकुल उचित है क्योंकि 4 मई के प्रदर्शनों, हड़तालों और बहिष्कारों के नेता वास्तव में वे नए बुद्धिजीवी ही थे जिन्होंने नए साहित्य, नए चिंतन और सामाजिक सुधारों को प्रोत्साहन दिया था। युद्ध-सामंतों और साम्राज्यवादियों के विरोध का सैद्धांतिक आधार लोकतंत्र का विचार ही था जिसका नए बुद्धिजीवियों ने प्रचार किया। प्रश्न केवल देशभक्ति का ही नहीं था बल्कि जनमत, जनाधिकारों और बौद्धिक पुनर्जागरण का भी था :

> इसलिए 4 मई के आंदोलन को एक ऐसी जटिल परिघटना के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें 'नए चिंतन का उत्कर्ष', साहित्यिक क्रांति, छात्र आंदोलन, व्यापारियों और श्रमिकों की हड़तालें, जापान के खिलाफ बहिष्कार और नए बुद्धिजीवियों की अन्य सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियां शमिल थीं।[2]

इसी तरह आंदोलन की अवधि के बारे में मतभेद है। कोई इसे कुछ दिनों का,कोई कुछ महीनों का या कुछ वर्षों का आंदोलन मानते हैं। कुछ की दृष्टि में यह 1915 से 1925 के

दशक तक चला, लेकिन चाओ त्सेत्सुंग के मतानुसार इसकी अवधि 1917 से 1923 तक है।

आंदोलन का प्रारंभिक चरण

18 जनवरी 1915 को जापान ने अपनी 21 मांगें चीन के राष्ट्रपति युआन शिहकाई को एक गुप्त पत्र में भेजीं। उन्हें मान लेने का अर्थ था कि जापान का नियंत्रण मंचूरिया, भीतरी मंगोलिया, शांतुंग, चीन के दक्षिण-पूर्वी तटवर्ती क्षेत्र और यागत्सी घाटी में हो जाता। इसके अलावा राजनीतिक, वित्तीय तथा सैनिक मामलों में जापानी सलाहकारों की नियुक्ति तथा अन्य क्षेत्रों में संयुक्त चीनी-जापानी प्रशासन की मांग भी की गई थी। जापान का इरादा चीन पर औपनिवेशिक प्रभुत्व स्थापित करना था। 7 मई 1915 के अल्टीमेटम में जापान ने अधिकाशं मांगों को तुरंत स्वीकार करने के लिए कहा जिन्हें युआन शिहकाई ने संसद की अनुमति के बिना 9 मई को मंजूरी दे दी और 25 मई को उनके आधार पर जापान से संधि कर ली।

चीन के लोकमत का रोष चरम सीमा पर पहुंच गया। सारे देश में 'राष्ट्रीय अपमान को मत भूलो' के नारे दीवारों पर लिख दिए गए। 7 मई और 9 मई तुरंत राष्ट्रीय अपमान स्मृति दिवसों के रूप में मनाया जाने लगे। पाठ्य पुस्तकों में राष्ट्रीय अपमान का इतिहास लिखा जाने लगा। जनता ने दो मांगों के पक्ष में प्रदर्शन किए : (1) बाहर, महाशक्तियों का विरोध करो, (2) अंदर, देशद्रोहियों को सत्ता से हटाओ। जापानी वस्तुओं का बहिष्कार पेकिंग, शंघाई, हैंकाऊ, चांगशा और कैंटन में किया गया। यह बहिष्कार मार्च से अगस्त तक चला। बहिष्कार आंदोलनों से चीन के स्वदेशी उद्योगों को लाभ पहुंचा।

विदेशों में शिक्षित चीनी छात्र चीन की बुनियादी समस्याओं पर सोच-विचार करने लगे और इस नतीजे पर पहुंचे कि चीनी सभ्यता की परंपरागत मान्यताओं में मौलिक परिवर्तन होना चाहिए। प्रारंभ में छात्रों पर विदेशी प्रभाव अंग्रेजी साहित्य और ब्रिटिश उदारवादी चिंतन के माध्यम से आए। अगले चरण में छात्र जापान, अमरीका और फ्रांस में पढ़ने गए तो उन पर क्रमशः जापानी, अमरीकी और फ्रांसीसी सभ्यता और चिंतन के प्रभाव दिखाई पड़े। कुछ छात्रों ने जापान से संघर्ष का सुझाव दिया ; कुछ ने चीन द्वारा निष्क्रिय प्रतिरोध की बात की; कुछ ने कहा कि चीन का 'जापानीकरण' करना चाहिए, और कुछ की राय थी कि फ्रांस की भांति चीन में भी तुरंत लोकतांत्रिक क्रांति करनी चाहिए।

इसी समय चीन में एक साहित्यिक और भाषायी क्रांति हुई। दो हजार सालों से मृत 'क्लासिकल' चीनी भाषा के स्थान पर लोकभाषा, *पाईतुआ*, में नए साहित्य की रचना शुरू हुई। पाईतुआ में कविताएं, लेख और उपन्यास लिखे गए। अखबारों और पत्र-पत्रिकाओं में लोकभाषा का प्रयोग हुआ और उसे चीन की राष्ट्रभाषा का दर्जा दे दिया गया। इसके पूर्व पाईतुआ को एक तिरस्कृत बाजारू बोली समझा जाता था। भाषायी सुधार का प्रस्ताव हू

शिह ने किया था। जनवरी 1917 में उसका समर्थन अपने मासिक *न्यू यूथ* में चेन तूश्यू ने किया। उसके बाद यह जन आंदोलन बन गया और शीघ्र ही इसे जनता और शासन से मान्यता मिल गई।

अमरीका में शिक्षित चीनी छात्रों ने सांस्कृतिक और शैक्षणिक समस्याओं पर विशेष ध्यान दिया, लेकिन जापान में शिक्षित छात्रों ने उग्रवादी राजनीति में अधिक रुचि ली और 4 मई के आंदोलन का नेतृत्व किया। इनमें बहुत से प्रमुख रचनात्मक लेखक और नए साहित्यकार भी बने और अनेक ने उग्र राष्ट्रवादी, समाजवादी, अराजकतावादी और साम्यवादी विचारों का समर्थन किया। उनमें से कुछ सैनिक और असैनिक अधिकारी भी बने, जिन्होंने जन आंदोलन का विरोध किया।

कुछ चीनी छात्र सैनिक प्रशिक्षण के लिए भी जापान गए। एक चीनी लेखक ने कुछ अतिशयोक्ति के साथ कहा, 'जापान से लौटे छात्रों को वस्तुतः चीन के युद्ध-सामंतवाद के उत्कर्ष के लिए उत्तरदायी मान लेना चाहिए।'[3] यह सच है कि इनमें से कुछ ने 4 मई आंदोलन का जोरदार विरोध किया था। यह स्वाभाविक था क्योंकि जापान के सैनिक स्कूलों में कठोर अनुशासन सिखाया जाता था।

जापानी सोशलिस्ट पार्टी और यूरोप की समाजवादी पार्टियों से वहां पर शिक्षित चीनी छात्र समाजवादी विचारों को चीन में लाए। कुछ हद तक तुंग मेंग हुई और सुन यातसेन भी चीनी बुद्धिजीवियों में समाजवाद के विचारों का प्रचार करते रहे थे। लियांग चीचाओ ने 1902 में पहली बार मार्क्स के नाम का उल्लेख अपनी *न्यू पीपुल्स मैगजीन* में किया था। चीनी भाषा में पहली पुस्तक *माडर्न सोशलिज्म* 1903 में एक जापानी कृति के अनुवाद के रूप में उपलब्ध हुई लेकिन उसके बाद अनेक कृतियां समाजवाद के विषय में शंघाई तथा अन्य शहरों से प्रकाशित हुईं लेकिन 1917 की रूसी क्रांति के बाद 'साम्यवाद' तेजी से चीनी बुद्धिजीवियों को आकर्षित करने लगा।

फ्रांसीसी विचारधाराओं का प्रभाव

फ्रांसीसी क्रांति के राजनीतिक चिंतन का चीन के क्रांतिकारियों और सुधारवादियों के विचारों पर व्यापक प्रभाव पड़ा। बीसवीं सदी के पहले दो दशकों में चीन के बौद्धिक और राजनीतिक नेता जैसे लियांग चीचाओ, चेन तूश्यू और अनेक क्वोमिन्तांग कार्यकर्ता भी फ्रांसीसी क्रांतिकारी चिंतन से प्रभावित हुए। 4 मई आंदोलन के बुद्धिजीवी फ्रांसीसी, जर्मन और रूसी लेखकों से उदारवाद और लोकतंत्र के विचारों को और बाद में समाजवाद और अराजकतावाद के चिंतन को ग्रहण कर रहे थे।

इसके अलावा फ्रांस में चीनी छात्रों के लिए कार्य और अध्ययन की योजना चल रही थी। विश्वयुद्ध शुरू होने पर फ्रांस में चीनी श्रमिकों का भारी संख्या में आगमन हुआ। फ्रांस और मध्य पूर्व में लगभग दो लाख चीनी मजदूर काम करते थे। इन श्रमिकों में 28,000

चीनी साक्षर थे और कुछ ने फ्रेंच भी सीख ली थी। एक तरह से उन्हें श्रमिक-बुद्धिजीवी कहा जा सकता था। चीन लौटकर इन शिक्षित श्रमजीवियों ने अपने यूरोपीय अनुभव के आधार पर 4 मई आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान किया। चाओ त्सेत्सुंग का कथन है :

> सामाजिक परिस्थितियों के कारण....फ्रांस में चीनी श्रमिकों और छात्र श्रमिकों में क्रमशः प्रजातीय और वर्गीय चेतना का विकास हुआ। युद्ध के अंत तक, उनके कुछ नेताओं ने राष्ट्रवाद, अराजकतावाद और मार्क्सवाद में से किसी एक विचारधारा को स्वीकार कर लिया। नवंबर 1916 और जुलाई 1918 के बीच फ्रांसीसी कारखानों में चीनी मजदूरों ने 25 हड़तालें कीं।....इन अशांतियों का मुख्य कारण, अनुबंधों के प्रावधानों का पूरा न होना, दुर्व्यवहार, वेतन न देना, कठोर सैनिक नियंत्रण, खतरनाक कार्य-दशाएं, छोटे अपराधों के लिए कठोर दंड या भाषायी कठिनाइयां था।[4]

जब युद्ध समाप्त हुआ तो फ्रांस में आर्थिक मंदी का दौर शुरू हुआ। अधिकांश चीनी छात्र और श्रमिक बेकार हो गए। 1920 में 1,700 छात्र विभिन्न स्रोतों से राहत पर निर्भर थे। राहत ने छात्रों में राजनीतिक विवाद पैदा कर लिया। चीन में राजनीतिक गुट राहत द्वारा छात्रों का राजनीतिक समर्थन हासिल करना चाहते थे। अधिकांश श्रमिक और छात्र चीन लौट आए। इन्होंने फ्रांस में नए विचारों और अनुभवों को पाया था। शिक्षा के साथ-साथ यूरोपीय मजदूर आंदोलन और जीवन के उच्च स्तर की जानकारी पाई थी। उनमें जापानी साम्राज्यवाद के प्रति तीव्र घृणा थी। 4 मई आंदोलन के दौरान उन्होंने शंघाई में मजदूर संघों का गठन किया।

फ्रांस से लौटे हुए श्रमिक चीन के श्रम जगत का तूफानी दस्ता बन गए। उन्हें 'भावी बोल्शेविक' मानकर पूंजीपति और अधिकारी उनसे डरने लगे। 'यह कहना सही है कि इन लौटे हुए कार्य-तथा-अध्ययन के छात्र और श्रमिक 4 मई आंदोलन को उग्र समाजवाद और राष्ट्रवाद की दिशा में प्रेरित करने के स्रोत थे। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अनेक संस्थापक और नेता फ्रांस में युद्ध के समय और बाद में कार्य-तथा-अध्ययनरत छात्र रहे।'[5] इनमें चाउ एनलाई, ली लीसान, चेनयी और तंग श्याओपिंग भी शामिल थे।

साहित्यिक और बौद्धिक गतिविधियां

पेकिंग के युद्ध-सामंत इस समय कन्फ्यूशियनवाद, राजतंत्र और अधिनायक तंत्र के विचारों का समर्थन कर रहे थे। प्रतिक्रियावादी अधिकारी पहले युआन को और फिर अपदस्थ छिंग राजकुमार को सम्राट बनाने के प्रयास में लगे थे। इसके साथ-साथ वे जापानी साम्राज्यवाद के सामने समर्पण की राष्ट्रविरोधी नीति भी अपना रहे थे। इन षड्यंत्रों के बीच नए बुद्धिजीवी राष्ट्र की रक्षा के उपाय सोच रहे थे।

चेन तूश्यू ने जापान से लौटकर *न्यू यूथ* पत्रिका द्वारा बुनियादी सुधारों का आंदोलन शुरू किया। त्साई युआनपेई ने फ्रांस से लौटकर पेकिंग विश्वविद्यालय के पुनर्गठन का

अभियान आरंभ किया। हू शिह ने अमरीका से लौटकर जनभाषा और नए साहित्य के पक्ष में आंदोलन चलाया। क्रांतिकारी चेन तूश्य ने शंघाई से *न्यू यूथ* पत्रिका निकाली जिसने 4 मई आंदोलन में असाधारण योगदान किया। चांग शिह-चाओ ने प्रसिद्ध पत्रिका *दि टाइगर* का संपादन शुरू किया। युआन शिह काई ने *न्यू यूथ* पर पाबंदी लगा दी। उसने प्रेस की स्वतंत्रता का निर्ममता से दमन किया।

न्यू यूथ द्वारा चेन तूश्यू ने युआन तथा आम युद्ध सामंतों की नीतियों और कन्फ्यूशियन नैतिकता की कठोर आलोचना की और चीनी युवाओं को परिवर्तन और क्रांति में सक्रिय योगदान करने के लिए ललकारा। उन्होंने कहा कि चीन की प्रगति तभी हो सकती है जब युवक आधुनिक नैतिक और राजनीतिक विचारों को अपनाएं और उन्हें जनता तक ले जाएं। युवाओं की आस्था विवेक, विज्ञान, लोकतंत्र और राष्ट्रवाद के सिद्धांतों में होनी चाहिए।

दिसंबर 1916 में त्साई युआनपेई को पेकिंग यूनिवर्सिटी का चासंलर नियुक्त किया गया। त्साई ने विश्वविद्यालय की काया पलट दी। उसके पहले यह रूढ़िवाद का गढ़ था, जिसे *वेश्यालय* भी कहते थे। छात्रों में जुए की लत थी और छात्रावास उनके आरामगाह थे। त्साई ने अपने उद्घाटन भाषण में ही विश्वविद्यालय के नए आदर्शों—अध्ययन, अनुसंधान, बौद्धिक स्वतंत्रता, विज्ञान, वैज्ञानिक पद्धति, नई संस्कृति, इत्यादि—की घोषणा कर दी। विभिन्न विचारां के नए प्रोफेसरों की नियुक्ति की गई और उन्हें विश्वविद्यालय के प्रशासन का दायित्व सौंपा गया। छात्रावास, पुस्तकालय, लेबोरेटरी और कक्षाओं में गंभीर अध्ययन-अध्यापन शुरू हुआ। छात्रों को राजनीति और राजनीतिक दलों में भाग लेने की आजादी दी गई।

विद्यार्थियों में स्वशासन, वाद-विवाद, प्रकाशन, खेलों, सामाजिक सेवा, स्वस्थ मनोरंजन, छात्र-बैंक, उपभोक्ता सहकारी संगठन, आदि गतिविधियों को प्रोत्साहन दिया गया। फ्रांस के अनुभव के आधार पर कार्य-तथा-अध्ययन की योजना को अमल में लाया गया। छात्रों और प्राध्यापकों के बीच में समानता का वातावरण स्थापित किया गया। छात्रों के नैतिक आचरण में अभूतपूर्व सुधार हुआ। वेश्यावृत्ति, जुए की लत तथा अन्य अनैतिक आचरण लगभग समाप्त हो गए। सदाचार बढ़ाने के लिए एक संस्था बनाई गई। छात्रों ने प्रण किया कि वे सरकारी पद ग्रहण नहीं करेंगे। नए बुद्धिजीवियों के मन में भ्रष्ट प्रशासकों और युद्ध-सामंतों के प्रति घृणा भर गई।

त्साई के परिवर्तनों ने विश्वविद्यालय का ढांचा ही बदल दिया। यद्यपि वे स्वयं सुन यातसेन की सरकार में शिक्षामंत्री रह चुके थे फिर भी विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों के चयन में उन्होंने कभी पक्षपात नहीं किया। छात्रों और शिक्षकों को पूर्ण राजनीतिक स्वतंत्रता उपलब्ध थी। उन्होंने शिक्षा के पांच उद्देश्य बताए :

1. सेना पर युद्ध-सामंतों का एकाधिकार खत्म करने के लिए सार्वभौम सैनिक शिक्षा;

2. जन-जीविका में सुधार के लिए उपयोगितावादी शिक्षा;
3. परस्पर सहायता के सिद्धांत पर आधारित नैतिक शिक्षा;
4. विश्व-एकता की संकल्पना पर आधारित वैचारिक शिक्षा;
5. जीवन की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए सौंदर्य-शिक्षा।

1918 के जाड़े में पेकिंग विश्वविद्यालय के छात्रों ने *न्यू टाइड* शीर्षक से पत्रिका निकाली जो नए विचारों और साहित्य के आंदोलनों का समर्थन करती थी। इस पत्रिका के तीन सिद्धांत थे : (1) आलोचना की भावना, (2) वैज्ञानिक चिंतन, और (3) सुधारों की भाषा। यह पत्रिका *न्यू यूथ* और *वीकली क्रिटिक* के सुधारों का समर्थन करती थी। *न्यू टाइड* से जुड़े छात्रों ने 4 मई आंदोलन में और आधुनिक चीन के बौद्धिक और सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया। इनमें अनेक साहित्यकार, इतिहासकार, शिक्षाशास्त्री, अर्थशास्त्री और वैज्ञानिक शामिल थे।

न्यू यूथ ने प्रचार किया कि युवाओं को 'मिस्टर साइंस' और 'मिस्टर डेमोक्रेसी' से दोस्ती करनी चाहिए तथा परंपरागत अंधविश्वासों और रूढ़िगत विचारों को छोड़कर उदारवाद और समाजवाद के आदर्शों को अपनाना चाहिए। *न्यू टाइड* पत्रिका ने रूसी अक्तूबर क्रांति से प्रेरणा लेकर सामाजिक क्रांति की संकल्पना का प्रचार किया। तो चिया-लुन ने कहा कि आधुनिक युग में पुनर्जागरण (रिनेसां), धर्मसुधार (रिफ़ार्मेशन), फ्रांसीसी क्रांति और 1948 की क्रांतियां और अंत में रूसी क्रांति युग-परिवर्तन की महान घटनाएं हैं। हमें चीन में सोवियत पद्धति की सामाजिक क्रांति करनी चाहिए जिसमें लोकतंत्र राजतंत्र को, साधारण लोग युद्ध-सामंतों को और श्रमजीवी पूंजीपतियों को पराजित कर दें।

यह कहना गलत होगा कि *न्यू टाइड* के छात्र, लेखक और नेता बोल्शेविक या मार्क्सवादी थे। लेकिन उनके विचार उनके प्राचार्यों की अपेक्षा चेन तूश्चू, हू शिह और ली ताचाओ के अधिक करीब थे। वे हिंसा के विरोधी थे और मानवतावाद तथा जन-कल्याण के विचारों का समर्थन करते थे। उनके विचारों में अस्पष्ट सामान्यीकरण थे। एक झलक देखिए :

> हम पीटर महान के स्थान पर जार्ज वाशिंगटन, बिस्मार्क की जगह बेंजामिन फ्रैंकलिन, रिशलू के सार्वजनिक वित्त के स्थान पर कार्ल मार्क्स के अर्थशास्त्र की, और अलफ्रेड क्रुप के पूंजीवादी उद्योग की जगह थामस एडीसन के आविष्कारों की पूजा करना चाहेंगे।[6]

नए बुद्धिजीवियों के विरुद्ध पेकिंग विश्वविद्यालय में एक अनुदारवादी गुट भी उठ खड़ा हुआ। इन्होंने *नेशनल हेरीटेज* नाम की पत्रिका निकाली, क्लासिकल चीनी शैली के साहित्य और कन्फ्यूशियनवाद का पक्ष लिया तथा पुराने नैतिक मूल्यों का समर्थन किया। यह विरोध मुख्यत: निष्क्रिय था और उनकी लड़ाई देर से शुरू हुई थी। अनुदार विरोध

सफल नहीं हुआ क्योंकि वह सरकार के हस्तक्षेप द्वारा नए विचारों और साहित्य का दमन करना चाहता था।

न्यू यूथ कुछ समय बाद बुद्धिजीवियों की लोकप्रिय पत्रिका बन गई। उसने प्रगतिशील संस्थाओं की स्थापना की प्रेरणा भी दी। इनमें 'न्यू पीपुल्स स्टडी सोसायटी' भी थी जिसे माओ त्सेतुंग ने चांगशा (हुनान) में स्थापित किया। 4 मई आंदोलन के पहले चीन का यह भावी नेता इस नगर का छात्र था। माओ का स्कूल पेकिंग यूनिवर्सिटी का जूनियर संस्करण था जिसके प्रिंसिपल और शिक्षक उसी विश्वविद्यालय में पढ़े थे। स्कूल का वातावरण उदारवादी और प्रगतिशील था। माओ शीघ्र *न्यू यूथ* के उत्साही समर्थक बन गए। इस स्कूल के अनेक छात्रों ने 4 मई आंदोलन में, कवोमिन्तांग तथा कम्युनिस्ट पार्टी के गठन में महत्वपूर्ण योगदान किया। स्वयं माओ कम्युनिस्ट चीनी गणतंत्र के संस्थापक बने।

अनेक नगरों में ऐसी सैकड़ों संस्थाओं की स्थापना हुई। माओ त्सेतुंग ने इनके बारे में 1936 में कहा :

> इनमें अधिकांश संस्थाओं का गठन *न्यू यूथ* की प्रेरणा से हुआ। यह चेन तूश्यू द्वारा संपादित साहित्यिक पुनर्जागरण की प्रसिद्ध पत्रिका थी। जब मैं नार्मल कॉलेज का छात्र था तो मैंने इस पत्रिका को पढ़ना शुरू किया और हू शिह और चेन तूश्यू के लेखों का प्रशंसक बन गया। वे मेरे आदर्श बन गए। मैंने लियांग चीचाओ और कांग यूवेई को पहले ही त्याग दिया था। इस समय मेरा दिमाग उदारवाद, लोकतांत्रिक सुधारवाद और काल्पनिक समाजवाद के विचारों का अजीब मिश्रण था। 'उन्नीसवीं सदी के लोकतंत्र', पुराने फैशन के उदारवाद और यूटोपियावाद के प्रति मेरे विचार अस्पष्ट थे, लेकिन मैं निश्चित रूप से सैन्यवाद और साम्राज्यवाद का विरोधी था।[7]

'विचारों का यह अजीब मिश्रण' सिर्फ माओ के युवा मस्तिष्क का लक्षण नहीं था। यह क्रियाशील और अशांत चीनी युवाओं के चिंतन की मुख्य धारा का उदाहरण था।

सांस्कृतिक पुनर्जागरण

इस प्रसंग पर टिप्पणी करते हुए फ्रांज शूरमान तथा ओर्विल शेल का कथन है :

> कम्युनिस्ट तथा राष्ट्रवादी दोनों समान रूप से 1919 के 4 मई आंदोलन को चीन की सांस्कृतिक क्रांति का चरम रूप मानते हैं। इसी के समान यह भी महत्वपूर्ण है कि यह विदेशी प्रभुत्व के खिलाफ आधुनिक राष्ट्रवादी संघर्ष की शुरुआत थी। चीनी बुद्धिजीवी कई दशकों से चीनी परंपरा के सूत्रों को सुलझा रहे थे और 1919 में वे पुरानी संस्कृति की मृत्यु और नई संस्कृति के जन्म की घोषणा के लिए तत्पर हो गए थे। सुन यातसेन ने राष्ट्रवाद का बीज मांचू शासन के विरुद्ध चीनी पहचान की घोषणा द्वारा बोया था। जब मांचुओं का अंत हो गया तो राष्ट्रवाद कुछ समय के लिए

शांत हो गया लेकिन वह फिर भड़क उठा—इस बार उसका निशाना विदेशी साम्राज्यवादी, मुख्यतः जापान था।[8]

सांस्कृतिक क्रांति और साम्राज्यवाद विरोधी राष्ट्रवाद 4 मई आंदोलन में एकीकृत हो गए। बाहर से अपमान, जापान द्वारा वार्साई शांति सम्मेलन के अन्याय और पेकिंग की परंपरावादी सरकारों की अकुशलता और कायरता ने चीन की विपदा से दु:खी युवाओं को क्रुद्ध कर दिया। छात्र पेकिंग की सड़कों पर 'मार्च' कर रहे थे तथा साधारण लोग संपूर्ण चीन में छात्रों की सहानुभूति में इस संघर्ष में कूद पड़े। इस परिस्थिति ने चीन की दुर्दशा की दोनों धाराओं, बाह्य अपमान और आतंरिक पतन को जोड़ दिया।

'क्लासिकल' चीनी के माध्यम से, जिसे चीनी जनता पढ़ नहीं सकती थी, जन आंदोलन और सांस्कृतिक पुनर्जागरण को अमल में लाना संभव नहीं था। इसलिए 4 मई आंदोलन के नेताओं ने जनभाषा—पाईतुआ—द्वारा नई पत्रकारिता, नए साहित्य, नई राजनीति, नई नैतिकता और नई संस्कृति की बुनियाद रखी। हू शिह के अनुसार चीनी सांस्कृतिक पुनर्जागरण के तीन मुद्दे यूरोपीय 'रिनेसां' की याद दिलाते थे। पहला, यह एक सचेतन आंदोलन था जो नया साहित्य जनभाषा में लिखना चाहता था। दूसरा, यह पुरानी संस्कृति के आदर्शों को चुनौती देकर स्त्रियों और पुरुषों को व्यक्तिगत स्वतंत्रता देना चाहता था। तीसरा, यह विवेक का परंपरा के विरुद्ध, स्वतंत्रता का सत्ता के विरुद्ध और मानवीय मूल्यों का उनके दमन के विरुद्ध पक्ष लेता था।

चीनी भाषा चित्रलिपि में लिखी जाती है। कुछ सुधारकों ने मंदरिन बोली के लिए अक्षर-लिपियां बनाईं लेकिन बात नहीं बनी। अंत में जनभाषा को सरल चित्रलिपि के साथ शिक्षा, पत्रकारिता और साहित्य का माध्यम बनाया गया। नया साहित्य पहले नई कविताओं में और फिर उपन्यासों में सामने आया। हू शिह ने स्वयं कविताएं लिखीं और कहा कि चीन के इतिहास में एक समानांतर साहित्य, कविताएं, गीत, कहानियां, उपन्यास हमेशा लिखा गया है जो जनभाषा में है और जिसके रचयिता अज्ञात हैं। चीनी साहित्य में लगातार क्रांतियां हुई हैं और परिवर्तन की पहल सदा जनभाषा के कवियों और लेखकों ने की है। बीसवीं सदी में भी साहित्यिक क्रांति जनभाषा के माध्यम से हो रही है लेकिन इस बार 'क्लासिकल' चीनी भाषा और साहित्य मृतप्राय है।

राजनीतिक घटनाओं ने जनभाषा को पत्रकारिता और आंदोलन की भाषा बना दिया। अचानक साहित्यिक क्रांति जनभाषा द्वारा संपूर्ण चीन में फैल गई। राजनीतिक दलों ने जनभाषा को अपने साप्ताहिकों और मासिकों के प्रकाशन में इस्तेमाल किया। प्रश्न पूछा जा सकता है कि सांस्कृतिक क्रांति इतनी देर से क्यों हुई। वस्तुत: 'क्लासिकल' चीनी परंपरागत सत्ता की भाषा थी, नौकरशाही के पदों के लिए परीक्षा की भाषा थी, कन्फ्यूशियसवाद की भाषा थी। इसलिए यह आकस्मिक नहीं कि चीनी साहित्य में क्रांति प्रशासन के लिए परीक्षा प्रणाली के अंत के एक दशक बाद आई और 1911 की गणतांत्रिक क्रांति के कुछ वर्षों बाद आई। यूरोप में सांस्कृतिक क्रांति कई सदियों में पूरी हुई। एशिया और चीन में

कुछ वर्षों में उस महान कार्य को पूरा करने का प्रयास किया जा रहा था। चीनी राष्ट्र के लिए यह जिंदगी और मौत का सवाल था।

4 मई 1919 की ऐतिहासिक घटना

पेरिस से चीनी प्रतिनिधियों ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि शांति सम्मेलन में शांतुंग के सवाल पर चीन का पक्ष दो कारणों से कमजोर हुआ है : (1) जापान ने फ्रांस और ब्रिटेन से मार्च 1917 में गुप्त संधि द्वारा शांतुंग पर अपने कब्जे की स्वीकृति ले ली थी ; और (2) चीन सरकार ने भी जापान को लिखित रूप से इस समाधान पर अपनी 'हार्दिक सहमति' दे दी थी। जब यह खबर चीन के अखबारों में छपी, तो 3 मई को चीनी जनता ने समझ लिया कि पेरिस में ताकत की राजनीति का बोलबाला है; चीन की सरकार ने देश के हितों को बेच दिया है; और अमरीकी राष्ट्रपति का आदर्शवाद खोखला है :

> सारी दुनिया में, किसी पैगंबर की तरह वुडरो विल्सन के शब्द दुर्बल को बल और संघर्ष करने वाले को साहस दे रहे थे और चीनियों ने भी ये शब्द सुने थे....उनसे कहा गया था कि युद्ध के बाद चीन जैसे असैन्यवादी राष्ट्र को अपनी संस्कृति, अपने उद्योग, अपनी सभ्यता के अबाध विकास का मौका मिलेगा। उन्हें बताया गया कि गुप्त संधियों और बल पर आधारित समझौतों को मान्यता नहीं दी जाएगी। वे इस नए युग की नई सुबह के इंतजार में थे, लेकिन चीन में सूर्योदय ही नहीं हुआ।[9]

पेकिंग यूनिवर्सिटी के एक स्नातक ने 4 मई की पूर्व संध्या के बारे में बाद में लिखा था :

> अंतत: जब पेरिस शांति सम्मेलन की खबर हमें मिली तो हम बिलकुल चौंक गए। हमने यह तथ्य समझ लिया कि विदेशी ताकतें अब भी स्वार्थी और सैन्यवादी थीं और बिलकुल झूठी थीं। हमें याद है कि 2 मई की रात को हम सो न सके। हमने सारी रात बातें कीं। हमने निष्कर्ष निकाला कि एक नया महायुद्ध पूर्व में होने वाला है। हम अपनी सरकार को पहचानते थे और हम तथाकथित महान नेता वुडरो विल्सन के सिद्धांतों पर भी विश्वास नहीं कर सकते थे। अपने लोगों और अज्ञानी, दयनीय जनता को देखकर हमें महसूस हुआ कि अब हमें संघर्ष करना चाहिए।[10]

वार्साई संकट के समय चीनी छात्रों की चेतना पश्चिमी लोकतंत्रों की अपेक्षा अधिक तीव्र थी। वे राजनीति में सुधार करना चाहते थे। विदेशियों के हाथों चीन की पराजयों, उसकी भ्रष्ट और विभक्त सरकारों, लंबे गृहयुद्धों तथा पिछड़ी और पतनोन्मुख अर्थव्यवस्था ने युवा बुद्धिजीवियों को भयभीत कर दिया था। चीन के छात्र भी दूसरे वर्गों की अपेक्षा राष्ट्रीय और सांस्कृतिक गौरव पर आघात की स्थिति में ज्यादा संवेदनशील हो जाते थे। उन्हें छात्रों के राजनीतिक आंदोलन की मजबूत परंपरा का भी ज्ञान था। इसलिए वे चीन की रक्षा के 'मिशन' को पूरा करने के लिए आतुर थे।

वे मनोवैज्ञानिक रूप से सामाजिक और राजनीतिक कार्यों में भाग लेने के लिए तैयार थे। युवा छात्रों की आयु 17 से 24 वर्ष थी। फू सीनियन, चोउ एनलाई, लो चियालुन, तुआन शीपेंग—ये सभी छात्र नेता 23 वर्ष के थे। श्यु तेहेंग 24 वर्ष का था, जिसने पेकिंग, शंघाई और नानकिंग में छात्रों, व्यापरियों और श्रमिकों की हड़तालों का नेतृत्व किया। ये छात्र बड़े कमरों में एक साथ छात्रावास में रहते थे, इकट्ठा खाना-पीना था, अध्ययन और मनोरंजन भी एक साथ करते थे। शहरी केंद्रों में सामूहिक जीवन उन्हें सहकारिता की ओर प्रेरित करता था, व्यक्तिवाद की दिशा में नहीं।

> जन आंदोलन के तरीके जैसे प्रदर्शन, हड़तालें, बायकाट उन्होंने विदेशों से लौटे छात्रों से या चीन के इतिहास और पश्चिमी प्रकाशनों से सीखे थे। ये उनकी शिकायतों या रोष की अभिव्यक्ति के तरीके थे।...दूसरी तरफ चीन में राजनीति में छात्र हस्तक्षेप का जनमत द्वारा विरोध नहीं किया जाता था।[11]

पेकिंग विश्वविद्यालय के छात्रों ने 25,000 हस्ताक्षरों के साथ शांतुंग पर जापानी कब्जे के विरुद्ध 7 मई को आंदोलन करने का फैसला किया लेकिन पेरिस से इस बारे में बुरी खबर के बाद उन्हें आंदोलन 4 मई को शुरू करना पड़ा। 3 मई को पेकिंग में छात्रों का क्रोध चरम सीमा पर था। राजनीतिक और सामाजिक ग्रुप आपात बैठकें कर रहे थे। पेकिंग चैंबर आफ कॉमर्स ने अन्य शहरों की चैंबरों से अनुरोध किया कि वे पेरिस में शांतुंग पर चीन के दावे का समर्थन करें। 'नागरिकों के राजनयिक संघ' ने चीन के राष्ट्रपति शू शिहचांग से अनुरोध किया कि वे चीनी प्रतिनिधिमंडल को आदेश दें कि वह तब तक वार्साई संधि पर हस्ताक्षर न करे जब तक शांतुंग का फैसला चीन के पक्ष में न हो जाए। एक छात्र के शब्दों में :

> पहली मई से हम सोच-विचार करते हुए घूम रहे थे कि सरकार के भ्रष्टाचार और चीनी तथा विदेशी सैन्यवादियों के खिलाफ अपने असंतोष की अभिव्यक्ति कैसे करें।...अंत में हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि तात्कालिक विकल्प यही था कि पेकिंग में छात्रों का एक विशाल प्रदर्शन किया जाए।[12]

3 मई को 7 बजे 'ला स्कूल' में पेकिंग के सभी कालेजों और विश्वविद्यालयों के छात्र प्रतिनिधियों की अनौपचारिक बैठक हुई। इसमें 1,000 छात्र मौजूद थे। काफी वाद-विवाद के बाद रात के 11 बजे प्रस्ताव पारित हुआ कि सरकार की विदेश नीति के विरुद्ध अगले दिन 4 मई को ही छात्र सड़कों पर 'परेड' करें। इसके अलावा (1) देशवासियों से मिलकर संघर्ष चलाने का अनुरोध किया गया; (2) सभी प्रांतों के लोगों से अपील की गई कि वे 7 मई, राष्ट्रीय अपमान दिवस, को 'परेड' निकालें; (3) तार भेजकर चीनी प्रतिनिधियों से कहा जाए कि वे संधि पर दस्तखत न करें; और (4) 4 मई को पेकिंग के स्कूलों, कालेजों और यूनिवर्सिटियों के सभी छात्र थ्यानान मन चौक पर विशाल प्रदर्शन करें। एक छात्र ने, जिसका नाम त्शिया शाओमिन था, उंगली काटकर खून से दीवार पर लिख दिया, 'हमारा त्सिंगताओ वापस करो।' सभी छात्र बिलकुल शांत थे। अमरीकी दार्शनिक जान डिवी ने लिखा :

> मैंने छात्रों के साथ न्याय नहीं किया जब मैंने कहा कि उनका यह प्रदर्शन कुछ उद्दंड लड़कों की करतूत था। पूरी योजना को सावधानी से बनाया गया था और जुलूस को जल्दी खत्म कर दिया गया क्योंकि एक राजनीतिक दल भी प्रदर्शन निकालना चाहता था लेकिन छात्र अपने आंदोलन को किसी दल से जोड़ने के खिलाफ थे, वे उसे पूर्णतः स्वतंत्र छात्र गतिविधि रखना चाहते थे। जरा सोचो हमारे देश में 14 साल के लड़के साफ-सुथरी राजनीति के लिए आंदोलन करें और व्यापारियों और पेशेवर लोगों को उसमें शामिल होने के लिए मजबूर कर दें।[13]

कुछ उग्रवादी छात्रों ने प्रदर्शन को हिंसात्मक बनाने की योजना बनाई थी। वे त्साओ रू-लिन, चांग त्सुंगशियांग और लू त्सुंगयू के बंगलों पर हमला करना चाहते थे और त्साओ के घर को जलाना चाहते थे। यह एक छोटा अराजकतावादी गुट था।

4 मई, रविवार को दस बजे ला कालेज में छात्रों ने एक सभा की और निम्नलिखित निर्णय किए :

1. देश के सभी संगठनों से तार भेजकर अपील की जाए कि वे पेरिस शांति सम्मेलन के शांतुंग प्रस्ताव का विरोध करें;
2. सारे देश में जनचेतना बढ़ाई जाए;
3. पेकिंग में एक जनसभा की जाए;
4. छात्रों का स्थायी और एकताबद्ध संगठन स्थापित किया जाए; और
5. प्रदर्शन का मार्ग थ्यानान गेट से लीगेशन क्वार्टर (डिप्लोमेटों की कालोनी) होकर व्यापारियों के मार्केट तक निश्चित हुआ।

जब छात्र तीसरे पहर थ्यानान मन चौक में इकट्ठे हुए तो शिक्षा मंत्रालय के प्रतिनिधि ने उनसे कहा कि वे परेड न करें और अपने कुछ प्रतिनिधियों को सरकार से वार्तालाप के लिए भेज दें। थल सेना के कमांडर जनरल ली छांगथाई और पुलिस अधीक्षक वू पिंगश्यांग ने भी उन्हें समझाया कि वे प्रदर्शन न करें। छात्रों ने उनके सुझावों को अस्वीकार कर दिया। उनका उद्देश्य राष्ट्रीय अपमान के विरुद्ध अपने रोष की सार्वजनिक अभिव्यक्ति करना था; देशद्रोही सरकार से बातचीत करना नहीं।

छात्रों ने एक घोषणापत्र जारी किया जिसमें साम्राज्यवादियों की सामान्य रूप से और जापान की विशेष रूप से निंदा की गई थी और उनकी नीतियों का खुलासा किया गया था। 'शांतुंग के छिन जाने का अर्थ चीन को पराधीन बनाना है।....हमारे देश पर एक भयानक खतरा मंडरा रहा है....हम अपील करते हैं कि हमारे संघर्ष में शामिल हो जाओ।'[14]

दो बजे प्रदर्शन शुरू हुआ। चीनी, अंग्रेजी और फ्रेंच में कपड़ों और कागजों पर साम्राज्यवाद विरोधी नारे लिखे हुए थे। नारे दो तरह के थे :

1. संप्रभुता के लिए संघर्ष करो, या महाशक्तियों का विरोध करो; जैसे सिर कटा देंगे लेकिन त्सिंगताओ नहीं देंगे; 21 मांगों को खत्म करो; पेरिस सम्मेलन ने

चीन को फांसी दे दी है; शांति संधि पर दस्तखत मत करो; जापानी चीजों का बायकाट करो; चीन चीनियों का है; आत्मनिर्णय; अंतर्राष्ट्रीय न्याय; शक्ति की राजनीति का विरोध करो।

2. देशद्रोहियों को सत्ता से हटाओ; जैसे देश के गद्दारो मुरदाबाद; त्साओ रू-लिन गद्दार है; त्साओ, लू और चांग को फांसी दो; गद्दारों का फैसला जनता करेगी; देशभक्ति का ढोंग मत करो।

जब प्रदर्शनकारी राजनयिक क्षेत्र (लीगेशन क्वार्टर) पहुंचे तो उन्हें लगा कि यह राज्य के अंदर एक दूसरा राज्य है जहां चीन की पुलिस का प्रवेश वर्जित था। छात्रों को भी विदेशी पुलिस ने लीगेशन क्वार्टर में घुसने नहीं दिया और चीनी पुलिस ने उन्हें पीछे धकेला। अचानक छात्रों ने फैसला किया कि वे त्साओ रू-लिन के बंगले पर जाएंगे। वहां पहुंचकर उन्होंने आग लगा दी। अनेक छात्र गिरफ्तार किए गए।

इसके बाद छात्रों के प्रदर्शन सारे देश में हुए और 4 मई का आंदोलन राष्ट्रीय आंदोलन बन गया। 1921 तक संपूर्ण चीन में सार्वजनिक प्रदर्शनों, व्यापारियों और श्रमिकों की हड़तालों का दौर चलता रहा। पेकिंग का प्रदर्शन शंघाई, तियांचिन, कैंटन, नानचिंग, हैंकाऊ और अनगिनत शहरों और कसबों के लिए ज्वलंत उदाहरण बन गया। बौद्धिक और सांस्कृतिक क्रांति भी सारे देश में शुरू हो गई। छात्रों, अध्यापकों, पत्रकारों और अन्य बुद्धिजीवियों ने 4 मई आंदोलन के साम्राज्यवाद विरोधी, सामंतवाद विरोधी और परंपरावाद विरोधी विचारों को देश के कोने-कोने में फैला दिया। चीन के गांवों में भी सांस्कृतिक क्रांति के संदेश गूंजने लगे।

4 मई आंदोलन का विकास

गिरफ्तार छात्रों के साथ दुर्व्यवहार के खिलाफ और उनकी रिहाई के लिए तथा देशद्रोही मंत्रियों को दंडित करने के लिए सारे देश में जनसभाएं हुईं। बुद्धिजीवियों, व्यापारियों और श्रमिकों के संगठनों ने पेकिंग सरकार को तार भेजकर अपना विरोध प्रकट किया। दक्षिण चीन की क्वोमिन्तांग समर्थित सरकार और संसद ने पेकिंग सरकार की राष्ट्र विरोधी और दमनकारी नीति की निंदा की। जापान, यूरोप और अमरीका में भी चीनी छात्रों ने 4 मई आंदोलन के समर्थन में सभाएं कीं। जान डिवी और बर्ट्रेंड रसेल ने भी छात्र आंदोलन का समर्थन किया। उदारवादी ब्रिटिश, फ्रांसीसी और अमरीकी बुद्धिजीवियों ने भी 4 मई के आंदोलन के उद्देश्यों के प्रति सहानुभूति प्रकट की।

बहरहाल देशद्रोही मंत्रियों को न तो दंडित किया गया और न ही शांतुंग की समस्या का हल निकला। चीनी प्रतिनिधि मंडल ने वार्साई संधि पर दस्तखत नहीं किए लेकिन यह सिर्फ प्रतीकात्मक विरोध बनकर रह गया। विदेशियों के सभी विशेषाधिकार कायम रहे। चीन को नीचा दिखाने के लिए साम्राज्यवादी देश पेकिंग में राजदूतों की जगह निम्न पद के

राजनयिक प्रतिनिधि नियुक्त करते रहे और इनका लीगेशन क्वार्टर चीन की संप्रभुता को अस्वीकार करता रहा। चीन के बंदरगाह विदेशियों के कब्जे में रहे और विदेशी ही सीमा-शुल्क और नमक कर निर्धारित और वसूल करते रहे।

जापान और विदेशी साम्राज्यवादियों ने अपने अर्ध-उपनिवेशी उत्पीड़न और शोषण की नीतियां जारी रखीं। चीन दस-बारह युद्ध-सामंती क्षेत्रों में बंटा रहा जो आपस में युद्ध करते रहे, जनता को लूटते रहे और साम्राज्यवादियों के तलवे चाटते रहे। लेकिन 4 मई आंदोलन ने चीनी राष्ट्र को जगा दिया और चीन के बुद्धिजीवी, व्यापारी, श्रमिक और कृषक एकजुट होकर साम्राज्यवादी और युद्ध-सामंती उत्पीड़न और शोषण के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए उठ खड़े हुए। उदाहरणार्थ, शंघाई में 5 जून से 11 जून तक 90,000 मजदूरों ने हड़ताल की। पेकिंग में मंत्रिमंडल बदला गया लेकिन नए मंत्रियों की नीतियों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। अत: 4 मई आंदोलन का विस्तार होता चला गया।

1919 की सर्दियों में *मैनीफेस्टो आफ न्यू यूथ मैगजीन* प्रकाशित हुआ : (1) हम जन आंदोलन और सामाजिक पुनर्निर्माण का समर्थन करते हैं; (2) हम वास्तविक लोकतंत्र और जनता के राजनीतिक अधिकारों में विश्वास करते हैं; (3) हम चाहते हैं कि राजनीतिक दलों को मान्यता दी जाए; (4) राजनीति, नैतिकता, विज्ञान, कलाओं, धर्म और शिक्षा का उपयोग सामाजिक प्रगति के लिए किया जाना चाहिए; (5) हमें परंपरावादी साहित्य, दर्शन और मूल्यों का विरोध करना चाहिए। नए अखबारों और पत्र-पत्रिकाओं की बाढ़ आ गई। इनमें कुछ के नाम हैं—*न्यू यूथ*, *दि पैसिफिक ओशन*, *वीकली क्रिटिक*, *दि सिटिजंस*, *न्यू टाइड*, *न्यू एजुकेशन*, *वीकली रिव्यू*, *यंग चाइना*, *दि कंस्ट्रक्शन*, *इमेंसिपेशन एंड रिकंस्ट्रक्शन* और *यंग वर्ल्ड*।

कुछ अन्य पत्रिकाओं के नाम थे—*युवा और समाज*, *समाज की नई आवाज*, *नया समाज*, *प्रगति और युवा*, *नया जीवन*, *नया वातावरण*, *नया आदमी*, *गरम ज्वार*, *सीधे-सादे लोग*, *नई रोशनी*. *राष्ट्र को बचाओ*, *स्वतंत्रता*, *नया ज्ञान*, *नई संस्कृति*, *नए विद्यार्थी*, *कार्य-तथा-अध्ययन*, *ऊपर चलो*, *संघर्ष*, *जागृति*, *जन शिक्षा*, *आम आदमी की नैतिकता*, *विज्ञान और शिक्षा*, *नई औरत*, *औरत की घंटी*, इत्यादि। इन पत्र-पत्रिकाओं के द्वारा चीन में नव-संस्कृति आंदोलन की लहर उठी। चीन के नर-नारी, युवा और वयस्क नए विचारों और मूल्यों की ओर अधिकाधिक आकृष्ट होने लगे।

बड़े शहरों के दैनिक अखबार भी क्रांतिकारी धारा से प्रभावित हुए। उन्होंने खास कालम, अतिरिक्त पत्रिकाएं और साहित्यिक पुस्तकें प्रकाशित कर सांस्कृतिक और छात्र आंदोलनों पर चर्चा की। इनमें *शंघाई टाइम्स*, *रिपब्लिक डेली* और *दि चाइना टाइम्स* प्रमुख थे। 1920 में 'दि कमर्शियल प्रेस' ने पहले से चार गुना अधिक किताबों का प्रकाशन किया। बुद्धिजीवियों में संदेहवादी, उदारवादी, रोमांसवादी, यथार्थवादी और प्रतिमा-भंजक विचार पनप रहे थे। पितृसत्ता, सामंतशाही, साम्राज्यवाद, पारंपरिक धर्म और नैतिकता का सर्वत्र विरोध बढ़ता जा रहा था। नए बौद्धिक, सामाजिक और

राजनीतिक संगठनों की स्थापना की जा रही थी। नए बुद्धिजीवियों ने भाषणों और सभाओं द्वारा नव-संस्कृति के संदेश फैलाए। अनेक पश्चिमी विचारकों, दार्शनिकों, लेखकों और समाजशास्त्रियों के भाषण चीन के विभिन्न प्रांतों और नगरों में कराए गए। चीन के छात्रों ने अपने भाषण अभियान चीन की अशिक्षित जनता में जारी रखे और कृषकों तथा श्रमिकों में 4 मई आंदोलन के संदेश का प्रचार किया। जान फेयरबैंक आदि का मत है :

> 4 मई की घटना का ऐतिहासिक प्रभाव छात्रों के आगामी राजनीतिक आंदोलन के कार्यक्रम द्वारा पड़ा। पेकिंग के विद्यार्थियों ने छात्रों और छात्राओं की एक यूनियन बनाई। उन्हें शीघ्र ही प्रेस और व्यापारियों से, सुन यातसेन और कैंटन सरकार से, तथा आन-फू (अन्हुई-फूचियन) गुट के विरोधी युद्ध-सामंतों से राष्ट्रव्यापी समर्थन मिला।...यह सही मायनों में राष्ट्रीय आंदोलन था जिसमें जनता के तमाम वर्ग जन आंदोलन के नए स्तर तक पहुंचे और इसे जीत हासिल हुई। पेकिंग के छात्र जेल से छूटकर विजय-मार्च करते हुए बाहर आए। तीन जापान समर्थक 'गद्दार' अफसरों को बरखास्त कर दिया गया। कैबिनेट ने इस्तीफा दे दिया। चीन ने वार्साई संधि पर हस्ताक्षर नहीं किए।[15]

आंदोलन के प्रति विदेशी दृष्टिकोण

जापान की प्रतिक्रिया शत्रुतापूर्ण थी। उसने आग्रह किया कि चीन सरकार छात्र आंदोलन का सख्ती से दमन करे। जापानी प्रेस ने छात्रों को डाकू (बैंडिट्स) और बोल्शेविक कहा। चीन में एक अफवाह उड़ी कि पेकिंग में अमरीकी राजदूत आंदोलन को आर्थिक सहायता दे रहा था। यह सच नहीं था। पश्चिमी देशों में प्रगतिशील और उदारवादी बुद्धिजीवी आंदोलन के प्रति संवेदनशील थे। यूरोप तथा अमरीका में जापान विरोधी गुट भी चीन के राष्ट्रीय असंतोष को उचित मानते थे। रोम्यां रोलां आदि साहित्यकारों ने 4 मई आंदोलन का समर्थन किया। लेकिन शंघाई के 'इंटरनेशनल सेटिलमेंट' तथा अन्य 'विदेशी कंसेशन' क्षेत्रों के विदेशी आंदोलन के प्रति तटस्थ रहे लेकिन संदेहपूर्ण दृष्टिकोण रखते थे। 4 मई आंदोलन सिर्फ जापानी साम्राज्यवाद का विरोधी नहीं था। वह चीन पर सभी साम्राज्यवादियों के अर्ध-उपनिवेशी प्रभुत्व का विरोध करता था।

चाओ त्सेत्सुंग का मत है, 'कंसेशन क्षेत्रों में पश्चिमी प्रशासन पश्चिम के लोकतंत्र का *अच्छा उदाहरण नहीं था।* फैक्टरी के मजदूरों की दुर्दशा देखकर और शंघाई के व्यापारियों के लालच तथा कंसेशनों के अधिकारियों की स्वार्थी और संकीर्ण नीतियों का अनुभव कर इन बुद्धिजीवियों को शीघ्र ही पश्चिम से घोर निराशा हो गई।' शंघाई के विदेशी पूंजीपति मजदूरों की हड़ताल से भयभीत हो गए हालांकि यह हड़ताल मालिकों के खिलाफ नहीं थी *क्योंकि हड़ताली मजदूर सिर्फ छात्रों से सहानुभूति दिखा रहे थे। विदेशी मालिकों को डर*

था कि छात्र उन्हें लोकतंत्र, राजनीतिक अधिकारों और वर्ग संघर्ष की शिक्षा दे रहे थे। उनके भय में सचाई का अंश मौजूद था।

अर्ध-उपनिवेशी चीन में 'लीगेशन क्वार्टर' चीन की संप्रभुता नहीं मानता था। हर बड़े शहर में 'आजाद विदेशी बस्तियां' थीं जहां विदेशी कानून चीनियों पर भी लागू होते थे। चीन के समुद्र, नदियां और झीलों पर विदेशी जहाज तैरते थे। चीन स्वतंत्र देश नहीं बल्कि एक भौगोलिक शब्द था। वह राष्ट्र नहीं बल्कि एक बाजार था जहां नशीली दवाएं और हर तरह का माल खुलेआम बिकता था। चीन की रेलों, खनिजों और कारखानों पर विदेशी पूंजीपतियों का कब्जा था। वे युद्ध-सामंतों को कर्ज और हथियार देकर आपस में लड़वा रहे थे। इस स्थिति में साम्राज्यवादी सरकारों का दृष्टिकोण 4 मई आंदोलन के प्रति संदेहपूर्ण या शत्रुतापूर्ण होना बिलकुल स्वाभाविक था।

पारंपारिक महाशक्तियां चीन के साथ अर्ध-उपनिवेशी बरताव जारी रखे हुए थीं। दूसरी ओर अक्तूबर क्रांति के बाद रूस ने चीन और एशियाई उपनिवेशों के प्रति कमोबेश आदर्शवादी नीति अपनाई। सोवियत सरकार ने जारशाही की अनेक गुप्त संधियों को, जो जापान से चीन के बारे में की गई थीं, प्रकट कर दिया और उन्हें रद्द कर दिया। 23 जुलाई 1919 को सोवियत सरकार के कार्यवाहक विदेश मंत्री लिओ पी. कारकहान ने मास्को में 'चीन की जनता और उत्तरी तथा दक्षिणी चीन की सरकारों को संबोधित करते हुए घोषणा की जिसमें जारशाही रूस और चीन के बीच की सभी गुप्त और असमान संधियों को रद्द करने का प्रस्ताव किया गया और अपने सभी विशेषाधिकारों और हितों को बिना मुआवजा लिए छोड़ दिया गया।'[16]

4 मई के आंदोलनकारियों को इस विज्ञप्ति की सूचना मार्च 1920 में मिली। इसने आंदोलन को अत्यधिक प्रभावित किया। पश्चिमी साम्राज्यवादी ताकतें और जापान अपने औपनिवेशिक विशेषाधिकारों को विस्तृत और सुदृढ़ करना चाहते थे लेकिन साम्यवादी रूस उदारतापूर्वक उन्हें त्यागने की स्वयं पहल कर रहा था। उधर चीन की सरकार साम्राज्यवादियों के डर से न तो सोवियत सरकार को मान्यता दे रही थी और न उनके उदार प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए वार्ता के लिए तैयार थी। इसका मतलब था कि पराधीन चीनी सरकार राष्ट्र के हित में विदेश नीति स्वयं निश्चित नहीं कर सकती थी। कारकहान की घोषणा के बारे में पता चलते ही, चीनी प्रेस, विभिन्न संस्थाओं, दक्षिण चीन की कैंटन सरकार, छात्रों, अध्यापकों, व्यापारियों, उद्योगपतियों, श्रमिकों और नारियों ने सोवियत रूस के प्रति इसके लिए सभाओं द्वारा कृतज्ञता का प्रदर्शन किया। न केवल बुद्धिजीवी और श्रमजीवी, बल्कि उद्योगपति और व्यापारी, दक्षिण चीन के क्वोमिन्तांग अधिकारी और राजनीतिक कार्यकर्ता कम्युनिस्ट देश के इस सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण से प्रभावित हुए।

4 मई आंदोलन में रूसी क्रांतिकारियों के इस दृष्टिकोण से एक वामपंथी धारा का विकास हुआ।

राजनीतिक और वैचारिक मतभेद

लोकतंत्र, पूंजीवाद, समाजवाद और पश्चिमीकरण के विषयों पर 4 मई के आंदोलनकारियों के बीच में लगातार बहसें जारी थीं और राजनीतिक तथा वैचारिक मतभेद उभर रहे थे। एक ग्रुप जान डिवी के विचारों से प्रभावित था। डिवी ने कहा कि लोकतंत्र के चार तत्व हैं : (1) राजनीतिक लोकतंत्र अर्थात संविधानवाद और संसद में प्रतिनिधित्व; (2) जनाधिकार जैसे भाषण, प्रेस, विश्वास आदि की स्वतंत्रता; (3) सामाजिक लोकतंत्र अर्थात सामाजिक विषमता का अंत; और (4) आर्थिक लोकतंत्र अर्थात धन के वितरण का समानीकरण। डिवी समाजवाद, मार्क्सवाद तथा कट्टर पूंजीवाद का विरोध करता था। वह अग्रगामी उदारवाद का समर्थन करता था। अनेक बुद्धिजीवी उससे प्रभावित थे।

चेन तूश्यू, जो बाद में मार्क्सवादी हो गए, डिवी से सहमत थे लेकिन वे प्रत्यक्ष विधायन, आर्थिक लोकतंत्र,सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन, स्थानीय स्वशासन आदि पर खास जोर देते थे। वे चीन के उद्योगीकरण और आधुनिकीकरण पर भी विशेष बल देते थे। 4 मई आंदोलन में उनके समर्थक बड़ी संख्या में थे। कुछ विचारक जैसे ली ता-चाओ समाजवाद की ओर झुक रहे थे परंतु चाओ त्सेत्सुंग के अनुसार इन भावी समाजवादियों का ज्ञान पश्चिमी राजनीतिक विचारों और संस्थाओं के बारे में अधूरा था। वे पश्चिमी लोकतंत्र के प्रशंसक और आलोचक दोनों ही थे।

बर्ट्रेंड रसेल के चीन भ्रमण के समय गिल्ड समाजवाद, सिंडीकेटवाद, पूंजीवाद और समाजवाद वाद-विवाद के लोकप्रिय विषय बन गए। रसेल का चीनी वामपंथियों और उदारवादियों ने विशेष स्वागत किया। उसकी कृतियां *रोड्स टु फ्रीडम*, *प्रिंसिपल्स आफ सोशल रिकंस्ट्रक्शन*, *सोशलिज्म*, *एनार्किज्म एंड सिंडीकॉलिज्म*, *पालिटिकल आइडियल्स* और *दि प्राब्लम्स आफ फिलासफी* के चीनी अनुवाद किए गए। रसेल और उनके समर्थकों ने शिक्षा और उद्योगों के विकास और गरीबी निवारण के कार्यक्रमों पर जोर दिया। रसेल ने कहा, 'चीन के बुद्धिजीवियों की वास्तविक समस्या पश्चिमी ज्ञान को, यांत्रिक दृष्टिकोण के बिना, अर्जित करने की है।'[17] उन्होंने बाद में स्पष्ट किया कि इस कथन के जरिए वे चीन के रूढ़िवादियों का समर्थन नहीं कर रहे थे।

शंघाई स्थित क्वोमिन्तांग सदस्यों और मार्क्सवादियों ने *ला रिकोंस्त्रुओं* पत्रिका में गिल्ड-समाजवादी दृष्टिकोण की आलोचना की। समाजवाद के विभिन्न 'स्कूलों' और उनके सिद्धांतों पर विस्तृत बहसें हुईं। वामपंथी *ला रिकोंस्त्रुओं* को समाजवाद का विरोधी मानते थे। वस्तुत: वह तेज उद्योगीकरण और मजबूत केंद्रीय शासन का पक्षपाती था लेकिन लक्ष्य के रूप में पत्रिका ने न तो कभी पूंजीवाद को स्वीकार किया और न समाजवाद को। फिर भी पत्रिका में अनेक लेखकों ने कहा कि इसकी कोई गारंटी नहीं है कि सरकारी स्वामित्व निजी स्वामित्व से श्रेष्ठतर सिद्ध होगा।

राजनीति में बहस जारी थी। 1 अगस्त 1920 को हू शिह, ली ताचाओ और कुछ अन्य नेताओं ने एक घोषणापत्र जारी किया और जनता और बुद्धिजीवियों से राजनीति में भाग

लेने की अपील की। इसमें पुलिस उत्पीड़न, दमनकारी कानूनों तथा 1912 और 1914 में जारी आपातकालीन उद्घोषणाओं को समाप्त करने की मांग की गई। जब यह घोषणापत्र प्रकाशित हुआ तो पेकिंग में तुआन छी रूई और आन-फू गुट की सरकार का पतन हो गया था। उसकी जगह, दो अन्य युद्ध-सामंत, वू पेईफू और थ्साओ खुन ने राजधानी में सत्ता संभाल ली। स्थिति पहले से अधिक बिगड़ती चली गई।

1920 के प्रारंभ में 'कम्युनिस्ट इंटरनेशनल' का 4 मई आंदोलन से संपर्क शुरू हुआ। ली ताचाओ ने मार्च 1920 में 'मार्क्सवादी सिद्धांत के अध्ययन के लिए संस्था' स्थापित की। 'रूस के अध्ययन के लिए संस्था' की स्थापना भी लगभग उसी समय हुई। चेन तूश्यू ने भी उसी समय शंघाई में मार्क्सवाद के अध्ययन के लिए एक गोष्ठी शुरू की। पेकिंग के बुद्धिजीवी ने मार्क्सवाद के अध्ययन में काफी रुचि दिखाई। गणतंत्र के संस्थापक और एक प्रमुख राजनीतिक हस्ती के रूप में सुन यातसेन ने 4 मई के छात्र कार्यकर्ताओं को तथा अन्य बुद्धिजीवियों को क्रांतिकारी शिविर में शामिल होने के लिए प्रेरित किया। चाओ त्सेत्सुंग का कथन है :

> अक्तूबर क्रांति में लेनिन की सफलता से प्रभावित होकर और उनकी पुनर्निर्माण योजना को वित्तीय समर्थन देने में पश्चिमी देशों की अरुचि देखकर तथा उनके द्वारा पेकिंग सरकार को लगातार मान्यता देने से निराश होकर वे क्रमश: वामपंथ की ओर झुके।[18]

सुन यातेसन के अलावा अनेक क्वोमिन्तांग नेता इस समय समाजवाद की ओर झुक रहे थे। इनके नाम थे—ताई चीथाओ, हू हानमिन, चू चिहशिन, शेन तिंगयी और ल्याओ चुंगखाई। परंतु वे मार्क्सवादी नहीं थे। चेन तूश्यू और ली ताचाओ चीनी सोशलिस्ट पार्टी या चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना के बारे में सोच रहे थे। चाओ त्सेत्सुंग के अनुसार मई 1920 में कम्युनिस्ट पार्टी की स्थपाना हो गई थी। परंतु अधिकृत रूप से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना जुलाई 1921 में हुई।[19]

अंत में 4 मई आंदोलन में फूट पड़ गई। वामपंथी ली ताचाओ, यून ताईचिंग, चाओ फोहाई, तंग चुंगशिया, माओ त्सेतुंग, ल्यू रेनचिंग, चांग वेन्थियन, शेन त्सेमिन, हुआंग रिहखूई, चाओ शिथेन, काओ शांगते, होउ शाओच्यू और यांग शिंच्यांग चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल हो गए।[20]

दक्षिणपंथी जैसे त्सेंग छी, त्सो शुंशेंग, ली हुआंग, चांग मेंगच्यू, हो लूचिह, यू चियाच्यू, छेन छीथ्यन, ज्यू सीयुंग, ली चेंगच्यांग, वेई सीलुआन, छांग नाइते, चाओ त्सेंगछू और छेन तेंग छिओ ने यंग चाइना पार्टी को संगठित करना शुरू कर दिया जो राष्ट्रवाद और लोकतंत्र का समर्थन करती थी। कुछ लोगों ने क्वोमिन्तांग या चिनपूतांग (ला रिकोंस्तुओ ग्रुप) या अन्य छोटे राजनीतिक दलों की सदस्यता ग्रहण कर ली। आगामी दशकों में मुख्य संघर्ष क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्टों के बीच हुआ।[21]

निष्कर्ष और मूल्यांकन

हू शिह और चेन तूश्चू ने 4 मई आंदोलन को चीनी 'रिनेसां' या पुनर्जागरण की संज्ञा दी है। परंतु यूरोपीय पुनर्जागरण में प्राचीन ग्रीक और रोमन विचारों के पुनरुत्थान की बातें कही गई थीं किंतु चीनी पुनर्जागरण में चीन की पुरानी संस्कृति को छोड़ने और पश्चिमी संस्कृति को अंगीकार करने का सुझाव था। कुछ ने कन्फ्यूशियनवाद के विरोध के कारण इसकी तुलना धर्म-सुधार आंदोलन से की है परंतु चीन में कैथोलिक चर्च और पोप के समकक्ष कोई स्थापित चर्च नहीं था। 4 मई आंदोलन में परंपरागत नैतिक आदर्शों का विरोध था—यह सही मायनों में धर्म-सुधार आंदोलन नहीं था। कुछ लोग इसे फ्रांसीसी 'ज्ञानोदय' का चीनी संस्करण मानते हैं। विवेक, विज्ञान और लोकतंत्र ज्ञानोदय तथा 4 मई आंदोलन के बुनियादी आदर्श थे।

अनुदार और परंपरावादी राष्ट्रवादियों की दृष्टि में यह आंदोलन एक राष्ट्रीय विपत्ति था। च्यांग काईशेक की दृष्टि में अपमान के विरुद्ध 4 मई का अभियान उचित था लेकिन नई संस्कृति का प्रतिपादन बिलकुल अनुचित था। च्यांग के अनुसार 'लोकतंत्र' का अर्थ 'अनुशासन' है और 'विज्ञान' का अर्थ 'संगठन' है परंतु 4 मई आंदोलन 'सामाजिक विघटन' और 'अनुशासनहीनता' की शिक्षा और प्रेरणा देता था। 'यह स्पष्ट है कि क्वोमिन्तांग रूढ़िवादी चेतन या अचेतन रूप से 4 मई आंदोलन की राष्ट्रवादी भावनाओं पर जोर देते हैं किंतु उसके परंपरावाद विरोध को नकार देते हैं।'[22]

माओ त्सेतुंग के अनुसार 4 मई आंदोलन के तीन महत्वपूर्ण अंग थे : (1) यह 'साम्राज्यवाद विराधी और सामंतत्राद विरोधी बुर्जुआ लोकतांत्रिक क्रांति' का प्रस्थान-बिंदु था; (2) राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग सर्वहारा और बुद्धिजीवी वर्गों के साथ मिलकर संयुक्त मोरचे में एकजुट होकर क्रांति में शामिल हुआ; और (3) बुद्धिजीवी वर्ग ने क्रांति में संयुक्त मोरचे को नेतृत्व प्रदान किया।[23] हालांकि माओ 4 मई आंदोलन के राजनीतिक महत्व को अच्छी तरह समझते थे फिर भी वे उसे मुख्यत: एक सांस्कृतिक क्रांति मानते थे। वह उनकी दृष्टि में बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति था। उनके अनुसार आंदोलनकारियों में 'साम्यवाद का प्रारंभिक ज्ञान' था लेकिन उनमें 'आलोचना की मार्क्सवादी प्रवृत्ति नहीं थी।'[24]

चाओ त्सेत्सुंग का निष्कर्ष है, '4 मई आंदोलन वास्तव में एक संयुक्त बौद्धिक और सामाजिक-राजनीतिक आंदोलन था। इसका उद्देश्य राष्ट्रीय स्वतंत्रता, व्यक्ति की स्वाधीनता, और चीन के आधुनिकीकरण द्वारा न्यायोचित समाज की स्थापना करना था।' वे आगे कहते हैं, 'इस आलोचनात्मक पुनर्मूल्यांकन की आरंभिक प्रक्रिया में, आदर्शवाद, उदारवाद, क्रियावाद, विवेकवाद, उपयोगितावाद, यथार्थवाद और अज्ञेयवाद ने युवा बुद्धिजीवियों के दिमागों को प्रभावित किया। सामान्यत: सुधारकों का विश्वास था कि वैचारिक और संस्थागत परिवर्तन भौतिक और सामाजिक-राजनीतिक रूपांतरणों के पहले ही होने चाहिए।' उनका कहना है :

> बुद्धिजीवी वर्ग शीघ्र ही समझ गया कि उसे साधारण जनता के बीच राष्ट्रीय संकट के बारे में जागृति फैलानी चाहिए....और फिर उन्हें राष्ट्र की रक्षा और मजबूती के लिए संगठित कर नेतृत्व प्रदान करना चाहिए।....कुल मिलाकर यह आंदोलन मुख्यतः संक्रमणकालीन था।

हमारे दृष्टिकोण के अनुसार 4 मई आंदोलन की महत्वपूर्ण उपलब्धियां वैचारिक थीं। व्यावहारिक उपलब्धियां अपेक्षाकृत कम थीं। युवा बुद्धिजीवियों की चिंतन प्रणाली असाधारण रूप से आधुनिक हुई। जनभाषा के साहित्य में ये परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई पड़े। चीन के प्रेस और लोकमत में विशेष प्रगति हुई। सामंतशाही विचारधारा कमजोर हुई। युद्ध-सामंत चीनी राष्ट्रवाद की आंधी को झेल नहीं सके। साम्राज्यवाद रक्षात्मक स्थिति में आ गया। जापान को शांतुंग छोड़ना पड़ा। 4 मई आंदोलन ने सुन यातसेन की क्वोमिन्तांग और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के संयुक्त मोरचे के लिए वैचारिक पृष्ठभूमि तैयार की। सुन यातसेन ने पुनर्गठित क्वोमिन्तांग में 4 मई के आंदोलनकारियों को सदस्य बनाने में वरीयता दी। माओ त्सेतुंग, चोउ एन लाई, लो ताचाओ जैसे अनेक कम्युनिस्ट नेता इस आंदोलन में प्रशिक्षित हुए थे।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. चाओ त्सेत्सुंग, *दि मे फोर्थ मूवमेंट*, पृ 2–3.
2. वही, पृ 5.
3. वही, पृ. 31
4. वही, पृ. 39
5. वही, पृ. 40
6. वही, पृ. 61.
7. वही, पृ. 75.
8. एफ. शूरमान और ओर्विल शेल (संपा.), *रिपब्लिकन चाइना*, पृ. 51.
9. वही, उद्धृत, पृ 65.
10. वही, उद्धृत, पृ. 68–69.
11. वही, उद्धृत, पृ. 73.
12. वही, उद्धृत, पृ. 75.
13. वही, उद्धृत, पृ. 79.
14. जान फेयरबैंक इत्यादि, *ईस्ट एशिया : ट्रेडीशन एंड ट्रांसफार्मेशन*, पृ. 770.
15. चाओ त्सेत्सुंग, *दि मे फोर्थ मूवमेंट*, पृ. 209–10.
16. वही, उद्धृत, पृ. 235.
17. वही, पृ. 246.
18. वही, पृ. 248.
19. वही, पृ. 252.
20. वही, पृ. 252–53.

21. वही, पृ. 345.
22. वही, पृ. 345.
23. वही, पृ. 353.
24. वही, पृ. 358–61.

अध्याय पांच

पहले संयुक्त मोरचे की भूमिका

1924 में चीन की अवस्था

1924 में चीन के दो प्रमुख दलो *क्वोमिन्तांग* और *कुंगछान्तांग* अर्थात चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के बीच पहले संयुक्त मोरचे की स्थापना हुई। माओ ने *आन कंट्राडिक्शन्स* में द्वंद्वात्मक विश्लेषण करते हुए बताया कि इसे समझने के लिए हमें तत्कालीन चीन की परिस्थिति, क्वोमिन्तांग के विकास की स्थिति तथा कम्युनिस्ट पार्टी के विकास के स्तर को ठीक से पहचान लेना चाहिए।

पहली बात यह है कि चीन में मांचू राजतंत्र का अंत 13 वर्ष पहले हो गया था। उसके बाद सैनिक अधिनायक युआन शिहकाई ने राजतंत्र को फिर स्थापित करने की कोशिश की लेकिन 83 दिनों के बाद उसे राजगद्दी छोड़नी पड़ी। उसके बाद पेकिंग के युद्ध-सामंतों ने मांचू किशोर पू यी को फिर सम्राट बनाने की चेष्टा की लेकिन वह केवल दस दिनों तक सम्राट रहा। जापान ने पू यी को 1931 में मांचूकुओ अर्थात मंचूरिया का सम्राट घोषित किया—यह सोचकर कि शायद चीन के लोग इस तरह इस क्षेत्र की हानि को स्वीकार कर लें। सी.पी. फिट्जगेराल्ड का मत है :

> चीन के लोग 'रोमांटिक' नहीं हैं, खासकर राजनीति में जिस आदर्श की पराजय हो जाती है, चीनियों को उसमें रुचि नहीं रहती. जिस राजवंश का पतन हो जाता है, उसे सहानुभूति या समर्थन नहीं मिलता। जो नीचे गिर चुका है, उसे कभी ऊपर उठाकर खड़ा नहीं किया जा सकता। चीन में किसी राजवंश का पुन:स्थापन नहीं हुआ है, वहां कोई जैकोबियन नहीं हुए, राजनीतिक अतीत के प्रेत वापस नहीं आए।.... जनसाधारण ने न तो (मांचू) साम्राज्य के अंत का शोक मनाया और न उसकी वापसी की उम्मीद की।....उन्होंने गणतंत्र में भी कोई अच्छाई नहीं देखी, लेकिन उन्हें अस्पष्ट रूप से महसूस हुआ कि राजतंत्र अब उनकी जरूरत को पूरा नहीं कर सकता।....1924 तक यह बात साफ हो गई कि पश्चिमी लोकतंत्र उनकी समस्या का समाधान नहीं था, और दरअसल क्रांतिकारी तत्वों ने भी उसका परित्याग कर दिया।[1]

युआन की मृत्यु के बाद एक के बाद एक राष्ट्रपति पेकिंग में बने लेकिन प्रांतों में इससे ज्यादा महत्वपूर्ण घटनाएं हो रही थीं, जहां शक्तिशाली सेनाध्यक्षों ने असैनिक राज्यपालों के साथ गठबंधन कर स्वायत्त सरकारें स्थापित कर ली थीं और कुछ ने केंद्र से स्वतंत्रता की

घोषणा कर दी थी।

पिछले दशक में चीन के नक्शे को युद्ध-सामंतों ने बार-बार आपस में बांटकर क्षेत्रीय हुकूमतें कायम कर ली थीं। ये युद्ध-सामंत युआन की भूतपूर्व फौजों की संतान थे। प्रत्येक युद्ध-सामंत खुद अपना मालिक था और हर एक के पास निजी सेना थी जो ग्रामीण इलाकों के शोषण पर निर्भर थी। वे लगातार आपस में लड़ते थे और लड़ाइयां खर्चीली थीं। चूंकि अर्ध-औपनिवेशिक चीन में वे विदेशी व्यापारियों से कर नहीं ले सकते थे, इसलिए वे किसानों को चूसते थे।

चीन की राजनीति इन युद्ध-सामंतों के गठबंधनों, देशद्रोहों और षड्यंत्रों की राजनीति थी। जान के फेयरबैंक के शब्दों में :

> यह युग चीन के इतिहास में आध्यात्मिक बंजरपन का युग था जिसमें प्राचीन कन्फ्यूशियन नैतिक संस्कार और राजतंत्रीय शासन के रीति-रिवाज अपनी प्रासंगिकता खो चुके थे जबकि आधुनिक विश्वास और लोकशासन की संस्थाएं—प्रतियोगी पार्टियां या एक पार्टी की तानाशाही—स्थापित नहीं हुई थीं।[2]

सुन यातसेन ने तुंग मेंग हुई के माध्यम से 1911 के पहले दस असफल विद्रोह किए थे और अंत में जब वे नानकिंग में गणतंत्र के अस्थायी राष्ट्रपति बने तो कुछ समय बाद ही उन्हें सैनिक अधिनायक युआन शिहकाई के लिए सत्ता छोड़नी पड़ी। सुन यातसेन ने उसके बाद क्वोमिन्तांग पार्टी की स्थापना की। कैंटन में क्वांगतुंग के युद्ध-सामंत ने 1920 में एक प्रतिद्वंद्वी चीनी केंद्रीय सरकार की स्थापना की अनुमति दे दी लेकिन कुछ समय बाद सुन यातसेन को, जो इस सरकार के राष्ट्रपति थे, भागकर शंघाई जाना पड़ा। 1923 में उन्हें कैंटन में फिर राष्ट्रपति के रूप में एक प्रतिद्वंद्वी राष्ट्रीय सरकार बनाने का मौका मिला।

तुंग मेंग हुई का राजनीतिक योगदान 1911 की क्रांति में अधिक नहीं था। यह क्रांति मुख्यत: 'न्यू आर्मी' के सैनिकों और छात्रों ने की थी। सुन यातसेन के विचारों के अनुसार क्रांति के पश्चात पहले चरण में सैनिक शासन स्थापित होना था, दूसरे चरण में राजनीतिक संरक्षकों का शासन होना था और तीसरे चरण में ही सांविधानिक और लोकतांत्रिक शासन प्रणाली की स्थापना होनी थी। अत: सुन यातसेन के चिंतन में और क्वोमिन्तांग के आचरण में गणतंत्र के प्रारंभिक दो चरणों में लोकतंत्र के लिए कोई प्रावधान नहीं था।

इसका अभिप्राय है कि क्वोमिन्तांग की रुचि न तो विचारधारा में थी और न राजनीतिक आंदोलन में। इसी प्रकार सुन यातसेन सैनिक विद्रोह द्वारा सत्ता प्राप्त करने में, सैनिक शक्ति के द्वारा सत्ता को कायम रखने में और संरक्षकों द्वारा शासन चलाने में विश्वास करते थे। ऐसी स्थिति में सुन यातसेन और क्वोमिन्तांग के पास युआन शिहकाई तथा युद्ध-सामंतों की अलोकतांत्रिक सत्ताओं को चुनौती देने लायक न तो कोई उपयुक्त विचारधारा थी और न ही वे कोई सशक्त जन आंदोलन खड़ा कर सके थे। राष्ट्रपति पद से हटने के बाद सुन यातसेन ने क्वोमिन्तांग की प्रतिद्वंद्वी राष्ट्रीय सरकार कैंटन में बनाई थी, लेकिन वह क्वांगतुंग के युद्ध-सामंत की सरकार का केवल 'सिविलियन' मुखौटा थी। अंतर्राष्ट्रीय मान्यता पेकिंग

सरकार को प्राप्त थी लेकिन वह भी किसी न किसी युद्ध-सामंती गुट का 'सिविलियन' मुखौटा होती थी।

युद्ध-सामंतों की सत्ता की स्थापना में सुन यातसेन के राजनीतिक दर्शन और क्वोमिन्तांग की राजनीति और कार्यनीति का भी काफी योगदान था। क्वोमिन्तांग के प्रधान की स्थिति राजनीतिक आंदोलन के अभाव में व्यावहारिक रूप से एक महिमामंडित युद्ध-सामंत के समान हो गई थी। सुन यातसेन भी अन्य युद्ध-सामंतों की भांति कभी जापान की मदद से तो कभी ब्रिटेन और अमरीका के सहयोग से सत्ता प्राप्त करने का प्रयास करते थे लेकिन इसमें उन्हें कभी सफलता नहीं मिली। इसके अलावा वे अब भी सैनिक विद्रोह को ही सत्ता प्राप्ति का एकमात्र साधन समझते थे। 1912 से 1924 तक सुन यातसेन की स्थिति कैंटन और क्वांगतुंग के एक क्षेत्रीय सामंत से अधिक नहीं थी। वे क्वोमिन्तांग को राष्ट्रीय स्तर का राजनीतिक आंदोलन बनाने में सक्षम नहीं हो सके थे।

जापानी साम्राज्यवाद की विस्तारवादी नीति के विरोध में 4 मई आंदोलन ने संपूर्ण चीन में एक वैचारिक क्रांति कर दी थी। 1917 और 1921 के बीच चीन में सांस्कृतिक और सामाजिक-राजनीतिक जागरण हुआ था जिसमें चीन के छात्रों तथा बुद्धिजीवियों ने महत्वपूर्ण योगदान किया था। जुलाई 1921 में जब कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना हुई तो उसके संस्थापकों और मूल सदस्यों में से बहुतों ने 4 मई आंदोलन में सक्रिय भाग लिया था। चेन तूश्यू, जो कम्युनिस्ट पार्टी के संस्थापकों में एक थे, 4 मई आंदोलन के भी प्रमुख नायक थे। इसलिए कम्युनिस्ट पार्टी जन्म से ही चीन के एक व्यापक जन आंदोलन से जुड़ी थी और उसी से उसका उद्भव हुआ था।

अपने जन्म के तुरंत बाद पार्टी के नेता और कार्यकर्ता चीन के बड़े नगरों में श्रमजीवी आंदोलन के प्रेरणा-सूत्र बन गए। कैंटन, शंघाई, वूहान इत्यादि शहरों में कम्युनिस्टों ने मजदूरों की यूनियनें स्थापित कीं। हांगकांग में भी कम्युनिस्ट पार्टी ने बंदरगाह पर काम करने वाले श्रमिकों की यूनियन बनाई जिसने जहाजों के मालिकों के खिलाफ सफल वर्ग संघर्ष किया। इसी प्रकार कम्युनिस्ट पार्टी ने रेल मजदूरों की एक लंबी हड़ताल का भी नेतृत्व किया।

गणतंत्र के संस्थापक के रूप में सुन यातसेन को सर्वोच्च राष्ट्रवादी नेता की प्रतिष्ठा प्राप्त थी तथा तुंग मेंग हुई के उत्तराधिकारी के रूप में और एक दशक से राष्ट्रीय संगठन के रूप में क्वोमिन्तांग को चीनी राष्ट्रवाद का प्रतीक माना जाता था। अर्ध-औपनिवेशिक, अर्ध-सामंती देश चीन में सबसे पहले राष्ट्रवादी और बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति को पूरा करने की जरूरत थी। राजनीतिक आंदोलन के अभाव में, इस बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति को क्रियान्वित करने में क्वोमिन्तांग सक्षम थी। इस स्थिति में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी का कर्तव्य था कि वह इस ऐतिहासिक कार्य को पूरा करे।

लेकिन कम्युनिस्ट पार्टी, जिसका जन्म तीन साल पहले हुआ था, इस महत्वपूर्ण ऐतिहासिक कार्य को अकेले नहीं कर सकती थी। उसे भी सुन यातसेन के नेतृत्व और क्वोमिन्तांग के सहयोग की जरूरत थी। उधर क्वोमिन्तांग को कम्युनिस्ट पार्टी के कर्मठ

कार्यकर्ताओं की जरूरत थी जो मजदूरों, किसानों और बुद्धिजीवियों को संगठित कर एक राष्ट्रव्यापी जन आंदोलन खड़ा कर सकें। युद्ध-सामंत चीन की राष्ट्रीय एकता में सबसे बड़े बाधक थे और जापान तथा अन्य साम्राज्यवादी शक्तियां इन युद्ध-सामंतों का अपने हितों के लिए उपयोग करती थीं। उदाहरणार्थ, मंचूरिया का युद्ध-सामंत चांग त्सोलिन जापान का एजेंट था। उसी प्रकार उत्तरी चीन का युद्ध-सामंत वू पेइफू ब्रिटेन का एजेंट था। युद्ध-सामंतों से लड़ने के लिए क्वोमिन्तांग को कम्युनिस्टों की आंदोलनकारी क्षमता की जरूरत थी और कम्युनिस्टों को क्वोमिन्तांग के नाम और नेतृत्व की आवश्यकता थी।

संयुक्त मोरचे की पृष्ठभूमि

चीनी साम्यवाद के प्रमुख स्रोत के रूप में 4 मई आंदोलन का विशेष महत्व है। विद्यार्थियों के नेतृत्व में शंघाई में विशाल प्रदर्शनों और विशाल आम हड़ताल ने, जिसका आयोजन पेकिंग के छात्र संगठनों के अनुरोध पर किया गया था, अनेक बुद्धिजीवियों को विश्वास दिला दिया कि चीन में क्रांति और पुनरुत्थान का एकमात्र रास्ता आम जनता से गठबंधन करना और उसके सहयोग से जन आंदोलन चलाना था। विद्यार्थी कालेजों और यूनिवर्सिटियों से फैक्टरियों और गांवों में जाकर मजदूरों और किसानों में राजनीतिक चेतना फैलाकर उनका संगठन करने लगे। अनेक दशक पहले रूसी छात्रों ने भी यही किया था।

चीनी साम्यवाद का दूसरा स्रोत रूस का अक्तूबर इनकलाब था। 1917 के पहले 'मार्क्सवाद' शब्द से भी बहुत लोग परिचित नहीं थे। इस क्रांति के कुछ महीने पहले ही 4 मई आंदोलन के प्रमुख नेता और कम्युनिस्ट पार्टी के भावी नेता ली ताचाओ ने कहा था कि रूस और चीन की क्रांतिकारी नियति समान है। 1919 तक चीन के विभिन्न भागों में मार्क्सवादी अध्ययन मंडलियां स्थापित हो गईं। 1924 तक मार्क्सवाद कम्युनिस्ट तथा गैर-कम्युनिस्ट हलकों में बुद्धिजीवियों के लिए बहस का एक लोकप्रिय विषय बन गया। शूरमान और शेल का कहना है :

> कोमिन्टर्न के चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के साथ सख्त व्यवहार के बावजूद, उसकी राजनीतिक सलाह से नुकसान होने पर भी, और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का उपयोग आंतरिक सोवियत उद्देश्यों के लिए किए जाने के बावजूद सोवियत और चीनी कम्युनिस्ट पार्टियों का संबंध जारी रहा, हालांकि उसमें शिथिलता आ गई।[3]

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना जुलाई 1921 में शंघाई में मार्क्सवादियों के एक छोटे से 'ग्रुप' ने की थी। उस समय वहां कोमिन्टर्न का प्रतिनिधि वाइतिंस्की भी मौजूद था। इस नवजात पार्टी के सामने अनेक समस्याएं थीं, जिनमें सबसे पहले अस्तित्व का सवाल था। उसके पास अभी संगठन नहीं था, धन नहीं था और अनुभव की कमी भी थी। संक्षेप में उसे मित्रों की तुरंत आवश्यकता थी।

इस समय चीन के विभिन्न क्षेत्रों में युद्ध-सामंतों का शासन था और उनके गुट पेकिंग की केंद्रीय सरकार पर प्रभुत्व के लिए आपस में लड़ते रहते थे। अब कम्युनिस्ट पार्टी इन प्रतिक्रियावादी तत्वों से तो दोस्ती या गठबंधन नहीं कर सकती थी। वे 'सामंती' वर्ग के प्रतिनिधि थे जिनसे युवा साम्यवादी घृणा करते थे। एकमात्र विकल्प सुन यातसेन थे जो क्वोमिन्तांग के एक संघर्षरत गुट का कैंटन में नेतृत्व कर रहे थे।

उन्होंने सुन यातसेन से संपर्क किया। उन्हें भी मित्रों की आवश्यकता थी। कम्युनिस्टों ने क्वोमिन्तांग से दोनों दलों के बीच गठबंधन का प्रस्ताव किया। शुरू में डॉ. सुन ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। जब विभिन्न कोमिन्टर्न सलाहकारों ने उन्हें बार-बार आश्वासन दिया कि वे 'कम्युनिज्म' के बारे में चिंता न करें क्योंकि 'सोवियत प्रणाली चोन की परिस्थितियों के लिए उपयुक्त नहीं थी।' तब डॉ. सुन ने अपने मत में परिवर्तन किया फिर भी वे पूर्णत: आश्वस्त नहीं हुए।

प्रस्तावित गठबंधन के बारे में केवल सुन यातसेन को ही शंका नहीं थी। कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य चेन तूश्यू को भी बहुत संदेह था कि क्वोमिन्तांग, जो एक बुर्जुआ पार्टी थी, क्या वास्तव में क्रांतिकारी हो सकती थी। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी बुर्जुआजी के साथ गठबंधन करने के बाद अपनी सर्वहारा वर्गीय पहचान कैसे सुरक्षित रख सकेगी? फिर कम्युनिस्ट पार्टी ऐसे विचित्र बुर्जुआ दोस्तों से जुड़कर अपने वर्ग संघर्ष के कार्यक्रम का संचालन कैसे कर सकेगी? ये कुछ ऐसे अंतर्विरोध थे जो युवा चीनी मार्क्सवादियों को दुविधा में डाल देते थे और सुन की शर्तों पर क्वोमिन्तांग में शामिल होने के बारे में उन्हें हिचक होती थी। शूरमान और शेल का कथन है :

> मास्को से संचालित कोमिन्टर्न की बात मानी गई और चेन की आपत्तियों की अवहेलना कर दी गई। मास्को ने दावा किया कि क्वोमिन्तांग क्रांतिकारी शक्ति है तथा युद्ध-सामंतों और साम्राज्यवादियों को निकाल बाहर करने के लिए समाजवादी क्रांति के पहले चरण में सहायक सिद्ध होगी।[4]

क्रांति के इस चरण को राष्ट्रीय क्रांति का नाम दिया गया अर्थात यह सर्वहारा वर्गीय क्रांति नहीं थी। इस मौके पर व्यावहारिक समझौते को सैद्धांतिक शुद्धता की तुलना में प्राथमिकता दी गई।

चेन के विचारों को भ्रामक चिंतन बताया गया। सुन यातसेन से वार्तालाप शुरू हुआ और जनवरी 1924 में दोनों दलों ने इस अस्वाभाविक गठबंधन की प्रक्रिया पूरी कर ली। सुन यातसेन ने घोषणा की, 'अगर चेन हमारे दल के आदेशों का उल्लंघन करता है तो उसको अपने पद से हटा दिया जाएगा।'[5] यह गठबंधन की शुरुआत में अपशकुन था लेकिन इससे कोमिन्टर्न की तात्कालिक प्राथमिकता का पता चलता है। उसकी नीति की विजय हुई और चीन की कम्युनिस्ट पार्टी को क्वोमिन्तांग से गठबंधन करने के लिए सहमत होना पड़ा।

हमने देखा कि कुछ कम्युनिस्ट नेता संयुक्त मोरचे में शामिल होने से हिचक रहे थे।

फिर सुन यातसेन उसके लिए अंत में सहमत क्यों हो गए? इसका प्रमुख कारण था कि पश्चिमी शक्तियों ने उन्हें पूर्णत: अकेला छोड़ दिया था। इसलिए वे मैत्री प्रस्ताव के प्रति रजामंद थे। इसलिए जब सोवियत संघ ने कहा कि वह क्वोमिन्तांग के शिथिल ढांचे को 'लेनिनवादी' आधार पर पुनर्गठित कर उसे सुदृढ़ और शक्तिशाली राष्ट्रीय दल में रूपांतरित कर देगा और सुन यातसेन की कैंटन स्थित सरकार को आधुनिक शस्त्रास्त्रों की आपूर्ति करेगा तो क्वोमिन्तांग के नेता को सोवियत प्रस्ताव बहुत ही आकर्षक लगा।

डॉ. सुन को इन परिस्थितियों में गठबंधन का प्रस्ताव बहुत लाभदायक मालूम हुआ। उन्हें आशा थी कि कम्युनिस्ट अगर व्यक्तिगत हैसियत से क्वोमिन्तांग में शामिल होंगे तो क्वोमिन्तांग पार्टी इनको अपने संगठन में जज्ब कर लेगी और वे अपनी साम्यवादी पहचान भूल जाएंगे। ऐसा कुछ कम्युनिस्टों के साथ वास्तव में हुआ भी और वे हमेशा के लिए क्वोमिन्तांग में घुल-मिल गए। चेन तूश्यू को इस बात की आशंका भी थी और उसका यह डर कुछ मामलों में सच भी साबित हुआ।

शूरमान और शेल एवं अन्य बुर्जुआ इतिहासकारों का कहना है कि दुर्भाग्य से सुन यातसेन मास्को के असली इरादों को भांप नहीं सके। जैसा स्तालिन ने बाद में कहा कि वह क्वोमिन्तांग को एक नींबू की तरह निचोड़ लेना चाहते थे और निचोड़ने के बाद उसे कूड़े में फेंक देना चाहते थे। रूस की नजर में क्वोमिन्तांग ताकत का एक महत्वपूर्ण ढांचा था और वह उसे काट-छांटकर मास्को की छवि के अनुरूप बदलना चाहता था। सयुंक्त मोरचे में निहित अंतर्विरोधों को समझने के लिए अधिक बुद्धि की जरूरत नहीं थी और बुर्जुआ लेखकों का मत है कि आवश्यकता पड़ने पर दोनों में कोई भी पक्ष निस्संकोच इस गठबंधन को तोड़ सकता था।

चेन तूश्यू और नवजागरण

गणतंत्रीय क्रांति के क्रांतिकारी बुद्धिजीवियों में चेन तूश्यू का नाम बहुत महत्वपूर्ण था। वे अन्हवेई प्रांत के एक मंदरिन परिवार में जन्मे थे। उन्होंने विद्रोह का काम बहुत गंभीरता से और बड़े साहस से लिया था। उनके साथ ऐसे लोग थे जो एक पीढ़ी तक चीन की भावी राजनीति में सक्रिय योगदान करने वाले थे और वर्ग संघर्ष की रणभूमि में सेनाओं का नेतृत्व करने वाले थे। चेन तूश्यू ने घोषणा की कि नई पीढ़ी का कार्य, 'कन्फ्यूशियनवाद, सदाचार और संस्कारों की प्राचीन परंपरा, पुरानी नैतिकता और पुरानी राजनीति के विरुद्ध संघर्ष करना था....पुराने ज्ञान और पुराने साहित्य को अस्वीकार करना था।'[6]

इनके स्थान पर वे आधुनिक लोकतांत्रिक राजनीतिक चिंतन और प्राकृतिक विज्ञान का विकास करना चाहते थे। संक्षेप में, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का यह भावी नेता और विचारक उन आदर्शों का प्रचार कर रहा था, जिन्हें क्वोमिन्तांग के प्रगतिशील तत्व भी पहले संयुक्त मोरचे के दौरान स्वीकार कर सकते थे। चेन तूश्यू ने कहा :

> हमें अपने पुराने पूर्वग्रहों, यथास्थिति में विश्वास के पुराने तरीके को, छोड़ देना चाहिए, तभी हम सामाजिक प्रगति कर सकते हैं। हमें अपने पुराने तौर-तरीकों को छोड़ देना चाहिए। हमें इतिहास के महान विचारकों....के विचारों को अपने अनुभव के संदर्भ में ग्रहण करना चाहिए और राजनीति, नैतिकता तथा आर्थिक जीवन के लिए नए विचारों का सृजन करना चाहिए।....हमारा आदर्श समाज ईमानदार, प्रगतिशील, सकारात्मक, स्वतंत्र, समतावादी, सृजनात्मक, सुंदर, अच्छा, शांतिपूर्ण, सहयोग पर आधारित, श्रमसाध्य किंतु बहुसंख्यकों के लिए सुखमय होगा। हम चाहते हैं कि यह संसार, जो झूठा, रूढ़िवादी, नकारात्मक, संकुचित, अन्यायपूर्ण, जड़, कुरूप, पापयुक्त, युद्ध से जर्जर, क्रूर, आलस्यपूर्ण, अधिकांश लोगों के लिए कष्टमय है, वह ध्वस्त हो जाए और हमारी नजर से ओझल हो जाए।[7]

यह दूसरी चीनी क्रांति का घोषणापत्र था जिसे पहले संयुक्त मोरचे के दौरान सुन यातसेन की क्वोमिन्तांग और चेन तूश्यू की कम्युनिस्ट पार्टी ने पूरा करने का दायित्व संभाला था। साम्राज्यवाद और युद्ध-सामंतों से संघर्ष करने के लिए और उन पर विजय पाने के लिए क्रांतिकारी आंदोलन को उन सभी आदर्शों को अमल में लाने की आवश्यकता थी, जिनका 4 मई आंदोलन और नवजागरण ने प्रतिपादन और प्रचार किया था। संयुक्त मोरचे का कार्यभार था कि भविष्य में क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी दोनों चीन के राजनीतिक एकीकरण के लिए और उसकी राजनीतिक संप्रभुता को पुनः स्थापित करने के लिए सुन यातसेन के तीन सिद्धांतों—राष्ट्रवाद, लोकतंत्र और जनता की आजीविका—को एवं चेन तूश्यू द्वारा प्रतिपादित नवजागरण के आदर्शों को राष्ट्रीय स्तर पर प्रसारित और क्रियान्वित करने का प्रयास करेंगी।

संयुक्त मोरचे की शुरुआत

पेइचिंग-हैंकाऊ रेलवे कर्मचारियों की हड़ताल की असफलता से कम्युनिस्ट पार्टी ने समझ लिया कि अर्ध-सामंती और अर्ध-औपनिवेशिक चीन में मजदूर वर्ग निश्चित रूप से क्रांतिकारी होने के बावजूद अकेला ही क्रांति नहीं कर सकता था :

> क्रांति की विजय को सुनिश्चित करने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी के पास एकमात्र उपाय यह था कि वह यथासंभव व्यापकतम संयुक्त मोरचे का निर्माण करे। किसान जनता स्वाभाविक रूप से मजदूर वर्ग की सबसे ज्यादा विश्वस्त सहयोगी थी। राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग और शहरी निम्न बुर्जुआ वर्ग भी संयुक्त मोरचे के भागीदार बन सकते थे क्योंकि उन्होंने भी साम्राज्यवादी और सामंतवादी उत्पीड़न का अनुभव किया था। इन वर्गों का गठबंधन चीनी राष्ट्रीय लोकतांत्रिक क्रांति का महत्वपूर्ण आधार बन सकता था। इस निर्णय के आधार पर कम्युनिस्ट पार्टी ने क्वोमिन्तांग से गठबंधन करने का निश्चय किया।[8]

सुन यातसेन के नेतृत्व में क्वोमिन्तांग बुर्जुआ तथा निम्न बुर्जुआ वर्ग का प्रतिनिधित्व करती थी। पिछले वर्षों में कई विफलताओं के कारण वह उस समय बहुत कमजोर हो गई थी। इसके अलावा, इसके सदस्यों की सामाजिक पृष्ठभूमि विविध प्रकार की थी और वे जनता के संपर्क में नहीं थे। फिर भी क्वोमिन्तांग की ताकत की उपेक्षा नहीं की जा सकती थी। सुन यातसेन 1911 की क्रांति के प्रमुख नेता थे जिसने छिंग राजवंश के उन्मूलन के बाद चीनी गणराज्य की स्थापना की थी। क्वामिन्तांग को इस क्रांति का श्रेय दिया जाता था।

उसके बाद सुन यातसेन कठिन परिस्थितियों में भी साम्राज्यवादियों और युद्ध सामंतों के विरुद्ध संघर्ष करते रहे थे। इसलिए वे राष्ट्रीय लोकतांत्रिक क्रांति के प्रतीक बन गए थे। दूसरी बात यह थी कि क्वोमिन्तांग ने एक महत्वपूर्ण क्रांतिकारी क्षेत्र दक्षिणी चीन में पहले से स्थापित कर रखा था। फरवरी 1923 में सुन यातसेन के प्रति वफादार सेनाओं ने जनरल चेन च्योंगमिंग को जिसने सुन के साथ विश्वासघात किया था, क्वांगचू के बाहर खदेड़ दिया था। उसके बाद सुन यातसेन शंघाई से क्वांगतुंग प्रांत में वापस आए और वहां उन्होंने अपना मुख्यालय बनाया और जनरलीसिमो के रूप में सेना और नौसेना की कमान संभाल ली।

सुन यातसेन ने समृद्ध पर्ल नदी डेल्टा और मध्यवर्ती क्वांगतुंग पर भी नियंत्रण स्थापित कर लिया और उनके पास लगभग एक लाख सैनिक हो गए। हालांकि इन सेनाओं की कमान स्थानीय युद्ध-सामंतों के हाथ में थी, लेकिन वे सुन सरकार द्वारा नियंत्रित क्षेत्रों में क्रांतिकारी शक्तियों को खुले रूप से सक्रिय रहने की अनुमति देते थे।

कई बार असफल होने पर, सुन यातसेन को यह पता चल गया कि क्वोमिन्तांग के अनेक सदस्य भ्रष्टाचार में लिप्त थे और इसलिए चीनी क्रांति के लिए नई कार्यनीतियों की आवश्यकता है। अत: उन्होंने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी से संपर्क स्थापित किया। वे कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों को वैयक्तिक रूप से क्वोमिन्तांग में शामिल करने के पक्ष में थे। जब डॉ. सुन की पत्नी सुंग चिंग लिंग ने पूछा, 'हमें कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों को क्वोमिन्तांग में शामिल करने की क्या जरूरत है?' तो डॉ. सुन ने जवाब दिया, 'क्वोमिन्तांग पतन के गड्ढे में गिर रही है; उसकी रक्षा करने के लिए हमें उसमें नए रक्त का संचार करना होगा।'[9]

वस्तुत: चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की दूसरी राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1922 में निर्णय कर लिया था कि क्वोमिन्तांग के साथ वह अंतर्दलीय सहयोग स्थापित करने की कोशिश करेगी। कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के प्रतिनिधि जी मारिंग ने भी इसका समर्थन किया था। जून 1923 में पार्टी की तीसरी राष्ट्रीय कांग्रेस ने संयुक्त मोरचे की नीतियों और पद्धतियों के बारे में औपचारिक निर्णय कर लिया।

संयुक्त मोरचे ने दोनों पार्टियों को चीनी क्रांति को विकसित करने और आगे बढ़ाने का मौका दिया। इस प्रकार कम्युनिस्ट पार्टी क्वोमिन्तांग की नीतियों को प्रभावित कर सकी और उसके सदस्यों को क्रांति में भाग लेने के लिए तैयार कर सकी। इसके अतिरिक्त, क्वोमिन्तांग संगठनों का लाभ उठाकर, कम्युनिस्टों ने मजदूरों और किसानों को राष्ट्रीय

लोकतांत्रिक क्रांति में भाग लेने के लिए संगठित किया। संयुक्त मोरचे ने कम्युनिस्ट पार्टी को अधिक विस्तृत क्षेत्रों में और व्यापक पैमाने पर सक्रिय होने का अवसर दिया।

कम्युनिस्ट पार्टी ने यह बात स्पष्ट कर दी थी कि वह पार्टी के रूप में अपनी राजनीतिक, वैचारिक और सांगठनिक स्वतंत्रता कायम रखेगी। वह किसानों और श्रमिकों के वर्गीय अधिकारों की रक्षा के लिए संघर्ष जारी रखेगी लेकिन राष्ट्रीय क्रांति में भाग लेने के लिए उन्हें उत्साहित करना पार्टी का पहला कर्तव्य होगा :

> तथापि, कांग्रेस कुछ मामलों में सही नहीं थी। उदाहरण के लिए, उसने यह नहीं बताया कि लोकतांत्रिक क्रांति श्रमिक वर्ग के नेतृत्व में होनी चाहिए। उसने कहा कि क्वोमिन्तांग राष्ट्रीय क्रांति में मुख्य भूमिका निभाएगी और उसे नेतृत्व का भार देना चाहिए। इसके अलावा, कांग्रेस क्वोमिन्तांग की आंतरिक परिस्थिति का सही मूल्यांकन न कर सकी और इस बात का अनुमान न लगा सकी कि क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी के संबंधों में आगामी वर्षों में बदलाव आ सकता था।....ये निर्णय शुरुआती चरण में पार्टी की अनुभवहीनता तथा अपरिपक्वता के उदाहरण थे।[10]

डॉ. सुन ने मिखाइल मार्कोविच बोरोडिन को अपना राजनीतिक सलाहकार नियुक्त किया। उन्होंने च्यांग काई शेक को एक पत्र में लिखा, 'हमारी पार्टी की क्रांति रूस के पथ-प्रदर्शन के बिना कभी सफल नहीं होगी।'[11] जनवरी 1924 में कैंटन में क्वोमिन्तांग की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस डॉ. सुन की अध्यक्षता में हुई, जिसमें 165 प्रतिनिधि उपस्थिति थे। इनमें 20 से अधिक प्रतिनिधि कम्युनिस्ट थे। इनमें कुछ के नाम हैं : ली ताचाओ, थान फिंग शान, लिन त्सूहान, चांग क्वोताओ, छू छिउपाई और माओ त्सेतुंग। ली ताचाओ को कांग्रेस के अध्यक्ष मंडल में चुना गया और थान फिंगशान ने क्वोमिन्तांग की अस्थायी केंद्रीय समिति की ओर से कार्य रिपोर्ट पढ़ी।

केंद्रीय समिति में सुन यातसेन ने दस कम्युनिस्टों को सदस्य या वैकल्पिक सदस्य नियुक्त किया था जिनमें ली ताचाओ और माओ त्सेतुंग शामिल थे। क्वोमिन्तांग के मुख्यालय में तीन कम्युनिस्ट महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त थे। माओ त्सेतुंग, थान फिंगशान और लिन त्सूहान क्रमश: प्रचार विभाग, संगठन विभाग और कृषक विभाग के निदेशक थे। क्वोमिन्तांग की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस ने क्वोमिन्ताग और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच भावी सहयोग की बुनियाद रखी। संयुक्त मोरचे के आधार पर कम्युनिस्ट पार्टी के कर्मठ कार्यकर्ताओं ने क्वोमिन्तांग के संगठन को महान राष्ट्रीय क्रांति के संचालन के लिए तैयार किया। कम्युनिस्टों के प्रयास से क्वोमिन्तांग की शाखाएं लगभग सारे देश में फैल गईं।

क्वोमिन्तांग सेना का उत्तरी अभियान

इस संदर्भ में अपने विचार व्यक्त करते हुए हैरल्ड आइजाक्स ने कहा है :

> क्वोमिन्तांग का रूपांतरण रूसी बोल्शेविक पार्टी की एक भद्दी नकल हो गया। आंदोलन और प्रचार के बोल्शेविक तौर-तरीके शुरू हुए। क्वामिन्तांग विचारों पर आधारित सेना के निर्माण के लिए और पुरानी शैली के सैन्यवादियों पर पूर्ववर्ती निर्भरता समाप्त करने के लिए, रूसियों ने 1924 की मई में व्हाम्पोआ मिलिटरी अकादमी की स्थापना की। अकादमी का संचालन रूसी वित्तीय सहायता और रूसी सैनिक सलाहकारों के सहयोग से हुआ। शीघ्र ही कैंटन बंदरगाह में रूसी हथियारों को लेकर जहाज आने लगे और क्वोमिन्तांग सेना की शक्ति बढ़ने लगी।[12]

उधर चीन की कम्युनिस्ट पार्टी, जिसने क्वोमिन्तांग के नए आंदोलन को रंग-रूप दिया था, क्वोमिन्तांग के पुनर्निर्माण और उसके कार्यक्रम के प्रचार में जुटी रही। उसके सदस्य परिश्रमी पार्टी कार्यकर्ता थे लेकिन वे कम्युनिस्टों के रूप में सक्रिय नहीं थे और न कहीं पार्टी के प्रोग्राम का प्रचार करते थे। आइजाक्स के शब्दों में :

> कम्युनिस्ट पार्टी तथ्यत: और तत्वत: अपने कार्य तथा अपने सदस्यों की शिक्षण पद्धति में क्वोमिन्तांग का वामपंथी पुछल्ला बन गई। फिर भी प्रारंभिक दौर में, यह बात जन आंदोलन की आश्चर्यजनक वृद्धि में छिप गई। न तो कम्युनिस्टों की कार्यनीति ने और न ही क्वोमिन्तांग की जरूरतों ने जन आंदोलन को जन्म दिया। उसके स्रोत, चट्टान में छिपे लोहे की तरह, चीन के जनजीवन में निहित थे।[13]

क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी के सहयोग से एक क्रांतिकारी सेना का निर्माण संभव हो सका। चोउ एनलाई, यूरोप से लौटने के बाद सैनिक अकादमी के राजनीतिक विभाग के निदेशक नियुक्त हुए। सुन यातसेन ने च्यांग काई शेक को सैनिक प्रशिक्षण के लिए सोवियत रूस भेजा। रूस से लौटने पर डॉ. सुन ने च्यांग को क्वांगतुंग सेना का 'चीफ आफ स्टाफ' नियुक्त कर दिया। चोउ एनलाई तथा अन्य कम्युनिस्टों ने कैंटन की क्रांतिकारी सेना की सभी सैनिक 'यूनिटों' में देशभक्ति का जोश भरने की कोशिश की। माओ त्सेतुंग का मत है :

> 1924–27 में क्वोमिन्तांग सेनाओं की भावना आठवीं रूट आर्मी जैसी थी....इन सैन्य बलों में एक नया उत्साह था; अफसरों और सिपाहियों के बीच और सेना तथा जनता के बीच एकता थी और फौजी जवानों के दिलों में क्रांतिकारी जोश था। दलगत प्रतिनिधियों और राजनीतिक विभागों की प्रणाली ने, जिसे चीन में पहली बार लागू किया गया था, सैन्य बलों के चरित्र को पूर्णत: बदल दिया था।[14]

जून 1924 में क्वोमिन्तांग के दक्षिणपंथियों ने कम्युनिस्ट पार्टी के विरुद्ध क्वोमिन्तांग की केंद्रीय कार्यकारिणी समिति में महाभियोग का प्रस्ताव रखा जिसे डॉ. सुन यातसेन ने 20 अगस्त की बैठक में अस्वीकार कर दिया। उन्होंने निर्देश जारी किया :

> यह कहना गलत है कि कम्युनिस्टों के प्रवेश के कारण हमारी पार्टी की विचारधारा

> बदल गई है....यह डर भी बेबुनियाद है कि कम्युनिस्टों की वजह से हमारी पार्टी में फूट पड़ जाएगी।[15]

जनवरी 1925 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की चौथी कांग्रेस हुई। कांग्रेस ने तय किया :

1. राष्ट्रीय क्रांतिकारी आंदोलन सर्वहारा वर्ग की भागीदारी के बिना सफल नहीं होगा;
2. क्रांति की सफलता के लिए किसानों और मजदूरों का गठबंधन जरूरी है; और
3. अंतर्राष्ट्रीय साम्राज्यवाद के विरोध के साथ-साथ सामंती राजनीति और आर्थिक संबंधों के विरुद्ध संघर्ष भी आवश्यक है।

इस कांग्रेस के बाद जल्दी ही सुन यातसेन की मृत्यु कैंसर से हो गई। अपने वसीयतनामे में उन्होंने लिखा :

> मैंने 40 साल तक राष्ट्रीय क्रांति और चीन की स्वाधीनता तथा समानता के लिए संघर्ष किया है। मेरे अनुभव ने मुझे विश्वास दिलाया है कि इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें जनता में जागृति फैलानी चाहिए और विश्व के उन राष्ट्रों के साथ एकजुट होकर संघर्ष करना चाहिए जो हमारे साथ समानता का व्यवहार करते हैं।[16]

डॉ. सुन का विश्वास था कि सोवियत संघ पहला राष्ट्र था जो चीन को बराबरी का दर्जा देता था और जनता में चेतना फैलाने के लिए कम्युनिस्टों, किसानों और श्रमिकों से सहयोग करना आवश्यक था। डॉ. सुन के असमय देहांत का शोक दोनों दलों ने राष्ट्रीय स्तर पर मनाया।

क्वोमिन्तांग सेना के उत्तरी अभियान का उद्देश्य उत्तर के युद्ध-सामंतों को पराजित करना था। एक दशक से वे अंतर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त केंद्रीय सरकार पर नियंत्रण रखे हुए थे और अपार वित्तीय तथा भौतिक संपत्ति के मालिक थे। उनके पास 7,00,000 सैनिक थे और क्वोमिन्तांग के पास केवल 1,00,000 सैनिक थे। अत: क्रांतिकारी सेना की रणनीति थी कि वह इन युद्ध-सामंतों की फौजों से अलग-अलग लड़े और उन्हें हराए। पहले उसने हुनान और हूपे में वू पेईफू की मुख्य सेना को हराया। उसने चांग त्सोलिन और सुन च्वांग फांग को कुछ समय के लिए तटस्थ रखा। 9 जुलाई 1926 को उत्तरी अभियान औपचारिक रूप से शुरू हुआ और चौथी तथा सातवीं सेनाओं की मदद से उसने चांगशा पर अधिकार कर लिया।

उत्तरी अभियान को जनता का व्यापक समर्थन मिला। कम्युनिस्ट पार्टी ने हुनान और हूपे में क्रांतिकारी कार्य द्वारा किसानों और मजदूरों को सेना की सहायता के लिए संगठित किया। इसके बाद इस सेना ने वू पेईफू की अन्य सेनाओं को हराकर क्रमश: वूहान, हानयांग और हैंकाऊ पर कब्जा कर लिया। तदुपरांत सुन च्वांग फांग की बड़ी सेना को हराकर क्रांतिकारी सेना ने चियांगशी में प्रवेश किया और नानचांग पर अधिकार कर लिया। प्रत्याक्रमण द्वारा सुन च्वांग फांग ने च्यांग काई शेक की कमान वाली क्वोमिन्तांग फौज को

हराकर नानचांग को फिर जीत लिया। नवंबर में क्रांतिकारी सेना ने नानचांग-च्यूनियांग रेलमार्ग पर जवाबी हमला किया और सुन च्वांग फांग की मुख्य सेना को नष्ट कर दिया। इस जीत ने सैनिक संतुलन को बिलकुल बदल दिया। उसके बाद दिसंबर में क्रांतिकारी सेना ने फूचाऊ शहर पर अधिकार कर लिया।

इसी समय फेंग यूथयांग की राष्ट्रीय सेना ने सोवियत रूस और कम्युनिस्ट पार्टी के सहयोग से उत्तर में शांशी और कांसू प्रांतों को जीत लिया। फेंग क्वोमिन्तांग में शामिल हो गया। इस प्रकार केवल छह महीनों में क्रांतिकारी सेना ने अभूतपूर्व प्रगति की। 1926 के अंत तक उसने वू पेईफू और सुन च्वांग फांग की विशाल सेनाओं को हराकर च्यांग्सू, चेकियांग और आन्हुई प्रांतों के अलावा लगभग संपूर्ण दक्षिणी चीन पर कब्जा कर लिया। उधर फेंग यूथ्यांग की राष्ट्रीय सेना ने उत्तर-पश्चिमी प्रांतों पर अधिकार कर लिया और उत्तरी अभियान में क्रांतिकारी सेना से सहयोग की तैयारी शुरू कर दी।

चीनी जनता ने समझ लिया कि अब कुछ ही समय में चीन में युद्ध- सामंतों के भ्रष्ट और अत्याचारी शासन तंत्र का अंत हो जाएगा। जिन प्रांतों पर अभी उनका शासन कायम था, वहां भी लोग क्रांतिकारी सेना के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। उत्तरी अभियान के दौरान शुरुआती दौर में क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टियों के बीच कुछ अंतर्विरोध उभरे थे लेकिन शक्तिशाली साझे शत्रु से लड़ते समय क्वोमिन्तांग के कम्युनिस्ट विरोधी तत्व अस्थायी रूप से निष्क्रिय हो गए और उनका गठबंधन जारी रहा। दोनों दलों के सहयोग से उत्तरी अभियान की सेनाओं ने थोड़े समय में अभूतपूर्व विजय प्राप्त की थी।

हुनान, हूपे और चियांग्शी प्रांतों में किसान आंदोलन तेज हो रहा था। माओ त्सेतुंग ने कहा था :

> किसानों का मुद्दा राष्ट्रीय क्रांति का केंद्रीय मुद्दा है।...तथाकथित राष्ट्रीय क्रांतिकारी आंदोलन का अधिकांश किसान आंदोलन है। जब तक किसान पितृसत्ताक सामंती भूस्वामी वर्ग के विशेषाधिकारों के उन्मूलन के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में विद्रोह नहीं करते, युद्ध-सामंती और साम्राज्यवादी शक्तियों को हराया नहीं जा सकता।[17]

जब हुनान, हूपे और चियांग्शी में जन आंदोलन आगे बढ़ रहा था तो कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति और शीर्षस्थ संस्थाएं क्रांति के रंगमंच से दूर शंघाई में स्थित थीं। वे इन क्रांतिकारी परिवर्तनों को ठीक से समझ नहीं सकीं। उन्होंने जन आंदोलनों के लिए कोई पहल नहीं की और उत्तरी अभियान की सफलता मुख्यत: सेना की विजयों में निहित थी। पार्टी नेतृत्व ने भारी गलती की। माओ त्सेतुंग का मत था, 'उत्तरी अभियान के समय, उसने सेना का दिल जीतने का प्रयास नहीं किया और जन आंदोलन पर एकतरफा बल दिया।'[18]

उत्तरी अभियान की प्रगति के साथ-साथ च्यांग काई शेक ने सैनिक और राजनीतिक सत्ता पर अपनी पकड़ मजबूत कर ली। कम्युनिस्टों ने परिस्थिति का लाभ उठाकर कुछ सैनिक 'यूनिटों' को या स्थानीय प्रशासनिक संस्थाओं को अपने नियंत्रण में नहीं लिया। चेन तूश्यू ने हूपे क्षेत्र की पार्टी कमेटी को ओदश दिया, 'अब हम अपनी मानव-शक्ति का

उपयोग एकमात्र जनकार्य के लिए करेंगे, हमें सरकारी काम में कभी भाग नहीं लेना चाहिए।'[19] कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा शासन और सेना से जान-बूझकर अपने काडरों को अलग कर लेना आत्मघाती साबित हुआ। तूश्यू की दक्षिणपंथी विचलन की नीति ने पार्टी को च्यांग द्वारा क्रांति के साथ विश्वासघात के मौके पर बिलकुल असुरक्षित छोड़ दिया।

च्यांग काई शेक की शंघाई में प्रतिक्रांति

क्रांतिकारी सेना की सफलताओं को देखकर, च्यांग काई शेक के प्रति साम्राज्यवादी शक्तियों के दृष्टिकोण में परिवर्तन हो गया। उन्हें आशा नहीं थी कि उत्तर के युद्ध-सामंत इतनी जल्दी हार जाएंगे। इसलिए वे चीनी क्रांति में हस्तक्षेप करने के लिए तैयार थे। यांगत्सी घाटी में केंद्रित अंग्रेजों के विशेषाधिकार सबसे अधिक थे। जब क्रांतिकारी सेना ने हूपे में प्रवेश किया तो ब्रिटिश युद्धपातों ने सिचुआन प्रांत में वानशियन शहर पर तोपों से गोलाबारी की। इस वानशियन हत्याकांड में एक हजार से ज्यादा सैनिक और नागरिक मारे गए।

यांगत्सी नदी में 63 विदेशी युद्धपोतों को तैनात कर दिया गया। शंघाई में बीस हजार से अधिक विदेशी सैनिकों को लामबंद किया गया। शंघाई में विदेशियों की कुल संख्या तीस हजार से अधिक थी। विदेशी शक्तियां हिंसा और धमकियों द्वारा चीनी क्रांति की बढ़त को रोकने की साजिश कर रही थीं। यह समझकर कि युद्ध-सामंतों का पतन अनिवार्य है, वे क्रांतिकारी शिविर में फूट डालने की कोशिश में जुट गईं। 1926 के अंत में जापानी विदेश मंत्रालय का एक निदेशक नानचांग में च्यांग काई शेक से मिला और उसने जापानी सरकार को बताया कि वूहान और नानचांग नेताओं के बीच गहरे अंतर्विरोध हैं।

जनवरी 1927 में च्यांग ने जापानी वाणिज्य दूत को बताया कि वह असमान संधियों का उन्मूलन न कर उनका पूरा सम्मान करेगा। वह विदेशी ऋणों का भी निश्चित अवधि में भुगतान करेगा। संक्षेप में, चीन में विदेशियों के सभी विशेषाधिकारों की रक्षा की जाएगी। इस प्रकार साम्राज्यवादी शक्तियों ने समझ लिया कि च्यांग काई शेक क्वोमिन्तांग के 'नरम' गुट का नेता था। वे उसके गुट को समर्थन देने लगे और समझ गए कि च्यांग का गुट ही यांगत्सी नदी के दक्षिणी प्रांतों पर कम्युनिस्टों के संभावित आधिपत्य को रोक सकता है।

च्यांग काई शेक की सेना के शंघाई पहुंचने से पहले उत्तरी युद्ध-सामंतों और स्थानीय युद्ध-सामंतों के अनेक सैन्य बलों को क्वोमिन्तांग सेना में शामिल कर लिया गया। इस प्रकार उसकी शक्ति बहुत बढ़ गई। उत्तर से बहुत से राजनीतिज्ञ और अधिकारी भी आकर च्यांग के प्रशासन में शामिल हो गए। इनमें एक प्रशासक हुआंग फू भी था जो शंघाई स्थित बैंक आफ चाइना के वाइस प्रेसीडेंट चांग कुंगछुआन का घनिष्ठ मित्र था। चांग ने च्यांग काई शेक को अनुमति दी थी कि वह अपने खाते में दस लाख युआन का 'ओवरड्राफ्ट'

कर सकता है। इस घटना ने एक लोकोक्ति को जन्म दिया, 'सेना में उत्तरी अभियान है जबकि राजनीति में दक्षिणी अभियान है।'[20]

इस पृष्ठभूमि में, च्यांग काई शेक का कम्युनिस्ट विरोधी दृष्टिकोण स्पष्ट होने लगा। उसने राष्ट्रीय सरकार को कैंटन से नानचांग ले जाने का प्रस्ताव किया। 21 फरवरी को उसने नानचांग मुख्यालय से कम्युनिस्ट विरोधी वक्तव्य दिया। उसने घोषणा की कि वह 'चीनी क्रांति का नेता' है और 'जब कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य गलत काम या दुर्व्यवहार करेंगे तो वह हस्तक्षेप कर उन्हें दंडित कर सकता है।'[21] वह खुलकर कम्युनिस्टों का दमन करने लगा। 6 मार्च को उसने चियांगशी ट्रेड यूनियन संघ के उपाध्यक्ष और कैंटन ट्रेड यूनियन संघ के अध्यक्ष, कम्युनिस्ट नेता चेन त्सानशियन की हत्या के आदेश मेना को दिए।

इस समय क्वोमिन्तांग के अधिकांश नेता च्यांग काई शेक की तानाशाही का विरोध करते थे। उन्होंने राजधानी के स्थानातंरण के बारे में च्यांग के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। उन्होंने च्यांग काई शेक को क्वोमिन्तांग की केंद्रीय कार्यकारिणी समिति की स्थायी समिति की अध्यक्षता से हटा दिया। परंतु इसका कुछ असर नहीं हुआ क्योंकि च्यांग का अधिकांश सैन्य बलों पर नियंत्रण था। कम्युनिस्टों के दमन-चक्र में कोई ढील नहीं हुई। किसान संघों और श्रमिक संघों पर च्यांग काई शेक के सैनिकों और गुंडों ने अपने हमले तेज कर दिए। क्रांतिकारी सेना के राजनीतिक विभाग के उपनिदेशक क्वो मोरो ने लिखा :

> आज के च्यांग काई शेक को देखो। वह अब राष्ट्रीय क्रांतिकारी सेना का मुख्य सेनापति नहीं रह गया है। वह अब प्रतिक्रांतिकारियों, ठगों, गुंडों, अत्याचारियों, दुष्ट भूस्वामियों, भ्रष्ट अधिकारियों और देशद्रोही युद्ध-सामंतों के व्यापक वर्ग की केंद्रीय शक्ति बन गया है।...क्वोमिन्तांग के अंदर रहते हुए वह बाहरी दुश्मनों की अपेक्षा अधिक खतरनाक है।[22]

21 मार्च 1927 को जब क्वोमिन्तांग सेना चेकियांग से शंघाई के उपनगरों में दाखिल हो रही थी, तो शंघाई के श्रमिकों ने चेन तूश्यू, लुओ यीनुंग, चोउ एनलाई, चाओ शियान आदि के नेतृत्व में आम हड़ताल और सशस्त्र विद्रोह कर दिया। तीस घंटों के संघर्ष के बाद उन्होंने शंघाई स्थित युद्ध-सामंती सेना को हराकर, विदेशी कंमेशन क्षेत्रों को छोड़कर, संपूर्ण शंघाई शहर पर कब्जा कर लिया।

जब विजयी श्रमिकों ने शंघाई पर कब्जा कर लिया तो उत्तरी अभियान की मेना, पाई चुंगशी की कमान में, शंघाई नगर में दाखिल हुई। 24 मई को राष्ट्रीय क्रांतिकारी सेना ने नानचिंग पर अधिकार कर लिया। उस दिन ब्रिटिश तथा अमरीकी युद्धपोतों ने अपने नागरिकों की सुरक्षा के बहाने यांगत्सी नदी से नानचिंग शहर पर बम बरसाए। अनेक चीनी सैनिक और नागरिक घायल हुए। नानचिंग घटना ने च्यांग काई शेक को प्रेरित किया कि वह शीघ्र ही अपने हित में साम्राज्यवादी शक्तियों से समझौता और गठबंधन कर ले।

12 अप्रैल 1927 को सुबह चार बजे च्यांग काई शेक की सेना ने प्रतिक्रांति का बिगुल बजा दिया। चारों तरफ से मजदूरों की बस्तियों पर मशीनगनों से च्यांग की फौज ने

गोलाबारी शुरू कर दी। चीनी और विदेशी हाकिमों को आधी रात में ही इस हमले की जानकारी दे दी गई। सिर्फ मजदूर ही इस अचानक हमले से चौंक गए। जिस मुक्ति सेना का स्वागत करने के लिए शंघाई के श्रमिक, छात्र और कम्युनिस्ट कार्यकर्ता इतने दिनों से प्रतीक्षा कर रहे थे, उसी ने उन पर अचानक हमला बोल दिया था।

शंघाई के छिपे हुए गुंडों ने अचानक क्वोमिन्तांग के बिल्ले लगाकर 'श्रमिक स्वयंसेवक' या 'व्यापारी स्वंयसेवक' बनकर 'कम्युनिस्टों', छात्रों और श्रमिकों की हत्याएं करना शुरू कर दिया। सशस्त्र क्रांतिकारियों, मजदूरों और छात्रों के हथियार छीन लिए गए। छल और बल द्वारा गुरिल्ला सैनिकों को निरस्त्र कर दिया गया और मार दिया गया। दोपहर को कम्युनिस्ट प्रेस की इमारत पर आक्रमण किया गया। उसे घेरकर वहां सभी कम्युनिस्ट नेताओं को पकड़कर जान से मार देने की योजना बनाई गई। रक्षकों ने मृत्युपर्यंत युद्ध किया।

प्रतिक्रांति में हजारों मजदूर, छात्र, गुरिल्ला सैनिक और पार्टी कार्यकर्ता मारे गए और घायल हुए। लाशों के ढेर ट्रकों में भरकर दूर ले जाकर नदी में फेंक दिए गए या जमीन में गाड़ दिए गए। गुंडों के नेता, चांग श्याओलिन को पाई चुंगशी की सेना का राजनीतिक निदेशक नियुक्त किया गया। उसने कहा, 'जब श्रमिक विनाशक तत्व बन जाते हैं और कानून और व्यवस्था को तोड़ने लगते हैं, तो मजदूरों को अनुशासन सिखाना जरूरी हो जाता है।'[23]

परंतु शंघाई में लेबर यूनियन तथा अन्य कम्युनिस्ट संस्थाओं का अस्तित्व अभी खत्म नहीं हुआ था। उनके प्रदर्शन हो रहे थे और प्रदर्शनकारियों पर क्वोमिन्तांग सेना गोलियां चला रही थी। स्त्रियों और बच्चों को घरों से बाहर खींचकर मारा जा रहा था। सारे नगर में आतंक था और इस आतंककारी शासन में विदेशी सेनाओं की प्रत्यक्ष भागीदारी थी। 14 अप्रैल की रात में ब्रिटिश सशस्त्र वाहनों और जापानी नौ सैनिक दस्तों ने चीनी क्षेत्र में उत्तर सिचुआन मार्ग पर हमला किया। पहले आतंकवादी सैनिक प्रशासन ने कम्युनिस्टों और श्रमिकों को कुचला। उसके बाद चीनी बुर्जुआ वर्ग के घरों पर हमले हुए और व्यापारियों और उद्योगपतियों से धन की वसूली की गई। यह लुंपन फासीवादी सफेद आतंक का एक उदाहरण था।

फ्रांसीसी बुर्जुआ वर्ग ने 1852 में 'लुंपन सर्वहारा वर्ग को, आवारा और फटेहाल लोगों को, जिनका मुखिया दस दिसंबरी सोसायटी का प्रधान था, सत्ता में बिठाया था'। उसी प्रकार चीनी बुर्जुआ वर्ग ने भी 1927 में शहरों के गुंडों और लोफरों को अपने सिर पर बिठा लिया, जिनके प्रधान 'ग्रीन गैंग' के बास थे और उनका सरदार च्यांग काई शेक था जिसे कभी-कभी निंगपो नेपोलियन कहते थे। अपने फ्रांसीसी संस्करण की तरह, चीनी बुर्जुआजी को भी पेशेवर सेवाओं की भारी कीमत चुकानी पड़ी।

लुई नेपोलियन के बारे में लिखे गए कार्ल मार्क्स के शब्द च्यांग काई शेक पर भी लागू होते हैं। लुई नेपोलियन ने फ्रांसीसी बुर्जुआजी की 'तलवार की महिमा गाई; अब उस पर तलवार के द्वारा शासन होगा।...उसने सार्वजनिक सभाओं को पुलिस की निगरानी के

अधीन कर दिया; अब उसके ड्राइंगरूम पुलिस की निगरानी में हैं। ..उसने बिना मुकदमा चलाए श्रमिकों को दंडित किया; अब बिना मुकदमे बुर्जुआ जेल जाते हैं और बंदूक की नोक पर उनके रुपयों की थैलियां छीनी जाती हैं।....बुर्जुआजी ने क्रांतिकारियों के लिए वही शब्द कहे जो ईसाइयों के लिए संट आर्सेनियस ने कहे थे : भाग जाओ, विरोध मत करो, शांत रहो। बुर्जुआजी की लिए बोनापार्ट के भी ये ही शब्द हैं।'[24] लुई नेपोलियन की तरह च्यांग काई शेक ने भी शंघाई के धनवान लोगों से कहा कि भागो, चुप रहो और हमारी अधीनता स्वीकार करो। एक बात उसने और कही, 'हमें लाखों की थैलियां समर्पित करो।'

बैंकों के मालिक, उद्योगपति, कंप्राडोर और व्यापारी च्यांग के झंडे तले इस शर्त पर जमा हुए थे कि वह उन्हें कम्युनिस्टों से मुक्ति दिलाएगा, विद्रोही मजदूरों, हड़तालों और विप्लवों से मुक्त करेगा। उसने इस काम को इतनी निर्दयता से पूरा किया कि कठोर पूंजीपति भी उससे संतुष्ट हो सकते थे। एक ब्रिटिश विवरण के अनुसार, 'उसने कम्युनिस्टों का ऐसा सफाया किया जैसे कोई उत्तरी युद्ध-सामंत भी अपने क्षेत्र में करने की हिम्मत नहीं जुटा सकता था।' लेकिन यह अंग्रेज आगे लिखता है :

> कम्युनिस्ट विरोधी अभियान वहीं रुक जाना चाहिए था और लोग (?) खुश हो जाते। लेकिन कम्युनिस्टों के शिकार के बहाने दमन का हर तरीका अपनाया गया। लोगों को 'किडनैप' कर उनसे सैनिक कोष के लिए भारी चंदे बलपूर्वक वसूल किए जाते....विवेक और न्याय कहीं नजर नहीं आता था... कानून कचहरी का कोई इस्तेमाल नहीं हुआ....करोड़पतियों को कम्युनिस्ट कहकर गिरफ्तार कर लिया गया....कोई भी इस क्षण उस दंडप्रणाली से सुरक्षित नहीं है, जिसकी स्थापना की गई है।[25]

4 मई को *न्यूयार्क टाइम्स* ने लिखा, 'शंघाई के आसपास चीनी व्यापारियों की हालत दयनीय है। वे जनरल च्यांग काई शेक की कृपा पर निर्भर हैं और नहीं जानते कि कल क्या होगा, संपत्ति की जब्ती, अनिवार्य ऋण, निर्वासन या मृत्युदंड।....धनी वर्ग की संपत्ति पर डाका डाला जा रहा है।'[26] च्यांग ने युंग चुंग-चिन से पांच लाख डालर मांगे। उसने सौदेबाजी करनी चाही तो उसे जेल भेज दिया गया। ढाई लाख डालर देकर वह जेल से छूटा। ब्रिटिश और अमरीकी बुर्जुआ वर्ग को चीनी बुर्जुआ वर्ग के कष्टों की चिंता थी। वस्तुतः च्यांग काई शेक चीन में साम्राज्यवादियों और चीनी बुर्जुआ वर्ग के गठबंधन का ही प्रतिनिधित्व करता था। शंघाई की प्रतिक्रांति के बाद कम्युनिस्टों और श्रमिकों के हत्याकांड की घटनाओं को च्यांग अधिकृत दक्षिणी और मध्यवर्ती चीन के सभी नगरों में दोहराया गया।

संयुक्त मोरचे की विफलता के कारण

कहा जाता है कि फासिस्ट और फौजी तानाशाह ऐसे खौफनाक बाडीगार्ड होते हैं जो अपने भयभीत मालिकों की मेज पर बैठकर दावत का मजा लूटते हैं। च्यांग काई शेक भी अन्य

पूर्ववर्ती सैनिक शासकों की तरह राज्य सत्ता की वेशभूषा में छिपा एक डाकू था लेकिन फिर भी वह एक भाड़े का टट्टू था। उसकी कीमत ऊंची थी लेकिन फिर भी वह उसकी काम की तुलना में कम ही थी—आखिर उसने जन आंदोलन को चकनाचूर कर अपने मालिकों को सुरक्षित बचा लिया था।

च्यांग काई शेक ने अपनी सरकार की स्थापना नानचिंग में की। चीन के उद्योगपतियों, व्यापारियों और बैंक मालिकों ने च्यांग की सरकार को कुछ दिनों के बाद ही अपने समर्थन की घोषणा कर दी। शंघाई तख्तापलट के तुरंत बाद ऐसे ही प्रहार निगंपो, फूचाऊ, अमोय, स्वाताओ और कैंटन में भी किए गए। इन सभी नगरों में शंघाई के दमन-चक्र की पुनरावृत्ति की गई। संयुक्त मोरचे की विफलता का मुख्य कारण च्यांग काई शेक द्वारा नियंत्रित क्वोमिन्तांग के सैन्य तंत्र का प्रतिक्रियावादी चरित्र था।

दूसरा कारण शूरमान और शेल के अनुसार कोमिन्टर्न के प्रति चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की अटूट निष्ठा और विश्वास था :

> 1927 के दु:खद अंत के बाद, जिसके लिए मुख्य दोष स्तालिन की नीति को दिया जा सकता है, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के प्रति निष्ठावान रही, और अपेक्षाकृत स्वतंत्र विचारक माओ त्सेतुंग ने भी कोमिन्टर्न की आलोचना नहीं की। आगामी वर्षों में, हम चीन में सोवियत यूनियन की दुरंगी नीति को फिर देख सकते हैं, लेकिन चीनी कम्युनिस्ट पार्टी कभी भी मास्को से पूरी तरह अलग नहीं हुई।[27]

शंघाई की दु:खदायी घटना के बाद भी स्तालिन ने कहा कि संयुक्त मोरचे को जारी रखना चाहिए। 'केवल इसलिए कि च्यांग ने अपना सामंती, साम्राज्यवादी चेहरा दिखा दिया है, स्तालिन ने कहा, इस बात का कोई कारण नहीं बनता कि संपूर्ण क्वोमिन्तांग को खारिज कर दिया जाए। स्तालिन ने दावा किया कि वस्तुत: च्यांग के विश्वासघात ने क्वोमिन्तांग को' जो अन्यथा एक क्रांतिकारी दल है, शुद्ध कर दिया है।[28]

यह व्याख्या मास्को से तर्कसंगत लग सकती थी, लेकिन हजारों चीनी कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं के लिए यह एक आत्मघाती संदेश था जिसमें छल-कपट की गंध थी। वे जानना चाहते थे कि संयुक्त मोरचे को जारी रखने से उनका क्या लाभ था। दुर्भाग्य से इसका जवाब चीन की परिस्थितियों में नहीं बल्कि कैमलिन की दीवारों में छिपा था। 1924 में लेनिन की मृत्यु के बाद स्तालिन और त्रात्स्की के बीच सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व के लिए संघर्ष हुआ। चीन में *श्वेत आतंक* की शुरुआत के पहले, त्रात्स्की ने स्तालिन की चीनी नीति की कठोर आलोचना शुरू कर दी थी। उन्होंने कहा कि चीन की कम्युनिस्ट पार्टी को संयुक्त मोरचे को तुरंत तोड़ देना चाहिए और चीन में सोवियतों की स्थापना करनी चाहिए।

त्रात्स्की ने स्तालिन पर आरोप लगाया कि 'वे चीनी क्रांति की कब्र खोद रहे हैं।' त्रात्स्की ने कहा, 'क्वोमिन्तांग में शामिल होने का अर्थ स्वेच्छा से अपना सिर कटाना है।' स्तालिन पर दोषारोपण करते हुए उन्होंने कहा, 'शंघाई (श्वेत आतंक) के खूनी सबक कोई

निशान छोड़े बगैर ही गुजर गए। बुर्जुआ कसाइयों की पार्टी (क्वोमिन्तांग) के लिए कम्युनिस्टों को बलि का बकरा बना दिया गया है।'[29]

क्रैमलिन के सत्ता संघर्ष का कोमिन्टर्न की चीन संबंधी नीतियों पर प्रभाव पड़ा। 1927 के अंत तक स्तालिन त्रात्स्की को कजाकिस्तान में निर्वासित करने में सफल हो गए। परंतु संयुक्त मोरचे के विचार को छोड़ना तब भी संभव न था क्योंकि वह त्रात्सकी के दृष्टिकोण को सही सिद्ध कर देता। इसलिए स्तालिन ने आदेश दिया कि संयुक्त मोरचे को भंग न किया जाए, हालांकि इस समय तक चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अधिकांश नेता और कार्यकर्ता या तो मार दिए गए थे या वे भूमिगत थे।

स्तालिन की असफलता 1931 में बिलकुल स्पष्ट हो गई जब चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की क्षत-विक्षत केंद्रीय समिति शहरों से पलायन कर पहाड़ों में युवा क्रांतिकारी नेता माओ त्सेतुंग के नेतृत्व में पहुंची। कम्युनिस्ट इतिहास में एक रक्तरंजित घटना द्वारा संपूर्ण पारंपरिक कम्युनिस्ट आंदोलन का दमन कर दिया गया था। 'यह जानना कठिन है कि चोउ एनलाई, ल्यू शाओछी और चांग क्वोथाओ ने कैसा महसूस किया जब वे, अपनी पार्टी का सर्वनाश देखकर, पहाड़ों में शरण के लिए पहुंचे। वे निश्चित रूप से निराश हो चुके थे, और यह विश्वास करना मुश्किल है कि वे इस बात को नहीं जानते थे कि मुख्यत: स्तालिन के कारण वे इस विपत्ति में फंसे हैं।'[30]

संयुक्त मोरचे के विघटन का तीसरा कारण डॉ. सुन यातसेन का 1925 में असामयिक निधन था। वही एक ऐसे नेता थे जिनका क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी में एक समान सम्मान था और उनका व्यक्तित्व ही ऐसा था जो संयुक्त मोरचे की एकता को सुरक्षित रख सकता था। पेकिंग में उनकी मृत्यु क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट संबंधों के लिए दु:खदायी घटना थी। 1927 तक दोनों पार्टियों ने अपने प्राथमिक उद्देश्यों को पूरा कर लिया था। रूस की मदद से च्यांग काई शेक ने मजबूत सैनिक तंत्र का निर्माण कर लिया था और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने श्रमिकों और कृषकों के संगठनों में पर्याप्त समर्थकों को एकजुट कर लिया था। 1927 तक प्रत्येक के पास दूसरे को गिराने के साधन थे। सवाल था कि कौन पहला आघात करेगा? यह प्रहार च्यांग ने 1927 के वंसत में कर दिया।

कोमिन्टर्न प्रतिनिधियों की अदूरदर्शिता

येनान में 1936 में एडगर स्नो को इंटरव्यू देते समय 1924-27 में कोमिन्टर्न प्रतिनिधियों की भूमिका के बारे में माओ ने कहा था कि बोरोडिन मूर्ख था और राय बेवकूफ थे। यह बात एम.एन. राय द्वारा 13 अप्रैल 1927 को च्यांग के लिए कोमिन्टर्न प्रतिनिधिमंडल की ओर से लिखे हुए पत्र से झलकती है :

> तीसरे इंटरनेशनल का प्रतिनिधिमंडल अब चीन में है और वह आपसे मिलने के लिए हमेशा उत्सुक रहा है।....इस खतरनाक परिस्थिति में हम आपको सलाह देते हैं कि

> *आप (केंद्रीय समिति का) सम्मेलन नानचिंग में न करें क्योंकि वह (क्वोमिन्तांग)* पार्टी को वास्तव में बांट देगा।...हम नानचिंग में आपसे मिलकर खुश होंगे और आपसे सभी महत्वपूर्ण प्रश्नों पर व्यक्तिगत रूप से विचार-विनिमय करेंगे। तीसरा इंटरनेशनल सभी क्रांतिकारी शक्तियों के संयुक्त राष्ट्रीय मोरचे के निर्माण में मदद करने के लिए अपनी सभी सेवाएं अर्पित करेगा।[31]

शंघाई में च्यांग की प्रतिक्रांति के एक दिन बाद, जब इस घटना को विश्व के अखबार सुर्खियों में छाप चुके थे, तीसरे इंटरनेशनल द्वारा प्रतिक्रांति के तानाशाह से संयुक्त मोरचे को जारी रखने की यह अपील सचमुच चौंकाने वाली थी। वूहान में वामपंथी क्वोमिन्तांग कागज का शेर था जिसके पास अपनी कोई सैनिक शक्ति नहीं थी। संयुक्त मोरचे का झंडा खून से सन चुका था। कोमिन्टर्न प्रतिनिधि चियांगशी में भी कम्युनिस्टों और मजदूर संगठनों पर होने वाले हमलों से परिचित हो चुके थे। बोरोडिन, एम.एन. राय, अर्ल ब्राउडर, जाक दोरियो, और टाम मान अब भी च्यांग काई शेक को क्षमा करने के लिए तत्पर थे और उससे प्रार्थना कर रहे थे कि वह संयुक्त मोरचे को भंग न करे जो व्यावहारिक स्तर पर टूट चुका था।

वाल्टर ड्युरांटी ने *न्यूयार्क टाइम्स* को मास्को से तार भेजा, 'मास्को के नेता क्वोमिन्तांग से एकता, कम्युनिस्टों की बलि देकर भी, पुनःस्थापित करने की कोशिश करेंगे।' कोमिन्टर्न द्वारा च्यांग को भेजा पत्र साबित करता है :

> कोमिन्टर्न चीनी क्रांति के खिलाफ किसी भी हद तक जा सकती थी क्योंकि क्रैमलिन को विश्वास था कि उसका एकमात्र गठबंधन चीन के शासक वर्ग से ही संभव है। इससे यह बात साफ होती है कि क्रैमलिन ने चीन में शक्तियों के खेल को गलत समझा और उसका गलत आकलन किया।[32]

पांचवीं राष्ट्रीय पार्टी कांग्रेस का अभिमत

कांग्रेस के घोषणापत्र में कहा गया है कि हमने संयुक्त मोरचा इसलिए बनाया और हम उत्तरी अभियान में इसलिए शामिल हुए क्योंकि उनका लक्ष्य साम्राज्यवाद विरोधी था। परंतु जब यह अभियान आगे बढ़ रहा था तो च्यांग काई शेक ने इस विजय को अपने वर्गीय लाभ में बदल दिया और देश की बहुसंख्यक जनता पर हमला बोल दिया। च्यांग काई शेक केवल बुर्जुआ वर्ग का नेता नहीं है, उसका सामंती भूस्वामियों से भी गठबंधन है। इसलिए हमें निम्नलिखित कारणों से पूरी ताकत से उसका विरोध करना चाहिए :

> वर्ग-विभाजन और साम्राज्यवादी दखलंदाजी वर्तमान क्रांतिकारी दौर की बुनियादी विशेषताएं हैं।...जब वर्ग संघर्ष तेज हो जाता है, तो साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष वर्ग संघर्ष से अधिकाधिक स्वतंत्र होता जाएगा। जब बुर्जुआ वर्ग ने साम्राज्यवाद का

> विरोध किया, तो सर्वहारा वर्ग ने भी संयुक्त मोरचे को अधिकतम समर्थन दिया; परंतु अब तो बुर्जुआजी ने साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष छोड़ दिया है और सर्वहारा वर्ग के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी है। बुर्जुआजी के पीछे सामंती प्रतिक्रियावादी, युद्ध-सामंत और साम्राज्यवादी हैं जिन्होंने राष्ट्रीय क्रांति का दमन करने के लिए एक प्रतिक्रांतिकारी गठबंधन कर लिया है।[33]

यह संयुक्त मोरचे के विघटन का मार्क्सवादी वर्गीय विश्लेषण है। इस व्याख्या के अनुसार च्यांग काई शेक की नानचिंग सरकार बुर्जुआ-सामंती वर्गों के साम्राज्यवाद से गठबंधन का प्रतिनिधित्व करती थी लेकिन वामपंथी क्वोमिन्तांग की वूहान सरकार श्रमिकों, कृपकों और बुद्धिजीवियों के संयुक्त मोरचे को प्रतिबिंबित करती थी। फेयरबैंक और सहयोगी लेखकों को वर्गीय व्याख्या के विरुद्ध निम्नलिखित आपत्तियां हैं :

1. च्यांग काई शेक ने शंघाई और अन्य नगरों में केवल श्रमिक वर्ग का दमन नहीं किया, उसने उच्च बुर्जुआ वर्ग से बलपूर्वक धन भी वसूल किया;
2. वूहान सरकार भी जापान से मान्यता प्राप्त करने की कोशिश कर रही थी जिस प्रकार च्यांग सरकार जापान और पश्चिमी शक्तियों का समर्थन पाने की इच्छुक थी;
3. इसी प्रकार च्यांग की तरह वूहान नेतृत्व भी सामंती समर्थन जुटाने का प्रयास कर रहा था। वूहान सरकार का सहायक जनरल तांग शेंगशी शीघ्र ही च्यांग से मिल गया;
4. नानचिंग और वूहान सरकारों में वर्गीय विभाजन कोमिन्टर्न की नीति को तात्कालिक रूप से सही मानना था।[34]

इस सारे प्रसंग का विवेचन करते हुए सी.पी. फिट्ज़गेराल्ड ने अपना निष्कर्ष पेश करते हुए लिखा है :

> वूहान सरकार अनिर्णय की स्थिति में थी, फिर उसमें फूट पड़ गई और अंत में उसने समर्पण कर दिया। राष्ट्रीय सरकारें नानचिंग में फिर एकजुट हो गईं। कम्युनिस्टों को सत्ता से बाहर कर दिया गया और उन पर पाबंदी लगा दी गई। रूसी सलाहकार मास्को भेज दिए गए। अगले साल 1928 में संयुक्त राष्ट्रीय सेनाएं पेइचिंग पहुंच गईं, अंतिम युद्ध-सामंत चांग त्सोलिन को निष्कासित कर दिया गया और नानचिंग को राजधानी बनाया गया, जहां विदेशी शक्तियों ने राहत की सांस लेकर शीघ्र उसे मान्यता प्रदान कर दी।[35]

हू शेंग और सहयोगी लेखकों का पांचवीं पार्टी कांग्रेस के बारे मत है :

> कांग्रेस में सी.पी.सी. के नेतृत्व में क्रांतिकारी सेनाओं के विस्तार पर कोई चर्चा नहीं हुई। जब पूरी पार्टी क्रांति की रक्षा के लिए आपातकालीन उपायों की प्रतीक्षा कर रही

थी, ऐसी परिस्थिति में विकास के पूंजीवादी चरण को लांघने की चर्चा अप्रासंगिक और अयथार्थवादी थी। कांग्रेस ने दक्षिणपंथी अवसरवादी त्रुटियों की आलोचना की, लेकिन उन्हें सुधारने के उपाय नहीं बताए। इसके अलावा, उसने चेन तूश्यू को फिर महासचिव चुन लिया। फलतः, जब सी.पी.सी. मुसीबत में फंसी थी, तो कांग्रेस उचित कार्यनीति निर्धारित करने में और पार्टी को सुदृढ़ नेतृत्व प्रदान करने में असफल रही।[36]

4 जुलाई 1927 को माओ त्सेतुंग ने कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति के पोलित ब्यूरो की स्थायी समिति में प्रस्ताव रखा, 'जब तक हम अपने सैन्य बलों को सुरक्षित नहीं रखेंगे, आपातकालीन समस्याओं का समाधान नहीं कर सकेंगे।'[37] इसलिए किसान सेनाओं को तुरंत पहाड़ों पर जाना चाहिए और पार्टी से जुड़ी सैनिक इकाइयों में शामिल हो जाना चाहिए। 14 जुलाई को सुंग चिंग लिंग (मैडम सुन यातसेन) ने, जो क्वोमिन्तांग के वामपंथ का नेतृत्व करती थी, एक वक्तव्य जारी किया कि वर्तमान क्वोमिन्तांग डॉ. सुन यातेसन के क्रांतिकारी सिद्धांतों से विमुख हो गई है और एक सैनिक तानाशाह के हाथों की कठपुतली बन गई है। इस क्वोमिन्तांग से अब उनका कोई सक्रिय संबंध नहीं रहेगा। उन्होंने घोषणा की, 'पार्टी को इन नई नीतियों के संचालन में सक्रिय भागीदारी से मैं अपना संबंध विच्छेद करती हूं क्योंकि मैं ऐसा ही अनुभव करती हूं।'[38] संयुक्त मोरचे के विघटन के बाद क्रांतिकारी डॉ. सुन की पत्नी ने कुछ समय के लिए राजनीतिक संन्यास ले लिया।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. सी पी फिट्ज़गेराल्ड, *दि बर्थ आफ कम्युनिस्ट चाइना*, पृ. 53--54
2. जान के फेयरबैंक, उद्धृत, *रिपब्लिकन चाइना*, पृ. 35.
3. फ्रांज शूरमान और ओर्विल शेल, *रिपब्लिकन चाइना*, पृ 87
4. वही, पृ. 88.
5. वही, उद्धृत, पृ 89
6. वही, उद्धृत, पृ. 92-93.
7. वही, उद्धृत, पृ. 93.
8. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 54.
9. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ सुंग चिंग लिंग*, चीनी संस्करण, पृ. 109. हू शेंग (संपा.) *पार्टी इतिहास* में उद्धृत, पृ. 56.
10. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 57.
11. वही उद्धृत, पृ. 57.
12. हैरल्ड आइजाक्स, *दि ट्रेजेडी आफ दि चाइनीज रिवोल्यूशन*, पृ 63.
13. वही, पृ. 64.
14. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड ए, पृ. 54.

15. 'डायरेक्टिव ऑन ऐडमिटिंग कम्युनिस्ट्स इनटु दि केएमटी', जिसे क्वोमिन्तांग केंद्रीय समिति ने अगस्त 1924 में जारी किया.
16. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 65.
17. वही उद्धृत, पृ. 82.
18. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड II, पृ 222
19. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 85; (चेन तूश्यू का 13 सितंबर 1926 का पत्र).
20. वही उद्धृत, पृ. 88.
21. च्यांग काई शेक का वक्तव्य, वही उद्धृत, पृ. 88.
22. क्यो मोरो का मत, वही उद्धृत, पृ. 89.
23. हैरल्ड आइज़ाक्स, *दि ट्रेजेडी आफ दि चाइनीज रिवोल्यूशन*, पृ. 177
24. वही उद्धृत, पृ. 181
25. वही उद्धृत, पृ. 181-82.
26. वही उद्धृत, पृ. 182.
27. फ्रांज शूरमान और ओर्विल शेल, *रिपब्लिकन चाइना*, पृ. ८८–८९
28. वही, पृ. 90.
29. वही, पृ. 90-91.
30. वही, पृ. 91.
31. वही उद्धृत, पृ. 113.
32. वही उद्धृत, पृ. 114.
33. सी. ब्रांट, बी. श्वार्ज और जे के. फेयरबैंक, *ए डाक्यूमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, में उद्धृत, पृ. ९3.
34. वही, पृ. 90.
35. सी.पी. फिट्जगेराल्ड, *दि बर्थ आफ कम्युनिस्ट चाइना*, पृ. 67
36. हू शेंग (संपा), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 101 102.
37. वही उद्धृत, पृ 104.
38. सुंग चिंग लिंग, *दि स्ट्रगल फॉर न्यू चाइना*, पृ. 5-6

अध्याय छह

कम्युनिस्ट पार्टी की प्रगति (1927-36)

क्रांतिकारी रणनीति में परिवर्तन

माओ त्सेतुंग ने फरवरी 1927 में किसान समस्या पर अपनी ऐतिहासक रिपोर्ट में यह बता दिया था कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी अपनी रणनीति को कृषकोन्मुख बनाए। यह रिपोर्ट हुनान की ग्रामीण परिस्थितियों के बारे में चर्चा करती है लेकिन अपनी शैली के ओज, किसानों की निर्धनता और विपदाओं के यथार्थवादी वर्णन और जन आंदोलन में माओ के विश्वास के कारण यह माओवाद के शुरुआती दौर और युवा माओ के नेतृत्व का सही चित्रण प्रस्तुत करती है।

इस रिपोर्ट में माओ त्सेतुंग शुरू में ही उन प्रतिबंधों की आलोचना करते हैं जिन्हें वूहान की कथित वामपंथी क्वोमिन्तांग सरकार ने किसान आंदोलनों पर लगाया था। दिसंबर 1926 में कोमिन्टर्न की कार्यकारिणी समिति ने, अपने सातवें प्लेनम में, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को आदेश दिया था कि वह वूहान सरकार में शामिल हो जाए क्योंकि यह 'किसानों तक पहुंचने का एक असरदार तरीका होगा।'[1] कम्युनिस्टों ने मार्च 1927 तक इस आदेश का पालन नहीं किया। वूहान कैबिनट में कम्युनिस्टों को कृषि विभाग तथा कुछ अन्य छोटे विभाग मिले किंतु कृषि नीतियों में, जिनकी आलोचना माओ त्सेतुंग ने की थी, कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

वूहान की मिली--जुली सरकार का च्यांग काई शेक द्वारा शंघाई में अप्रैल प्रतिक्रांति के तीन महीने बाद जुलाई 1927 में विघटन हो गया। तब अचानक कोमिन्टर्न ने महसूस किया कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के 'अवसरवादी' नेताओं ने उसके आदेशों का पालन नहीं किया और पूरी ताकत से किसान आंदोलन नहीं छेड़ा। इस तरह कोमिन्टर्न ने इस तथ्य को छिपाने की कोशिश की कि जब उसने चीनी कम्युनिस्टों को वूहान सरकार में शामिल होने की राय दी तो यह किसान आंदोलन के विकास में बाधक था क्योंकि किसान आंदोलन के तेज होने पर वूहान सरकार के राजनीतिक और वित्तीय अस्तित्व पर खतरा पैदा हो सकता था। कोमिन्टर्न प्रतिनिधि एम.एन. राय ने बाद में स्वीकार किया कि किसान आंदोलन को तेज करने तथा क्वोमिन्तांग की वूहान सरकार में शामिल होने की नीतियों में अंतर्विरोध था।[2]

वस्तुतः माओ त्सेतुंग ने कभी खुलकर वूहान सरकार के समर्थन की कोमिन्टर्न नीति की आलोचना नहीं की या फिर यह व्याख्या की कि यह सरकार 'मजदूरों, किसानों और

निम्न बुर्जुआ वर्ग के गठबंधन' की सरकार है। जुलाई 1927 में जब इस लाइन का दिवालियापन खुलकर सामने आ गया तो उन्होंने चेन तूश्यू के नेतृत्व की आलोचना की और कहा कि वह निम्न बुर्जुआ अवसरवाद का हिमायती था। इस संबंध में ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक का मत है, 'यद्यपि माओ की नीति कोमिन्टर्न के मुकाबले द्वंद्ववाद पर खरी उतरी लेकिन तथ्य यही है कि वे उस समय चीन में कोमिन्टर्न द्वारा नियुक्त प्रतिनिधियों के विचारों से असहमत थे।'[3] स्वयं माओ का कहना है कि कृषि नीति के बारे में पार्टी नेतृत्व से उनके मतभेद 1925 में ही शुरू हो गए थे 'लेकिन 1927 तक वे चरम सीमा तक नहीं पहुंचे थे।'[4]

इसलिए माओ त्सेतुंग की हुनान किसान आंदोलन की रिपोर्ट वैकल्पिक रणनीति प्रस्तावित करती है। कोमिन्टर्न ने दिसंबर 1926 में असंदिग्ध शब्दों में कहा था कि, 'सर्वहारा वर्ग ही एकमात्र ऐसा वर्ग है....जो प्रगतिशील कृषि नीति को क्रियान्वित करने की स्थिति में है और यही...क्रांति के निरंतर विकास की शर्त है।'[5] इसी प्लेनम में स्तालिन ने कहा था कि चीन की क्रांतिकारी किसान समितियां 'अपार किसानों में प्रवेश नहीं कर सकतीं'; इसलिए कम्युनिस्टों को चाहिए कि वे 'क्रांतिकारी राष्ट्रीय सत्ता', अर्थात वूहान सरकार और उसकी क्रांतिकारी क्वोमिन्तांग सेना के माध्यम से किसानों को प्रभावित करने की कोशिश करें। स्तालिन का निष्कर्ष था, 'चीनी क्रांति में पहल और पथ प्रदर्शन की भूमिका अनिवार्य रूप से चीनी सर्वहारा वर्ग ही निभाएगा।'[6]

स्तालिन के इस वक्तव्य पर माओ त्सेतुंग अपनी रिपोर्ट में बिलकुल चुप रहे। उसमें मजदूर वर्ग की भूमिका पर कोई टिप्पणी नहीं है। किसी भी मार्क्सवादी-लेनिनवादी लेखक ने क्रांति में अब तक किसानों को कर्ता की भूमिका नहीं दी थी। उन्हें केवल मजदूर वर्ग का सहायक माना गया था। 1905 में लेनिन ने जब किसानों की खोज की तो उन्होंने कहा कि शहरी सर्वहारा वर्ग ही अनिवार्यत: हमारी पार्टी का....केंद्र होगा जो किसान आंदोलन में राजनीतिक चेतना फैलाएगा। 1917 की क्रांति की पूर्व-संध्या पर लेनिन ने स्पष्ट किया कि 'केवल सर्वहारा वर्ग ही गरीब किसानों के कार्यक्रम कार्यान्वित कर सकता है।'[7]

माओ त्सेतुंग की रिपोर्ट में बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति का अगुआ दस्ता गरीब किसान है। माओ नगरवासियों और सैनिक इकाइयों की क्रांति में भूमिका केवल तीन अंक तक देखते हैं और गांवों की क्रांति के कर्ता किसानों की भूमिका सात अंक तक देखते हैं। शहरी तीन अंकों में मजदूर वर्ग, राष्ट्रीय और निम्न बुर्जुआ वर्ग तथा क्रांतिकारी सेना के हिस्से शामिल हैं। इससे माओ की नजर में चीनी क्रांति में गरीब किसानों का अत्यधिक महत्व साबित होता है और तत्कालीन स्थिति में मजदूर वर्ग की हाशिए की भूमिका उजागर होती है।

अत: माओ के अनुसार 1927 में चीनी क्रांति का हरावल दस्ता (अग्रिम दस्ता) गरीब किसानों का था। यह नया समीकरण माओ त्सेतुंग की सफलता का रहस्य है। च्यांग काई शेक ने कम्युनिस्टों का अस्तित्व नगरों से मिटा दिया था। उन्होंने माओ त्सेतुंग के नेतृत्व में किसानों को चीनी क्रांति का संवाहक बना दिया। कहा जा सकता है कि उन्होंने लेनिनवाद को एक नई दिशा दी। वस्तुत: लेनिनवाद कोई मताग्रह नहीं है। माओ त्सेतुंग ने लेनिन के

विचारों का चीन की परिस्थितियों में नया भाष्य किया। 'इस अर्थ में, माओ सर्वश्रेष्ठ लेनिनवादी हैं, और उनकी रिपोर्ट चीनी लेनिनवाद का एक 'क्लासिक' है।'[8] (इस संबंध में 'किसान क्रांति की समस्या' शीर्षक से लिखे गए अध्याय को ध्यान से पढ़िए।)

पार्टी की केंद्रीय समिति की बैठक में माओ त्सेतुंग ने कहा कि च्यांग काई शेक की प्रतिक्रांति के बाद अब हमें सचेत हो जाना चाहिए कि राजनीतिक सत्ता केवल बंदूक की नली से प्राप्त हो सकती है। यह क्रांतिकारी रणनीति में मौलिक परिवर्तन था। इस ऐतिहासिक मोड़ पर चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने माओ त्सेतुंग द्वारा प्रतिपादित कृषि क्रांति की रणनीति को मान्यता दे दी। उन्होंने कहा कि हमें पार्टी की सैनिक शक्ति को बढ़ाना चाहिए। गरीब किसानों की एक लाल सेना बनानी चाहिए। सैनिक शक्ति का उपयोग सभी जमींदारों की जमीनों को जब्त करने के लिए और किसानों में उनका वितरण करने के लिए करना चाहिए।

यह एक नए प्रकार की जनसेना के निर्माण का कार्यक्रम था। इसी की सहायता से कृषि क्रांति को क्रियान्वित किया जा सकता था। माओ ने कहा कि पार्टी के कार्यकर्ताओं को किताबों से नहीं बल्कि राजनीतिक कार्य से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। जनवादी क्रांति की नई रणनीति का विकास केवल राजनीतिक अनुभव द्वारा ही हो सकता है। नई रणनीति के अनुसार कम्युनिस्ट पार्टी को नगरों पर आक्रमण करने के बजाए ग्रामीण क्षेत्रों में आगे बढ़ना चाहिए। दक्षिणी चीन में चियांग्शी, क्वांगतुंग और अन्य प्रांतों में पार्टी की जुझारू ताकतों ने छापामार युद्ध लड़े और वहां स्वतंत्र सोवियत सरकारों की स्थापना की।

ग्रामीण क्षेत्रों में वर्गीय अंतर्विरोध बहुत तेज हो चुके थे। क्वोमिन्तांग सरकार का सभी गांवों पर, खासकर प्रांतीय और जनपदीय राजधानियों से दूर के ग्रामीण क्षेत्रों में, पूर्ण नियंत्रण नहीं था। इसलिए कम्युनिस्ट पार्टी को वहां वर्ग संघर्ष तेज करने में सुविधा थी। माओ त्सेतुंग की नई रणनीति में सैनिक संघर्ष और कृषि क्रांति के कार्यक्रम को पूर्ण रूप से समन्वित कर दिया गया था।

हुनान-चियांग्शी सीमांत क्षेत्र

इस क्षेत्र में साठ प्रतिशत से अधिक भूमि पर भूस्वामियों का आधिपत्य था। अस्सी प्रतिशत किसानों के पास चालीस प्रतिशत से भी कम भूमि थी जिसका अधिकांश धनी किसानों के अधिकार में था। यह भूमि प्रणाली चीन की सामंती व्यवस्था की गहन विषमता और शोषण का प्रतीक थी। अनेक पीढ़ियों से गरीब किसान तथा भूमिहीन कृषि मजदूर छोटा सा भूखंड पाने का स्वप्न संजोए बैठे थे। इसलिए इस क्षेत्र में भूमि पुनर्वितरण के आंदोलन ने गरीब किसानों और खेतिहर मजदूरों को बहुत प्रभावित किया।

कम्युनिस्ट पार्टी ने भूमि वितरण के लिए गरीब किसानों तथा खेतिहर मजदूरों की समितियां बनाईं। उसने कहा कि राजनीतिक सत्ता किसान संघों में निहित होगी। जनसेना के निम्नलिखित कार्य थे : पहला, जनता को संघर्ष के लिए संगठित करो; दूसरा, गुरिल्ला

युद्ध जारी रखो, किसानों में हथियार बांटो और उन्हें सैनिक प्रशिक्षण दो; तीसरा, गुरिल्ला युद्ध का दायरा बढ़ाओ और संपूर्ण चीन में अपना राजनीतिक प्रभाव बढ़ाओ। माओ का कहना था कि भूमि सुधारों का लाभ केवल गरीब किसानों और भूमिहीन मजदूरों को ही नहीं मिलना चाहिए बल्कि मंझोले कृषकों को भी उसका लाभ पहुंचना चाहिए।

इसलिए हुनान-चियांग्शी सीमांत क्षेत्र में कृषक जनता का एक बड़ा बहुमत कम्युनिस्ट पार्टी और उसके नेतृत्व में जारी कृषि क्रांति का समर्थक बन गया। माओ त्सेतुंग ने कहा, 'जनवादी आंदोलन ने कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में एक अद्वितीय क्रांतिकारी रणनीति को लागू किया। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवेश कर नगरों को चारों ओर से घेर लो और सशस्त्र शक्ति के द्वारा राज्य की सत्ता पर कब्जा करो।'[9] माओ त्सेतुंग ने इस रणनीति द्वारा दक्षिणी चीन के विभिन्न प्रांतों और जनपदों में सोवियत सरकारों की स्थापना की।

क्रांति की प्रमुख शक्ति के रूप कृषकों पर निर्भरता के सैद्धांतिक आधार का विवेचन करते हुए माओ त्सेतुंग ने कहा, 'अर्ध-औपनिवेशिक चीन में, श्रमिकों के नेतृत्व के बिना कृषकों का संघर्ष कभी सफलता प्राप्त नहीं कर सकता, लेकिन यदि कभी यह कृषक क्रांति श्रमिक शक्तियों के दायरे से आगे बढ़ जाए तो इसमे हमारे क्रांतिकारी संघर्ष को कोई नुकसान नहीं होगा।'[10] माओ त्सेतुंग के अनुसार कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व इस बात की गारंटी करता था कि चीन की किसान क्रांति पुरानी शैली की क्रांति नहीं होगी जिसमें विद्रोही किसान एक अत्याचारी राजवंश का उन्मूलन कर एक नए राजवंश को सिंहासन पर बैठा देते थे और सामंत किसानों की पीठ पर पहले की तरह सवार रहते थे।

हुनान-चियांग्शी में किसान क्रांति में व्यस्त माओ त्सेतुंग का संपर्क कोमिन्टर्न और शंघाई स्थित पार्टी के केंद्रीय नेतृत्व से छूट गया था। कोमिन्टर्न की सलाह अब यह थी कि चीनी कम्युनिस्टों को युद्ध द्वारा कुछ नगरों को अपने कब्जे में कर लेना चाहिए। चौथी आर्मी पर कम्युनिस्ट प्रभाव था। उसकी कमान एक कम्युनिस्ट नेता चू ते के हाथों में थी। पार्टी की केंद्रीय समिति का भी मत था कि कम्युनिस्ट पार्टी के अस्तित्व के लिए दक्षिणी चीन के कुछ शहरों पर नियंत्रण आवश्यक था क्योंकि सर्वहारा वर्ग की उपस्थिति केवल शहरों में ही थी और मजूदरों के समर्थन से कम्युनिस्ट सेना टिक सकती थी।

चू ते तथा अन्य कुछ कम्युनिस्ट नेताओं ने इन आदेशों का पालन किया। सी.पी. फिट्जगेराल्ड के शब्दों में :

> चू ते तथा अन्य नेता कट्टरवादी और आज्ञाकारी थे, उन्होंने पूरा प्रयास किया। उन्होंने चांगशा पर आक्रमण किया, और उन्हें काफी नुकसान उठाकर पराजित होना पड़ा, उन्होंने कैंटन पर कब्जा कर लिया लेकिन भारी हत्याकांड के बाद उन्हें बाहर खदेड़ दिया गया। अमोय में भारी जनहानि के बाद भी उन्हें विफल होना पड़ा। वे किसी बड़े नगर को अपने कब्जे में न रख सके, वे भागते-फिरते थे और चियांग्शी और हुनान के पर्वतों में घूम रहे थे। वे चिंगकांगशान भाग गए जो एक ऐसा पहाड़ी गढ़ या दुर्ग था जहां पहुंचना लगभग असंभव था। वहां वे माओ त्सेतुंग से मिले, जो स्वयं हैंकाऊ और अपदस्थ वूहान सरकार से भागकर वहां पहुंचे थे।[11]

वस्तुतः माओ त्सेतुंग हुनान-चियांग्शी के इन दुर्गम क्षेत्रों में किसान-क्रांति का नेतृत्व कर रहे थे। हुनान रिपोर्ट में उनका निष्कर्ष था :

> वर्तमान काल में किसान आंदोलन का ज्वार एक विराट घटना है। थोड़े ही समय में, चीन के मध्यवर्ती, दक्षिणी और उत्तरी प्रांतों में, करोड़ों किसान एक शक्तिशाली तूफान तथा चक्रवात की भांति उठ खड़े होंगे, जो एक ऐसी तूफानी और आक्रामक शक्ति होगी जिसे कोई भी ताकत, चाहे वह कितनी बड़ी हो, रोक नहीं सकेगी।[12]

यहां हम अपनी बात फ्रांज शूरमान और ओर्विल शेल के शब्दों में प्रस्तुत करना चाहते हैं :

> सितंबर 1927 में खरीफ का विद्रोह हुनान में हुआ जो सफल न हो सका लेकिन उसने किसानों की क्रांतिकारी क्षमता के बारे में माओ के विचारों की पुष्टि कर दी। जब माओ और चू ते ने लाल सेना का संगठन किया, तो उन्होंने हुनान और चियांग्शी में क्रांति का झंडा बुलंद किया। किसानों ने स्वागत किया, और इस प्रकार चीनी सोवियतों को अपनी सत्ता का आधार प्राप्त हुआ। बुद्धिजीवी किसानों के पास क्रांतिकारी नेता के रूप में पहुंचे और किसान उनके अनुयायी बन गए।[13]

चियांग्शी-हुनान सीमांत क्षेत्र में सोवियत की स्थापना क्यों संभव हुई? केंद्रीय समिति को 25 नवंबर 1928 के लिखे एक पत्र में माओ त्सेतुंग ने बताया :

> विश्लेषण से हमें पता चलता है कि इस घटना का एक कारण चीनी कंप्राडोर और जमींदार वर्गों के बीच की निरंतर फूट और आपसी संघर्ष था। जब तक ये विभाजन और युद्ध जारी रहते हैं, मजदूरों और किसानों की सशस्त्र स्वतंत्र सरकार का अस्तित्व तथा विकास संभव है। इसके अतिरिक्त, इसके अस्तित्व और विकास के लिए निम्नलिखित परिस्थितियों का होना भी आवश्यक है : (1) एक सुदृढ़ जनाधार, (2) एक सुदृढ़ पार्टी संगठन, (3) एक मजबूत लाल सेना, (4) सैनिक कार्यवाहियों के लिए उपयुक्त धरातल, और (5) जीवित रहने और पोषण के लिए पर्याप्त आर्थिक संसाधन।[14]

माओ त्सेतुंग ने चिंगकांग पर्वतीय क्षेत्र को क्रांतिकारी आधार क्षेत्र इसलिए बनाया क्योंकि :

1. यहां अच्छा जनाधार था। 1924-27 की क्रांति के समय सीमांत क्षेत्र के विभिन्न जनपदों में पार्टी संगठनों और किसान संघों की स्थापना हो चुकी थी।
2. पुराने ढंग की किसान शक्तियां युआन वेनथ्साई और वांग त्सुओ के नेतृत्व में कम्युनिस्ट सेना से एकजुट होने के लिए तैयार थीं।
3. इसकी सामरिक स्थिति अच्छी थी। इसकी रक्षा करना आसान था लेकिन इस पर हमला करना मुश्किल था।

4. आसपास के जनपदों की कृषि अर्थव्यवस्था स्वावलंबी थी। इसलिए सेना के लिए धन और अनाज इकट्ठा करना सहज था।
5. यह क्वोमिन्तांग सरकार के केंद्र से अपेक्षाकृत दूर था। हुनान और चियांग्शी के युद्ध-सामंतों के बीच में अंतर्विरोधों के कारण सीमांत क्षेत्र पर उनका नियंत्रण दुर्बल था।

चौथी लाल सेना ने एक नई समझ के साथ चियांग्शी-हुनान सीमांत क्षेत्र में निम्नलिखित नीतियों को अपनाया :

1. सेना को शत्रु से मजबूती से लड़ना चाहिए, पीछे नहीं हटना चाहिए।
2. सीमांत क्षेत्र में कृषि क्रांति को गहरा करना चाहिए।
3. सेना के पार्टी संगठनों को सभी स्थानों पर पार्टी संगठनों की स्थापना में मदद करनी चाहिए और नियमित सेना को स्थानीय सैन्य बलों की स्थापना में सहायता करनी चाहिए।
4. सेना को हुनान की अपेक्षाकृत शक्तिशाली शासक शक्तियों के प्रति रक्षात्मक नीति अपनानी चाहिए लेकिन चियांग्शी की शासक शक्तियों के विरुद्ध आक्रामक नीति को अमल में लाना चाहिए।
5. सेना को शत्रु से लड़ने के लिए अपनी शक्तियों को संकेंद्रित रखना चाहिए, उचित मौके पर मुठभेड़ करनी चाहिए, अपनी शक्तियों को विभाजित नहीं करना चाहिए, जिससे वे उन्हें अलग-अलग होने पर बारी-बारी से नष्ट न कर सकें।
6. लहरों की तरह लड़ते हुए आधार क्षेत्र का विस्तार करना चाहिए; दुस्साहसी हमले नहीं करने चाहिए।

केंद्रीय समिति को नवंबर 1927 में माओ त्सेतुंग ने एक रिपोर्ट भेजकर इस नीति के नतीजों के बारे में बताया :

> राजनीतिक शिक्षा पाकर लाल सेना के सिपाही वर्ग-चेतन हो गए हैं, भूमि वितरण, राजनीतिक सत्ता की स्थापना, मजदूरों और किसानों को सशस्त्र करना इत्यादि से जुड़ी बातों का सारांश समझ गए हैं और वे यह भी जानते हैं कि वे अपने लिए, मजदूर वर्ग के लिए और किसानों के लिए लड रहे हैं। इसलिए वे बगैर शिकायत किए कठोर संघर्ष की कठिनाई को सह सकते हैं।[15]

लाल सेना में जनवादी सिद्धांत लागू किया जाता था। माओ ने इस रिपोर्ट में जनवादी नीति का महत्व बताया :

> लाल सेना इतनी खराब भौतिक दशाओं के बावजूद इतनी ज्यादा मुठभेड़ों में संलग्न रही है, इसका कारण पार्टी की भूमिका के अलावा सैनिकों के प्रति जनवादी व्यवहार

> भी रहा है। अफसर सिपाहियों को पीटते नहीं हैं, अफसरों और जवानों के साथ बराबरी का बरताव होता है, सैनिक सभाएं करने के लिए स्वतंत्र हैं और अपने विचारों को अभिव्यक्त कर सकते हैं, बेकार की औपचारिकताओं का अंत कर दिया गया है, और हिसाब-किताब का निरीक्षण सभी के लिए खुला है।....नए बंदी सैनिकों को खासकर महसूस होता है कि हमारी सेना और क्वोमिन्तांग सेना के बीच आकाश-पाताल का अंतर है। वे आध्यात्मिक मुक्ति का अनुभव करते हैं हालांकि लाल सेना की भौतिक दशाएं श्वेत सेना की तुलना में खराब हैं, वे सैनिक जो श्वेत सेना में डरपोक थे अब लाल सेना में शामिल होकर साहसी बन गए हैं; जनवाद का प्रभाव ऐसा ही होता है।[16]

सामरिक नीति के संदर्भ में माओ त्सेतुंग और चू ते ने लाल सेना के व्यवहार का इन शब्दों में वर्णन किया, 'जब शत्रु आगे बढ़ता है तो हम पीछे हट जाते हैं; जब शत्रु शिविर में ठहरता है तो हम उसे निरंतर परेशान करते हैं; जब शत्रु थक जाता है तो हम आक्रमण करते हैं; जब शत्रु पीछे हटता है तो हम उसका पीछा करते हैं।'[17] सैनिक संघर्ष को कृषि क्रांति से पृथक नहीं किया जा सकता था। चिंगकांग पर्वतीय आधार क्षेत्र एक ऐसा कृषि क्षेत्र था जो देश के अन्य भागों से पूरी तरह से कटा हुआ था। यहां के बहुसंख्यक निवासियों की रुचि भूमि सुधार की समस्या में थी।

कृषि क्रांति को प्रोत्साहन

दक्षिणी चियांग्शी में चौथी लाल सेना के लिए ज्यादा बेहतर परिस्थितियां थीं। पहाड़ियां और घने जंगल गुरिल्ला युद्ध के लिए उपयुक्त थे। परंतु लाल सेना केवल सैनिक कारणों से चिंगकांग से दक्षिणी चियांग्शी नहीं गई। वह कृषि क्रांति को नए क्षेत्रों में ले जाना चाहती थी। चोउ एनलाई ने कहा कि लाल सेना केवल युद्ध संगठन नहीं था, उसकी भूमिका प्रचार और राजनीतिक कार्य में भी महत्वपूर्ण थी।

कूथियान मीटिंग में एक नई फ्रंट कमेटी का चुनाव हुआ और माओ त्सेतुंग को उसका सेक्रेटरी बनाया गया। जून 1930 में लाल सेना की इकाइयों का दक्षिण-पश्चिमी चियांग्शी और पश्चिमी फूचियन में लाल सेना के पहले आर्मी ग्रुप में विलय कर दिया गया और चू ते को उसका प्रधान सेनापति और माओ त्सेतुंग को उसका राजनीतिक कमिसार नियुक्त किया गया।

पश्चिमी फूचियन और दक्षिणी चियांग्शी में कृषि क्रांति भी एक नए दौर में पहुंची। 1929 के अप्रैल में माओ त्सेतुंग ने चियांग्शी के शिंगक्वो जनपद में भूमि कानून का ड्राफ्ट तैयार करते समय एक महत्वपूर्ण सैद्धांतिक परिवर्तन किया। चिंगकांग के भूमि कानून में 'संपूर्ण भूमि के अधिग्रहण और पुनर्वितरण का प्रावधान' था। नए कानून में केवल 'सार्वजनिक भूमि और जमींदारों की जमीनों के अधिग्रहण' की बात की गई और पुनर्वितरण

का नया सिद्धांत था 'जिनके पास अधिक भूमि है, उनकी भूमि लेकर उन किसानों को देना जिनके पास जमीन की कमी है।'[18]

इस सिद्धांत के आधार पर शिंगक्वो तथा अन्य पांच जनपदों में भूमि का अंतिम पुनर्वितरण कर दिया गया। एक साल बाद कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने माओ त्सेतुंग के भूमि आवंटन सिद्धांत को स्वीकृति दे दी। तदुपरांत उसने सभी स्थानीय सोवियत प्रशासनों को आदेश जारी किया कि वे अपने-अपने क्षेत्रों में भूमि पुनर्वितरण कार्यक्रम को लागू कर दें। नया भूमि कानून इस प्रकार था :

> भूमि का प्रबंध स्वयं किसान का दायित्व है। वह भूमि का मालिक है और दूसरे लोग उसका अतिक्रमण नहीं कर सकते। वह उसे किराए पर दे सकता है और इच्छानुसार बेच सकता है। भूमि की पैदावार पर किसान का पूरा हक है लेकिन उसे सरकार को भूमि कर देना पड़ेगा।[19]

चिंगकांग के कानून के अनुसार भूमि सरकार की होगी, किसान की नहीं, जो केवल उसका उपयोग कर सकता है लेकिन उसे बेच नहीं सकता। बार-बार प्रयोग और गलती में सुधार के जरिए पार्टी ने भूमि सुधार का ऐसा कार्यक्रम बना लिया जो चीन की ग्रामीण परिस्थितियों के अनुकूल था।

दक्षिणी चियांगशी और पश्चिमी फूचियन के क्रांतिकारी आधार क्षेत्रों में, भूमि सुधारों के फलस्वरूप सामाजिक ढांचे और वर्ग संबंधों में मौलिक परिवर्तन हुआ। अक्तूबर 1930 में एक सर्वेक्षण के बाद माओ त्सेतुंग ने कहा कि भूमि सुधार से गरीब किसानों को बारह लाभ हुए हैं :

1. उन्हें खेती के लिए भूमि मिली, जो एक मौलिक लाभ था।
2. उन्हें पहाड़ियां प्राप्त हुई हैं।
3. जमींदारों और प्रतिक्रांतिकारी धनी किसानों की भूमि उनमें बांट दी गई है।
4. क्रांति के पहले के सभी ऋणों को रद्द कर दिया गया है।
5. चावल की कीमत घट गई है।
6. पत्नी प्राप्त करने के लिए अब धन की जरूरत नहीं है।
7. कब्र में दफनाने के लिए कोई खर्च नहीं करना पड़ता।
8. बैलों की कीमत कम हो गई है।
9. पुरानी रीतियों के अनुसार उपहारों का खर्च बंद हो गया है।
10. नशा, जुआ, चोरी और डकैती का उन्मूलन कर दिया गया है।
11. वे अब मांसाहार कर सकते हैं।
12. सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है कि उनके हाथों में राजनीतिक सत्ता आ गई है।

माओ ने बताया कि मंझोले किसानों को भी कृषि क्रांति का लाभ मिला है। उनमें से अधिकांश को भूमि मिली है। वे अब धनी किसानों या जमींदारों के दबाव में नहीं हैं। गरीब

किसानों और खेतिहर मजदूरों की तरह उन्हें भी सभा करने और बोलने की आजादी मिली है। किसानों का भारी बहुमत अब कृषि क्रांति और कम्युनिस्ट पार्टी का समर्थन करता है। सामंतवाद के उन्मूलन और लोकतांत्रिक क्रांति को पूरा करने के लिए भूमि सुधारों को क्रियान्वित करना अपरिहार्य था।

कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में जनवादी क्रांति के लिए एक अद्वितीय रणनीति का अनुसरण किया गया : गांवों द्वारा नगरों को चारों ओर से घेर लो और सेना द्वारा राज्य की सत्ता पर कब्जा करो।

माओ ने बताया कि अर्ध-सामंती और अर्ध-उपनिवेशी चीन में, कम्युनिस्ट पार्टी की नीति पूंजीवादी देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों से अलग होगी। उन्होंने कहा :

> बुनियादी तौर पर, चीन में यह जरूरी नहीं कि कम्युनिस्ट पार्टी लंबे समय तक पहले वैधानिक संघर्ष करे और उसके बाद ही विद्रोह और युद्ध शुरू करे। दूसरे, वह चीन में पहले बड़े शहरों पर अधिकार नहीं कर सकती, उसे पहले ग्रामीण क्षेत्रों पर कब्जा जमाने की जरूरत है। इस प्रकार चीन में उसकी कार्य प्रक्रिया पश्चिम के पूंजीवादी देशों से भिन्न और उलटी होगी।[20]

चीन के मार्क्सवादियों ने माओ त्सेतुंग के नेतृत्व में कृषि क्रांति को बढ़ावा दिया और ग्रामीण क्षेत्रों पर कब्जा किया और उसके बाद नगरों और राज्य सत्ता को जीता। इतिहास में ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। चीन के कम्युनिस्टों ने मार्क्सवाद किसानों से नहीं, क्रांतिकारी व्यवहार से सीखा था।

सोवियतों, पार्टी और लाल सेना का विस्तार

आंकड़ों के अनुसार पार्टी के सदस्यों की संख्या जुलाई 1928 में 40,000 थी जो जून 1929 में 69,000 हो गई और मार्च 1930 में बढ़कर एक लाख हो गई। मार्च 1930 में लाल सेना के अंतर्गत 13 टुकड़ियां थीं जिनमें 62,000 से अधिक सैनिक थे। इसी प्रकार आधार क्षेत्रों का भी विस्तार हो रहा था। हुनान-चियांग्शी क्षेत्र के अलावा हुनान-हूपे, हूपे-होनान-अन्हुई, फूचियन-चेकियांग-चियांग्शी, हूपे-चियांग्शी सीमांत क्षेत्रों में भी आधार क्षेत्रों की स्थापना कर दी गई थी। क्वांग्शी और क्वांगतुंग के कुछ जनपदों में भी गुरिल्ला युद्ध और कृषि क्रांति का दौर शुरू हो गया था। इन आधार क्षेत्रों में कम्युनिस्ट पार्टी की स्थिति सुदृढ़ होने पर सोवियत सरकार की स्थापना कर दी गई। अप्रैल 1930 में चोउ एनलाई ने घोषणा की, 'किसान छापामार युद्ध और कृषि क्रांति ही आज चीनी क्रांति के प्रमुख लक्षण हैं।'[21]

लेकिन कोमिन्टर्न के 26 अक्तूबर 1929 के निर्देश में कहा गया कि चीन में गंभीर राष्ट्रीय संकट उत्पन्न हो गया है। इसलिए कम्युनिस्ट पार्टी को सशस्त्र विद्रोह द्वारा क्वोमिन्तांग से राज्य सत्ता छीनने का प्रयास तुरंत शुरू कर देना चाहिए। 11 जनवरी 1930 के प्रस्ताव द्वारा चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के पोलिट ब्यूरो ने कोमिन्टर्न के निर्देश को स्वीकार कर लिया।

11 जून 1930 को ली लीसान लाइन को पोलिट ब्यूरो ने मान्यता दे दी। यह वामपंथी भटकाव की एक मिसाल थी। इसमें कहा गया कि कम्युनिस्ट पार्टी को शीघ्र एक या अनेक प्रांतों में सत्ता दखल के लिए सशस्त्र विद्रोह करना चाहिए। ली लीसान का दुस्साहसिक प्रोग्राम कुछ इस प्रकार था :

1. संपूर्ण चीन में आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियां राष्ट्रव्यापी क्रांति के अनुकूल हैं। चीनी क्रांति विश्व क्रांति की दिशा में पहला कदम है।
2. जनता में चेतना फैल चुकी है। वह राष्ट्रव्यापी सशस्त्र विद्रोह चाहती है।
3. पोलिट ब्यूरो ने कहा, नगर-केंद्रित सर्वहारा वर्ग की हड़तालों को प्रोत्साहन दो। उसने माओ के ग्राम-केंद्रित गुरिल्ला युद्ध की धारणा को गलत बताया।
4. पोलिट ब्यूरो ने कहा कि चीन में तुरंत समाजवादी क्रांति द्वारा पूंजीपतियों की संपत्ति का अधिग्रहण करना चाहिए और सर्वहारा वर्ग की तानाशाही कायम करनी चाहिए।

यद्यपि ली लीसान लाइन तीन महीने ही चली फिर भी उसने पार्टी और लाल सेना को बहुत हानि पहुंचाई। ग्यारह प्रांतों में कम्युनिस्ट पार्टी की संस्थाएं नष्ट हो गईं और वूहान, नानचिंग इत्यादि नगरों में भी पार्टी की संस्थाओं का पूर्ण विघटन हो गया। बड़े शहरों पर आक्रमण करने की प्रक्रिया में लाल सेना को धन और जन की बहुत क्षति उठानी पड़ी।

वामपंथी दुस्साहस के समर्थकों को वास्तविकता का ज्ञान नहीं था। जून में केंद्रीय समिति ने माओ त्सेतुंग और चू ते के नेतृत्व में लाल सेना की पहली आर्मी को नानचांग और च्यूचांग पर हमला करने का आदेश दिया। नानचांग में शत्रु सेना की भारी संख्या देखकर उन्होंने शहर पर आक्रमण के कार्यक्रम को स्थगित कर दिया। लाल सेना की तीसरी आर्मी भी चियांग्शी से लौट आई थी। कोमिन्टर्न ने भी ली लीसान की दुस्साहसी लाइन के नतीजे देखकर अपने निर्णय को बदल लिया। उसने चोउ एनलाई और छू छिउपाई को चीन भेजकर संदेश दिया कि अभी चीन की वस्तुपरक परिस्थितियां राष्ट्रव्यापी क्रांति के अनुकूल नहीं हैं।

उधर वांग मिंग और उनके गुट का मत था कि ली लीसान लाइन वामपंथी दुस्साहस नहीं थी बल्कि साक्षात दक्षिणपंथी विचलन थी। कम्युनिस्ट पार्टी को केवल हुनान, हूपे और चियांग्शी प्रांतों में सत्ता प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए, जहां वांग मिंग के अनुसार परिस्थितियां क्रांति के लिए उपयुक्त थीं। उसके बाद राष्ट्रव्यापी आक्रमण शुरू करना चाहिए। वांग मिंग और उसके साथी अधिक मताग्रही और घमंडी थे। उन्होंने पार्टी का और अधिक नुकसान किया।

1931 के चौथे प्लेनरी सेशन के बाद क्वोमितांग क्षेत्रों में कम्युनिस्ट पार्टी का कार्य बिलकुल ठप पड़ गया। अनेक पार्टी कार्यकर्ताओं को पकड़कर गोली मार दी गई। केंद्रीय समिति के सभी सदस्यों को एक ही हमले में मारने की योजना बनाई गई, जो सफल न हो सकी। चोउ एनलाई तथा कुछ अन्य सदस्य शंघाई छोड़कर चियांग्शी के केंद्रीय क्रांतिकारी

आधार क्षेत्र में आ गए। वांग मिंग ने मास्को में शरण ली। ली लीसान और वांग मिंग के वामपंथी दुस्साहस ने कम्युनिस्ट पार्टी की स्थिति क्वोमिन्तांग नियंत्रित क्षेत्रों में पहले से भी अधिक कमजोर कर दी किंतु माओ त्सेतुंग और चू ते की लाल सेना चियांग्शी-हुनान सीमांत क्षेत्र में तथा हूपे, फूचियन, चेकियांग, होनान, अन्हुई के सीमावर्ती जनपदों में तथा क्वांग्शी-क्वांगतुंग के कुछ जनपदों में कृषि क्रांति को निरंतर प्रोत्साहन देती रही।

क्वोमिन्तांग अभियानों के विरुद्ध संघर्ष

अक्तूबर 1930 में क्वोमिन्तांग के पहले अभियान का लक्ष्य माओ त्सेतुंग और चू ते के नेतृत्व में लड़ने वाली लाल सेना की पहली फ्रंट आर्मी को घेरकर नष्ट करना था। एक लाख फौज लेकर चियांग्शी के गवर्नर लू तीफिंग ने क्रांतिकारी आधार क्षेत्र पर हमला कर दिया। लाल सेना ने अपनी रणनीति के अनुसार पीछे हटकर क्वोमिन्तांग की फौज को बिखरने दिया और जब वह पहाड़ी पगडंडियों से गुजर रही थी तो आक्रमण करके उसकी टुकड़ियों को बारी-बारी से पराजित और तितर-बितर कर दिया। इस तरह घेराबंदी और दमन के पहले क्वोमिन्तांग अभियान को विफल कर दिया गया।

शीघ्र ही क्वोमिन्तांग का दूसरा घेराबंदी और दमन अभियान शुरू हुआ। युद्धमंत्री और नानचांग क्षेत्र के मुख्य सेनापति हो यिंगछिन की कमान में दो लाख क्वोमिन्तांग सैनिकों ने कम्युनिस्ट आधार क्षेत्र पर आक्रमण कर दिया। उन्होंने सोवियत क्षेत्र की आर्थिक नाकेबंदी कर दी। लाल सेना ने पुरानी रणनीति के अनुसार क्वोमिन्तांग सेना को सोवियत क्षेत्र के भीतरी हिस्से में घुसने दिया। जब दुश्मन की फौज कई हिस्सों में बंट गई तो उसके कमजोर अंगों पर लाल सेना ने प्रत्याक्रमण कर दिया। 30,000 शत्रु सैनिक मारे गए। लाल सेना ने पांच स्थानों में युद्ध जीते और दुश्मन को चियांग्शी में कांच्यांग नदी से फूचियन में च्यांनिंग तक 350 किलोमीटर पीछे खदेड़ दिया।

तीसरे क्वोमिन्तांग अभियान की कमान स्वयं च्यांग काई शेक ने संभाली और हो यिंगछिन को 'फ्रंट कमांडर' बनाकर तीन लाख सेना सोवियत क्षेत्र पर कब्जा करने के लिए भेज दी जो लाल सेना से दस गुना थी। लाल सेना रक्षात्मक युद्ध करते हुए दक्षिण चियांग्शी पहुंची। शत्रु सेनाएं विभिन्न मार्गों से आकर लाल सेना का पीछा कर रही थीं। अचानक उसने हमला कर तीन स्थानों पर श्वेत सेना को हरा दिया। 15 दिनों तक मार्च करता हुई श्वेत सेना की इकाइयां थक चुकी थीं। क्वोमिन्तांग सेना ने लाल सेना के एक अंश को मुख्य सेना समझने की भूल कर दी। उसका पीछा करते हुए भूख, प्यास, थकान आदि की वजह से क्वोमिन्तांग सेना का मनोबल टूट गया। अंत में च्यांग काई शेक की व्यक्तिगत कमान के बावजूद, तीसरा क्वोमिन्तांग अभियान भी विफल हो गया।

हूपे-होनान-अन्हुई तथा पश्चिमी हुनान-हूपे क्षेत्रों में भी लाल सेना को विजय प्राप्त हुई। इन क्षेत्रों में लाल सेना और सोवियत आधार क्षेत्रों का विस्तार हुआ।

18 सितंबर 1931 को जापान ने मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया। चार महीनों में

जापानियों ने तीन उत्तर-पूर्वी प्रांतों पर अधिकार कर लिया। 28 जनवरी 1932 को जापान ने शंघाई पर हमला किया। 9 मार्च को जापान ने छिंग राजवंश के अपदस्थ सम्राट पू यी को कठपुतली मांचुकुओं सरकार का शासक नियुक्त किया। चीन के सभी बड़े नगरों, पेइचिंग, शंघाई, नानचिंग वूहान और कैंटन (क्वांगचू) में छात्रों. श्रमिकों तथा अन्य नगरवासियों ने जापानी आक्रमण के विरोध में प्रदर्शन किए और हड़तालें कीं।

क्वोमिन्तांग सरकार ने जापानी सेनाओं के आक्रमण और आधिपत्य का विरोध नहीं किया। जापानी सेना में कुल 10,000 सैनिक थे किंतु चीन की उत्तर-पूर्वी सेना में 1,65,000 सैनिक थे। फिर भी च्यांग काई शेक ने जापान के प्रति तुष्टीकरण की नीति अपनाई।

कम्युनिस्ट पार्टी ने जापान के विरुद्ध राष्ट्रीय प्रतिरोध का आह्वान किया। 27 नवंबर 1931 को चीनी सोवियत गणतंत्र की अस्थायी सरकार ने रूइचिन, चियांगशी से वक्तव्य जारी करते हुए कहा कि संपूर्ण राष्ट्र को जापानी आक्रमण का मुकाबला करना चाहिए। 1933 की शुरुआत में, कम्युनिस्ट पार्टी की गुरिल्ला इकाइयां पायान, हाइलोंग, निंगान, तांगयुआन और हाइलून में एवं दक्षिणी और पूर्वी मंचूरिया में जापानी हमलावरों के विरुद्ध छापामार युद्ध कर रही थीं।

1932 में क्वोमिन्तांग सरकार ने जापान के साथ वू सुंग-शंघाई युद्धविराम संधि की जो चीनी राष्ट्र के लिए अपमानजनक थी और चीन की संप्रभुता के लिए खतरनाक थी। उसके बाद क्वोमिन्तांग सेना का चौथा कम्युनिस्ट विरोधी अभियान शुरू हुआ। लाल सेना की संख्या बढ़कर अब 45,000 हो गई थी। जब क्वोमिन्तांग सेना सोवियत क्रांतिकारी आधार क्षेत्र में अंदर गहराई तक घुस गई, तो लाल सेना से उसकी मुठभेड़ें शुरू हुईं। कम्युनिस्ट नेतृत्व में विभाजन के कारण युद्ध देर तक जारी रहा। वामपंथी दुस्साहसी प्रवृत्ति की वजह से अनेक कम्युनिस्ट सैनिक और असैनिक अधिकारियों को गोली मार दी गई। फिर भी क्वोमिन्तांग का चौथा अभियान भी असफल रहा।

1933 के उत्तरार्ध में छह महीनों की तैयारी के बाद च्यांग काई शेक ने मुख्य सेनापति की हैसियत से पांचवां और अंतिम कम्युनिस्ट विरोधी अभियान शुरू किया। उसने पिछली विफलताओं से सबक सीखा था। इस बार उसके अभियान में सैनिक और राजनीतिक साधनों का मिश्रण था। केंद्रीय सोवियत क्षेत्र में अब लाल सेना में 86,000 सैनिक थे। उनसे लड़ने के लिए च्यांग की श्वेत सेना में पांच लाख सिपाही आए थे। अन्य सोवियत क्षेत्रों के विरुद्ध भी च्यांग काई शेक ने अतिरिक्त पांच लाख सैनिक भेजे थे। क्वोमिन्तांग सरकार जापानी हमलावरों से लड़ने के बजाए कम्युनिस्टों को पहले खत्म करना चाहती थी तथा सोवियत आधार क्षेत्रों को नष्ट करना चाहती थी।

इस बार लाल सेना पार्टी की केंद्रीय समिति के निर्देशन में और जर्मन सलाहकार ओटो ब्राउन की राय के अनुसार युद्ध कर रही थी। माओ त्सेतुंग को नेतृत्व से मुक्त कर दिया गया था। आमने-सामने की लड़ाइयों मे लाल सेना को भारी क्षति उठानी पड़ी। ओटो ब्राउन को चीनी परिस्थितियों में युद्ध की जानकारी नहीं थी। केंद्रीय समिति के नेता वामपंथी दुस्साहस से ग्रस्त थे।

नवंबर 1933 में लाल सेना को एक मौका मिला जब क्वोमिन्तांग की उन्नीसवीं सेना के जनरलों ने विद्रोह कर दिया और ली ची शेन की अध्यक्षता में चीनी गणराज्य की जनता की क्रांतिकारी सरकार की स्थापना की घोषणा की। इन सेनापतियों ने खुलकर कहा कि वे जापान से लड़ेंगे, च्यांग काई शेक का विरोध करेंगे और कम्युनिस्टों के साथ समझौता करने के लिए तैयार हैं। कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने तीन शर्तें रखीं :

1. वे सोवियत क्षेत्रों पर आक्रमण तुरंत बंद करें;
2. वे अपने क्षेत्रों में जनाधिकारों को लागू करें; और
3. वे जनता को शस्त्र दें और इन सशस्त्र स्वयंसेवकों को चीन की स्वतंत्रता, एकता और क्षेत्रीय अखंडता की रक्षा में लगाएं।

माओ त्सेतुंग, चोउ एनलाई, चांग वेन्थियन और पेंग तेहुआई फूचियन की जनता की सरकार और बागी जनरलों से समझौता करने के पक्ष में थे, लेकिन केंद्रीय समिति के वामपंथी दुस्साहसी नेताओं ने समझौते का विरोध किया। च्यांग काई शेक ने जनवरी 1934 में बागी जनरलों को हराकर केंद्रीय सोवियत क्षेत्र की घेराबंदी और नाकेबंदी पूरी कर ली। माओ त्सेतुंग ने बाद में यनान में एडगर स्नो को बताया कि इस प्रकार चारों ओर से घिरे कम्युनिस्टों और लाल सेना ने अपनी रक्षा पंक्तियों को सुदृढ़ करने का बेहतरीन अवसर खो दिया।

लंबी यात्रा (लांग मार्च) की ऐतिहासिक रणनीति

इस महीने कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने उग्रवादी 'वामपंथी' दुस्साहसी लाइन का फिर से अनुमोदन किया। उसने कहा कि घेराबंदी और दमन का पांचवां क्वोमिन्तांग अभियान सोवियत चीन की पूर्ण विजय का संघर्ष है जो निश्चित करेगा कि चीन का रास्ता सोवियत समाजवाद का होगा या उपनिवेशवाद का।

अक्तूबर 1934 में क्वोमिन्तांग सेना केंद्रीय सोवियत क्षेत्र के भीतर घुस गई। अब केंद्रीय समिति और केंद्रीय लाल सेना को विवश होकर 86,000 सैनिकों और पार्टी कार्यकर्ताओं के साथ केंद्रीय आधार क्षेत्र को छोड़कर पश्चिम में कूच करना पड़ा। लाल सेना क्वोमिन्तांग के घेरे को तोड़कर बाहर निकलने में सफल हो गई। यह ऐतिहासिक लंबी यात्रा (लांग मार्च) की शुरुआत थी।

जुलाई 1934 में लाल सेना की सातवीं आर्मी ने जापानी सेना से लड़ाई में अग्रिम दस्ता बनकर फूचियन-चेकियांग-अन्हुई-चियांग्शी सीमांत क्षेत्र में प्रवेश किया। वहां लाल सेना की दसवीं आर्मी के साथ मिलकर दोनों ने उत्तर दिशा में कूच जारी रखी। जनवरी 1935 में क्वोमिन्तांग सेना ने हमला किया और लाल सेना को पराजित कर उसके जनरल को गोली मार दी।

लाल सेना की लंबी यात्रा इतिहास की अभूतपूर्व और वीरतापूर्ण घटना थी। अक्तूबर 1934 में यह यात्रा शुरू हुई। केंद्रीय समिति ने आदेश दिया कि सैनिक अपने साथ सेना का साज-सामान लेकर चलें। यह संभव नहीं था। 80,000 से अधिक सैनिकों को पहाड़ी पगडंडियों से कूच करना था। इस कारण पीछे हटती हुई लाल सेना में अव्यवस्था फैल गई। क्वोमिन्तांग फौज ने लाल सेना का पीछा किया।

श्वेत सेना में 16 डिवीजनों से 77 रेजीमेंटें शामिल थीं। उन्होंने नाकेबंदी की चार लाइनें बनाईं। क्वांगतुंग सेना, हुनान सेना और क्वांग्शी सेना ने बारी-बारी से लाल सेना को रोकने का प्रयास किया लेकिन वे असफल रहीं। 27 नवंबर 1934 को लाल सेना श्यांग नदी के पुल पर पहुंच गई। भारी साज-सामान के साथ नदी पार करने में देर लगी। तब तक हवाई जहाजों के समर्थन से हुनान और क्वांग्शी सेनाओं ने नदी पार करने वाली लाल सेना पर आक्रमण कर दिया।

लंबी यात्रा का यह सबसे भयानक संघर्ष था। लाल सेना को भारी क्षति उठानी पड़ी। इस युद्ध में लगभग पचास हजार सैनिक मारे गए और लाल सेना की संख्या अस्सी हजार से घटकर केवल तीस हजार रह गई। इस घटना ने केंद्रीय नेतृत्व के प्रति पार्टी और सेना में असंतोष भर दिया। ठोस यथार्थ की रोशनी में वे 'वामपंथी' दुस्साहसी नेतृत्व की खामियां समझने लगे।

इसके बाद लाल सेना ने अपना कूच का प्रोग्राम बदला। उसने हुनान में दूसरी और छठी आर्मी से जुड़ने का इरादा छोड़ दिया और क्वेइचाउ प्रांत में त्सुनयी जाने की योजना बनाई जो सफल हुई। त्सुनयी में पार्टी ने 'वामपंथी' दुस्साहसी नेताओं को हटाकर माओ त्सेतुंग और उनके समर्थकों के हाथों में नेतृत्व की बागडोर सौंपी। माओ त्सेतुंग, चोउ एनलाई और वांग च्या श्यांग ने सैनिक कार्यवाहियों का दायित्व संभाला।

त्सुनयी के बाद केंद्रीय लाल सेना में फिर स्फूर्ति आ गई। माओ त्सेतुंग के निर्देशन में वह पहले पूर्व में, फिर पश्चिम में, कूच करती हुई शत्रु सेना के भारी जमावड़े को लांघती चली गई। सिचुआन और क्वेइचाउ प्रांतों से गुजरती हुई लाल सेना ने कई नदियों को पार किया। च्यांग काई शेक ने युन्नान प्रांत छोड़कर क्वेयांग में लाल सेना को रोकने की योजना बनाई।

माओ त्सेतुंग ने कहा, 'यदि हम इस प्रांत से युन्नान की श्वेत सेना को बाहर कर दें, तो विजय हमारी होगी।'[22] लाल सेना ने युन्नान की राजधानी कुनमिंग पर हमला किया। इसकी रक्षा के लिए चिनशा नदी से फौज बुलानी पड़ी। अवसर देखकर 9 मई को लाल सेना ने चिनशा नदी को पार कर लिया। हू शेंग और सहयोगी लेखकों का मत है :

> इस प्रकार वह क्वोमिन्तांग सेना की घेराबंदी, पीछा करने, बाधा डालने और रोकने की नीति को विफल करती हुई बच निकली। यह क्वोमिन्तांग की कई लाख सेना पर लाल सेना की निर्णायक जीत थी और यह उसकी रणनीति में बदलाव के कारण संभव हुआ।[23]

इसके बाद लाल सेना आदिवासियों के क्षेत्र से गुजरी। यी कबीले से उसकी मित्रता हो गई और अन्य तटस्थ कबीलों ने उसे अपने क्षेत्रों से शांतिपूर्वक गुजरने दिया। उसके बाद लाल सेना ने चार हजार मीटर ऊंचे चियांचिन पर्वत की बर्फीली घाटियों को पार किया। पर्वत पार करने के बाद लाल सेना की पहली फ्रंट आर्मी और चौथी फ्रंट आर्मी का मिलन हुआ। माओ त्सेतुंग, चू ते, चोउ एनलाई और चांग क्वोथाओ ने मिलकर आगे कूच की योजना बनाई।

लाल सेना में अब एक लाख सैनिक हो गए। चोउ एनलाई ने सामरिक सिद्धांत पर एक रिपोर्ट पढ़ी। चोउ एनलाई का नए आधार क्षेत्र के बारे में सुझाव था :

1. यह क्षेत्र काफी विस्तृत होना चाहिए और चलायमान कार्यवाहियों के लिए उपयुक्त होना चाहिए;
2. इसकी जनसंख्या अधिक होनी चाहिए और इसमें सुदृढ़ जनाधार भी होना चहिए; और
3. इसकी आर्थिक परिस्थिति अच्छी होनी चाहिए।

निष्कर्ष यह था कि उन्हें सिचुआन-शांशी-कांसू सीमांत क्षेत्र की ओर कूच करना चाहिए।

चौथी आर्मी के कमांडर चांग क्वोथाओ के पास अस्सी हजार सैनिक थे। उन्होंने उत्तर की ओर कूच करने के बजाए दक्षिण दिशा में जाने का निश्चय किया। पार्टी में फूट डालकर उन्होंने एक पृथक केंद्रीय समिति बनाई। चू ते ने उन्हें रोकने का बहुत प्रयास किया लेकिन चांग अपनी जिद पर अड़े रहे। माओ त्सेतुंग और चोउ एनलाई के नेतृत्व में पहली आर्मी कांग्सू प्रांत के कठिन मार्गों से उत्तर की ओर बढ़ती रही। अंत में कोमिन्टर्न के हस्तक्षेप के चलते चांग क्वोथाओ ने 6 जून 1936 को वैकल्पिक केंद्रीय समिति भंग कर दी।

अंत में चू ते, रेन पीशी, हो लुंग इत्यादि की कोशिशों से पहली, दूसरी और चौथी फ्रंट आर्मी के लाल सैनिक उत्तर में जाने के लिए तैयार हो गए। इस संबंध में एक बात ध्यान में रखनी चाहिए। चीन के विभिन्न प्रांतों में लाल सेना के कुछ हिस्से अकेले पड़ गए थे। इसके बावजूद उन्होंने क्वोमिन्तांग की श्वेत सेना से अपना संघर्ष जारी रखा और अंत में शहीद हो गए। लेकिन कुछ लाल सैनिक क्वोमिन्तांग सेना की नाकेबंदी तोड़ने में सफल हो गए। लाल सेना के एक हिस्से ने शांशी प्रांत में भी एक आधार क्षेत्र बना लिया था। इस प्रसंग में हू शेंग इत्यादि का कहना है :

> जब लाल सेना के मुख्य सैन्य बल लंबी यात्रा पर निकले, तो जो हिस्सा पीछे छूट गया, उसने यांगत्सी नदी के उत्तर और दक्षिण में श्यांग यिंग, चेन यी आदि के नेतृत्व में, गुरिल्ला सैनिकों की मदद से, स्वतंत्र रूप से तीन वर्षों तक आठ प्रांतों के पंद्रह विभिन्न क्षेत्रों में छापामार युद्ध जारी रखा।....उन्होंने कठिन परिस्थितियों में संघर्ष करते हुए चीनी क्रांति में बेशकीमती योगदान किया।[24]

इसी प्रकार मंचूरिया में भी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में उत्तर-पूर्वी जनता की क्रांतिकारी सेना जापानी सेना के विरुद्ध छापामार युद्ध कर रही थी।

माओ त्सेतुंग ने शांशी-कांसू सीमांत क्षेत्र को नया सोवियत आधार क्षेत्र घोषित किया। यनान इस सोवियत क्षेत्र की राजधानी बना। श्रमिकों और कृषकों की लाल सेना की इस ऐतिहासिक लंबी यात्रा की जीत चीनी क्रांति की एक बड़ी उपलब्धि थी। चियांग्शी में लाल सेना में तीन लाख सैनिक थे, जो युन्नान में घटकर केवल तीस हजार रह गए थे। लाल सेना की संख्या अवश्य घट गई थी, लेकिन उसकी गुणवत्ता में कमी नहीं आई थी। आगामी जापान विरोधी संघर्ष और क्वोमिन्तांग के विरुद्ध जनवादी संघर्ष में युन्नान स्थित कम्युनिस्ट पार्टी और लाल सेना के नेतृत्व ने निर्णायक भूमिका निभाई।

पार्टी की प्रगति की समीक्षा

एक पश्चिमी प्रेक्षक सी.पी. फिट्जगेराल्ड का मत है :

> इस बात पर बहुत विचार किया गया कि कम्युनिस्टों ने किस वजह से शांशी जैसे पिछड़े हुए अनुपयुक्त क्षेत्र को अपने नए आधार के लिए चुना। दक्षिण-पश्चिमी चीन के अनेक क्षेत्र जहां से उन्होंने यात्रा की, अधिक समृद्ध थे, उनकी रक्षा अपेक्षाकृत सहज थी और राष्ट्रवादी सरकार का दबाव भी वहां कम था। स्पष्ट है कि लंबी यात्रा का वास्तविक कारण, नाकेबंदी के अलावा, ऐसी जगह कम्युनिस्ट आधार क्षेत्र की स्थापना करना था जहां से वे संभावित जापानी आक्रमण के विरुद्ध युद्ध में भाग ले सकें और उसके लाभ उठा सकें।[25]

कम्युनिस्ट गुरिल्ला योद्धा पहले ही चीन के उत्तर-पूर्वी प्रांतों (मंचूरिया) में जापानी सेना के विरुद्ध छापामार युद्ध में लगे हुए थे। यह सही है कि शांशी को आधार क्षेत्र बनाकर कम्युनिस्ट पार्टी ने एक दशक तक उत्तरी और मध्य चीन में जापानी आक्रमण के विरुद्ध गुरिल्ला लड़ाई लड़ी और लगभग दस करोड़ आजादी वाले वाले ग्रामीण क्षेत्रों को जापानी आधिपत्य से मुक्त कर लिया। दक्षिण-पश्चिमी चीन के किसी सीमांत क्षेत्र को अपना आधार बनाकर कम्युनिस्ट छापामार सैनिक जापान अधिकृत क्षेत्रों से दूर हो जाते और उन्हें जापान से युद्ध करने में असुविधा होती।

वस्तुत:, कम्युनिस्ट सरकार ने चियांग्शी में ही जापान के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी थी। यद्यपि वे चियांग्शी से जापान के खिलाफ तुरंत नहीं लड़ सकते थे क्योंकि उनके और जापानियों के बीच सैकड़ों मील लंबे ऐसे क्षेत्र थे जहां क्वामिन्तांग सेनाएं तैनात थीं। परंतु चीन के लोग नानचिंग सरकार की जापान के प्रति तुष्टीकरण की नीति से नाराज थे। वे जापान के विरुद्ध राष्ट्रीय प्रतिरोध की मांग कर रहे थे। फिट्जगेराल्ड का कहना है :

> देशभक्ति के उत्साही समर्थक के रूप में तथा प्रतिरोध की पार्टी की हैसियत से,

> कम्युनिस्टों को आशा थी कि वे उन वर्गों का भी समर्थन प्राप्त कर सकेंगे, जो उनके खिलाफ हैं। इसके साथ-साथ, शांशी में आने के बाद, उन्होंने पहले की उग्र जमींदार विरोधी नीतियों को भी छोड़ दिया और जापान के विरुद्ध युद्ध में सभी वर्गों को शामिल करने का प्रयास किया।[26]

लंबी यात्रा स्वयं एक बड़ी उपलब्धि थी। टिबोर मेंडे के शब्दों में :

> एक वर्ष में लगभग आठ हजार मील की यात्रा खुद रास्ता बनाते हुए संपन्न हुई। यह ग्यारह प्रांतों, संदिग्ध आबादी वाले दूरवर्ती क्षेत्रों, जानलेवा दलदलों और ऊंची घास के मैदानों से गुजरी। रास्ते में सरकारी और स्थानीय सैन्य बलों से झड़पों का लगातार खतरा था। कहा जाता है कि तीन कम्युनिस्ट सेनाओं ने, जिन्होंने इस यात्रा में हिस्सा लिया, अठारह पर्वत शृंखलाओं और चौबीस विशाल नदियों को पार किया, दस युद्ध-सामंतों की नाकेबंदियों को तोड़ा, दर्जनों क्वोमिन्तांग रेजीमेंटों को हराया और अस्थायी रूप से बासठ नगरों पर कब्जा किया।[27]

इस प्रकार क्रांति की रक्षा का बुनियादी काम पूरा कर लिया गया। चियांग्शी-हुनान से एक लाख तीस हजार लोग यात्रा पर चले थे। उनमें तीस हजार से कम लोग शांशी पहुंचे। सैकड़ों स्त्रियों में से केवल तीस जीवित रह सकीं। रास्ते में मरने वालों में माओ त्सेतुंग की पत्नी भी थीं। परंतु जो लोग शांशी पहुंचे उन्होंने एक सुदृढ़, विश्वसनीय और अनुशासित शक्ति के रूप में युन्नान को केंद्र बनाकर अभेद्य शांशी-कांसू-निंगशिया सीमांत क्षेत्र में नए चीनी सोवियत गणतंत्र की स्थापना की।

कम्युनिस्ट पार्टी की प्रगति से तीन ठोस नतीजे निकले। पहले का संबंध कम्युनिस्ट प्रतिष्ठा से है। क्वोमिन्तांग बार-बार दावा करती थी कि उसने कम्युनिस्टों का स्थायी तौर पर दमन कर दिया है। 1927 से 1934 तक ये झूठे दावे अनेक बार दोहराए गए। क्वोमिन्तांग तानाशाही में प्रेस स्वतंत्र नहीं था; जनता जापान के आक्रमण से चिंतित थी। चीन के अंदरूनी क्षेत्रों की घटनाओं के बारे में लोगों को बहुत कम जानकारी थी। किंतु लंबी यात्रा महाकाव्य की कथा बनती जा रही थी। क्वोमिन्तांग 'प्रोपेगंडा' कि कम्युनिस्ट डाकू हैं, जिनका सरकार ने सफाया कर दिया है, नए तथ्यों की रोशनी में झूठा सिद्ध हो गया था। कम्युनिस्टों के इस साहसपूर्ण कार्य से उन्हें नई प्रतिष्ठा और प्रशंसा मिल रही थी।

दूसरे का संबंध कम्युनिस्ट पार्टी की संपूर्ण एकजुटता से है। चियांग्शी सोवियत के इर्द-गिर्द अन्य कम्युनिस्ट नियंत्रित क्षेत्र थे लेकिन वे सभी माओ त्सेतुंग का बिना शर्त समर्थन नहीं करते थे। जब लंबी यात्रा के दौरान विभिन्न ग्रुपों ने राजनीतिक बैठकें कीं तो उन्होंने आपसी मतभेदों को दूर कर लिया। जब यात्री अपने गंतव्य पर पंहुचे तो सैनिक और राजनीतिक नेताओं ने सर्वानुमति से समर्थन प्राप्त कर लिया और माओ त्सेतुंग की 'लाइन' और नेतृत्व को पार्टी का असंदिग्ध अनुमोदन प्राप्त हो गया।

तीसरा नतीजा एक खास तरह का मानवीय अनुभव है, जो लंबी यात्रा के कारण पार्टी

को मिला। यह एक जरूरी और विशाल अध्ययन अभियान था। इसने किसानों के मनोविज्ञान के बारे में कम्युनिस्टों के विशद ज्ञान को भरा-पूरा बना दिया। इस यात्रा ने कम्युनिस्टों को नए प्रदेशों और विभिन्न प्रजातियों से घनिष्ठ संपर्क स्थापित करने का मौका दिया। उनके बीच कम्युनिस्टों ने अपने विचारों और सिद्धांतों का प्रचार किया और बदले में जनता की समस्याओं तथा दृष्टिकोणों को भी समझने की चेष्टा की क्योंकि इसी जनता पर शासन करने का अवसर उन्हें मिलने वाला था। लंबी यात्रा के दौरान कम्युनिस्ट पहली बार दक्षिण-पश्चिमी और पश्चिमी चीन के राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों के प्रत्यक्ष संपर्क में आए और दोनों पक्षों को एक-दूसरे के विचारों और लक्ष्यों को समझने का सुनहरा मौका मिला।

इसलिए जब कम्युनिस्ट शांशी पहुंचे, तो वे संख्या में कम अवश्य थे, लेकिन उनका नैतिक कद ऊंचा हो गया था। उनकी राजनीतिक चेतना, बौद्धिक ज्ञान और व्यावहारिक अनुभव में उल्लेखनीय वृद्धि हुई थी। यहां पहुंचकर उन्होंने स्थानीय क्रांतिकारियों से बातचीत कर उनके सहयोग से आधार क्षेत्र का विस्तार किया। दिसंबर 1936 में युन्नान के छोटे नगर पर कम्युनिस्टों ने अधिकार कर लिया। पहाड़ों की गोदी में स्थित यह शहर आगामी वर्षों में सोवियत गणराज्य की नई राजधानी रहा।

चियांग्शी की तुलना में उत्तरी शांशी क्वोमिन्तांग सेनाओं के लिए अधिक दुर्गम था। चिंथकांगशान की तरह यह भी एक सीमांत क्षेत्र था जिस पर कई प्रांतीय सरकारों का क्षेत्राधिकार था जिससे स्थानीय, प्रादेशिक सत्ताओं का हस्तेक्षप कठिन और कम प्रभावकारी हो जाता था। फिर भी यहां समस्याएं बहुत थीं। यह क्षेत्र अपेक्षाकृत गरीब था और जनसंख्या बहुत कम थी। भोजन की कमी थी। सेना में भरती होने योग्य जवानों की और उन्हें दिए जाने वाले हथियारों की भी कमी थी। 'इस प्रकार, सामान्य रूप से अभाव के वातावरण में और व्यावहारिक रूप से बाहरी विश्व से उपेक्षित होकर, कम्युनिस्टों ने एक बार फिर आधार क्षेत्र का एक वास्तविक सामाजिक प्रयोगशाला के रूप में निर्माण शुरू किया।'[28]

युन्नान का साम्यवादी समाज

शांशी-कांसू-निंगाशिया और चियांग्शी-हुनान आधार क्षेत्रों के बारे में *रेड स्टार ओवर चाइना* में एडगर स्नो का कहना है :

> दक्षिण में उसका स्वरूप कैसा भी रहा हो, उत्तर-पश्चिम में चीनी साम्यवाद का जो स्वरूप मैंने देखा उसे सही रूप से ग्रामीण समतावाद का नाम देना ही ठीक होगा। मार्क्स भी अपने इस आदर्श शिशु के लिए किसी और नाम को स्वीकार नहीं कर सकते थे। आर्थिक रूप से यह सत्य स्पष्ट था। यद्यपि सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन में भी मोटे तौर पर मार्क्सवादी मार्गदर्शन था, परंतु भौतिक अभाव सभी जगह दिखाई पड़ रहा था।[29]

यह सही है कि अभी इस सोवियत क्षेत्र में मशीनी उद्योग बहुत कम थे। यहां के निवासी किसान और चरवाहे थे। परंतु एडगर स्नो के अनुसार लाल सेना स्वयं चीन के उद्योगीकरण की उत्पत्ति थी और इस स्थिर संस्कृति में जिन चौंकाने वाले विचारों को यह सेना और पार्टी लाई, वे सही मायने में क्रांतिकारी थे। वस्तुपरक दृष्टि से कम्युनिस्ट आधुनिक अर्थव्यवस्था की शुरुआत के लिए एक राजनीतिक ढांचा ही बना सके। अभी उन्हें ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि और लगान संबंधी समस्याओं का हल निकालना था।

यह प्रोग्राम रूसी नरोदनिकों जैसा प्रतिक्रियावादी लग सकता है परंतु तथ्य यह है कि चीनी कम्युनिस्टों के लिए भूमि वितरण केवल जनाधार के निर्माण का एक चरण था। इस चरण द्वारा वे क्रांतिकारी संघर्ष विकसित करना चाहते थे, जिसका लक्ष्य राज्य सत्ता पर कब्जा और फिर समाजवादी बदलाव करना था। 1931 में ही पहली अखिल चीन सोवियत कांग्रेस ने सोवियत गणतंत्र के बुनियादी कानून में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के दूरगामी कार्यक्रम की विस्तृत घोषणा कर दी थी। इसमें स्पष्ट रूप से बताया गया था कि चीनी कम्युनिस्टों का अंतिम लक्ष्य मार्क्सवाद लेनिनवाद के आधार पर वास्तविक और संपूर्ण समाजवादी राज्य की स्थापना है। परंतु यह अभी भविष्य की बात थी। इस संबंध में एडगर स्नो का कहना है :

> अभी तक .... लाल जनपदों का सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक संगठन का प्रबंध बहुत ही अस्थायी मामला रहा था। चियांग्शी में भी यह थोड़ा ही दीर्घकालीन रहा था। शुरू से ही इन सोवियतों को अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़नी पड़ी थी,उनका मुख्य कार्य हमेशा सैनिक और राजनीतिक आधार क्षेत्र का निर्माण होता था, जिससे क्रांति का व्यापक और गहरे पैमाने पर विस्तार किया जा सके। यह सोचना गलत है कि ये कम्युनिस्ट नाकेबंदी से घिरे छोटे-छोटे इलाकों में कम्युनिज्म की स्थापना के लिए ऐसा कर रहे थे।[30]

शांशी में कम्युनिस्टों का जनाधार 'खेत जोतने वाले का' के कार्यक्रम पर आधारित था। यह डॉ. सुन यातसेन का ही पूर्व-घोषित कार्यक्रम था। मुख्य आर्थिक सुधार किसानों से जुड़े हुए थे। उदाहरण के लिए—भूमि का पुनर्वितरण, सूदखोरी का उन्मूलन, जबरदस्ती करों की वसूली पर रोक और विशेष अधिकारों का खात्मा। यद्यपि सोवियतें 'मजदूरों और किसानों' की थीं, सरकार परिस्थितियों की वजह से कृषकोन्मुख थी। शांशी की जनता में निम्नलिखित वर्गों की पहचान की गई थी : बड़े जमींदार, मंझोले और छोटे जमींदार, धनी किसान, मंझोले किसान, गरीब किसान, असामी किसान, ग्रामीण मजदूर, दस्तकार, लुंपन सर्वहारा और पेशेवर कर्मचारी जिसमें अध्यापक, डाक्टर, तकनीशियन तथा बुद्धिजीवी शामिल थे।

यह वर्ग विभाजन आर्थिक और राजनीतिक दोनों था। सोवियतों के चुनाव में ग्रामीण मजदूरों, असामी किसानों और दस्तकारों को अनुपात से ज्यादा प्रतिनिधित्व दिया जाता था। इसका उद्देश्य शायद 'ग्रामीण सर्वहारा वर्ग' की तानाशाही लागू करना था। इस संबंध में

एडगर स्नो का निष्कर्ष है :

> इन सीमाओं के अतर्गत सोवियतें अपने शासन के क्षेत्रों में बहुत अच्छा काम करती थीं। प्रातिनिधिक सरकार का ढांचा ग्राम सोवियत, पर आधारित था, जो लघुतम इकाई थी : उसके ऊपर जिला सोवियत, काउंटी सोवियत तथा प्रांतीय और केंद्रीय सोवियतें थीं। प्रत्येक गांव उच्चतर सोवियतों के लिए डेलीगेट चुनता था और यह क्रम सोवियत कांग्रेस के प्रतिनिधियों के चुनाव तक जारी रहता था। मताधिकार सोलह वर्ष की आयु के ऊपर सार्वभौमिक था, लेकिन समान नहीं था, जिसके कारणों की चर्चा ऊपर की गई है।[31]

कम्युनिस्टों की सदस्य संख्या किसानों और मजदूरों में, गांवों और कसबों में बहुत ज्यादा थी। शासन विभिन्न समितियों और कम्युनिस्ट पार्टी के जरिए चलाया जाता था। इन विभिन्न समितियों के कार्य थे—शिक्षा, सहकारिता सैनिक प्रशिक्षण, राजनीतिक प्रशिक्षण, भूमि, स्वास्थ्य, गुरिल्ला प्रशिक्षण, क्रांतिकारी प्रतिरक्षा, कृषि सहकार, लाल सेना का विस्तार इत्यादि। ये समितियां प्रशासन के स्थानीय, जनपदीय, प्रांतीय और केंद्रीय स्तरों पर काम करती थीं। संक्षेप में, चियांग्शी कम्युनिस्ट पार्टी के अतीत, संघर्ष, पराजय और पलायन का प्रतीक था तो युन्नान उसके उत्साह, भविष्य और अंतिम विजय का संकेत था। चियांग्शी पहले संयुक्त मोरचे की विफलता का विकल्प था तो युन्नान ने दूसरे मोरचे की स्थापना की भूमिका तैयार कर दी थी।

युन्नान अजेय था क्योंकि उसने चीन की भूमि पर एक नए स्वाधीन, संप्रभुता संपन्न जनवादी गणराज्य की नींव डाल दी थी। उसे आधार क्षेत्र बनाकर चीन की कम्युनिस्ट पार्टी और जनसेना ने न केवल जापानी हमलावरों से एक दशक तक संघर्ष किया बल्कि जापान की पराजय के बाद गृहयुद्ध में क्वोमिन्तांग की प्रतिक्रियावादी शक्तियों पर भी विजय प्राप्त की।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. ब्रां.
2. एम.एन. राय, *रिवोल्यूशन एंड काउंटर-रिवोल्यूशन*, पृ. 481–84.
3. ब्रां.
4. एडगर स्नो, *रेड स्टार ओवर चाइना*, पृ. 161.
5. *इंटरनेशनल प्रेस कारेस्पांडेंस*, खंड VII नं
6. वही.
7. वी.आई. लेनिन, *कंप्लीट वर्क्स*, खंड VIII, पृ. 235.
8. ब्रां.
9. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, 'ए सिं.
10. वही, पृ. 118.

11. सी.पी. फिट्जगेराल्ड, *दि बर्थ आफ कम्युनिस्ट चाइना*, पृ. 72–73.
12. फ्रां.
13. वही.
14. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, 'दि स्ट्रगल इन दि चिं
15. वही
16. वही.
17. हू शें
18. वही
19. वही.
20. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, 'प्राब्लम्स आफ [illegible]
21. चोउ एनलाई, 'मैसेज बिफोर दि कन्वोकेशन आफ दि फर्स्ट कांग्रेस आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ जर्मनी', 27 अप्रैल 1930
22. ल्यू पोचें
23. हू शें.
24. वही.
25. सी.पी. फिट्जगेराल्ड, *दि बर्थ आफ कम्युनिस्ट चाइना*, पृ. 75.
26. वही
27. ट्रिबोग में
28. वही
29. एडगर स्नो, *रेड स्टार ओवर चाइना*, पृ. 232
30. वही
31. वही.

अध्याय सात

दूसरे संयुक्त मोरचे का योगदान

युन्नान काल का संयुक्त मोरचा

जब हम युन्नान काल का आंरभ 1935 से करते हैं तो एक प्रकार से यह सही नहीं है क्योंकि युन्नान नगर पर कम्युनिस्टों का आधिपत्य दिसंबर 1936 में हुआ और उसे चीनी सोवियत गणराज्य की राजधानी 1937 के पूर्वार्ध में बनाया गया। दूसरी ओर लंबी यात्रा के बाद कम्युनिस्ट पार्टी का अग्रिम दस्ता उत्तर-पश्चिमी चीन में नवंबर 1935 में ही पहुंच गया और उसी वर्ष कोमिन्टर्न ने संयुक्त मोरचे की रणनीति को विश्वव्यापी स्तर पर कम्युनिस्ट पार्टी की सार्वभौमिक अर्थात सभी देशों के लिए उपयुक्त नीति के रूप में स्वीकार कर लिया।

क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच दूसरे संयुक्त मोरचे की शुरुआत 22 सितंबर 1937 को क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट सहयोग के बारे में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के एक वक्तव्य द्वारा हुई। 18 सितंबर 1931 को मंचूरिया पर जापानी आक्रमण के बाद ही 1932 की शुरुआत में कम्युनिस्ट नेताओं ने सभी जापान विरोधी ताकतों से अनुरोध किया था कि वे एकजुट होकर जापानी हमले का मुकाबला करें। परंतु यह संदिग्ध है कि इस समय कम्युनिस्ट पार्टी क्वोमिन्तांग के साथ किसी प्रकार का सहयोग करना चाहती थी।

अप्रैल 1932 में भी कम्युनिस्ट पार्टी केवल 'नीचे से संयुक्त मोरचे' का अनुमोदन कर रही थी जिसका मतलब था कि क्वोमिन्तांग सरकार के उन्मूलन के बाद ही कम्युनिस्ट पार्टी तथा अन्य जापान विरोधी शक्तियों के बीच संयुक्त मोरचे का निर्माण संभव हो सकता है। परंतु यह भी विवादास्पद विषय है जिसकी जांच-पड़ताल होनी चाहिए। 1933 और 1936 के बीच कम्युनिस्ट पार्टी ने इस प्रकार के प्रस्ताव कई बार रखे लेकिन क्वोमिन्तांग ने उनका कोई उत्तर नहीं दिया। वस्तुतः इस समय दोनों पार्टियों के बीच अंतर्विरोध चरम सीमा पर थे।

दूसरे संयुक्त मोरचे का जन्म वास्तव में शीयान प्रकरण के बाद दिसंबर 1936 में हुआ जब चांग श्यूलियांग ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अनुरोध पर बंदी च्यांग काई शेक को अपनी हिरासत से मुक्त कर दिया। इसके बाद अक्तूबर 1938 तक, जब जापान ने हैंकाऊ पर कब्जा किया, दोनो पार्टियों के आपसी संबंध मैत्रीपूर्ण प्रतीत होते हैं। अप्रैल 1939 के बाद, जब शांतुंग में 300 से अधिक कम्युनिस्ट गुरिल्लाओं को मार दिया गया, तो दोनों पार्टियों के बीच संबंध फिर बिगड़ गए।

दोनों के बीच का संघर्ष जनवरी 1941 में खुलकर सामने आ गया जब क्वोमिन्तांग सेनाओं ने कम्युनिस्टों की नई चौथी आर्मी पर आक्रमण किया। कम्युनिस्ट सेनापति, ये चिंग को बंदी बना लिया गया और उपप्रधान को युद्ध में मार दिया गया। उसके बाद क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट सेनाओं के बीच कई बार मुठभेड़ें हुईं।

इन संघर्षों के बावजूद दोनों पार्टियों के बीच संयुक्त मोरचा औपचारिक रूप से कायम रहा। संयुक्त मोरचे को बनाए रखने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी ने 'दस महान नीतियों' की घोषणा की जो चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के बुनियादी कार्यक्रम का हिस्सा थीं। जुलाई 1940 में कम्युनिस्ट पार्टी ने 'तीन तिहाइयों की प्रणाली' को प्रस्तावित और लागू किया। इसके अनुसार कम्युनिस्ट-अधिकृत क्षेत्रों में सभी शासकीय अभिकरणों में अधिकारियों और कर्मचारियों का अनुपात इस प्रकार था : एक तिहाई कम्युनिस्ट और दो-तिहाई क्वोमिन्तांग तथा गैर-पार्टी व्यक्ति। इस नीति के कारण कम्युनिस्टों को उत्तरी चीन के मुक्त क्षेत्रों में गैर-कम्युनिस्टों का समर्थन पाने में बहुत सुविधा हुई।

1935 के बाद माओ त्सेतुंग ने कम्युनिस्ट पार्टी तथा क्वोमिन्तांग के बीच सैद्धांतिक तालमेल बैठाने के उद्देश्य से फिर इस सिद्धांत का प्रतिपादन किया कि चीन में तत्कालीन दौर में केवल बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति ही की जा सकती थी। डॉ. सुन यातसेन के तीन सिद्धांतों में भी इसी प्रकार की क्रांति का उल्लेख था। माओ त्सेतुंग ने इसी सिद्धांत का 1923-27 में भी पहले संयुक्त मोरचे के समय प्रतिपादन किया था।

परंतु माओ त्सेतुंग ने यह भी हमेशा कहा कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का अंतिम ध्येय पूर्ण समाजवाद की स्थापना करना है। सोवियत क्षेत्रों के प्रतिनिधियों की कांग्रेस में भाषण देते हुए 3 मार्च 1937 को माओ त्सेतुंग ने संयुक्त मोरचे के संबंध में पार्टी की नीति का स्पष्टीकरण निम्नलिखित शब्दों में किया :

> क्या चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का कार्यक्रम (डॉ. सुन के) तीन जनवादी सिद्धांतों के अनुकूल है? हमारा उत्तर है कि यह बिलकुल अनुकूल है।....चीनी कम्युनिस्ट पार्टी कभी समाजवादी और साम्यवादी आदर्शों को नहीं छोड़ सकती जिन्हें क्रांति के बुर्जुआ लोकतांत्रिक चरण से आगे बढ़ते हुए हासिल किया जाएगा। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का अपना संविधान है और अपना कार्यक्रम है। उसका पार्टी संविधान समाजवादी और साम्यवादी होने के कारण जनता के तीनों सिद्धांतों से भिन्न है। लोकतांत्रिक क्रांति (अर्थात 'सामंतवाद के उन्मूलन, राष्ट्रीय एकीकरण आदि के लिए बुर्जुआ लोकतांत्रिक क्रांति, के लिए उसका कार्यक्रम देश की किसी अन्य पार्टी की तुलना में अधिक तर्कसंगत है। इसलिए उसकी और क्वोमिन्तांग की पहली और दूसरी कांग्रेसों द्वारा घोषित जनता के तीन सिद्धांतों के बीच निश्चित रूप से बुनियादी अंतर्विरोध हैं।'[1])

माओ त्सेतुंग ने इस पर चर्चा करते हुए आगे कहा :

हम क्रांतिकारी परिवर्तन में विश्वास करते हैं। हमारा मत है कि लोकतांत्रिक क्रांति समाजवाद की दिशा में आगे बढ़ेगी। लोकतांत्रिक क्रांति के विकास के अनेक चरण होंगे। ये सभी चरण लोकतांत्रिक गणराज्य के अंतर्गत होंगे, सोवियत गणतंत्र के अंतर्गत नहीं।....सर्वहारा वर्ग का सुदृढ़ मित्र किसान वर्ग है; उसके बाद निम्न-बुर्जुआ वर्ग आता है। क्रांति के नेतृत्व के लिए बुर्जुआ वर्ग हमसे प्रतिस्पर्धा करता है। ....परंतु क्रांतिकारी रूपांतरण से हमारा तात्पर्य न तो त्रात्स्कीवादी स्थायी क्रांति से है न ही अर्ध-त्रात्स्कीवादी लीसानवाद से। हमारी मान्यता है कि समाजवाद के लक्ष्य तक पहुंचने के लिए जनवादी गणतंत्र के सभी आवश्यक चरणों से गुजरना और उन्हें पार करना चाहिए। हम पुछल्लावाद का विरोध करते हैं तथा दुस्साहस और अधैर्य का भी। यह मान लेना कि बुर्जुआजी का उन्मूलन कर देना चाहिए क्योंकि उसका चरित्र संक्रमणकालिक है उसी तरह है जैसे अर्ध-उपनिवेशी क्षेत्रों में क्रांतिकारी समूहों पर पराजयवाद और बुर्जुआजी से सहयोग का आरोप लगाना। ये केवल त्रात्स्कीवादी शब्द हैं जिनसे हम सहमत नहीं हैं। बुर्जुआजी और क्रांतिकारी समूहों के बीच गठबंधन एक अनिवार्य चरण है जिसे पार कर ही समाजवाद के लक्ष्य तक पहुंचा जा सकता है।[2]

अत: हम माओ के इन वक्तव्यों से ही निम्न निष्कर्ष निकाल सकते हैं :

1. बुर्जुआजी से गठबंधन यद्यपि वांछनीय और आवश्यक है लेकिन वह केवल संक्रमणकालीन है। अंतिम लक्ष्य समाजवाद और साम्यवाद ही है।
2. संक्रमणकालीन चरण में क्वोमिन्तांग को जनता और क्रांति के नेतृत्व के लिए एक प्रतिस्पर्धी माना गया है।
3. चीनी जनता के राष्ट्रवाद को बहुत महत्व दिया गया है और वास्तव में उसका कुशलतापूर्वक लाभ उठाया गया है।

यदि हम इन बिंदुओं को ध्यान में रखें, तो आसानी से इस बात को समझ सकते हैं कि चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने 1937 के बाद इस बात का क्यों आग्रह किया कि वह अपने भूभागीय आधार क्षेत्रों पर अपना नियंत्रण बनाए रखेगी और अपने सैन्य बलों को अपने अधीन रखेगी। उसने इस बात पर भी बल दिया कि दूसरे संयुक्त मोरचे के समय वह जमींदारों सहित सभी ग्रामीण वर्गों के प्रति नरम नीति का प्रयोग करेगी और उसने इसी नीति का अनुसरण 1946 के बाद क्वोमिन्तांग से गृहयुद्ध के समय भी किया। 'यह बिलकुल स्पष्ट है कि माओ तथा चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व ने 1923-27 के पहले संयुक्त मोरचे के दौरान और उसके बाद की घटनाओं से बहुत कुछ सीखा था।'[3]

दूसरे संयुक्त मोरचे के आवश्यक कार्य

माओ त्सेतुंग ने 29 नवंबर 1937 को अपने भाषण में दूसरे संयुक्त मोरचे के आवश्यक

कार्यों की चर्चा की। उन्होंने बताया कि 1932 में ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी प्रसिद्ध घोषणा में तीन शर्तों के आधार पर क्वोमिन्तांग के भीतर के किसी भी ऐसे 'ग्रुप' के साथ संयुक्त मोरचे की स्थापना का प्रस्ताव किया था जो चीनी सोवियतों और लाल सेना के साथ गृहयुद्ध निलंबित करने के लिए तैयार हो और जापान के विरुद्ध युद्ध चलाने का इच्छुक हो। 1931 में मंचूरिया पर हमले के बाद चीनी क्षेत्र पर जापानी आधिपत्य के विरुद्ध संघर्ष करना चीनी क्रांति का प्राथमिक कार्य हो गया था।

अगस्त 1935 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी केंद्रीय सोवियत सरकार ने सभी पार्टियों, समूहों और संपूर्ण चीनी जनता से अनुरोध किया कि वे जापान विरोधी सेना और राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के लिए सरकार का गठन करें जो जापानी साम्राज्यवाद के खिलाफ मिल-जुलकर संघर्ष और युद्ध कर सके। दिसंबर 1935 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने जापान विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोरचे के निर्माण के लिए अपने प्रस्ताव को जाहिर किया। 1936 की मई में लाल सेना जापान से लड़ने के इरादे से उत्तरी शांशी में प्रवेश कर गई थी परंतु शांशी के गवर्नर ने उसे आगे बढ़ने से रोक दिया।

उसके बाद केंद्रीय सोवियत सरकार (युन्नान) ने एक घोषणा द्वारा फिर नानचिंग (क्वोमिन्तांग) शासन से अनुरोध किया कि वह गृहयुद्ध समाप्त करे और जापान के विरुद्ध युद्ध करने में कम्युनिस्ट पार्टी से सहयोग करे। अगस्त 1936 में कम्युनिस्ट पार्टी ने क्वोमिन्तांग की केंद्रीय समिति को एक ज्ञापन दिया और जापानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध संयुक्त मोरचा बनाने का आग्रह किया। सितंबर 1937 में कम्युनिस्ट पार्टी ने चीन में एकीकृत लोकतांत्रिक गणतंत्र की स्थापना के लिए एक घोषणापत्र जारी किया। परंतु क्वोमिन्तांग सरकार ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया।

ऊपर वर्णित शीयान प्रकरण के बाद ही संयुक्त मोरचे ने व्यावहारिक स्वरूप ग्रहण किया। संयुक्त मोरचे के आवश्यक कार्यों को अमल में लाने के लिए क्वोमिन्तांग सरकार से कम्युनिस्ट पार्टियों ने पांच गारंटियां मांगीं :

1. गृहयुद्ध का अंत,
2. जनवादी अधिकारों की रक्षा,
3. राष्ट्रीय संसद की स्थापना,
4. जापान विरोधी युद्ध के लिए शीघ्र तैयारी, और
5. जनता की जीवन-दशा में सुधार।

इनके बदले कम्युनिस्ट पार्टी ने चार वायदे किए :

1. अपनी सरकार की संप्रभुता का अंत,
2. लाल सेना और सोवियत क्षेत्रों के नाम में परिवर्तन,
3. लोकतांत्रिक व्यवहार, तथा
4. भूमि के अधिग्रहण की समाप्ति।

माओ त्सेतुंग का कथन है, 'यह भी एक महत्वपूर्ण राजनीतिक कदम था, क्योंकि यदि यह कदम न लिया जाता, तो दोनों पार्टियों के बीच संयुक्त मोरचे के निर्माण में देर होती, इसका प्रतिकूल असर प्रतिरोध युद्ध की तैयारी पर पड़ता।'[4]

इसके बाद दोनों दलों के बीच संयुक्त मोरचे के आवश्यक कार्यों के बारे में विस्तार से वार्ता हुई। इनमें कई मुद्दों पर स्पष्ट और तयशुदा सुझावों का आदान-प्रदान हुआ। संयुक्त मोरचे का एक आवश्यक कार्य था कि दोनों दल न्यूनतम साझा राजनीतिक कार्यक्रम बनाएं। दोनों दलों का दायित्व था कि वे जन आंदोलनों को प्रोत्साहन दें और उनकी स्वतंत्रता की रक्षा करें। संयुक्त मोरचे की पूर्व शर्त थी कि सभी राजनीतिक बंदियों को मुक्त कर दिया जाए। क्वोमिन्तांग सरकार सोवियत क्षेत्रों की स्वायत्तता को स्वीकार करे और सोवियत क्षेत्र राष्ट्रीय सरकार की प्रभुसत्ता को मान्यता दे। इन सुझावों पर दोनों पक्षों में पूर्ण सहमति नहीं हो सकी और इस असहमति ने संयुक्त मोरचे की सामर्थ्य को कमजोर किया।

परंतु पेइचिंग और तियांचिन के पतन के बाद लाल सेना के नए नाम पर सहमति हो गई। उसे राष्ट्रीय क्रांतिकारी सेना की आठवीं रूट आर्मी का नाम मिला और जापान विरोधी संग्राम में उसे अठारहवां सैन्य बल घोषित किया गया। कुछ देर बाद क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट सहयोग पर केंद्रीय समिति का घोषणापत्र च्यांग काई शेक द्वारा जारी किया गया। इसके बाद कम्युनिस्ट पार्टी को वैधानिक मान्यता का ऐलान 'सेंट्रल न्यूज एजेंसी' द्वारा 22 और 23 सितंबर 1937 को प्रकाशित कर दिया गया। माओ त्सेतुंग ने कहा :

> कम्युनिस्ट पार्टी के घोषणापत्र और च्यांग काई शेक के भाषण ने जिसमें दोनों दलों के संयुक्त मोरचे की स्थापना का ऐलान किया गया दोनों पार्टियों के महान उद्देश्य और राष्ट्रीय मुक्ति के लिए संयुक्त प्रयास का मूल आधार प्रस्तुत कर दिया है।....च्यांग के भाषण ने राष्ट्र के भीतर कम्युनिस्ट पार्टी के वैधानिक दर्जे को स्वीकार कर लिया है। ....हम देखते हैं कि फिर भी क्वोमिन्तांग का अहंकार नहीं गया है और न ही उसने सचमुच आत्म-आलोचना की है। तथापि दोनों दलों का संयुक्त मोरचा स्थापित हो गया है और इसने चीन के क्रांतिकारी इतिहास में एक नए युग की शुरुआत की है। संपूर्ण राष्ट्र को इसके राजनीतिक महत्व को समझ लेना चाहिए। भविष्य में संयुक्त मोरचे का चीनी क्रांति पर व्यापक और गंभीर प्रभाव पड़ेगा और यह जापानी साम्राज्यवाद की हार की गारंटी करेगा।[5]

संयुक्त मोरचे का प्रभाव

1924-27 के पहले संयुक्त मोरचे के तीन वर्षों में ही महान राष्ट्रीय क्रांति को सफलतापूर्वक संचालित किया गया था। परंतु जब यह संयुक्त मोरचा टूट गया तो जापानी साम्राज्यवाद ने मौके का फायदा उठाकर मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया और चीन के उत्तर-पूर्वी प्रांतों पर

कब्जा कर लिया। अब दूसरे संयुक्त मोरचे की स्थापना हो गई थी जिसने चीनी क्रांति में एक नए चरण की शुरुआत की ।

कुछ लोग समझते हैं कि संयुक्त मोरचे की स्थापना अवसरवाद का नतीजा है और बिलकुल अस्थायी और अस्थिर नीति है। वस्तुत: यह चीनी क्रांति को आगे ले जाने वाला था। संयुक्त मोरचे की स्थापना के व्यापक प्रभाव जल्दी ही दिखाई पड़ने लगे । जैसे ही कम्युनिस्ट पार्टी ने संयुक्त मोरचे का प्रस्ताव रखा, संपूर्ण राष्ट्र ने तुरंत उसका स्वागत और समर्थन किया। यह लोकमत की इच्छा को जाहिर करता था।

जब शीयान घटना का शांतिपूर्ण हल हो गया और दोनों पार्टियों और दोनों सेनाओं ने आपस में लड़ना बंद कर दिया, तो संपूर्ण राष्ट्र में सभी दलों, समूहों, वर्गों और सैन्य बलों में असाधारण रूप से एकजुटता स्थापित हो गई।

राष्ट्रीय स्तर पर जापान के खिलाफ प्रतिरोध युद्ध के लिए लामबंदी शुरू हो गई। माओ का कहना था कि हम युद्ध की वर्तमान स्थिति से संतुष्ट नहीं हैं जिसमें सरकार और सिर्फ सरकारी फौज लड़ती है। युद्ध का राष्ट्रव्यापी आधार होना चाहिए। जापानी साम्राज्यवाद को हटाने के लिए सारे राष्ट्र को युद्ध में योगदान करना पड़ेगा। राष्ट्रीय जनमत इस बात को समझ गया था :

> जब संयुक्त मोरचा नहीं था तो जापान ने बिना गोली चलाए संपूर्ण उत्तर-पूर्वी चीन को जीत लिया। अब अगर जापान चीन में अतिरिक्त भूभाग जीतना चाहेगा तो हमारा संयुक्त मोरचा संघर्ष के बिना उसे कोई अतिरिक्त भूमि नहीं लेने देगा। .... जापान इस युद्ध पर सात अरब डालर वार्षिक खर्च कर रहा है जो जल्दी ही उसे दिवालिया बना देगा।[6]

संयुक्त मोरचे का अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव हुआ। दुनिया के मजदूर और किसान वर्ग, कम्युनिस्ट तथा प्रगतिशील तत्व, राष्ट्रवादी आंदोलन, सोवियत यूनियन की सरकार ने क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी के संयुक्त मोरचे का समर्थन किया। अत: संयुक्त मोरचे का भविष्य उज्ज्वल था और उसके आधार पर 'जापानी साम्राज्यवाद की पराजय और एकीकृत लोकतांत्रिक चीनी गणराज्य की स्थापना' सुनिश्चित थी।

संयुक्त मोरचे का स्वरूप

इस संयुक्त मोरचे में, माओ के अनुसार, सुधार की आवश्यकता थी क्योंकि वह ठोस और शक्तिशाली नहीं था। जापान विरोधी संयुक्त मोरचा केवल दो दलों तक सीमित नहीं रह सकता था। वे इस मोरचे के दो छोटे से अंश थे। इसे संपूर्ण राष्ट्र के संयुक्त मोरचे का स्वरूप ग्रहण करना होगा। इसे सभी चीनी देशभक्तों, मजदूरों, किसानों, छात्रों और सैनिकों का संयुक्त मोरचा होना था। चीनी जनता के बहुमत को संयुक्त मोरचे में शामिल करने के लिए सचेत और उत्साहित करने की आवश्यकता थी। जापान विरोधी संयुक्त मोरचे को प्रभावकारी

बनाने के लिए जनता को हथियारों से लैस करना होगा जिससे आम लोग जापानी हमले का मुकाबला कर सकें। माओ के अनुसार हमें क्वोमिन्तांग की 'सरकारी' लड़ाई को जनयुद्ध में रूपांतरित करना होगा।

माओ का कहना था कि संयुक्त मोरचे को सक्रिय करने के लिए हमें डॉ. सुन यातसेन के वसीयतनामे से शिक्षा लेकर उनके तीन जनवादी सिद्धांतों को क्रियान्वित करना होगा। राष्ट्रवाद, लोकतंत्र और जनता की जीविका के तीन सिद्धांतों के आधार पर संयुक्त मोरचे के तत्वावधान में राष्ट्रव्यापी जन आंदोलन ही जापानी साम्राज्यवाद को हराने में सक्षम होगा।

उस समय भी क्वोमिन्तांग नियंत्रण और सर्वसत्तावाद की नीति पर शासन चला रही थी और डॉ. सुन यातसेन के वसीयतनामे की उपेक्षा कर रही थी। यह संयुक्त मोरचे की भावना के प्रतिकूल था। माओ ने कहा :

> यदि युद्ध केवल सरकार और सेना लड़ेगी तो वह कभी जापानी साम्राज्यवाद को पराजित नहीं कर सकती।...हमने सत्ताधारी पार्टी को पहले ही चेतावनी दे दी है कि जन-जागृति के बिना चीन में भी अबीसीनिया (जिसे इटली ने जीत लिया) की मिसाल दोहराई जा सकती है।...जब तक संयुक्त मोरचे को आम जनता अमल में नहीं लाती तब तक लड़ाई में परिस्थिति और भी ज्यादा बिगड़ेगी, उसमें सुधार नहीं होगा।[7]

शासक दल की अधिनायक नीति में परिवर्तन क्यों नहीं हुआ? माओ का उत्तर है क्योंकि संयुक्त मोरचे के बाद भी दोनों पार्टियों के बीच राजनीतिक कार्यक्रमों पर कोई समझौता नहीं हुआ है। क्वोमिन्तांग की नीतियां अब भी वही हैं जो दस वर्ष पहले थीं। सरकारी संस्थाओं के ढांचे, सैनिक प्रणाली, जन आंदोलनों के प्रति नीतियों, और वित्तीय,आर्थिक और शैक्षिक नीतियों में कोई परिवर्तन पिछले एक दशक में नहीं हुआ है।

फिर भी एक बड़ा परिवर्तन हुआ था। वह था गृहयुद्ध का अंत, संयुक्त मोरचे की शुरुआत और जापान से लड़ने का संयुक्त निर्णय। परंतु जापान से युद्ध करने के लिए सरकार को पुरानी नीतियां बदलनी चाहिए थीं और संयुक्त मोरचे के आधार पर एक प्रगतिशील कार्यक्रम और जन आंदोलन के विकास की जरूरत थी। माओ त्सेतुंग का निष्कर्ष है :

> जापान का प्रतिरोध करने के लिए हमें एक मजबूत संयुक्त मोरचे की जरूरत है जिसमें संपूर्ण राष्ट्र की भागीदारी हो। जापान के विरुद्ध हमें एक ठोस संयुक्त मोरचे की आवश्यकता है जिसका अर्थ है हम उसके अंतर्गत समान नीतियां लागू करें। समान नीतियां संयुक्त मोरचे के मार्गदर्शक सिद्धांत होने चाहिए। वे संयुक्त मोरचे को बांधने वाली शक्ति होंगी...जो सभी पार्टियों, समूहों, वर्गों और सेनाओं को सभी संस्थाओं और व्यक्तियों को एक डोर से बांधकर रख सकेंगी। हमें नियंत्रण का पुराना तरीका छोड़कर इस नई विधि द्वारा क्रांतिकारी व्यवस्था को लागू करना चाहिए। समान नीतियों की घोषणा द्वारा ही संयुक्त मोरचा प्रतिरोध युद्ध का संचालन कर सकता है।[8]

23 सितंबर 1937 के अपने वक्तव्य में च्यांग काई शेक ने भी स्वीकार किया :

> मेरा यह मत है कि क्रांति के निष्ठावान अनुयायियों के रूप में हमें व्यक्तिगत मतभेदों और पूर्वग्रहों पर जोर नहीं देना चाहिए। इस कठिन परिस्थिति में तीन जनवादी सिद्धांतों को क्रियान्वित करने के लिए हमें अतीत की दु:खद घटनाओं को भुला देना चाहिए और अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए संपूर्ण जनता से एकजुटता स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए।[9]

15 अगस्त 1937 को कम्युनिस्ट पार्टी ने जापान विरोधी संघर्ष और राष्ट्रीय मुक्ति के लिए दस महान सिद्धांतों का प्रतिपादन किया था। माओ त्सेतुंग के अनुसार ये मार्क्सवाद तथा सुन यातसेन के तीन जनवादी सिद्धांत, दोनों के अनुकूल थे। परंतु उन्हें क्वोमिन्तांग की सहमति से ही अमल में लाया जा सकता था क्योंकि वह अब भी सबसे बड़ी पार्टी थी और सत्ता में थी।

वस्तुत: उन्हें क्रियान्वित करने के लिए एक राष्ट्रीय, लोकतांत्रिक संयुक्त मोरचे की स्थापना की आवश्यकता थी। पिछले तीन महीनों में कम्युनिस्ट और क्वोमिन्तांग सेनाएं उत्तरी चीन में जापानी आक्रमण के विरुद्ध छापामार युद्ध या सीधी मुठभेड़ के जरिए लड़ रही थीं। परंतु माओ के अनुसार वर्तमान सैन्य प्रणाली में तुरंत सुधारों की जरूरत थी। उन्होंने कहा कि हमें 1925-27 की क्रांतिकारी सेना के 'माडल' को तुरंत लागू करना चाहिए। सेना में राजनीतिक चेतना और देशभक्ति की भावना जगाने की आवश्यकता है।

माओ ने कहा कि हमें स्पेन के गृहयुद्ध से सबक सीखना चाहिए। स्पेन में रिपब्लिकन सेना के निर्माण में काफी मुश्किलें आई थीं। चीन की दशा स्पेन की अपेक्षा अच्छी है पर यहां भी कुछ बाधाएं हैं। चीन में भी सुदृढ़ और ठोस साझा कार्यक्रम तथा उस पर आधारित संयुक्त मोरचे की सरकार का अभाव है। कम्युनिस्ट सेना के सैनिक राजनीतिक और सांगठनिक सिद्धांतों को सभी मित्र सेनाओं को अपनाना चाहिए और अफसरों और जवानों, सेना और जनता के बीच में सामंती संबंधों का अंत करना चाहिए।

माओ त्सेतुंग ने क्वोमिन्तांग के साथियों से अपील की कि वे संयुक्त मोरचे को मजबूत बनाने के लिए प्रस्तावित दस महान सिद्धांतों पर गंभीरता से विचार करें और आपसी बातचीत द्वारा संयुक्त मोरचे का साझा कार्यक्रम तय करें। माओ ने आशा प्रकट की कि च्यांग काई शेक स्वयं क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट एकता के हित में साझा कार्यक्रम तय करने में योगदान करेगा।

प्रस्तावित दस महान सिद्धांत

15 अगस्त 1937 को कम्युनिस्ट पार्टी ने संयुक्त मोरचे के लिए दस महान सिद्धांतों का प्रतिपादन किया, जिनके आधार पर जापान विरोधी संघर्ष में क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट सहयोग विकसित किया जा सकता था :

1. जापानी साम्राज्यवाद का उन्मूलन : जापान से कूटनीतिक संबंधों का विच्छेद, जापानी संपत्ति का अधिग्रहण, जापानी ऋणों को रद्द करना, जापानी विशेषाधिकारों का अंत, उत्तरी चीन और मंचूरिया को मुक्त कराने के लिए युद्ध में तेजी।
2. राष्ट्र की संपूर्ण सैनिक लामबंदी : सेना, नौसेना और वायु सेना का जापान के खिलाफ तुरंत और पूर्ण उपयोग, रक्षात्मक रणनीति के स्थान पर सक्रिय पहल की रणनीति अपनाना, छापामार युद्ध और जनता को हथियार देना, सेना में जनवादी सुधार, हर मोरचे पर लड़ाई, जापानी अधिकृत क्षेत्रों में गुरिल्ला हमले।
3. संपूर्ण राष्ट्र की पूरी लामबंदी : देशद्रोहियों को छोड़कर, सभी को भाषण, प्रकाशन, सभा, समुदाय और सशस्त्र प्रतिरोध की स्वतंत्रता, क्रांतिकारी और राजनीतिक बंदियों की मुक्ति, सभी नागरिक बल, धन ज्ञान और शस्त्रों से युद्ध में मदद करें, मुसलमानों, मंगोलों और अल्पसंख्यकों को स्वशासन और आत्मनिर्णय।
4. राजनीतिक तंत्र का सुधार : जनता का सच्चा प्रतिनिधित्व करने वाली राष्ट्रीय सभा का गठन, सच्चे लोकतांत्रिक संविधान को लागू करना, राष्ट्रीय प्रतिरक्षा सरकार का निर्वाचन।
5. जापान विरोधी विदेश नीति : सभी जापान विरोधी देशों से आपसी सहायता और अनाक्रमण संधियां; शांति शिविर का समर्थन और जर्मनी, जापान और इटली के युद्ध शिविर का विरोध; कोरिया, ताइवान और जापानी जनता का जापानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध समर्थन।
6. युद्धकालीन वित्तीय और आर्थिक नीति : देशद्रोहियों की संपत्ति की जब्ती, धनवानों पर विशिष्ट युद्ध कर, राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के लिए उत्पादन का पुनर्गठन और विस्तार, कृषि उत्पादन का विकास, स्वदेशी उद्योगों को समर्थन, जापानी वस्तुओं का बहिष्कार।
7. जन-कल्याण का विकास : मजदूरों, किसानों, कर्मचारियों, अध्यापकों और देशभक्त सैनिकों को सहायता, जापान से लड़ रहे सैनिकों के परिवारों की देखभाल, अन्यायपूर्ण करों का अंत, लगान, ब्याज और किराए की दरों में कमी, बेरोजगारी भत्ता, न्यायोचित खाद्य वितरण, अकाल पीड़ितों को राहत और पुनर्वास।
8. जापान विरोधी शिक्षा नीति : पुरानी शिक्षा प्रणाली का अंत, आधुनिक शिक्षा प्रणाली की स्थापना जो जापान के विरुद्ध संघर्ष में सहायक हो, जनचेतना जगाने के लिए निःशुल्क, अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, संपूर्ण देश में छात्रों को अनिवाय सैनिक शिक्षा।
9. रणक्षेत्र की पृष्ठभूमि में राष्ट्र को एकजुट करने के लिए देशद्रोहियों, दलालों और जापान समर्थक तत्वों का विनाश।

10. *जापान के विरुद्ध राष्ट्रीय एकजुटता हासिल करना।*

क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच पूर्ण सहयोग के आधार पर एक राष्ट्रव्यापी संयुक्त मोरचे का निर्माण किया जाए जिसमें सभी दलों, समूहों, वर्गों और सेनाओं को शामिल किया जाए जिससे जापान के विरुद्ध स्वाधीनता का युद्ध सफलतापूर्वक लड़ा जा सके और ईमानदारी पर आधारित एकता द्वारा राष्ट्रीय संकट का समाधान किया जा सके। क्वोमिन्तांग और उसके प्रमुख नेता च्यांग काई शेक ने इन प्रस्तावों की उपेक्षा कर दी।

दोनों दलों में सहयोग के बारे में कम्युनिस्ट दृष्टिकोण

22 सितंबर 1937 को क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट सहयोग पर कम्युनिस्ट पार्टी ने एक वक्तव्य जारी किया जिसे क्वोमिन्तांग की सेंट्रल न्यूज एजेंसी ने प्रकाशित किया। इसमें चीन के जापान विरोधी संघर्ष के लिए दोनों दलों के साझा लक्ष्यों की चर्चा की गई। ये लक्ष्य निम्नलिखित थे :

1. चीनी राष्ट्र की स्वाधीनता के संघर्ष के लिए राष्ट्रीय क्रांतिकारी प्रतिरोध अभियान तेज किया जाए और विजित क्षेत्रों को फिर जीतकर देश की अखंडता और संप्रभुता की रक्षा की जाए।
2. जनाधिकारों के आधार पर राष्ट्रीय सभा का गठन कर उसका शीघ्र अधिवेशन बुलाया जाए जो संविधान बनाए और लोकतंत्र की स्थापना करे। इसके लिए क्वोमिन्तांग वचनबद्ध है।
3. चीनी जनता के सुख और आरामदेह जीवन के लिए उसे उचित रोजगार मिले। दुर्भिक्ष और सूखे से उसे मुक्ति दिलाई जाए। राष्ट्रीय प्रतिरक्षा अर्थव्यवस्था का विकास किया जाए। जनता के कष्टों को दूर किया जाए और उनके जीवन दशा में सुधारा किया जाए।

कम्युनिस्ट पार्टी ने राष्ट्रीय रक्षा के लिए अपनी प्रतिबद्धता सिद्ध करने के लिए देश को आश्वासन दिया :

1. पार्टी तीन जनवादी सिद्धांतों को पूर्ण रूप से लागू करने का प्रयास करेगो।
2. पार्टी क्वोमिन्तांग के बलपूर्वक उन्मूलन की नीति का, एवं सोवियतीकरण के आंदोलन और जमींदारों की भूमि के अधिग्रहण की नीतियों का परित्याग करती है।
3. पार्टी वर्तमान सोवियत सरकार को समाप्त कर जनता के अधिकारों के आधार पर लोकतंत्र की स्थापना करेगी और राष्ट्रीय राजनीतिक सत्ता का एकीकरण करना चाहेगी।
4. पार्टी लाल सेना का नाम बदलकर उसे चीन की राष्ट्रीय क्रांतिकारी सेना का

> अंग बना देगी और नानचिंग सरकार के राष्ट्रीय सैनिक मामलों के आयोग के आदेशानुसार जापान के विरुद्ध रणभूमि में युद्ध करेगी।

कम्युनिस्ट पार्टी ने दावा किया कि सोवियत क्षेत्र की समाप्ति और लाल सेना का राष्ट्रीय सेना के रूप में पुनर्गठन संयुक्त मोरचे के समझौते के प्रति उसकी ईमानदारी का सबूत थी।

संयुक्त मोरचे के बारे में च्यांग का दृष्टिकोण

पहले संयुक्त मोरचे का उत्तरी अभियान में पूरा लाभ उठाकर च्यांग काई शेक ने उसे शंघाई तख्ता पलट के जरिए भंग कर दिया और उसके बाद 1936 तक कम्युनिस्ट पार्टी और लाल सेना के विरुद्ध संहार के पांच अभियान चलाए। दिसंबर 1936 में वह शीयान इस उद्देश्य से पहुंचा ताकि कम्युनिस्टों के युन्नान क्षेत्र के खिलाफ उसी प्रकार का विनाश अभियान शुरू कर सके।

यद्यपि संपूर्ण चीन में छात्रों और युवाओं ने एक आंदोलन द्वारा (9 दिसंबर के आंदोलन द्वारा) मांग की थी कि क्वोमिन्तांग गृहयुद्ध बंद करे और जापानी साम्राज्यवाद से लड़े परंतु च्यांग काई शेक जापान के प्रति तुष्टीकरण के नीति पर अड़ा हुआ था और कम्युनिस्टों के विरुद्ध गृहयुद्ध जारी रखना चाहता था। हू शेंग तथा अन्य लेखकों का कहना है :

> क्वोमिन्तांग जनता में उदीयमान जापान विरोधी शक्तियों को नेतृत्व प्रदान करने के लिए न तो इच्छुक थी और न ही सक्षम, बल्कि उसके रास्ते में रोड़े अटका रही थी।[10]

क्वोमिन्तांग की अंदरूनी गुटबंदियां भी राष्ट्रव्यापी एकता में बाधक थीं। क्वोमिन्तांग शासन में सामंती संबंधों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। वह चीन में विकसित पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के निर्माण में असफल रहा था और अल्पविकसित चीन आधुनिक, उद्योगीकृत जापान की सेना से टक्कर नहीं ले सकता था।

च्यांग काई शेक और क्वोमिन्तांग के दृष्टिकोण में कुछ बदलाव तब आया जब जापान ने उत्तरी चीन पर प्रत्यक्ष हमला कर दिया और नानचिंग सरकार के अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया। उसे समझ में आ गया कि जापान के साथ कूटनीतिक तुष्टीकरण की नीति असफल हो गई थी। च्यांग काई शेक ने कहा :

> चीन और जापान के बीच युद्ध अनिवार्य हो गया है। नानचिंग की राष्ट्रीय सरकार जब सोवियत संघ से समझौते की चेष्टा कर रही थी, तब वह चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के साथ समझौते के तरीके भी खोज रही थी।[11]

इस संदर्भ में हू शेंग का मत प्रस्तुत करना बेहद प्रासंगिक जान पड़ता है :

> च्यांग अब भी कम्युनिस्टों का विरोध करना चाहता था। जब उसने 'चीनी कम्युनिस्ट

> पार्टी के साथ समझौते' की बात कही, तो उसकी मंशा थी कि कम्युनिस्ट पार्टी क्वोमिन्तांग के सामने समर्पण कर दे और पुनर्गठन स्वीकार कर ले। इसका अर्थ यह था कि कम्युनिस्ट सैन्य बलों का विघटन कर दिया जाए जिससे 'राजनीतिक साधनों द्वारा इस समस्या का हल हो सके।' स्वाभाविक है कि यह असंभव था। इसलिए वह ऐसा समाधान बलप्रयोग द्वारा थोपने की चेष्टा निरंतर करता रहा।[12]

क्वोमिन्तांग जनरल चांग श्यूलियांग ने कई मौकों पर च्यांग काई शेक से अनुरोध किया था कि वह गृहयुद्ध बंद करे और जापानियों के खिलाफ़ लड़ाई शुरू करे। परंतु च्यांग ने उसके अनुरोध को अस्वीकार कर दिया। 7 दिसंबर 1936 को उसने च्यांग के शीयान आगमन पर उसे फिर समझाने की कोशिश की। च्यांग का उत्तर था, 'चाहे तुम मुझ पर गोली चला दो, मैं कम्युनिस्टों के दमन की नीति नहीं बदलूंगा।'[13]

तब जनरल चांग श्यूलियांग और जनरल यांग हूचेंग ने विद्रोह करने का फैसला किया और उनकी सेनाओं ने शीघ्रता से हुआ छिंगची को घेर लिया और च्यांग काई शेक को हिरासत में ले लिया। जनरल चांग और जनरल यांग की मांग थी :

1. नानचिंग सरकार का पुनर्गठन करो और उसमें सभी पार्टियों और ग्रुपों को शामिल करो जिससे राष्ट्र की रक्षा का दायित्व उन सबका हो।
2. गृहयुद्ध को पूर्णतः समाप्त करो।
3. शंघाई में बंदी देशभक्त नेताओं को तुरंत मुक्त करो।
4. देश के सभी राजनीतिक कैदियों को रिहा करो।
5. देशभक्त जन आंदोलनों पर लगी पाबंदी हटाओ।
6. सभा और समुदाय के अधिकारों सहित सभी राजनीतिक अधिकारों की रक्षा की गारंटी दो।
7. डॉ. सुन यातसेन के वसीयतनामे पर पूरी तरह से अमल करो।
8. राष्ट्रीय निर्वाण सम्मेलन तुरंत बुलाओ।

यह सुप्रसिद्ध शीयान प्रकरण था जिसने चीन और समस्त विश्व को हिलाकर रख दिया। नानचिंग सरकार चौंक गई। कुछ मंत्रियों का सुझाव था कि विद्रोह को दबाने के लिए तुरंत दंडकारी अभियान शीयान भेजा जाए। परंतु सुंग मेइलिंग (श्रीमती च्यांग काई शेक), एच.एच. सुंग और टी.वी. सुंग तथा च्यांग के अन्य रिश्तेदारों ने कहा कि शीयान प्रकरण का शांतिपूर्ण हल खोजा जाना चाहिए।

चांग श्यूलियांग ने कम्युनिस्ट नेताओं से सलाह मांगी। पार्टी की केंद्रीय समिति ने मध्यस्थता के लिए 17 दिसंबर 1936 को चोउ एनलाई को शीयान भेजा। चोउ एनलाई ने जनरलों के विरोध की सराहना की लेकिन उन्हें सलाह दी कि इस प्रकरण का शांतिपूर्ण हल खोजना चाहिए।

जब नानचिंग सरकार को पता चला कि विद्रोही जनरल और कम्युनिस्ट पार्टी च्यांग काई शेक को मारना नहीं चाहते बल्कि उससे संयुक्त मोरचे के बारे में बातचीत करना

चाहते हैं तो उन्होंने च्यांग की पत्नी सुंग मेइलिंग और उनके भाई टी.वी. सुंग को वार्तालाप के लिए शीयान भेज दिया। अंत में च्यांग काई शेक ने चोउ एनलाई से कहा, 'कम्युनिस्टों का दमन समाप्त कर दिया जाएगा और जापान से लड़ने के लिए लाल सेना से गठबंधन किया जाएगा।'[14]

चोउ एनलाई को बिना सूचित किए, चांग च्यांग के साथ नानचिंग चला गया जहां विद्रोह के अपराध में उसे उम्र कैद की सजा दी गई। शीयान में गड़बड़ी फैल गई लेकिन चोउ एनलाई के प्रयास से उस पर काबू पा लिया गया और इस प्रकार शीयान प्रकरण का शांतिपर्ण हल हो गया। अनिच्छुक च्यांग पर संयुक्त मारेचा थोप दिया गया। गृहयुद्ध बंद हो गया और दोनों पार्टियों के संबंधों में तेजी से बदलाव हुआ।

युद्धकालीन क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट सहयोग

क्वोमिन्तांग को आशा थी कि जापानी आक्रमण शीघ्र रुक जाएगा। उधर जापान च्यांग सरकार से अनुरोध कर रहा था कि वह 'कम्युनिस्टों के विरुद्ध पारस्परिक हितों के लिए' जापान से गठबंधन कर ले। कुछ क्वोमिन्तांग नेता भी इस जाल में फंसने वाले थे। परंतु जापान का इरादा तो संपूर्ण चीन को अपना उपनिवेश बनाना था। इसलिए च्यांग को विवश होकर संयुक्त मोरचे की नीति को अपनाना पड़ा।

अब च्यांग काई शेक चाहता था कि कम्युनिस्ट सेना शीघ्र जापान से लड़ने के लिए रणभूमि में पहुंचे। चू ते के नेतृत्व में कम्युनिस्ट सेना ने उत्तरी चीन में व्यापक पैमाने पर छापामार युद्ध शुरू कर दिया। क्वोमिन्तांग सेनाओं ने भी पुराने हथियारों तथा साजो-सामान की कमी के बावजूद बड़ी बहादुरी से जापानी सेनाओं का मुकाबला किया लेकिन वे उत्तरी और तटवर्ती प्रांतों में उसकी बढ़त रोकने में असफल रहीं।

अब युद्ध का स्वरूप बदल गया था। अब यह जापानी नस्लवाद और साम्राज्यवाद के खिलाफ संपूर्ण चीनी जनता का संघर्ष बन गया था। कम्युनिस्ट गुरिल्लाओं की तरह क्वोमिन्तांग सेना के किसान सैनिकों ने भी अपनी देशभक्ति और बलिदान का परिचय दिया। जापानी हमलावरों के लिए रणक्षेत्र में जीत के बावजूद चीन एक अभेद्य दुर्ग बनता जा रहा था। निश्चित रूप से संयुक्त मोरचे ने चीनी राष्ट्र की प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ा दिया था।

क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी के सहयोग ने संपूर्ण चीनी राष्ट्र में उत्साह भर दिया था। नवंबर 1937 में महान देशभक्त सुंग चिंगलिंग (श्रीमती सुन यातसेन) ने एकता के लिए अनुरोध करते हुए एक वक्तव्य जारी किया। इस वक्तव्य में श्रीमती सुंग चिंगलिंग ने कहा, 'कम्युनिस्ट पार्टी औद्योगिक और कृषक श्रमिक वर्गों के हितों की रक्षा करने वाली पार्टी है। सुन (यातसेन) ने अनुभव किया कि इन वर्गों के उत्साहपूर्ण समर्थन और सहयोग के बिना राष्ट्रीय क्रांति के लक्ष्य तक नहीं पहुंचा जा सकता....वर्तमान संकट में सभी मतभेदों को भूल जाना चाहिए। संपूर्ण राष्ट्र को जापानी आक्रमण के विरुद्ध और विजय

प्राप्ति के लिए एकजुट हो जाना चाहिए।'[15] *जापानी हमलावरों ने अचानक महसूस किया कि संपूर्ण चीनी राष्ट्र उनके खिलाफ संयुक्त मोरचे में एकजुट हो गया है :*

> परंतु संयुक्त मोरचे के अंतर्विरोध समाप्त नहीं हुए। बुनियादी सवाल यह था कि इसका नेतृत्व बुर्जुआ वर्ग करेगा या सर्वहारा वर्ग। क्या क्वोमिन्तांग कम्युनिस्टों के दस महान बिंदुओं की समझदारी और सहमति दिखा सकेगी? अथवा, कम्युनिस्ट पार्टी को ही जमींदारों और बुर्जुआ वर्ग की क्वोमिन्तांग तानाशाही के स्तर तक नीचे गिराना होगा? माओ त्सेतुंग का जवाब था, 'जापान विरोधी....युद्ध में विजय की कुंजी 'संयुक्त मोरचे के अंतर्गत स्वतंत्रता और पहल' के सिद्धांत में निहित है। हमें इस सिद्धांत की व्याख्या करने, उसे लागू करने और उसका पालन करने की जरूरत है।'[16] घटनाओं ने माओ त्सेतुंग के मत की पुष्टि कर दी।

च्यांग के खेमे में कुछ लोग कहते थे, 'चीन शस्त्रों के मामले में कमजोर है, इसलिए उसकी हार निश्चित है। युद्ध जारी रखने का अर्थ चीन की पराधीनता होगा।' दूसरे लोग कहते थे, 'अगर हम तीन महीनों तक और लड़ते रहें, तो अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति बदल जाएगी। सोवियत संघ संभवत: चीन में सेना भेज देगा और ब्रिटेन तथा अमरीका शायद शंघाई में हस्तक्षेप करेंगे।' उधर कम्युनिस्ट पार्टी में कुछ लोग सोचते थे कि क्वोमिन्तांग की बीस लाख सैनिकों की नियमित सेना जापान पर शीघ्र विजय पा लेगी। नानचिंग के पतन से पहले कोमिन्तांग सरकार ने स्तालिन से चीन में सेना भेजने का अनुरोध किया। माओ त्सेतुंग ने कहा कि ये सभी अनुमान गलत हैं और जापान को हराने के लिए लंबे समय तक छापामार युद्ध करना पड़ेगा।

अक्तूबर 1937 में क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी में एक समझौते द्वारा हूपे, हुनान, अन्हुई और क्वांगतुंग के कम्युनिस्ट छापामारों को नई चौथी आर्मी में पुनर्गठित किया गया। आठवीं रूट आर्मी के एक लाख छप्पन हजार और नई चौथी आर्मी के पचीस हजार सैनिकों ने क्रमश: चू ते और चेन यी की कमान में उत्तरी और मध्य चीन के आठ प्रांतों में जापानी सेना के खिलाफ छापामार युद्ध शुरू कर दिया। गुरिल्ला युद्ध की रणनीति ने चीन को रक्षात्मक युद्ध की स्थिति से बराबरी की स्थिति में ला दिया। संयुक्त मोरचे के बिना ऐसा करना संभव नहीं था क्योंकि उसके बाद क्वोमिन्तांग सेनाओं ने भी जापान के खिलाफ मुठभेड़ में अतिरिक्त वीरता, शौर्य और साहस का परिचय दिया। उधर जापानी सेना में दिन-प्रतिदिन क्रूरता, बर्बरता और निराशा बढ़ने लगी।

संयुक्त मोरचे के कारण कम्युनिस्ट सेना को जापान अधिकृत क्षेत्रों में अपने आधार क्षेत्रों के संचालन में बड़ी सुविधा हुई। 'तीन-तिहाई प्रणाली' द्वारा इन सभी आधार क्षेत्रों में कम्युनिस्ट, क्वोमिन्तांग और गैरदलीय प्रतिनिधियों के मिले-जुले निकायों की स्थापना कर दी गई और उन्होंने कुशलता और आपसी सहयोग से इन स्वायत्त क्षेत्रों का शासन चलाया। संयुक्त मोरचे के बिना आधार क्षेत्रों की सरकार इतनी सफलता से काम नहीं कर सकती थी।

ज्योर्जी दिमित्रोव ने कोमिन्टर्न की ओर से वांग मिंग के माध्यम से राय दी कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को 'पापुलर फ्रंट' पर आधारित संयुक्त मोरचे का प्रधान (फ्रांसीसी कम्युनिस्ट पार्टी की तर्ज पर) क्वोमिन्तांग को मान लेना चाहिए और उसी के मार्गदर्शन में चलना चाहिए। माओ त्सेतुंग के अनुसार यह नीति दक्षिणपंथी विचलन पर आधारित थी। फ्रांस में लोकवादी मोरचे की नीति असफल हुई थी और चीन में भी दक्षिणपंथी विचलन पर आधारित संयुक्त मोरचे की नीति सफल नहीं हो सकती थी। माओ त्सेतुंग ने कहा कि वे संयुक्त मोरचे में कम्युनिस्ट पार्टी की पहल और आजादी की नीति को छोड़कर क्वोमिन्तांग के निरंकुश नेतृत्व को स्वीकार नहीं करेंगे।

उधर 'दक्षिणपंथी' वांग मिंग का कहना था कि 'प्रत्येक निर्णय क्वोमिन्तांग की सहमति से संयुक्त मोरचे द्वारा और संयुक्त मोरचे के अंतर्गत लिया जाना चाहिए।'[17] यह निश्चित रूप से दक्षिणपंथी विचलन की आत्मघाती नीति थी जो 1924-27 में कम्युनिस्ट पार्टी का काफी नुकसान कर चुकी थी। इस नीति पर चलकर न तो छापामार युद्ध चलाया जा सकता था और न ही जापान अधिकृत प्रांतों में मुक्त आधार क्षेत्रों की स्थापना की जा सकती थी क्योंकि क्वोमिन्तांग नेतृत्व इन कामों के लिए कभी सहमत नहीं हो सकता था। इस प्रसंग में हू शेंग आदि का कथन है :

> वांग मिंग की दक्षिणपंथी विचलन का एक कारण यह था कि वह कोमिन्टर्न के आदेशों की पूजा करता था और सोवियत संघ की विदेश नीति का अंधा अनुसरण करता था। सोवियत संघ के इस निर्णय में उस समय कोई बुराई नहीं थी कि वह चीन में केवल क्वोमिन्तांग सरकार से संबंध रखे हुए था। परंतु कोमिन्टर्न और सोवियत संघ के कुछ नेता जापान के विरुद्ध प्रतिरोध में च्यांग काई शेक के उत्साह को बढ़ा-चढ़ाकर आकलन करते थे और कम्युनिस्टों के उन्मूलन के उसके दृढ़ संकल्प को बहुत घटाकर आंकते थे। उनकी सोच का वांग मिंग और उसकी मंडली पर बहुत प्रभाव था।[18]

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को वांग मिंग के दक्षिणपंथी विचलन के खिलाफ काफी संघर्ष करना पड़ा। परंतु कम्युनिस्ट पार्टी की छठी केंद्रीय समिति के छठे प्लेनरी सेशन ने वांग मिंग की त्रुटियों की कठोर आलोचना की और 'संयुक्त मोरचे में स्वतंत्र पहल' संबंधी माओ त्सेतुंग की रणनीति की दोबारा पुष्टि की।

उधर प्रतिरोध युद्ध सामरिक गतिरोध की स्थिति में पहुंच गया था। जब जापान ने वूहान पर विजय प्राप्त कर ली तो अक्तूबर 1938 से 1944 के प्रारंभ तक जापानी सेनाओं ने मोरचे की अग्रिम पंक्तियों पर सामरिक आक्रमण रोक दिया 'और अपनी पृष्ठभूमि के क्षेत्रों में आठवीं रूट आर्मी और नई चौथी आर्मी से युद्ध करने के लिए मुख्य सैन्य बलों का उपयोग करने लगे।'[19]

संयुक्त मोरचे के बावजूद, च्यांग काई शेक के नेतृत्व में पश्चिम समर्थक क्वोमिन्तांग ने अब जापान के विरुद्ध निष्क्रिय प्रतिरोध और कम्युनिस्ट पार्टी के खिलाफ सक्रिय दमन

की नीति पर अमल किया। 'क्वोमिन्तांग ने अपना ध्यान विदेशी मामलों से हटाकर धीरे-धीरे आंतरिक मामलों पर लगाया और कम्युनिस्ट पार्टी के विरुद्ध 'दमन', 'सतर्कता', 'नियंत्रण' और 'आक्रमण' का प्रतिक्रियावादी सिद्धांत स्वीकार किया।....कुछ क्षेत्रों में संघर्ष लगातार तेज होता चला गया और क्वोमिन्तांग ने जापान विरोधी सैनिकों और नागरिकों को आकस्मिक हमलों द्वारा मार दिया।[20] संयुक्त मोरचे में फूट पड़ने लगी थी।

संयुक्त मोरचे के अंतर्विरोध

संयुक्त मोरचे के विषय में अनेक प्रकार के विचार व्यक्त किए गए हैं। इस संदर्भ में हू शेंग आदि का विचार विशेष रूप से उल्लेखनीय है :

> जापान के खिलाफ प्रतिरोध युद्ध में, ऐसे अंतर्विरोध थे जिनका चीन के भविष्य पर गहरा प्रभाव पड़ने वाला था : पहला, चीन और जापान के बीच राष्ट्रीय अंतर्विरोध के समाधान पर यह निर्भर था कि चीनी राष्ट्र जीवित रहेगा या नहीं ; दूसरा, कम्युनिस्ट पार्टी और क्वोमिन्तांग के बीच वर्गगत अंतर्विरोध के समाधान पर यह निर्भर था कि जनता प्रतिरोध युद्ध में निर्णायक तरीके से लड़ सकेगी या नहीं और उसके बाद नए चीन के निर्माण में सक्षम होगी या नहीं। इन दोनों अंतर्विरोधों में नजदीकी संबंध था।[21]

च्यांग काई शेक के डिप्टी वांग चिंगवेई ने जापान द्वारा स्थापित नानचिंग की कठपुतली सरकार का प्रेसीडेंट पद स्वीकार कर लिया था। च्यांग काई शेक हमेशा जापान के प्रतिरोध का बहाना करता रहा लेकिन जब युद्ध गतिरोध की स्थिति में पहुंच गया तो उसने जापान विरोधी युद्ध के प्रति उदासीनता और निष्क्रियता की नीति अपना ली और गुप्त रूप से जापानी हमलावरों के साथ समझौते का प्रयास करने लगा :

> इसके अलावा, क्वोमिन्तांग नियंत्रित क्षेत्रों में, वह कम्युनिस्ट पार्टी का सक्रिय दमन करने लगा, फासिस्ट शासन और खुफिया एजेंटों की गतिविधियों को बढ़ावा देने लगा, और कम्युनिस्ट पार्टी ग्रुपों तथा अन्य प्रगतिशील संस्थाओं का विनाश करते हुए पार्टी सदस्यों तथा अन्य देशभक्तों को जेल में ठूंस दिया। उसने कम्युनिस्ट पार्टी के खिलाफ उकसाने वाले काम किए, जनसेना पर हमले कराए, प्रतिरोध में संलग्न कार्यकर्ताओं को पकड़कर मार दिया, क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच झड़पें कराईं और कम्युनिस्टों द्वारा स्थापित जापान विरोधी आधार क्षेत्रों पर सैनिक आक्रमण कराए।[22]

इन कारणों से कम्युनिस्ट पार्टी और क्वोमिन्तांग के बीच का वर्गगत अंतर्विरोध और तेज हो गया।

इस अंतर्विरोध का समाधान कैसे किया जाए? कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने

कहा कि यह सवाल जटिल और महत्वपूर्ण है किंतु जापान से युद्ध के समय चीन के लिए जापान के साथ उसका अंतर्विरोध प्राथमिक है और आंतरिक वर्ग संघर्ष गौण है। इसलिए च्यांग काई शेक की उकसावेबाज गतिविधियों के बावजूद संयुक्त मोरचे को बनाए रखना चाहिए और क्वोमिन्तांग के साथ सहयोग के लिए हर संभव उपाय करना चाहिए। जब तक जापान पराजित नहीं होता, क्वोमिन्तांग को जापान विरोधी संयुक्त मोर्चे में रखना आवश्यक है।

कम्युनिस्ट पार्टी ने छापामार युद्ध द्वारा जापान की सेना के बहुत बड़े भाग को रणक्षेत्र की पृष्ठभूमि में बांध रखा था। इससे अग्रिम मोरचों पर क्वोमिन्तांग सेनाओं को जापानी हमलों से राहत मिल गई थी। यह एक महत्वपूर्ण कारक था जिसने क्वोमिन्तांग का संयुक्त मोरचे में बने रहना और जापान विरोधी युद्ध में डटे रहना सुविधाजनक बना दिया था। क्वोमिन्तांग के कुछ प्रतिक्रियावादी तत्व जापान से समझौता करना चाहते थे। च्यांग काई शेक के विरुद्ध कम्युनिस्ट पार्टी के संघर्ष के कारण इन तत्वों को बोलने का मौका मिलता रहता था।

जब क्वोमिन्तांग ने कम्युनिस्ट विरोधी अभियान शुरू किए तो कम्युनिस्ट पार्टी ने जापान विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोरचे का झंडा बुलंद किया और अन्य लोकतांत्रिक दलों, प्रत्येक वर्ग के प्रगतिशील व्यक्तियों से मिलकर क्वोमिन्तांग की संयुक्त मोरचा विरोधी गतिविधियों के विरुद्ध संघर्ष जारी रखा। इस प्रसंग में हू शेंग इत्यादि का निष्कर्ष है :

> च्यांग काई शेक गुट से एकजुट होने की और उसी समय उसके खिलाफ संघर्ष करने की नीति उन सबकों पर आधारित थी जिन्हें पार्टी ने अपनी पूर्ववर्ती नीतियों से सीखा था। इनमें एक नीति थी संघर्ष के बिना गठबंधन जिसका अनुसरण पार्टी ने महान क्रांति के अवसर पर किया था। दूसरी नीति थी गठबंधन के बिना संघर्ष जिस पर एक दशक के गृहयुद्ध के समय अमल किया गया था। नई नीति का प्रतिपादन संयुक्त मोरचे के प्रश्न पर पार्टी के चिंतन में एक महत्वपूर्ण विकास था। इस नीति को ध्यान में रखकर, पार्टी समस्याओं पर शांत चित्त से और सभी पक्षों को देखते हुए विचार कर सकती थी और संपूर्ण परिस्थिति को नियंत्रित करने में सक्षम हो सकती थी।[23]

कम्युनिस्ट विरोधी हमलों के विरुद्ध संघर्ष

1939 के नवंबर से 1940 के अप्रैल तक क्वोमिन्तांग ने कम्युनिस्टों के विरुद्ध पहले आक्रमण का अभियान जारी रखा। नवंबर में क्वोमिन्तांग की केंद्रीय कार्यकारिणी समिति ने निर्णय लिया कि कम्युनिस्ट पार्टी पर सैनिक दबाव की नीति को प्राथमिकता दी जाए। दिसंबर में क्वोमिन्तांग सेना ने शांशी-कांसू-निंगशिया सीमांत क्षेत्र पर हमला किया, पांच काउंटी सीटों पर कब्जा कर लिया और युन्नान पर आक्रमण की योजना बनाई। कम्युनिस्ट सेना ने दृढ़ संकल्प द्वारा जवाबी हमला किया। शांशी में यान शीशान ने 'न्यू आर्मी' और

आठवीं रूट आर्मी पर हमला किया। चुंगश्याओं पर्वतीय क्षेत्र में च्यांग काई शेक की कमान में कुछ सैन्य बलों ने कम्युनिस्ट सेनाओं पर हमला किया। कम्युनिस्ट सेनाओं ने इन सभी क्वोमिन्तांग आक्रमणों को रक्षात्मक युद्ध द्वारा विफल कर दिया।

जनवरी 1940 में क्वोमिन्तांग फौजों ने उत्तर-पश्चिमी शांशी में कम्युनिस्ट आधार क्षेत्र पर और फरवरी तथा मार्च में दक्षिणी होपे और दक्षिणी शांशी के जापान विरोधी आधार क्षेत्रों पर हमले किए। आठवीं रूट आर्मी को दो मोरचों पर, जापानी और क्वोमिन्तांग हमलावरों के विरुद्ध युद्ध जारी रखना पड़ा। क्वोमिन्तांग फौजों को हराने के बाद कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने चू ते तथा अन्य प्रतिनिधियों को क्वोमिन्तांग के साथ संधिवार्ता के लिए भेजा। दोनों पक्षों ने जापान से लड़ने के लिए विवादित क्षेत्रों का आपस में विभाजन कर लिया।

क्वोमिन्तांग के राजनीतिक और वैचारिक हमलों का भी कम्युनिस्ट पार्टी ने समुचित जवाब दिया। एक प्रतिक्रियावादी विद्वान यी छिंग ने कहा, 'जनता के सिद्धांत चीन की सभी वर्तमान और भविष्य की जरूरतों को पूरा कर सकते हैं। यदि इन्हें अमल में लाया जाए तो चीन के लिए समाजवाद की जरूरत नहीं और न किसी ऐसी पार्टी के संगठन की जरूरत रहेगी जो समाजवाद की स्थापना के लिए प्रयास करे।'[24]

लोग कम्युनिस्ट पार्टी पर हमलों से चिंतित थे और जानना चाहते थे कि भविष्य में चीन के विकास की क्या दिशा होगी। राष्ट्रीय बुर्जुआजी के प्रतिनिधि क्वोमिन्तांग के निरंकुश शासन और जापान के विरुद्ध युद्ध में उसकी निष्क्रियता से असंतुष्ट थे लेकिन वे कम्युनिस्ट पार्टी के प्रस्तावों को भी संदेह से देखते थे। उन्हें भ्रम था कि जापान की पराजय के बाद चीन में यूरोपीय और अमरीकी प्रणाली के पूंजीवादी समाज का विकास हो सकता है।

माओ त्सेतुंग ने तीन लेखों 'इंट्रोड्यूसिंग दि कम्युनिस्ट', 'दि चाइनीज रिवोल्यूशन एंड दि चाइनीज कम्युनिस्ट पार्टी' तथा 'आन न्यू डेमोक्रेसी' द्वारा क्वोमिन्तांग के वैचारिक और राजनीतिक आक्रमणों का उत्तर दिया। इनकी व्याख्या आगे की जाएगी।

सितंबर 1940 में च्यांगसू के क्वोमिन्तांग गवर्नर हान तेछिन की फौजों ने नई चौथी आर्मी पर हमला किया। उसके बाद च्यांग काई शेक ने दूसरा आक्रमण शुरू किया। लगभग 80,000 क्वोमिन्तांग सैनिकों ने नई चौथी आर्मी के 9,000 कम्युनिस्ट सैनिकों पर आक्रमण कर दिया और लगभग 7,000 कम्युनिस्ट सैनिक मारे गए। यह घटना मध्य चीन के दक्षिणी अन्हुई प्रांत में हुई। इस घटना से आशंका हुई कि अप्रैल 1927 की रणनीति दोहराई जा रही थी और कम्युनिस्ट-क्वोमिन्तांग संयुक्त मोरचा टूटने ही वाला है।

परंतु 1941 की परिस्थिति 1927 से बहुत भिन्न थी। जापान का चीन की मुख्य भूमि के अनेक प्रांतों पर आधिपत्य था और चीन की संपूर्ण जनता गृहयुद्ध का विरोध कर रही थी। कम्युनिस्ट पार्टी और क्वोमिन्तांग के बीच का राजनीतिक और सैनिक संतुलन भी अब बहुत भिन्न था। चोउ एनलाई ने क्वोमिन्तांग अधिकारियों से चुंगकिंग में इस घटना को लेकर अपना क्षोभ और रोष प्रकट किया और इसे देश के साथ विश्वासघात बताया।

क्वोमिन्तांग प्रतिक्रियावादियों ने यह नहीं सोचा था कि इस घटना की संपूर्ण चीन और विदेशों में तीखी प्रतिक्रिया होगी। सोवियत संघ, ब्रिटेन और अमरीका ने च्यांग काई शेक से कहा कि वह कम्युनिस्ट विरोधी अभियानों को छोड़कर अपना ध्यान और शक्ति जापान विरोधी युद्ध में लगाए। अत: च्यांग काई शेक को अपनी कम्युनिस्ट विरोधी गतिविधियों पर रोक लगानी पड़ी। इस घटना के बाद संयुक्त मोरचे का महत्व केवल औपचारिक रह गया।

अप्रैल 1943 में क्वोमिन्तांग ने तीसरे कम्युनिस्ट विरोधी आक्रमण की योजना बनाई। च्यांग काई शेक ने *चाइना 'ज डेस्टिनी* शीर्षक से एक पुस्तक प्रकाशित की जिसमें उसने साम्यवादियों और उदारवादियों की निंदा और भर्त्सना करते हुए खुलकर कन्फ्यूशियनवाद के नाम से चीनी फासीवाद का उपदेश दिया। 1943 की मई में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के विघटन के बाद क्वोमिन्तांग नेताओं ने मांग की कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को भंग कर दिया जाए और शांशी-कांसू-निंगशिया सीमांत क्षेत्र का उन्मूलन कर दिया जाए। च्यांग काई शेक की इच्छा थी कि सैनिक आक्रमण द्वारा कम्युनिस्टों के इस स्वतंत्र क्षेत्र को नष्ट कर दिया जाए।

क्वोमिन्तांग के सुनियोजित आक्रमण के विरुद्ध कम्युनिस्ट पार्टी ने एक जोरदार प्रचार अभियान छेड़ दिया। कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति के मुखपत्र में, जो युन्नान से प्रकाशित होता था, *चाइना 'ज डेस्टिनी* की अनेक लेखों द्वारा तर्कसंगत आलोचना की गई और क्वोमिन्तांग प्रतिक्रियावादियों की उस योजना का परदाफाश किया गया जिसके जरिए वे युन्नान पर आक्रमण करने का विचार कर रहे थे।

चू ते ने च्यांग काई शेक और हू त्सुंगनान को तार भेजकर सशस्त्र हमले के उकसावे भरे कार्यों के विरुद्ध अपना क्रोध व्यक्त किया। 9 जुलाई 1943 को युन्नान में 30,000 नागरिकों ने गृहयुद्ध के विरोध में रैली निकाली और जापान के खिलाफ युद्ध में राष्ट्रीय एकजुटता की मांग की। 10 जुलाई को हू त्सुंगनान ने चोउ एनलाई के स्वागत का प्रबंध किया क्योंकि वह अपने हमले की योजना पर परदा डालना चाहता था।

जब चोउ एनलाई ने हू त्सुंगनान से पूछा कि युन्नान पर आक्रमण कब कर रहे हो तो जनरल ने खिसिया कर कहा कि उसकी ऐसी कोई योजना नहीं है। तब चोउ एनलाई ने एक वक्तव्य दिया :

> डिप्टी कमांडर हू ने मुझे बताया कि शांशी-कांसू-निंगशिया सीमांत क्षेत्र पर आक्रमण करने का उनका कोई इरादा नहीं है और उनकी कमान के अधीन सेनाएं ऐसा कोई कार्य नहीं करेंगी। मैं यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और मेरा विश्वास है कि प्रत्येक व्यक्ति यह जानकर खुश होगा।[25]

इस तरह हू त्सुंगनान की गुप्त योजना प्रकट हो गई। 12 जुलाई 1943 को माओ त्सेतुंग ने *लिबरेशन डेली* में एक संपादकीय 'सम प्वाइंटेड क्वेश्चंस टु क्वोमिन्तांग' शीर्षक से लिखा और क्वोमिन्तांग द्वारा गृहयुद्ध की तैयारियों की कठोर आलोचना की।

नए लोकतंत्र पर माओ के विचार

नए लोकतंत्र पर माओ के विचारों का विश्लेषण करते हुए ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक का कहना है :

> पहली दृष्टि में माओ त्सेतुंग की कृति *आन दि न्यू डेमोक्रेसी* संपूर्ण संयुक्त मोरचे की रणनीति का सैद्धांतिक औचित्य साबित करता हुआ प्रतीत होती है....वास्तव में यह कृति....उस समय लिखी गई....जब क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट गठबंधन में दरारें पड़ने लगी थीं। माओ ने क्वोमिन्तांग में मौजूद कम्युनिस्ट विरोधियों पर हमले किए जो 'एक दली तानाशाही' की मांग करते थे। उनके हमले गठबंधन के भविष्य के बारे में उनकी वास्तविक चिंता को जाहिर करते हैं। इसलिए यह संभव है कि *आन दि न्यू डेमोक्रेसी* केवल संयुक्त मोरचे की नीति के सैद्धांतिक ढांचे के बतौर नहीं लिखा गया हो, बल्कि भविष्य में गठबंधन के संभावित विघटन के मौके के लिए पार्टी को तैयार रहने के लिए भी लिखा गया हो।[26]

इस कृति में माओ त्सेतुंग ने तीन बुनियादी सवाल उठाए थे :

1. चीन में किस प्रकार के राज्य का निर्माण किया जाए?
2. इस राज्य में किस तरह की राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रणालियां हों?
3. इस राज्य की क्या संभावनाएं हैं?

इस प्रसंग में माओ का उत्तर भी ध्यान देने लायक है। माओ का उत्तर इस प्रकार है :

1. चीन में बुनियादी अंतर्विरोध साम्राज्यवाद तथा चीनी राष्ट्र के बीच तथा सामंतवाद और विशाल जनता के बीच है। पहला अंतर्विरोध मुख्य है। समाज की अर्ध-उपनिवेशी और अर्ध-सामंती प्रकृति के कारण चीनी क्रांति के दो चरण हैं : पहली, लोकतांत्रिक क्रांति और दूसरी, समाजवादी क्रांति।
2. 1919 के 4 मई आंदोलन के बाद चीन में जनवादी क्रांति सामान्य न होकर नव-जनवादी क्रांति का रूप ले चुकी है। यह साम्राज्यवाद और सामंतवाद के विरुद्ध जनता की क्रांति होगी। इस क्रांति में श्रमिकों के नेतृत्व में किसानों, बुद्धिजीवियों और निम्न तथा राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्गों का गठबंधन स्थापित होगा।
3. नव-जनवादी क्रांति का राजनीतिक कार्यक्रम साम्राज्यवाद और सामंतवाद के उत्पीड़न को समाप्त कर जनवादी गणराज्य की स्थापना करना होगा। यह सभी क्रांतिकारी वर्गों का संयुक्त अधिनायक तंत्र होगा किंतु नेतृत्व सर्वहारा वर्ग का होगा। इसका आर्थिक कार्यक्रम बड़े बैंकों और बड़े उद्यमों का राष्ट्रीकरण तथा जमींदारों की भूमि का अधिग्रहण और उसका किसानों में पुनर्वितरण है। नव-जनवादी गणतंत्र राष्ट्रीय पूंजीवादी अर्थव्यवस्था और धनी-कृषक अर्थनीति को

बढ़ावा देगा। इसका सांस्कृतिक कार्यक्रम सामंती, दलाल संस्कृति को समाप्त कर राष्ट्रवादी, वैज्ञानिक और जनवादी संस्कृति को प्रोत्साहन देना होगा।

4. नव-जनवादी क्रांति अंत में हमें समाजवाद की ओर ले जाएगी। नव-जनवादी और समाजवादी क्रांतियां दो भिन्न क्रांतिकारी चरण हैं और पहली क्रांति के पूर्ण होने पर ही दूसरी क्रांति को अमल में लाया जा सकता है। दोनों चरणों के कार्यों को एक ही धक्के में कर पाना असंभव है, परंतु दूसरा चरण पहले चरण की समाप्ति पर तुरंत प्रारंभ होगा। उनके बीच में बुर्जुआ अधिनायक तंत्र के चरण का हस्तक्षेप नहीं होगा।
5. नव-जनवादी क्रांति का मार्गदर्शन कम्युनिस्ट विचारधारा करेगी। साम्यवाद वैचारिक प्रणाली और सामाजिक प्रणाली दोनों है। नव-जनवादी समाज तथा समाजवादी और साम्यवादी समाजों के बीच विभेद करना आवश्यक है। सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व के बिना और कम्युनिस्ट विचारधारा के मार्गदर्शन के बिना चीनी क्रांति को कार्यान्वित नहीं किया जा सकता तथा साम्राज्यवाद विरोधी और सामंतवाद विरोधी राजनीतिक और सांस्कृतिक क्रांति की गारंटी नहीं की जा सकती।

माओ के नव-जनवाद के सिद्धांत ने जटिल परिस्थिति में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का मार्गदर्शन किया। यह बात आकस्मिक नहीं कि इसका प्रतिपादन उस समय किया गया जब च्यांग काई शेक के दुस्साहसी कार्यों से संयुक्त मोरचे का कार्यक्रम संकट की स्थिति में आ गया था। यह कम्युनिस्ट पार्टी के वैचारिक अभियान का महत्वपूर्ण अंग था।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक, *ए डाक्युमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 240–41.
2. माओ त्सेतुंग, 'स्ट्रगल फॉर दि विनिंग आफ टेन्स आफ मिलियंस आफ दि मासेज इन दि ऐंटी-जैपनीज नेशनल यूनाइटेड फ्रंट', श्यूयान-ची, खंड I। पृ 26–27.
3. ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक, *ए डाक्युमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 242.
4. वही, पृ. 248.
5. वही, पृ. 249.
6. वही, पृ. 250.
7. वही, उद्धृत, पृ. 252.
8. वही, उद्धृत, पृ. 252–53.
9. वही, उद्धृत, पृ. 253.
10. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 193
11. वही, पृ. 200.
12. वही, पृ. 202.
13. शेन पोचुन, *दि स्टोरी आफ दि शीयान इंसीडेंट*, पृ. 105.

14. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ चोउ एनलाई*, खंड I, पृ. 89.
15. सुंग चिंगलिंग, *दि स्ट्रगल फॉर न्यू चाइना*, पृ. 129.
16. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ चोउ एनलाई*, खंड II, पृ. 65 और 68.
17. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 237.
18. वही, पृ. 239.
19. वही, पृ. 242.
20. वही, पृ. 242—43.
21. वही, पृ. 252.
22. वही, पृ. 253.
23. वही, पृ. 254.
24. श्योंग श्यांगहुई, *माई ट्वेल्व इअर्स आफ अंडरग्राउंड वर्क एंड चोउ एनलाई*, पृ. 31.
25. ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक, *ए डाक्युमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 260.

अध्याय आठ

किसान क्रांति की समस्या

सामाजिक संदर्भ

जब माओ त्सेतुंग ने 1920 के दशक में 'किसान समस्या' के बारे में अपने विचार प्रतिपादित किए तो वे चीन की विशाल किसान जनता की भौतिक गरीबी से बहुत प्रभावित थे। जनता का 80 प्रतिशत हिस्सा छोटे-छोटे भूखंडों पर बड़ी मेहनत से खेती करता था। जनता का कम से कम दो-तिहाई हिस्सा निरक्षर था।

देहाती क्षेत्र में पक्की सड़कें नहीं थीं। किसानों की जिंदगी कच्ची मिट्टी और बांसों की झोपड़ियों,रूखे-सूखे भोजन, सूती कपड़ों, घास की चप्पलों और तरह-तरह की बीमारियों में सिमटी हुई थी। किसान जनता कठोर वर्ग विभाजन के कारण समाज के कुलीन और ऊंचे तबकों से अलग-थलग कर दी गई थी। चीन के इतिहास में जब भी उत्पीड़ित किसान उच्चवर्गीय, राजतंत्रीय शासन को अपने विद्रोहों द्वारा चुनौती देते थे, तो स्थिति विस्फोटक बन जाती थी (दूसरे देशों की तुलना में चीन का इतिहास सैकड़ों किसान विद्रोहों से भरा हुआ है—संपादक)। इस प्रकार के विद्रोह का एक उदाहरण 1850—64 का महान ताइपिंग विप्लव था। किसान विद्रोह के रक्तबीज उसके बाद से सोए पड़े थे। उन्हें जगाने के लिए क्रांतिकारी नेतृत्व और संगठन की जरूरत थी क्योंकि वे ही उन्हें आधुनिक क्रांति और क्रांतिकारी राज्य के निर्माण के लिए सही दिशा प्रदान कर सकते थे।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी (सी.पी.सी.) की स्थापना 1921 में हुई थी। शुरू में कम्युनिस्ट पार्टी की मुख्य दिलचस्पी शहरों के सर्वहारा वर्ग को संगठित करने में थी। (जहां-जहां नए उद्योग अथवा कल-कारखाने लगे वहां मजदूरों के बीच कम्युनिस्टों ने अपना स्थान बनाना शुरू कर दिया। खासतौर पर शंघाई में कम्युनिस्ट पार्टी का प्रभाव अत्यंत व्यापक था—संपादक।) परंतु चीन इस दौर में कृषि प्रधान देश था, जिसका चरित्र अर्ध-सामंती और अर्ध-उपनिवेशी था जहां औद्योगिक विकास बहुत कम हुआ था। 1922 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की दूसरी राष्ट्रीय कांग्रेस ने चीन में साम्राज्य विरोधी और सामंत विरोधी जनवादी क्रांति का कार्यक्रम प्रस्तुत किया। विस्तार से वर्ग विश्लेषण करने के बाद उसमें इस बात को माना गया कि अपने क्रांतिकारी जोश की वजह से चीन के किसान 'क्रांतिकारी आंदोलन में सबसे ज्यादा बुनियादी कारक हैं।'[1]

इस समय माओ चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में ऊंचे पद पर तो थे ही साथ-साथ क्वोमिन्तांग के शंघाई ब्यूरो के प्रधान के पद पर भी काम कर रहे थे। इस वक्त ली लीसान जैसे कुछ

कम्युनिस्ट नेता किसान समस्या पर अत्यधिक बल देने और क्वोमिन्तांग से सहयोग करने के संबंध में माओ के विचारों की आलोचना कर रहे थे। इन्हीं दिनों उन्होंने अपने गांव जाकर किसानों के सवाल पर गहराई से अध्ययन करने का निश्चय किया। उन्होंने देखा कि किसान वर्ग ने 4 मई आंदोलन में वस्तुतः कोई भूमिका नहीं निभाई थी लेकिन वह अब राजनीतिक रूप से जागरूक और सक्रिय हो रहा था। हालांकि, कुछ कम्युनिस्टों ने व्यक्तिगत रूप से क्वोमिन्तांग संगठन के अंग के रूप में किसान आंदोलन पर ध्यान दिया था लेकिन चेन तूश्यू द्वारा निश्चित पार्टी लाइन यही थी, 'आधे से ज्यादा किसान निम्न बुर्जुआ वर्ग के सदस्य और जमीनों के मालिक हैं जिनके मन में निजी संपत्ति की चेतना मजबूती से कायम है। वे साम्यवाद को कैसे स्वीकार कर सकते हैं?' दिसंबर 1924 में वह अपने इस विचार पर कायम था कि सर्वहारा वर्ग न केवल 'पूंजीवादी और साम्राज्यवादी देशों की सामाजिक क्रांति में प्रमुख शक्ति था' बल्कि 'साम्राज्यवाद से पीड़ित देशों की राष्ट्रीय क्रांति में भी उसकी भूमिका निर्णायक साबित होगी।' जहां तक किसान वर्ग का सवाल है, वह सर्वहारा वर्ग के मित्रों में से एक है और इन सभी वर्गों की 'प्रवृत्ति समझौतावादी है।'[2]

1924 में 20 से 30 जनवरी तक सुन यातसेन की अध्यक्षता में क्वोमिन्तांग की पहली कांग्रेस ग्वांगझो कैंटन में हुई। माओ त्सेतुंग ने भी दोस्ताना प्रतिनिधि के रूप में इस कांग्रेस में भाग लिया। इस कांग्रेस ने 'राष्ट्रवाद' की पुनर्व्याख्या 'साम्राज्यवाद विरोध' के रूप में की; 'लोकतंत्र' का अर्थ स्पष्ट करते हुए बताया कि इसका अभिप्राय 'आम जनता' के जनतांत्रिक अधिकारों की गांरटी है; और 'जनता की जीविका' का सही अर्थ 'भूमि स्वामित्व का समानीकरण' और 'पूंजी का नियमन' है। किसान आंदोलन तेजी से आगे बढ़ रहा था। पेंग पाई (1896-1929) चीन के उन नेताओं में से एक था जिसने सबसे पहले सामंतों के खिलाफ किसानों को संगठित करने में महान योगदान दिया। वह केवल किसान आंदोलन का नेता नहीं था बल्कि 1924 में पेंग पाई कम्युनिस्ट पार्टी का सदस्य बना और जब तक वह जीवित रहा यहां तक कि सूली पर जान देने तक उसने इन आदर्शों का झंडा बुलंद रखा। उसको 24 अगस्त 1929 में गिरफ्तार कर लिया गया था। (चोउ एनलाई ने अपने एक निबंध में, जो *दैनिक लाल झंडा* में 30 अगस्त 1930 में छपा उसके साहस की बड़ी प्रशंसा की है—संपादक।) उसने क्वांगतुंग प्रांत के हाइफेंग जिले में किसान संघों की स्थापना की थी और वहां किसान जमीन की लगान घटाने की मांग को लेकर आंदोलन चला रहे थे। इसने किसानों को प्रेरणा दी कि वे आत्मरक्षा संघों का गठन करें और पूरे क्वांगतुंग प्रांत में स्थानीय अत्याचारियों, दुष्ट जमींदारों और भ्रष्टाचारी अधिकारियों के खिलाफ संघर्ष करें। कम्युनिस्ट पार्टी के सुझाव पर जुलाई 1924 में क्वोमिन्तांग ने किसान आंदोलन संस्थान का गठन किया। माओ भी कुछ समय के लिए इस संस्थान के संचालक के पद पर रहे। इस संस्था ने किसान आंदोलन में काम करने के लिए कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण दिया।

क्वोमिन्तांग (केएमटी) के साथ सहयोग

स्टुअर्ट श्रैम का मानना है कि माओ त्सेतुंग ने 1925 की सर्दियों में अच्छी तरह यह समझ लिया कि किसान जनता में बेहद क्रांतिकारी शक्ति है। इस समय क्वांगतुंग प्रांत में किसान आंदोलन पहले से ही उभार पर था। स्थानीय युद्ध सामंत के खिलाफ जब च्यांग काई शेक का 'पूर्वी अभियान' शुरू हुआ, तो किसानों ने न सिर्फ खुले दिल से स्वागत किया बल्कि उन्हें जासूसी के काम और रसद के यातायात में भी मदद दी। किसान संघों के बारे में खबरें हुनान प्रांत में पहुंच चुकी थीं। वहां किसान स्वत:स्फूर्त रूप से अपने संगठन बनाने लगे। माओ के अपने सूबे हुनान में 30 मई 1925 की एक घटना से किसान संघर्ष व्यापक हो गया जब एक जापानी फोरमैन ने एक चीनी मजदूर की हत्या कर दी। जब शंघाई के विद्यार्थियों और मजदूरों ने इसके विरोध में प्रदर्शन किए तो 'अंतर्राष्ट्रीय बस्ती' की पुलिस ने एक अंग्रेज अफसर के हुक्म से प्रदर्शनकारियों पर गोली चला दी। इस कांड में दस लोग मारे गए और पचास घायल हुए। 23 जून को इसी तरह के गोलीकांड में पचपन प्रदर्शनकारी मारे गए। इसके विरोध में हांगकांग और कैंटन के बीच एक साल चार महीने तक के लिए सभी प्रकार के संपर्कों को बंद दिया गया। माओ का कहना है :

> पहले मैंने किसानों के बीच वर्ग संघर्ष की भावना का सही आकलन नहीं किया था परंतु 30 मई की घटना के बाद, और उसके फलस्वरूप राजनीतिक आंदोलन की विशाल लहर आने पर हुनान की किसान जनता बहुत उत्तेजित हो गई। मैंने घर छोड़ दिया....और किसानों के संगठन का अभियान शुरू किया।[3]

माओ ने इस संबंध में सोवियत सलाहकार, बोरोदिन, जो सुन यातसेन के बुलाने पर अक्तूबर 1923 में गुवांगजू पहुंचे थे, के विचारों से भी संभवत: कुछ प्रेरणा ली थी। 1925 में बोरोदिन ने भी अपना मत व्यक्त करते हुए कहा था कि चीनी क्रांति की सफलता पूर्ण रूप से भूमि समस्या के हल के लिए किसानों के संगठन पर निर्भर होगी। माओ ने किसानों की भावनाओं को उभारने के लिए क्रांतिकारी नारों के चयन में अपनी कुशलता का अच्छा परिचय दिया था। 'लड़ाकू सामंत मुरदाबाद!' का नारा चीन के किसानों को फौरन समझ में आ गया और उसमें उन्हें पूरा विश्वास भी हो गया क्योंकि वे हर रंग की फौजों की लूटपाट और उत्पीड़न के शिकार होते रहे थे—इसलिए वे इस नारे से बहुत प्रभावित हुए। 'साम्राज्यवादी मुरदाबाद!' उन किसानों के लिए, जिन्होंने इसे पहली बार सुना था, कुछ-कुछ पहेली जैसा बन गया। माओ ने इसका अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा कि नारे का मतलब है 'अमीर फिरंगी मुरदाबाद!' माओ ने 1926 में क्वोमिन्तांग के प्रचार विभाग के संचालक के रूप में कहा था :

> किसी भी पार्टी की सफलता अनिवार्य रूप से इस तथ्य पर निर्भर है कि उसमें गुरुत्वाकर्षण का कोई केंद्र मौजूद है या नहीं। क्वोमिन्तांग के गुरुत्वाकर्षण का केंद्र अनगिनत शोषित किसान जनता के बीच छिपा हुआ है।[4]

यद्यपि किसानों के सवाल में माओ की दिलचस्पी से इनकार नहीं किया जा सकता, फिर भी वे, कम से कम इस समय सामाजिक क्रांति की तुलना में राष्ट्रीय क्रांति को प्राथमिकता देते थे। 30 मार्च 1926 को च्यांग काई शेक द्वारा सत्ता ग्रहण के दस दिनों के बाद, माओ ने किसान आंदोलन के बारे क्वोमिन्तांग की एक समिति को बताया, 'चूंकि राजनीति और साधारण जनता के आंदोलन के बीच घनिष्ठ संबंध है और इस कारण कि किसान आंदोलन बहुत से प्रांतों में अब जोर पकड़ रहा है, हमें उन प्रांतों के किसान आंदोलन पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है .... जहां से भविष्य में 'उत्तरी अभियान' के लिए फौज गुजरेगी।'[5] यहां माओ का दृष्टिकोण दो कारणों से उल्लेखनीय है। वे भूमि सुधार और राष्ट्रीय एकीकरण को आपस में जुड़ा हुआ मानते थे। इसलिए उन्होंने 'उत्तरी अभियान' के विरुद्ध स्तालिन की राय को नामंजूर कर दिया और उनकी इस सलाह पर भी कोई ध्यान नहीं दिया कि क्वोमिन्तांग को खुश करने के लिए कृषि क्रांति को धीमा कर देना चाहिए। माओ की दृष्टि में ये दोनों उद्देश्य समान महत्व के थे।

माओ की अपारंपरिकता यह थी कि उन्होंने किसान आधारित क्रांति की बात उसमें सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व की भूमिका का उल्लेख किए बगैर की थी। लेकिन हमें यह याद रखना चाहिए कि वे यह बात क्वोमिन्तांग को संबोधित करते हुए कह रहे थे; वे कम्युनिस्ट पार्टी के साथियों की बैठक को संबोधित नहीं कर रहे थे। जब माओ हुनान प्रांत के ग्रामीण इलाकों में गए तो उन्होंने किसानों की क्रांतिकारी ऊर्जा को अपनी आंखों से देखा :

> थोड़े समय में ही, चीन के मध्यवर्ती, दक्षिणी और उत्तरी प्रांतों के करोड़ों किसान आंधी या तूफान की तरह उठ खड़े होंगे....यह शक्ति इतनी असाधारण, तीव्र और हिंसक होगी कि कोई भी ताकत, चाहे वह कितनी बड़ी क्यों न हो, उसका दमन नहीं कर सकेगी। वे उन सभी बेड़ियों को तोड़ देंगे जो उन्हें जकड़े हुए हैं और मुक्ति के मार्ग पर अबाध गति से आगे बढ़ेंगे।[6]

अब माओ त्सेतुंग दो प्रकार की मुक्तियों की चर्चा कर रहे थे : (1) सांस्कृतिक और (2) सामाजिक। पहली मुक्ति अंधविश्वास, पितृसत्ता और पितृ-पूजा जैसी परंपराओं के उन्मूलन पर निर्भर थी। दूसरी मुक्ति का अभिप्राय 'एक क्रांति था....एक ऐसी हिंसात्मक क्रिया जिसके द्वारा एक वर्ग दूसरे वर्ग की सत्ता का उन्मूलन करता है। ग्रामीण क्रांति उसे कहते हैं जिसमें किसान वर्ग सामंती (जमींदार) वर्ग की सत्ता का उन्मूलन करता है।'[7]

जब 'उत्तरी अभियान' शुरू हुआ तो क्वोमिन्तांग के नेताओं और सैनिक अधिकारियों ने व्यवहार के स्तर पर किसानों के मुक्ति कार्यक्रम का विरोध किया क्योंकि वे स्वयं या तो जमींदार वर्ग की संतान थे या शहरी अभिजन के रूप में उनका इन जमींदारों से खून का रिश्ता था। क्वोमिन्तांग सिर्फ सिद्धांत के स्तर पर भूमि सुधारों का समर्थन करती थी और व्यवहार में उसका तीव्र विरोध करती थी। इस स्थिति में क्वोमिन्तांग का कम्युनिस्टों से संघर्ष होना अनिवार्य था हालांकि उन्होंने क्वोमिन्तांग के नाम से ही किसान आंदोलनकारियों को प्रशिक्षण दिया था। इस लड़ाई को रोकने का एकमात्र उपाय यही हो सकता था कि

कम्युनिस्ट ग्रामीण क्रांति का कार्यक्रम वापस ले लें। स्तालिन ने भी उन्हें यही सलाह दी कि वे अपना किसान मुक्ति आंदोलन स्थगित कर दें। उन्होंने चीनी कम्युनिस्टों से अनुरोध किया कि वे संयम से काम लें और अपनी क्रांतिकारी कृषि रणनीति द्वारा च्यांग काई शेक को डराने की चेष्टा न करें। 15 मार्च को माओ ने 'स्थानीय असामाजिक तत्वों और क्रूर जमींदारों के दमन के लिए बने नियमों' का समर्थन किया। इनमें क्रांति विरोधी कार्यों में संलग्न व्यक्तियों के लिए मृत्युदंड या आजीवन कारावास का प्रावधान था। 2 अप्रैल 1927 को क्वोमिन्तांग की केंद्रीय कार्यकारिणी समिति ने माओ त्सेतुंग को केंद्रीय भूमि समिति का सदस्य नियुक्त किया।

इस कमेटी के सामने माओ ने अपने हुनान अनुभव का संक्षेप में उल्लेख करते हुए उसका सारांश इन शब्दों में प्रस्तुत किया. 'जिसे हम भूमि-अधिग्रहण कहते हैं उसका अभिप्राय लगान का भुगतान न करना है; इसके इलावा किसी अन्य तरीके की जरूरत नहीं है। इस समय हुनान और हुपेई प्रांतों में किसान आंदोलन पहले से ही तेजी पकड़े हुए है, स्वयं अपनी पहल पर किसानों ने लगान के भुगतान से इनकार कर दिया है और राजनीतिक ताकत को हथिया लिया है। चीन में भूमि समस्या के हल के लिए, पहले हमें वास्तविकता के स्तर पर उसका समाधान कर लेना चाहिए, और यह बिलकुल उचित होगा कि उसकी कानूनी स्वीकृति हम बाद में करा लें।'[8] यहां माओ जमींदारों की जमीनों की जब्ती राष्ट्रीय क्रांति के परिप्रेक्ष्य में ही उचित मान रहे थे। क्रांतिकारी सेना तभी आगे बढ़ सकती थी जब उत्पादक वर्ग सैनिकों के लिए खाद्य पदार्थ की आपूर्ति कर सके और इस संबंध में किसानों का समर्थन पाने का सबसे अच्छा तरीका भूमि सुधार ही हो सकता था।

माओ त्सेतुंग के प्रस्ताव

'भूमि समस्या पर एक प्रस्ताव के प्रारूप' को प्रस्तुत करते हुए माओ ने सुझाव दिया कि 'स्थानीय अत्याचारी तत्वों, दुष्ट जमींदारों, भ्रष्टाचारी अधिकारियों, सैन्यवादियों तथा सभी ग्रामीण क्रांति विरोधी तत्वों'[9] की सभी जमीनों को जब्त कर लेना चाहिए। माओ तथा उनके सहयोगियों ने एक 'भूमि सर्वेक्षण' करने के उपरांत सुझाव दिया, 'सभी अमीर किसान, छोटे, मंझोले और बड़े जमींदार, जिनके पास साढ़े चार एकड़ से ज्यादा जमीन है, समान रूप से क्रांति विरोधी होते हैं—इनकी संख्या कुल जनसंख्या का 13 प्रतिशत है।'[10] स्वयं माओ के पिता के पास तीन एकड़ जमीन थी। इसलिए उनकी परिभाषा के अनुसार क्रांति विरोधी व्यक्ति के लिए भूमि की सीमा का स्तर बहुत ही निम्न था। माओ ने प्रतिक्रांतिकारियों की जमीनों के राजनीतिक अधिग्रहण और एक वर्ग के रूप में जमींदारों की जमीनों के आर्थिक अधिग्रहण के बीच भेद किया था। ये जमींदार किसानों का आर्थिक शोषण करते थे। उन्होंने कहा कि स्थानीय स्थितियों में बहुत अंतर होता है और उनको ध्यान में रखते हुए हमें अपनी नीति में लचीलापन रखने की जरूरत है। माओ के मतानुसार :

> हुनान में, जहां किसानों ने भूमि के पुनर्विभाजन का काम पहले से ही शुरू कर रखा है, 'राजनीतिक अधिग्रहण' अपर्याप्त होगा; इसके विपरीत अन्य प्रांतों में जहां किसान आंदोलन पिछड़ा हुआ है, 'आर्थिक अधिग्रहण' अपरिपक्व होगा।[11]

हुनान में किसान आंदोलन की जांच-पड़ताल के बारे में अपनी रिपोर्ट में, माओ ने 'पार्टी के अंदर और बाहर से आने वाली सभी आलोचनाओं और उनमें निहित संदेहवाद को दृढ़तापूर्वक अस्वीकार करते हुए किसान आंदोलन के महत्व की पुष्टि की .... उन्होंने बल देकर कहा कि पार्टी को गरीब किसानों पर निर्भर रहना चाहिए क्योंकि वे क्रांति के अग्रिम दस्ते हैं; उसे मंझोले किसानों और अन्य ताकतों के साथ, जिन्हें अपने पक्ष में लाया जा सकता है, एकजुटता कायम करनी चाहिए। पार्टी को किसान संघों का निर्माण करना चाहिए और कृषक सैन्य बलों का संगठन करना चाहिए जिनके जरिए किसान संघ ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी पूरी सत्ता स्थापित कर सकें। तब उन्हें जमीन के लगान और ऋणों पर ब्याज की दर में कमी करानी चाहिए और भूमि का पुनर्वितरण करना चाहिए, इत्यादि।'[12]

माओ के इन प्रस्तावों पर वांग चिंगवेई ने चिंता प्रकट की, 'जिनमें नाम के लिए राजनीतिक अधिग्रहण का और वास्तव में आर्थिक अधिग्रहण का उल्लेख किया गया था।' शिया शी ने दावा किया कि रिपोर्ट 'अंतर्विरोधों से भरी हुई है' जिसका परिणाम 'गरीब और अमीर किसानों के बीच तात्कालिक संघर्ष के रूप में' दिखाई पड़ेगा; इसके अलावा यह रिपोर्ट अव्यावहारिक भी है। पेंग त्सेशियांग के अनुसार माओ के प्रस्ताव अपर्याप्त थे; इसलिए उसने मांग की कि 'सभी जमीनों का तुरंत बिना किसी शर्त के अनिवार्य अधिग्रहण होना चाहिए।'

माओ ने उत्तर दिया कि अगर हुनान जैसे पांच प्रांत भी हों, तो जमीन के सवाल का पूरा हल तुरंत संभव है और उसकी प्रक्रिया फौरन शुरू की जा सकती है। उनका तर्क था कि कानूनी फार्मूलों के मुकाबले तथ्य ज्यादा महत्वपूर्ण हैं :

> यह काफी है कि लोग जमींदारों को लगान देना बंद कर दें, और ऐसी व्यवस्था उत्पन्न हो जाएगी जिसके अंतर्गत भूमि समस्या का समाधान हो जाएगा; जब वास्तविकता के स्तर पर सवाल का हल हो जाएगा तो उसकी कानूनी मान्यता बाद में प्राप्त कर ली जाएगी।[13]

इस समय माओ के प्रस्तावों को न केवल क्वोमिन्तांग मित्र-दल ने बल्कि कोमिन्टर्न और उसके स्थानीय प्रतिनिधि ने भी अतिवादी माना था। इसलिए अंतिम प्रस्ताव द्वारा लघु जमींदारों और क्वोमिन्तांग की क्रांतिकारी फौज के अफसरों को जमीनों की जब्ती से छूट दे दी गई थी। चेन तूश्यू, बोरोदिन और माओ ने किसानों के लिए स्थानीय स्वशासनिक संस्थाओं के संगठन का प्रस्ताव भी रखा और कहा कि इनके द्वारा उनमें क्रांतिकारी चेतना का संचार किया जा सकता है। माओ के प्रस्तावों का क्वोमिन्तांग के फौजी अफसरों ने घोर विरोध किया क्योंकि वे अनिवार्य रूप से स्वयं जमींदार वर्ग के सदस्य थे। चेतावनी के इन संकेतों के बावजूद कोमिन्टर्न अब भी अपनी इस जिद पर कायम थी कि न केवल वूहान

स्थित क्वोमिन्तांग के वामपंथ से बल्कि च्यांग काई शेक के साथ भी कम्युनिस्ट पार्टी अपना गठबंधन और सहयोग जारी रखे।

च्यांग ने स्वयं ही इस समस्या का हल कर दिया जब उसने अप्रैल 1927 में शंघाई में छात्रों और मजदूरों के जुलूस पर गोलियां चलवा दीं जिसमें हजारों की संख्या में प्रदर्शनकारी मारे गए। इस हत्याकांड के बाद उसने वूहान सरकार के खिलाफ विद्रोह कर नानचांग में अपनी वैकल्पिक सरकार बना ली। इस प्रकार क्वोमिन्तांग के साथ कम्युनिस्ट पार्टी का गठबंधन रक्तपात के साथ टूट गया।

कम्युनिस्ट पार्टी क्वोमिन्तांग के सहयोग से चीन में कृषि क्रांति को आगे बढ़ाने में सफल न हो सकी। परंतु चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को इन वर्षों में काफी राजनीतिक अनुभव हो गया। उसने अब सीख लिया कि अपने आंतरिक मामलों का प्रबंध बाहरी सलाह पर निर्भर हुए बगैर स्वयं कैसे किया जा सकता है।

ऊपरी तौर पर, जब माओ ने किसान वर्ग को राजनीतिक शक्ति के रूप में प्रधान भूमिका प्रदान की, तो उनके दृष्टिकोण और उपनिवेशी तथा अर्ध-उपनिवेशी देशों में कृषि समस्या पर कोमिन्टर्न के दृष्टिकोण के बीच कोई अंतर्विरोध नहीं था। वास्तव में, कोमिन्टर्न दिसंबर 1925 में 'चीनी परिस्थिति पर थीसिस' में स्पष्ट रूप से घोषणा कर चुकी थी कि 'सर्वहारा वर्ग ही एकमात्र ऐसा वर्ग है....जो इस स्थिति में है कि प्रगतिशील कृषि नीति को क्रियान्वित कर सके और यह शर्त ही....क्रांति के अग्रिम विकास की गारंटी है।'[14]

हुनान पर माओ की रिपोर्ट में जनवादी क्रांति के अग्रिम दस्ते का निर्माण गरीब किसान करते हैं। अत: माओवाद को एक सरल तार्किक युक्ति के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है जिसमें शहरी सर्वहारा वर्ग का समीकरण गरीब किसानों के साथ किया जाता है। बिलकुल यही समीकरण माओ द्वारा सत्ता प्राप्ति का सैद्धांतिक आधार बन गया। जब शहरों के औद्योगिक मजदूरों पर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का नियंत्रण नहीं रहा तो माओ के नेतृत्व में उन्होंने गरीब किसानों के रूप में एक नए 'सर्वहारा वर्ग' की खोज कर ली और इस शक्ति का उपयोग उन्होंने 'नव-जनवादी' क्रांति को क्रियान्वित करने के लिए किया। इस प्रकार चीन में एक सशस्त्र क्रांति ने बाईस वर्षों तक एक सशस्त्र प्रतिक्रांति के खिलाफ लड़ाई लड़ी।

कृषि क्रांति की प्रक्रिया

जब च्यांग काई शेक और वांग चिंगवेई ने चीनी क्रांति के साथ विश्वासघात कर दिया तो चीन की राजनीतिक परिस्थिति में भयानक त्रासदी शुरू हुई और घटनाओं ने बहुत बुरा मोड़ लिया। मजदूर यूनियनों और किसान संघों को अवैध घोषित कर उनका विघटन कर दिया गया। क्वोमिन्तांग के श्वेत आतंक के कारण मजदूर-किसान आंदोलन कमजोर हो गया। 1 अगस्त 1927 का नानचांग का विद्रोह कम्युनिस्ट पार्टी की तरफ से इस आतंक का

पहला जोरदार जवाब था। चोउ एनलाई के शब्दों में इस सशस्त्र विद्रोह का उद्देश्य कृषि अशांति को प्रोत्साहन देना नहीं था बल्कि बड़े शहरों पर हमला करने की तैयारी करना था। यह एक दुखद नीतिगत गलती थी। इसके तुरंत बाद पार्टी की केंद्रीय समिति ने कृषि क्रांति और क्वोमिन्तांग प्रतिक्रियावादियों के खिलाफ सशस्त्र संघर्ष के सामान्य सिद्धांत का प्रतिपादन किया। केंद्रीय समिति की बैठक में माओ ने कहा : 'अब भविष्य में हमें सचेत हो जाना चाहिए कि राजनीतिक सत्ता बंदूक द्वारा ही प्राप्त होती है।'[15]

यह वह ऐतिहासिक मोड़ था जब पार्टी महान क्रांति की विफलता से उबरकर कृषि क्रांतिकारी युद्ध की ओर अग्रसर हुई।

माओ त्सेतुंग ने कहा कि हमें पार्टी की सैनिक ताकत का उपयोग 'सभी जमींदारों की जमीनों को जब्त करने के लिए और उन्हें किसानों में बांटने के लिए करना चाहिए।' यह नए प्रकार की जन-सेना के निर्माण की शुरुआत थी जिसके द्वारा कृषि क्रांति को बढ़ावा दिया जाना था। माओ ने व्यवहार से शिक्षा लेने के अपने कौशल का प्रदर्शन किया। उन्होंने जनवादी क्रांति के लिए एक नई रणनीति का सुझाव दिया। उसने कहा कि नगरों पर आक्रमण करने के बजाए हमें अब ग्रामीण क्षेत्रों में आगे बढ़ना चाहिए। अनेक स्थानों पर पार्टी की जुझारू ताकतों ने छापामार लड़ाइयां लड़ीं और इस प्रकार उन्होंने मजदूरों और किसानों के लाल सेना के विकास की नींव रखी तथा ग्रामीण क्रांतिकारी क्षेत्रों का निर्माण किया। इन ग्रामीण इलाकों में वर्गीय अंतर्विरोध बहुत तेज हो चुके थे और क्वोमिन्तांग शासकों का नियंत्रण सभी गांवों में पूरी तरह से नहीं था। इसलिए कम्युनिस्ट पार्टी को अपनी गतिविधियों की दिशा ग्रामीण क्षेत्रों की ओर मोड़नी पड़ी।

सैनिक संघर्ष को कृषि क्रांति से पृथक करना संभव नहीं था। हुनान-चियांग्शी सीमावर्ती क्षेत्र में 60 प्रतिशत से अधिक भूमि जमींदारों के कब्जे में थी और किसानों के पास 40 प्रतिशत से भी कम जमीन थी। यह भूमि प्रणाली चीन की सामंती व्यवस्था का आधार थी।

अनेक पीढ़ियों से, गरीब किसान जमीन पाने का सपना संजोए हुए थे। इसलिए इस इलाके में भूमि पुनर्वितरण का आंदोलन तेजी से फैल गया। पार्टी ने वितरण प्रक्रिया के लिए गरीब किसानों की कमेटियां बना दीं। सभी निवासियों को, चाहे वे स्त्री हों या पुरुष, जमीन के बराबर हिस्से बांट दिए गए। पार्टी का नारा था—'राजनीतिक ताकत किसान संघों में निहित है।' लाल सेना के बुनियादी काम थे :

1. संघर्ष के लिए जनता को संगठित करना, कृषि क्रांति को पूरा करना और सोवियत सरकारों की स्थापना करना;
2. छापामार लड़ाई जारी रखना, किसानों को हथियार देना और लाल सेना का विस्तार करना; एवं
3. छापामार युद्ध के क्षेत्रों का विस्तार करना और सारे देश में उनका राजनीतिक प्रभाव फैलाना।

भूमि सुधारों के लाभ केवल गरीब किसानों और खेत मजदूरों को ही नहीं मिले, मंझोले किसानों को भी उनसे फायदा हुआ। इसलिए किसानों का विशाल बहुमत कृषि क्रांति और कम्युनिस्ट पार्टी का समर्थन करने लगा। एक के बाद एक क्रांतिकारी इलाकों में कृषि क्रांति की शुरुआत की गई। माओ के शब्दों में :

> कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में जनवादी क्रांति ने अद्वितीय रणनीति अपनाई। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवेश कर शहरों की चारों तरफ से घेराबंदी कर लेना और सशस्त्र शक्ति द्वारा राज्य की सत्ता पर कब्जा करना.... ।[16]

माओ त्सेतुंग ने इस प्रक्रिया में सर्वश्रेष्ठ और महान योगदान किया। क्रांति की प्रमुख शक्ति के रूप में किसानों पर निर्भरता के सैद्धांतिक आधार की व्याख्या करते हुए माओ त्सेतुंग ने कहा :

> अर्ध-उपनिवेशी चीन में, किसान संघर्ष मजदूरों के नेतृत्व के अभाव में कभी सफल नहीं हो सकता, परंतु अगर किसी समय किसान संघर्ष मजदूर शक्तियों की परिधि से आगे निकल जाए तो इससे क्रांति को कोई नुकसान नहीं पहुंचता।[17]

जून 1930 में माओ ने 'वामपंथी' दुस्साहस पर आधारित ली लीसान की 'लाइन' का विरोध किया। ली लीसान का मत था कि न केवल चीनी क्रांति की बल्कि विश्व क्रांति की लड़ाई का निर्णायक दौर आ पहुंचा है। हालांकि दुस्साहस की इस नीति का बोलबाला सिर्फ तीन महीनों तक चला, फिर भी उसने पार्टी और कृषि क्रांति को काफी नुकसान पहुंचाया। इस गलती को जल्दी ही सुधार लिया गया। कोमिन्टर्न ने चोउ एनलाई और छू छिनपाई को शीघ्र चीन भेजकर ली लीसान की गलती को ठीक कर दिया।

इस दौरान लाल सेना एक लाख से अधिक क्रांतिकारी किसानों की विशाल शक्ति बन चुकी थी। इसलिए वह क्वोमिन्तांग को फौजों के 'घेराबंदी' और 'दमन' अभियानों के खिलाफ दृढ़तापूर्वक लड़ सकती थी। कभी-कभी बड़ी संख्या में क्वोमिन्तांग सैनिक च्यांग काई शेक का साथ छोड़कर लाल सेना में शमिल हो जाते थे। इससे पता चलता है कि क्वोमिन्तांग की गृहयुद्ध नीति लोकप्रिय नहीं थी और लाल सेना अब पहले से ज्यादा ताकतवर हो गई थी। क्वोमिन्तांग के हमलों को लाल सेना ने चार बार विफल कर दिया था।

जब जापानी साम्राज्यवादियों ने 18 सितंबर 1931 को मंचूरिया पर आक्रमण कर दिया तो उसके फलस्वरूप चीन के भीतरी वर्गीय अंतर्विरोध की तुलना में राष्ट्रीय अंतर्विरोध ज्यादा तेज हो गया। चीन के किसानों और मजदूरों की इच्छा थी कि जापानी आक्रमण के खिलाफ लड़ा जाए। कोमिन्टर्न का नारा था, 'हथियारों द्वारा सोवियत संघ की रक्षा करो।' यह नारा न तो चीन के आंतरिक वर्ग संघर्ष के संदर्भ में और न ही चीन की राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के दृष्टिकोण से प्रासंगिक था। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने, जापान के विरुद्ध राष्ट्रीय संयुक्त मोरचे के निर्माण की मांग करने के बजाए, घोषणा की कि क्वोमिन्तांग शासन तंत्र का पतन

तुरंत होने वाला है और चीन में राजनीतिक संघर्ष का मुख्य स्वरूप 'क्रांति और प्रतिक्रांति के बीच जीवन-मरण का संघर्ष है।' 1933 के उत्तरार्ध में च्यांग काई शेक ने स्वयं अपने सेनापतित्व में केंद्रीय सोवियत क्षेत्र के खिलाफ 'घेराबंदी और दमन' का पांचवां अभियान शुरू किया।

माओ को लगा कि 'वामपंथी' नीति जिसके अंतर्गत जमींदारों को जमीन के पुनर्वितरण के बाद कोई जमीन नहीं दी जाती थी और धनी किसानों को बंजर धरती मिलती थी, वर्तमान चरण में दुस्साहसी थी। इसलिए उन्होंने इस नीति का विरोध किया। उसकी वजह से सामाजिक अव्यवस्था फैल गई और क्वोमिन्तांग फौजों के विरुद्ध लाल सेना के पांचवें प्रति-अभियान में उसकी पराजय हो गई। कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में लाल सेना के 86,000 सैनिकों ने क्वोमिन्तांग की घेराबंदी तोड़कर उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र की ओर अपनी ऐतिहासिक लंबी यात्रा शुरू की। इसके परिणामस्वरूप क्रांति की विफलता लगभग दिखाई पड़ने लगी। माओ ने कहा :

> हमारी रणनीति का सिद्धांत है कि हम अपने मुख्य सैन्य बलों को उत्तर में आक्रमण के लिए संकेंद्रित करें, गतिशील युद्ध द्वारा विशाल संख्या में शत्रुओं का विध्वंस करें ....सिचुआन-शांशी-कांसू में सोवियत आधार क्षेत्र का निर्माण करें।[18]

सामाजिक परिवर्तन के तीन चरण

ग्रामीणों क्षेत्रों में, माओ के अनुसार, क्रांतिकारी परिवर्तन के तीन चरण होने थे : (1) भूमि सुधार, (2) भूमि सत्यापन आंदोलन, तथा (3) कृषि का विकास। उनका विचार था कि सामाजिक संबंधों के संपूर्ण रूपांतरण से कृषि उत्पादन में वृद्धि होगी। भूतपूर्व जमींदारों को प्रतिष्ठा विरासत में प्राप्त होती है और यही बात धनी किसानों के विषय में सही है। उनके प्रभाव को मिटाने के लिए यह आवश्यक है कि अपने भूतपूर्व शोषकों के खिलाफ गरीब किसानों के वर्गीय संघर्ष को बढ़ावा दिया जाए। माओ ने लिखा :

> क्रांतिकारी जनसाधारण जमींदारों और धनी किसानों के खिलाफ एक गंभीर संघर्ष में लगे हुए हैं, लेकिन यह संघर्ष वैसा नहीं है जैसा वह पहले चरण में था, अर्थात भूमि सुधार के चरण में, जब सफेद झंडे और लाल झंडे के बीच खुली लड़ाई लड़ी गई थी। अब यह संघर्ष क्रांतिकारी किसान वर्ग जमींदारों और धनी किसानों के उन तत्वों के विरुद्ध लड़ रहा है जो अपने चेहरों पर झूठे मुखौटे लगाए हुए हैं।[19]

भूमि सत्यापन आंदोलन का उद्देश्य जांच पड़ताल द्वारा छिपे हुए वर्ग शत्रुओं का परदाफाश करना था। माओ ने एक ऐसे आंदोलन का वर्णन करते हुए कहा, 'पचपन दिनों तक तमाम जिले की जनता को गतिशील कर दिया गया था। सामंती तत्वों का जड़ से सफाया कर दिया गया। जांच पड़ताल के दौरान जमींदारों और धनी किसानों के 300 से ज्यादा परिवारों

को ढूंढ लिया गया। बारह प्रतिक्रांतिकारी तत्वों को, जिन्हें किसान 'बड़े चीतों' के नाम से पुकारते थे, बंदूक की गोली से मार दिया गया। इस प्रकार क्रांति विरोधी गतिविधियों का दमन कर दिया गया।'[20] चियांग्शी आधार क्षेत्र में जांच-पड़ताल का यह आंदोलन 1949 के बाद में लागू होने वाली भूमि सुधार नीतियों का पूर्वाभास था। माओ के मतानुसार भूमि सुधार आर्थिक प्रक्रिया के साथ-साथ एक राजनीतिक प्रक्रिया भी थी। इसके अतिरिक्त तात्कालिक रूप से वह किसान वर्ग के लिए शिक्षा की प्रक्रिया भी थी।

सामाजिक परिवर्तन की कुंजी के रूप में जनता की गतिशीलता और लामबंदी के लिए और भूतपूर्व शोषक वर्गों के प्रभाव के पुनरुत्थान को रोकने के लिए, मौजूदा परिस्थिति की लगातार समीक्षा माओ के राजनीतिक दर्शन का अभिन्न अंग बनी रही है। बार-बार 'वर्ग संघर्ष के आंदोलन' इसी तरह 'विचार सुधार' और 'भूल सुधार' की नीतियों की संपूर्ण शृंखला, जिनकी चरम सीमा 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' में दिखाई पड़ी, माओ के इसी दर्शन की अभिव्यक्तियां हैं। जिस बात को माओ ने 1930 के दशक में कहा था, उसी की पुष्टि करते हुए उन्होंने सांस्कृतिक क्रांति की पूर्व-संध्या पर 1966 में बताया :

> पहले मैं एक प्राथमिक विद्यालय का प्रधानाचार्य था और उसके बाद एक माध्यमिक विद्यालय का शिक्षक रहा। अब मैं कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति का सदस्य हूं और उसके पहले मैं एक बार क्वोमिन्ताग का विभागाध्यक्ष भी था। परंतु जब मैं ग्रामीण क्षेत्रों में गया और कुछ समय किसानों के साथ मैंने बिताया तो मैं इस बात से बहुत प्रभावित हुआ कि ये किसान कितनी जानकारी रखते थे। मैंने अनुभव किया कि उनका ज्ञान बहुत विस्तृत था और मैं उनका मुकाबला नहीं कर सकता।[21]

'जापान विरोधी संयुक्त मोरचे' के काल में 1936 से 1945 तक, माओ के नेतृत्व में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने एक नरम भूमि नीति का पालन किया। यह अब तक क्रियान्वित पार्टी कार्यक्रमों में सबसे कम उग्र कृषि कार्यक्रम था। इसके बहुत से प्रावधान उन प्रावधानों से मिलते थे जिन्हें चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने गृहयुद्ध में अपनी जीत के बाद यांग्त्सी नदी के दक्षिण में दक्षिणी चीन के उन क्षेत्रों में लागू किया था जो कम्युनिस्टों के प्रत्यक्ष शासन के अधीन पहली बार आए थे। युद्धकालीन भूमि नीति की एक विशेषता यह थी कि अधिकतम लगान 37.5 प्रतिशत निश्चित कर दिया गया था। इस नीति का उद्देश्य यह था कि युद्ध प्रयासों के लिए सभी ग्रामीण वर्गों का समर्थन और सहयोग प्राप्त किया जाए। इसलिए जमींदारों और किसानों दोनों के नागरिक, राजनीतिक और संपत्ति संबंधी अधिकारों की सुरक्षा की गई थी। लगान और ब्याज दर में कटौती करने के बाद, जमींदारों और साहूकारों को लगान और ब्याज वसूल करने की अनुमति प्रदान की गई थी। 1937 में चीन-जापान युद्ध के प्रारंभ होने पर चियांग्शी सोवियत काल की कठोर नीतियों को छोड़ दिया गया था।

नए नियमों के अंतर्गत अब जमींदारों की संपत्ति को मुआवजा दिए बगैर जब्त नहीं किया जा सकता था और इसी तरह धनी किसानों को बंजर जमीन देकर उनकी भूमि का अधिग्रहण नहीं किया जा सकता था।

भूमि सुधारों की यह नरम नीति गृहयुद्ध के प्रारंभ तक सामान्य रूप से लागू रही। क्वोमिन्तांग के साथ लड़ाई शुरू होने पर जमींदारों के साथ कम्युनिस्ट पार्टी का कठोर बरताव फिर शुरू हो गया। इस संबंध में नए कानून पारित किए गए। मसलन शांशी-कांसू-निंगशिया सीमांत क्षेत्र में दिसंबर 1946 के कानून के अनुसार जमींदारों की अतिरिक्त भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण का प्रावधान किया गया और 10 अक्तूबर 1947 में एक नया कृषि अधिनियम स्वीकृत हुआ। कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने दो ओदश जारी किए—'ग्रामीण वर्गों का विभाजन किस प्रकार किया जाए?' तथा 'कृषि संघर्ष की कुछ समस्याओं के बारे में निर्णय'। इन अध्यादेशों को मई 1948 में पुन: प्रभावी कर दिया गया।

1950 में नई कम्युनिस्ट सरकार ने एक भूमि सुधार अधिनियम जारी किया जिसने 'जमींदार वर्ग द्वारा सामंती शोषण की भूमि स्वामित्व प्रणाली का उन्मूलन कर दिया' परंतु धनी और मंझोले किसानों के प्रति उसकी नीति में काफी नरमी थी। 'इस नए कानून ने वाणिज्य और उद्योग में लगे जमींदारों के उद्यमों को और फसलों के व्यापार संबंधी उद्यमों को भी सुरक्षा प्रदान की।'[22] इस प्रकार संपत्ति के अधिग्रहण के सिद्धांत को उनकी भू-संपत्ति तक सीमित कर दिया।

जनवादी गणतंत्र की स्थापना के बाद, माओ के शब्दों में गंभीरतम कार्य 'किसान वर्ग की शिक्षा' था। किसान वर्ग अब भी 'मजदूर वर्ग का प्रमुख राजनीतिक मित्र' था। परंतु यह पूरी तौर से अपनी राजनीतिक भूमिका तभी निभा सकता था जब वह अपनी आर्थिक भूमिका निभाने में भी पूर्णत: सक्षम हो। माओ की दृष्टि में, इसका अर्थ था 'कृषि का समानीकरण .... जिसका शक्तिशाली उद्योग के विकास के साथ समन्वय किया जाए और राज्य उद्योग इस विकास की रीढ़ की हड्डी हो।'[23] यह कहना कि इसका अभिप्राय किसान वर्ग की शिक्षा था, बात के महत्व को घटाकर कहना है।

आवश्यकता इस बात की थी, जिससे माओ स्वयं सहमत थे, कि गांवों में एक सांस्कृतिक और बौद्धिक क्रांति की जाए, जिससे ग्रामीण लोग आधुनिक विज्ञान की तकनीकें और ज्ञान सीख सकें और अपनी व्यक्तिवादी मनोवृत्तियों को बदल सकें, जिन्हें भूमि की क्षुधा से ग्रस्त किसानों ने विरासत में पाया था।

ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक और आर्थिक संबंधों के पुनर्निर्माण की दिशा में पहला कदम भूमि सुधार का कार्यक्रम पूरा करना था। यह प्रक्रिया गृहयुद्ध के आरंभ से ही सभी मुक्त क्षेत्रों में अबाध गति से जारी थी। यह लेनिनवादी सिद्धांत के सर्वथा अनुकूल थी, जो स्वीकार करता है कि समूहीकरण के मार्ग में व्यक्तिगत भूमि स्वामित्व एक आवश्यक चरण है। परंतु माओ का विचार था कि जमींदारों को उनकी संपत्ति से वंचित करना किसानों की 'शिक्षा' के लिए काफी महत्व की बात थी।

नए गणतंत्र की स्थापना के पहले और बाद में लाल सेना की प्रगति के साथ भूमि सुधार का कार्यक्रम भी मुक्त क्षेत्रों में लागू किया जा रहा था। माओ ने किसानों से अनुरोध किया कि वे ग्रामीण क्षेत्र के सभी अत्याचारी जमींदारों और अधिकारियों को दंडित करें। यह ग्रामीण इलाकों में शक्तियों के संतुलन को बदलने के लिए और मनोवैज्ञानिक संबंधों

को सुधारने के लिए जरूरी था। इस संबंध में स्टुअर्ट श्रैम का कहना है :

> इस तथ्य के अलावा कि विगत वर्षों में अनेक जमींदारों ने अपने असामियों को पीटा और जान से मारा था और इसलिए माओ की दृष्टि में वे मृत्युदंड के अधिकारी थे, यह जरूरी था कि किसान सार्वजनिक सभाओं में उनके जघन्य अपराधों की भर्त्सना करें और स्वयं उन्हें मौत के घाट उतारें। तभी किसान अनुभव करेंगे कि जमाना बदल गया है और वे खुद अपने मालिक बन गए हैं।[24]

आर्थिक दृष्टि से यह वांछनीय था कि धनी किसानों पर आधारित अर्थव्यवस्था को बनाए रखने की नीति का अनुसरण किया जाए जिससे देहाती इलाकों में उत्पादन को जल्दी सामान्य बनाया जा सके। इस नीति और कुलक वर्ग के प्रति नई आर्थिक नीति काल की सोवियत नीति के बीच कुछ सादृश्य जरूर है, परंतु चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने इस नरम नीति को तुरंत लागू कर दिया था, जिसके पहले सोवियत रूस जैसा कोई 'युद्ध साम्यवाद' का दौर चीन में नहीं आया था। धनी किसानों को अपनी भूमि अपने पास रखने की अनुमति थी लेकिन वे नई जमीन नहीं खरीद सकते थे। राजनीतिक दृष्टि से उन्हें अलग-थलग कर दिया गया था, क्योंकि वे नए किसान संघों के सदस्य नहीं बन सकते थे, जिनकी सदस्यता गरीब और मंझोले किसानों तक सीमित कर दी गई थी। स्टुअर्ट श्रैम के अनुसार :

> चीन की अर्थव्यवस्था की सबसे बड़ी कमजोरी उसका कृषि क्षेत्र है। माओ और उनके सहकर्मियों ने प्रारंभ में किसान वर्ग के साथ अपना व्यवहार बहुत न्यायोचित और संतुलित रखा। तीन दशक पूर्व सोवियत नीतिज्ञ रूसी क्रांति के बाद ऐसा नहीं कर सके थे। किसानों के कुछ विरोध के बावजूद, चीन में कृषि का समूहीकरण सोवियत संघ की तुलना में अपेक्षाकृत कमजोर, जबरदस्ती के साथ लागू कर लिया गया था। परंतु इस क्षेत्र में अधिक समझदारी दिखाने के बाद चीन के राजनेता ज्यादा दुस्साहसी बन गए और कम्यूनों की ताबड़तोड़ स्थापना द्वारा उन्होंने देहाती क्षेत्रों में अराजकता का माहौल पैदा कर दिया। नतीजा यह हुआ कि जनता और अर्थव्यवस्था के लिए विपदाजनक स्थिति पैदा हो गई।[25]

जनवादी गणतंत्र में कृषि की दशा

सोवियत नीति से भिन्नता के बावजूद, कृषि के क्षेत्र में, स्टुअर्ट श्रैम के अनुसार, चीन में परिणाम रूस से मिलते-जुलते हुए ही निकले। दोनों देशों में उत्पादन का विकास उस बिंदु पर जाकर ठहर गया, जिस बिंदु पर क्रांति के पहले सामान्य स्थितियों में उत्पादन पहले ही पहुंच चुका था। 1962 के बाद कृषि उत्पादन में वृद्धि निजी भूखंडों की स्थापना की वजह से हुई, जिन्हें कम्यूनों के पहले चरण में छीन लिया गया था। रूसी कोलखोज अर्थात सामूहिक फार्म के अनुसार उत्पादन का विकेंद्रीकरण कर दिया गया। लंबी छलांग और

जन-कम्यूनों के आंदोलनों के समय 'वामपंथी' गलतियों की वजह से कृषि के उत्पादन में भारी कमी हो गई थी। कृषि और कृषि संबंधी उत्पादन में तेजी से गिरावट आई थी। नतीजा यह हुआ कि सारे देश में गांवों में दुर्भिक्ष जैसी स्थिति उत्पन्न हो गई। सरकारी आंकड़ों के अनुसार लाखों लोगों को भुखमरी की वजह से मौत का शिकार होना पड़ा। चीन की सार्वजनिक प्रणाली भी अकाल पीड़ितों की रक्षा न कर सकी। पश्चिमी प्रेक्षकों का अनुमान है कि 1959–61 के बीच में दो और तीन करोड़ के बीच ग्रामवासी अनाज और इलाज के अभाव में मर गए। (ये आंकड़े ठीक नहीं मालूम होते–संपादक।)

कम्युनिस्ट पार्टी के अधिकृत इतिहास में इस परिस्थिति का त्रासद उल्लेख है :

> 1960 में अनाज का उत्पादन और भी गिर गया जो 143.5 अरब किलोग्राम था। यह उत्पादन 1959 के उत्पादन से 26.5 अरब किलोग्राम कम था और 1951 के स्तर पर पहुंच गया था .... शहरी और देहाती लोगों में अनाज की औसत खपत 1957 की तुलना में 19.4 प्रतिशत गिर गई थी। इसमें, देहाती क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति खपत 32.7 प्रतिशत गिरी थी .... सरकारी आंकड़ों के अनुसार 1960 में पिछले वर्ष की तुलना में देश की संपूर्ण जनसंख्या एक करोड़ कम हो गई। उदाहरणार्थ, हेनान प्रांत के शिनयांग इलाके में, नौ जिलों में, मृत्यु दर सौ प्रति हजार हो गई, जो सामान्य वर्षों की दर से कई गुना अधिक थी। .... असफल 'लंबी छलांग' और जन-कम्यून आंदोलन का यह सर्वाधिक दु:खदायी नतीजा और सबसे गंभीर सबक था।[26]

यह सिद्ध करता है कि ग्रामीण नीतियों में अब व्यापक परिवर्तन की आवश्यकता थी। हिसाब-किताब के लिए उत्पादन टीम को फिर से कायम कर दिया गया। 'समतावादी' भूल को सुधारने का निर्णय किया गया। सत्ता कम्यून में निहित कर दी गई। कम्यून के सदस्यों को निजी भूखंड आबंटित किए गए और उन्हें व्यापार करने की अनुमति दी गई। माओ ने कहा, 'इस नियम में कम से कम अगले बीस वर्षों तक कोई परिवर्तन नहीं किया जाएगा।'[27]

माओ ने कम्युनिस्ट पार्टी के अंदर आत्म-समीक्षा करते हुए कहा कि वे अपनी भूलों को तुरंत सुधार लेंगे। उन्होंने 'स्वीकार किया कि समाजवादी निर्माण को जल्दबाजी में क्रियान्वित नहीं करना चाहिए, इसके लिए संभवत: पचास साल की आवश्यकता होगी।'

जब नई सरकार ने उत्पादन टीमों को अधिक उत्तरदायित्व सौंपा, तो किसानों ने अपने काम में नई पहलें लेना शुरू किया। उत्पादन टीमें कृषि के क्षेत्र में प्रारंभिक सहकारी संस्थाओं का विकल्प थीं। इसके साथ-साथ अनके क्षेत्रों में 'पारिवारिक अनुबंध उत्तरदायित्व प्रणाली' के विभिन्न स्वरूपों का स्वत:स्फूर्त तरीके से उदय हुआ।

जब से कृषि में सहकारी संघों का निर्माण किया गया, उसी समय 'पारिवारिक उत्तरदायित्व' पद्धतियों का स्वत:स्फूर्त उदय हो गया था। जब भी पार्टी ग्रामीण सामूहिक आर्थिक संगठन के अंतर्गत उत्पादन संबंधों में बदलाव का प्रस्ताव करती, तो उसकी प्रतिक्रिया 'पारिवारिक उत्तरदायित्व' क रूप में प्रकट होती। इस तथ्य से यह साबित होता

था कि पारिवारिक प्रबंधन चीन की कृषि सहकारी संस्थाओं के लिए उपयुक्त था, क्योंकि उनमें शारीरिक श्रम उत्पादन का मुख्य साधन था। तेंग श्याओपिंग के अनुसार चीन की वर्तमान परिस्थितियों में पारिवारिक उत्तरदायित्व प्रणाली कृषि उत्पादन में बढ़ोत्तरी का सर्वोत्तम तरीका है। उन्होंने कहा :

> जिस बात को जनता पसंद करती है, उसे हमें स्वीकार कर लेना चाहिए। यदि वह पद्धति अवैध है, तो हम उसे वैध कर सकते हैं .... जब तक बिल्ली चूहों को पकड़ रही है तब तक यह तथ्य महत्वपूर्ण नहीं कि बिल्ली का रंग काला है या पीला।[24]

1976 में माओ त्सेतुंग की मृत्यु के बाद, तेंग श्याओपिंग चीन के सर्वोच्च नेता के रूप में उभरे। उन्होंने 'पारिवारिक उत्तरदायित्व प्रणाली' को कानून का रूप दे दिया और उसके आधार पर ग्रामीण सहकारी संघों का पुनर्गठन कर दिया। इसके अलावा उन्होंने सामूहिक फार्मों की जमीनों का पट्टे के आधार पर किसानों में वैयक्तिक पुनर्वितरण कर दिया। इन पट्टों की अवधि बीस से पचास वर्ष तक रखी गई।

कानून की दृष्टि से समूची कृषि भूमि अब भी सामूहिक स्वामित्व के अधीन है। व्यवहार में वह किसान परिवारों की व्यक्तिगत संपत्ति बन गई है। चीन में कम्युनिस्ट पार्टी का नया नेतृत्व माओ त्सेतुंग की आलोचना करते हुए उनको 'वामपंथी' गलतियों के लिए दोषी समझता है। कृषि उत्पादन की वृद्धि के संदर्भ में तेंग श्याओपिंग की कृषि नीतियों को अधिक प्रभावकारी और सफल माना जा सकता है, यद्यपि वितरणात्मक न्याय के दृष्टिकोण से उनकी आलोचना की जा सकती है।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 62.
2. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 42.
3. एडगर स्नो, *रेड स्टार ओवर चाइना*, पृ. 157.
4. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 85–86.
5. वही, पृ. 88.
6. स्टुअर्ट श्रैम, *पॉलिटीकल थॉट आफ माओ*, पृ. 179–80.
7. वही, पृ. 182.
8. च्यांग युंगचिंग, *बोरोडिन एंड दि वूहान गवर्नमेंट*, पृ. 282.
9. वही, पृ. 286.
10. वही, पृ. 289.
11. वही, पृ. 289–90.
12. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 92.
13. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 100–101
14. ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक, *ए डाक्युमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 78.
15. मिनट्स आफ दि एमरजेंसी मीटिंग आफ दि सीपीसी सेंट्रल कमेटी आन अगस्त 7, 1927

16. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 141.
17. 'ए सिंगल स्पार्क कैन स्टार्ट ए प्रेयरी फायर', *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड I, पृ. 123.
18. सेलेक्टेड डाक्युमेंट्स आफ दि सेंट्रल कमेटी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना, खंड X, पृ. 516.
19. हुंग-से चुंग-हुआ, नं. 86, 10 जून 1933, पृ. 3.
20. ताऊ-चेंग, नं. 24, 29 अगस्त 1933, पृ. 4—12.
21. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग अनरिहर्स्ड*, पृ. 251.
22. ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक, *ए डाक्युमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 276.
23. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 257.
24. वही, पृ. 259.
25. वही, पृ. 316—317.
26. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 565.
27. वही, पृ. 567.
28. वही, पृ. 568.
29. वही, पृ. 588.

अध्याय नौ

जापानी आक्रमण के विरुद्ध संघर्ष

मंचूरिया पर जापान का आक्रमण

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने जापानी आक्रमणकारी गतिविधियों के खिलाफ पूरी सूझबूझ का सबूत दिया। जहां अन्य राजनीतिक शक्तियां इस समस्या के बारे में भ्रम में थीं या किसी न किसी तरह जापान से सुलह करना चाहती थीं। कम्युनिस्ट पार्टी अपने विचारों में स्पष्ट थी और उसने सबसे पहले जापानियों के हमले के खिलाफ चीनी जनता को लामबंद किया। साधारण लोगों ने कम्युनिस्ट पार्टी की रहनुमाई में बड़ी से बड़ी कुरबानी दी। इतनी क्षति उठाने के बावजूद उनकी नजर में कम्युनिस्ट पार्टी का आदर और सम्मान बढ़ा और आगे चलकर चीन को मुक्ति दिलाने में कम्युनिस्टों को बड़ी मदद मिली।

जब जापान ने 18 सितंबर 1931 को मंचूरिया पर हमला किया, तो चियांगशी की चीनी सोवियत सरकार ने च्यांग काई शेक के 'घेराबंदी और दमन' अभियान के विरुद्ध संघर्ष छेड़ रखा था। लाल सेना द्वारा कुशल छापामार युद्ध के बावजूद, च्यांग की फौज की सबसे ताकतवर इकाइयां अभी बिलकुल सुरक्षित थीं। 'अगर अभी 18 सितंबर की 'मुकदेन घटना' की सूचना न मिली होती तो वे 'चीनी सोवियत गणतंत्र' की राजधानी जुइचिन पर आक्रमण के इरादे से आगे बढ़ना चाहती थीं।'[1] परंतु जापानी खतरे को देखते हुए उन्होंने फिलहाल कम्युनिस्टों के खिलाफ अपना अभियान बड़े पैमाने पर ले जाना स्थगित कर दिया लेकिन जापानी हमलावरों के विरुद्ध लड़ने की भी च्यांग काई शेक की अभी कोई इच्छा नहीं थी।

दीर्घकालिक दृष्टि से, जापानी हमले का लगातार जारी रहना और हमलावरों के खिलाफ लड़ने में क्वोमिन्तांग का संकोच चीनी कम्युनिस्ट पार्टी (ची.क.पा.) के सत्ता में आने का एक महत्वपूर्ण कारण बन गया। फिलहाल कम्युनिस्ट पार्टी के अधीन सोवियत क्षेत्र (चियांगशी) तक इसका असर था। इस समय कम्युनिस्ट इंटरनेशनल (कोमिन्टर्न) और ची.क.पा. (सी.पी.सी.) का विचार था कि जापानी हमले का मुकाबला तब तक करना संभव नहीं है जब तक क्वोमिन्तांग सरकार को सत्ता से हटाया नहीं जाता। इस वक्त अपने अनुभव के आधार पर चीन की कम्युनिस्ट पार्टी सोच भी नहीं सकती थी कि च्यांग काई शेक या राष्ट्रवादी खेमे की किसी असंतुष्ट ताकत के साथ किसी तरह के 'संयुक्त मोरचे' का निर्माण किया जा सकता है।

मंचूरिया पर जापानी आक्रमण के बाद 1932 में ही ची.क.पा. ने घोषणा की थी कि

वह सभी जापान विरोधी 'ग्रुपों' के साथ समझौता करना चाहती है लेकिन यह निश्चित नहीं है कि वह तत्काल क्वोमिन्तांग के साथ समझौते के लिए थी या नहीं। अप्रैल 1932 में भी ची.क.पा. के 'नीचे से संयुक्त मोरचे' की स्थापना क्वोमिन्तांग के खात्मे के बाद ही मुमकिन थी। कानरेड ब्रांट इत्यादि का मत है कि 'ऐसा विवादित बिंदु है जिसकी जांच-पड़ताल होनी चाहिए कम से कम, इसी तरह के प्रस्ताव 1933 और 1936 के बीच लगातार किए गए लेकिन क्वोमिन्तांग ने कोई प्रतिक्रिया जाहिर नहीं की।'[2]

इसी बीच जापानी क्वांतुंग सेना ने, जो एक असमान संधि के तहत मंचूरिया में तैनात थी, शेनयांग, चांग चुन और बीस अन्य शहरों पर कब्जा कर लिया। चार महीनों में उसने पूरे उत्तर-पूर्वी चीन पर अपना शासन कायम कर लिया। 28 जनवरी 1932 को जापानी सेना ने शंघाई पर हमला दोबारा किया। 9 मार्च को जापान ने छिंग (मांचू) राजवंश के अंतिम सम्राट पू यी की अध्यक्षता में कठपुतली मांचूकुआ सरकार की स्थापना की घोषणा की।

(जिस तरह से खुलकर जापान ने चीन को चुनौती दी और उसकी भूमि हथियाना शुरू कर दिया, उससे चीनी जनता की भावनाओं को गहरी ठेस पहुंची और उनकी राष्ट्र चेतना में एक नया उभार पैदा हुआ। कम्युनिस्ट पार्टी ने इन भावनाओं और नई चेतना को एक दिशा प्रदान की) इसके विरोध में छात्रों, मजदूरों और निम्न बुर्जुआ वर्ग ने चीन के सभी बड़े नगरों में प्रदर्शन किए और मांग की कि राष्ट्रीय सरकार जापानी आक्रमण का तुरंत मुकाबला करे। राष्ट्रीय बुर्जुआजी, बुद्धिजीवी वर्ग और 'मीडिया' ने भी जापान विरोधी प्रतिरोध की मांग की (यह एक नई उमंग थी, चीन जाग गया था)।

उधर च्यांग काई शेक ने पहले ही अपनी नीति बना ली थी कि 'विदेशी हमले का प्रतिरोध करने से पहले आंतरिक विद्रोह को दबाना जरूरी है।' उसने कहा :

> जापानी फौज की यह कार्रवाई उकसाने के लिए एक मामूली सा काम है। इस घटना को तूल न देने के लिए यह जरूरी है कि तुम किसी तरह का प्रतिरोध बिलकुल मत करो।[3]

5 मई 1931 को च्यांग काई शेक ने जापानी हमलावरों के साथ वूसोंग-शंघाई युद्धविराम समझौते पर दस्तखत किए। अगले वर्ष च्यांग सरकार ने तांगगू समझौता किया और इस तरह उत्तरी चीन में अपनी प्रभुसत्ता त्याग दी। दूसरी तरफ ची.क.पा. मजबूती से मुकाबले की नीति पर कायम रही।

20 सितंबर 1931 को ची.क.पा. की केंद्रीय समिति ने 'जापानी साम्राज्यवादियों द्वारा तीन उत्तर-पूर्वी सूबों पर जबरन कब्जे के बारे में घोषणा' जारी करते हुए मांग की कि जापानी फौजों की मंचूरिया से पूरी तौर से तुरंत वापसी होनी चाहिए।

27 नवंबर 1931 को चीनी सोवियत गणतंत्र की अस्थायी केंद्रीय सरकार ने संपूर्ण देश की जनता से अनुरोध किया कि वह जापानी हमलावरों के खिलाफ लड़ने के लिए फौरन लामबंद होकर हथियार उठाए।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की मंचूरियाई प्रांतीय समिति ने स्थानीय पार्टी संस्थाओं को निर्देश भेजे कि वे जनता के स्वयंसेवकों से संपर्क मजबूत करें और पार्टी के नेतृत्व में सशस्त्र संघर्ष का संगठन करें। 1933 की शुरुआत से ही कम्युनिस्ट और उनके प्रभाव वाले छापामार सैनिकों की टुकड़ियां मंचूरिया के विभिन्न इलाकों में फैल गई थीं। इस वक्त ची.क.पा. की केंद्रीय समिति में वांग मिंग गुट के 'वामपंथी' दुस्साहस से प्रभावति नीतियों का काफी असर था। वह मध्यमार्गी जनवादी तत्वों के साथ पार्टी के सहयोग का विरोधी था और उन्हें प्रतिक्रांतिकारी कहकर उनकी निंदा करता था। कम्युनिस्ट इंटरनेशनल ने माना कि जापान द्वारा उत्तर-पूर्वी चीन पर कब्जा 'सोवियत संघ के खिलाफ लड़ाई की दिशा में अगला कदम है' और वांग मिंग का नारा था कि 'हथियारों द्वारा सोवियत यूनियन की हिफाजत करो।' यह मांग 'असलियत से कोसों दूर थी और स्वाभाविक रूप से चीन की जनता उसे मंजूर नहीं कर सकती थी।'[4]

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने राष्ट्रीय संयुक्त मोरचे द्वारा जापान के खिलाफ संघर्ष शुरू करने की नीति पर जोर देने के बजाए क्वोमिन्तांग सरकार और चियांग्शी की सोवियत राजनीतिक सत्ता के बीच के अंतर्विरोध और दुश्मनी पर ही खास ध्यान दिया। वस्तुपरक स्थितियों की उपेक्षा करते हुए, केंद्रीय समिति ने मांग की कि शांशी, हनान और हपेइ में किसान विद्रोह शुरू किया जाए और बड़े शहरों में आम हड़तालें की जाएं और बाद में उन्हें सशस्त्र विद्रोह का रूप दे दिया जाए। इसका नतीजा यह हुआ कि दुस्साहसी 'वामपंथियों' की नीति ने राष्ट्रीय संयुक्त मोरचे की स्थापना की सभी संभावनाओं को नष्ट कर दिया। 'वामपंथी' दुस्साहस व्यवहार में कारगर साबित नहीं हुआ। क्वोमिन्तांग प्रभावित क्षेत्रों में इस नीति से पार्टी को भारी नुकसान उठाना पड़ा। इन गंभीर 'वामपंथी' भूलों के बावजूद, अनेक प्रगतिशील तत्व यह समझ गए कि कम्युनिस्ट पार्टी ही जापानी आक्रमण का मजबूती से मुकाबला कर सकती है।

डॉ. सुन यातसेन की विधवा सूंग चिंग लिंग ने एक वक्तव्य जारी किया जिसका शीर्षक था, 'क्वोमिन्तांग अब राजनीतिक शक्ति नहीं रह गई है' जिसमें उन्होंने कहा :

> मेरा दृढ़ विश्वास है कि सिर्फ ऐसी क्रांति, जो जनता के लिए हो और जनता जिसका पूरी तौर से समर्थन करे, सैन्यवादियों और राजनीतिज्ञों की ताकत को तोड़ सकती है। विदेशी साम्राज्यवाद के जुए को उतारकर फेंक सकती है,और सचमुच समाजवाद की स्थापना कर सकती है।[5]

सूंग चिंग लिंग ने तीन संस्थाओं की स्थापना की–'राष्ट्रीय अपमान को मिटाने के लिए और आत्मसम्मान की प्राप्ति के लिए काम करने वाली संस्था', 'नागरिक अधिकारों की रक्षा के लिए चीनी संघ', और 'सशस्त्र आत्म-प्रतिरक्षा के लिए चीनी जनता की समिति'– और इन सभी संस्थाओं के संचालन में उन्होंने स्वयं प्रमुख भूमिका निभाई। कुछ कम्युनिस्टों और सूंग चिंग लिंग के बीच निरंतर संपर्क कायम रहा। धीरे धीरे दोनों के संपर्क घनिष्ठ होते चले गए।

महान लेखक लू शुन ने लेखकों और कलाकारों को संगठित करने में महत्वपूर्ण योगदान किया और उन्हें सामान्य रूप से साम्राज्यवाद के विरुद्ध और खास तौर से जापानी आक्रमण के खिलाफ एकजुट किया। माओ ने उनके विषय में बाद में कहा था, 'राष्ट्र के विशाल बहुमत के प्रतिनिधि की हैसियत से लू शुन ने दुश्मन के मजबूत किले पर हमला कर उसे तहस-नहस कर डाला; सांस्कृतिक मोरचे पर वे....अधिकतम उत्साह से भरे राष्ट्रीय नायक थे....जिस मार्ग पर वे चले वह चीन की नवीन राष्ट्रीय संस्कृति का ही मार्ग था।'[6] इसी प्रकार कम्युनिस्टों ने, *लाइफ वीकली* के संपादक त्सो ताओफेन की जो मदद की वह इस बात की मिसाल थी कि देशभक्तों और सभी प्रगतिशील ताकतों को एकजुट हो जाना चाहिए। क्वोमिन्तांग द्वारा क्रूर दमन की नीति के बावजूद, कुछ कम्युनिस्ट और प्रगतिवादी, कानूनी उपायों का पूरा उपयोग करते हुए, जापान के आक्रांता साम्राज्यवाद के खिलाफ अपना प्रचार करने में कामयाब हुए।

17 जनवरी 1933 को चियाग्शी के कम्युनिस्ट अधिकारियों ने एक वक्तव्य जारी किया कि वे जापानी हमले का मुकाबला करने के लिए किसी भी सैन्य बल के साथ मिली-जुली कार्रवाई करने हेतु नीचे लिखी शर्तों के आधार पर समझौता करने हेतु तैयार हैं :

1. वे सोवियत (कम्युनिस्ट) क्षेत्रों पर हमला करना फौरन बंद करें;
2. वे जनता के जनवादी अधिकारों की (भाषण, सभा और समुदाय की स्वतंत्रता की, हड़ताल के हक की तथा प्रकाशन के अधिकार की) गारंटी करें;
3. वे चीन की रक्षा के लिए और उसकी स्वंतत्रता, एकता और क्षेत्रीय अखंडता को बचाने के लिए तुरंत जनता को हथियार दें और हथियारबंद स्वयंसेवकों का संगठन बनाएं।[7]

यह वक्तव्य बहुत महत्वपूर्ण था। नवंबर 1933 में क्वोमिन्तांग की 19वीं रूट आर्मी के जनरलों ने विद्रोह कर दिया और खुलकर घोषणा की कि वे जापानी आक्रमण का प्रतिरोध करेंगे और च्यांग काई शेक का विरोध करेंगे। उन्होंने इस संबंध में चियांग्शी के कम्युनिस्ट नेताओं के साथ समझौते पर दस्तखत भी किए। लेकिन कम्युनिस्ट इस समझौते पर कायम नहीं रह सके क्योंकि 'वामपंथी' इरादे की केंद्रीय समिति ने उसका विरोध किया। नतीजा यह हुआ कि फूच्यान जनशासन को च्यांग काई शेक की फौज ने पराजित कर दिया और इसके बाद क्वोमिन्तांग सेना ने चियांग्शी में सोवियत क्षेत्र को चारों तरफ से घेर लिया और वहां लाल सेना को पराजित कर दिया। बाद में माओ ने युन्नान में एडगर स्नो को 'इंटरव्यू' देते समय पार्टी की इस गलती पर दु:ख प्रकट किया।

दो मोरचों पर संघर्ष

इन परिस्थितियों में, जापान के आक्रमण के खिलाफ सभी चीनी देशभक्तों द्वारा संयुक्त

प्रतिरोध को अमल में लाना आसान नहीं था क्योंकि उसका नतीजा क्वोमिन्तांग सरकार के आगे घुटने टेकना और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की पहल और आजादी का अधिकार खो देना हो सकता था। स्टुअर्ट श्रैम के अनुसार :

> माओ इस कार्य के लिए बिलकुल एक अपवाद के बतौर विशेषकर योग्य थे क्योंकि वे अपने पूरे सार्वजनिक जीवन में आस्थावान क्रांतिकारी और चीनी राष्ट्रवादी दोनों रहे थे।[8]

लाल सेनाएं जो युन्नान पहुंचीं, उसमें सिर्फ 15,000 या उससे कुछ अधिक सैनिक बचे थे जबकि क्वोमिन्तांग की फौज में इस वक्त लगभग दस लाख सिपाही थे।

दिसंबर 1935 में पोलिट ब्यूरो की वाइयाओपू कानफ्रेंस में, चीन में मौजूद शक्तियों और उनके राजनीतिक दृष्टिकोणों का विश्लेषण, माओ ने वर्गीय आधार पर बड़ी सूक्ष्मता से किया था। उन्होंने स्वीकार किया कि न सिर्फ निम्न बुर्जुआ वर्ग और 'राष्ट्रीय' बुर्जुआजी, बल्कि 'कंप्राडोर' और जमींदार वर्ग के कुछ हिस्से जापान विरोधी संयुक्त मोरचे के संभावित साथी हो सकते हैं, खास तौर से जिस हद तक उनके हित इंगलैंड या अमरीका जैसे देशों से जुड़े थे और इसके कारण जापान के साथ उनका टकराव था। इसके अलावा माओ का प्रस्ताव था कि 'राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के लिए एक मिली-जुली सरकार' बनाई जाए जो इन सभी शक्तियों के समर्थन पर आधारित हो।

यहां इस बात पर जोर देने की जरूरत है कि औपचारिक रूप से मिली-जुली सरकार के प्रस्ताव का अभिप्राय क्वोमिन्तांग राष्ट्रवादियों को सिर्फ थोड़ी सी रिआयत देना था क्योंकि नई जापान विरोधी सरकार का केंद्र उत्तर की वर्तमान कम्युनिस्ट सरकार को ही माना गया था। किसी भी हालत में च्यांग काई शेक और उसकी क्वोमिन्तांग सरकार को केंद्रीय राजनीतिक भूमिका से वंचित रखा गया था। यह मत 1935 में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के निर्णय के अनुकूल था, जिसमें अनुरोध किया गया था कि उपनिवेशों और अर्ध-उपनिवेशों में साम्राज्य विरोधी संयुक्त मोरचे का गठन किया जाए और चीन में 'सोवियतों को ऐसा केंद्र बना देना चाहिए जिनके इर्द-गिर्द संपूर्ण चीनी जनता मुक्ति के लिए अपने संघर्ष में एकजुट हो जाए।'[9] माओ ने दिसंबर 1935 में इनर मंगोलिया के राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों को जापान विरोधी संघर्ष में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया और चंगेज खां की मिसाल देकर उनमें राष्ट्रीय गर्व की भावना भरने की कोशिश की। उन्होंने उत्तर-पश्चिम चीन के मुसलिम अल्पसंख्यकों से मई 1936 में अनुरोध किया कि वे भी जापान के विरुद्ध संघर्ष करें और उन्हें तुर्की के नेता कमाल अतातुर्क के उदाहरण से प्रेरणा लेने की सलाह दी। माओ ने चीन की भूमिगत संस्थाओं से भी अपील की कि वे खुलकर सामने आएं और विदेशी उत्पीड़कों और देशी प्रतिक्रियावादियों के खिलाफ कम्युनिस्ट पार्टी का समर्थन करें। इस तरह की अपीलें तो महत्वपूर्ण थीं, लेकिन राजनीतिक स्तर पर निर्णायक समस्या क्वोमिन्तांग और उसके नेतृत्व के साथ संबंध के सवाल पर अटकी हुई थी। धीरे-धीरे च्यांग और माओ पर परिस्थितियों का दबाव पड़ रहा था कि वे अपनी दुश्मनी से ऊपर

उठें। घटनाक्रम तेजी से आगे बढ़ा जब दो मंचूरियाई जनरलों ने शियान में दिसंबर 1936 में च्यांग काई शेक को गिरफ्तार कर लिया और मांग की कि कम्युस्टिों के खिलाफ जारी घरेलू जंग को फौरन खत्म किया जाए और जापानी हमलावरों के खिलाफ एकजुट होकर लड़ाई लड़ी जाए।

1936 की गरमियों में माओ त्सेतुंग ने साफ तौर से अपनी मंशा जाहिर की कि वे जापान विरोधी संघर्ष में च्यांग काई शेक के साथ सहयोग करने के लिए तैयार हैं। उन्होंने कहा :

> आखिर फैसले का एक दिन होना चाहिए जब वह या तो जापान का विरोध करने का निश्चय करे या स्वयं अपने उन मातहतों द्वारा सत्ता से हटा दिया जाए जो जापान की गुलामी के लिए तैयार नहीं हैं। स्वयं उसके बहुत से जनरल अब बहुत बेचैन हैं और वे प्रतिरोध की नीति की मांग कर रहे हैं।... अपने सेनापतियों का बढ़ता हुआ दबाव और जापान विरोधी जन आंदोलन का प्रभाव च्यांग काई शेक को अब भी मजबूर कर सकता है कि वह अपनी गलतियों को महसूस करे... यदि वह गृहयुद्ध को बंद कर देता है, जापान के खिलाफ लड़ाई शुरू कर देता है और क्वोमिन्तांग और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की एकता को फिर से कायम करता है, तो मैं इस बदलाव का स्वागत करूंगा और खुले दिल से सहयोग करूंगा।[10]

फरवरी 1935 में, च्यांग काई शेक ने एक जापानी पत्रकार को बताया था :

> चीन और जापान को आपस में सहयोग करने की आवश्यकता है...चीन की जनता ने अभी जापानियों के खिलाफ लड़ाई की कोई कार्रवाई नहीं की है, उनके विरुद्ध लड़ने की उनकी कोई इच्छा नहीं है और इसके अलावा ऐसा करने की कोई जरूरत भी नहीं है।[11]

शांशी-कांसू सीमांत क्षेत्र में कम्युनिस्ट फौजों के पहुंचने से कुछ समय पहले, जापानी साम्राज्यवादियों ने क्वोमिन्तांग द्वारा प्रतिरोध न करने की नीति का फायदा उठाकर उत्तरी चीन में फौजी सामंतों द्वारा शासित प्रदेशों पर अपना संरक्षण और नियंत्रण स्थापित कर लिया। उत्तरी चीन की जनता में, खासकर छात्रों और नौजवानों में स्वाभाविक रूप से बहुत उग्र प्रतिक्रिया हुई। 1935 की अप्रैल में पीकिंग (अब पेइचिंग) में ली चांगछिंग ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की अस्थायी कार्य समिति का गठन किया। हजारों विद्यार्थियों ने जापानी साम्राज्यवाद की निंदा की और जापान के विरुद्ध संयुक्त रूप से युद्ध करने के लिए घरेलू जंग को फौरन खत्म करने की मांग की।

जापान विरोधी जन आंदोलन सारे देश में फैल गया। जुलाई 1935 में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल और ची.क.पा. के शिष्टमंडल ने निर्देश जारी किया कि जापानी 'फासीवाद' से लड़ने के लिए संयुक्त मोरचे का निर्माण किया जाना चाहिए। क्वोमिन्तांग के दो जनरलों,

चांग श्यूलियांग और यांग हूचेंग ने 12 दिसंबर 1936 को शियान में च्यांग काई शेक को नजरबंद कर दिया और उसके सामने आठ मांगें रखीं :

1. नानचिंग सरकार का पुनर्गठन करो और उसमें सभी दलों और 'ग्रुपों' को शामिल करो।
2. गृहयुद्ध को पूरी तौर से खत्म करो।
3. शंघाई की जेलों में कैद देशभक्त नेताओं को रिहा करो।
4. देश में सभी राजनीतिक बंदियों को मुक्त करो।
5. जन आंदोलनों पर लगी पाबंदी हटाओ।
6. सभी राजनीतिक अधिकारों की गारंटी दो।
7. डॉ. सुन यातसेन की वसीयत पर पूरी तौर से अमल करो।
8. राष्ट्रीय मुक्ति और कल्याण के सवाल पर बहस के लिए राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाओ।

च्यांग काई शेक की गिरफ्तारी की यह घटना चीन के इतिहास में शियान प्रकरण के नाम से प्रसिद्ध है। इसने क्वोमिन्तांग और चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के बीच दूसरे संयुक्त मोरचे की स्थापना का रास्ता खोल दिया। कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं, खासकर चोउ एनलाई ने, च्यांग काई शेक की सम्मानपूर्ण रिहाई में विशेष भूमिका निभाई और संयुक्त मोरचे की नीति शुरू करने के लिए उसे लगभग राजी कर लिया।

1937 के पूर्वार्ध में चीन की दोनों प्रमुख पार्टियों के बीच संयुक्त मोरचे की स्थापना की दिशा में तेजी से प्रगति हुई। कम्युनिस्टों ने क्वोमिन्तांग को चार रिआयतें दीं :

1. रष्ट्रीय सरकार को सशस्त्र विद्रोह द्वारा गिराने की नीनि का परित्याग।
2. युन्नान में 'सोवियत' (कम्युनिस्ट अधीन) सरकार का चीनी गणतंत्र के एक 'विशेष प्रदेश' के रूप में पुनर्गठन और लाल सेना का राष्ट्रीय सेना की इकाई के रूप में नामकरण, जा नानचिंग सरकार के आदेश के अधीन होगी।
3. 'विशेप प्रदेश' में सार्वभौम मताधिकार के आधार पर लोकतांत्रिक प्रणाली की स्थापना।
4. जमींदारों की जमीन के अधिग्रहण की नीति को समाप्त कर दिया जाएगा।

इन रिआयतों के बदले में क्वोमिन्तांग को नीचे लिखी पांच शर्तों को मंजूर करना था :

1. गृहयुद्ध का अंत हो।
2. लोकतांत्रिक स्वनंत्रताएं दी जाएं और सभी राजनीतिक बंदियों को मुक्त किया जाए।
3. राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के मुद्दों पर बहस के लिए सभी दलों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन बुलाया जाए।

4. जापान से लड़ने की तैयारियां तेजी से की जाएं।
5. जनता की जीविका की दशाओं में सुधार हो।

22 सितंबर 1937 को, मार्को पोलो पुल पर जापानी हमले के दो महीने बाद क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच उपर्युक्त शर्तों पर संयुक्त मोरचा बनाने के लिए अंतिम समझौता हो गया। मार्को पोलो पुल के हमले से ही बड़े पैमाने पर चीन-जापान युद्ध की शुरुआत हुई। इन शर्तों के अलावा कम्युनिस्टों ने डॉ. सुन यातसेन के तीन जनवादी सिद्धांतों के समर्थन में कार्य करने का वचन भी दिया।

इस समझौते का अर्थ पार्टी की विचारधारा को छोड़ना नहीं था। जैसा कि माओ ने मार्च 1937 में मिस स्मेडली को बताया :

> कम्युनिस्ट अपने दृष्टिकोण को पूर्ण रूप से केवल एक वर्ग के हितों से बांधकर नहीं रखते बल्कि उनकी भावनात्मक चिंता चीनी राष्ट्र की तकदीर के बारे में होती है... चीन के कम्युनिस्ट अंतर्राष्ट्रीयतावादी हैं; वे विश्व कम्युनिस्ट आंदोलन के पक्ष में हैं लेकिन इसके साथ-साथ वे देशभक्त भी हैं जो अपनी मातृभूमि की रक्षा करते हैं।... इस देशभक्ति और अंतर्राष्ट्रीयता के बीच कोई टकराव नहीं है क्योंकि चीन की आजादी और मुक्ति ही हमें विश्व कम्युनिस्ट आंदोलन में भागीदारी का मौका दे सकती है।[12]

इसीलिए अंतिम लक्ष्य चीन में और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर साम्यवाद ही था।

च्यांग काई शेक के साथ सहयोग के प्रस्ताव में माओ की ईमानदारी ने ही उन्हें च्यांग का शक्तिशाली प्रतिद्वंद्वी बना दिया। देशभक्त नेता के रूप में माओ की प्रतिष्ठा बढ़ी और किसान जनता को भी इससे प्रेरणा मिली। अंत में किसानों की मदद से ही उन्हें सत्ता प्राप्त हुई। माओ को सत्ता तक ले जाने वाली लहर राष्ट्रवाद की लहर और सामाजिक क्रांति की लहर दोनों ही थीं। च्यांग की तुलना में माओ की क्षमता देशभक्त जनता को लामबंद करने की कहीं ज्यादा थी और इसका प्रमाण जापानी सेना के संग्रहालय के दस्तावेजों से भी मिलता है। चामर्स जानसन का कथन है कि 'आधुनिक चीनी राष्ट्रवाद का जन्म...1937 में लगभग शून्य से हुआ था...और कम्युनिस्टों के समर्थन में जमींदारों और टैक्स वसूली करने वालों द्वारा किसानों पर किए गए आर्थिक अन्यायों से उत्पन्न नाराजगी की भूमिका हाशिए की और उपेक्षणीय ही रही थी ।'[13]

जानसन का यह मत चीनी राष्ट्रवाद की एकांगी व्याख्या है। उसे 1937 में जापानी आक्रमण की तात्कालिक प्रतिक्रिया मात्र नहीं माना जा सकता। यह अफीम युद्ध से जारी पश्चिमी साम्राज्यवाद की भूमिका की उपेक्षा है। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी का राष्ट्रवाद जापानी आक्रमण का क्षणिक प्रत्युत्तर नहीं था। उसकी जड़ें उनकी साम्राज्यवाद विरोधी विचारधारा में बहुत गहराई में गड़ी हुई थीं।

पूर्ण प्रतिरोध की नीति

जापानी साम्राज्यवादी संपूर्ण चीन पर कब्जे का इरादा किए हुए थे लेकिन बहाना करते थे कि वे सोवियत संघ/रूस पर हमले की तैयारी कर रहे हैं। इस तरह वे ब्रिटिश और अमरीकी साम्राज्यवादियों से कुछ सुविधा पाने की कोशिश कर रहे थे। जर्मन और इतालवी फासिस्ट चीन पर जापानी हमले का समर्थन करते थे। ची.क.पा. चीनी राष्ट्र के बुनियादी हितों को ध्यान में रखकर जापानी आक्रमण के पूर्ण प्रतिरोध पर जोर देती थी। कम्युनिस्ट पार्टी मानती थी कि चीन में जापान का मुकाबला करने की और लड़ाई में जीत हासिल करने की ताकत है। परंतु क्वोमिन्तांग आंशिक प्रतिरोध में विश्वास करती थी। च्यांग काई शेक की फौजों ने शुरू में जापान के हमले का मुकाबला किया लेकिन बाद में मामूली विरोध के बाद वे लगातार आंतरिक क्षेत्र में पीछे हटती चली गईं :

> क्वोमिन्तांग बड़े जमींदारों और बड़े पूंजीपतियों के हितों का प्रतिनिधित्व करती थी। इसीलिए वह उसी सीमा तक लड़ती थी, जिस हद तक जापानी हमलावरों की अंतिम हार के समय अपनी सत्ता को कायम रखने के लिए जरूरी था।[14]

जनता को संपूर्ण प्रतिरोध के युद्ध के लिए लामबंद तथा संगठित करने के उद्देश्य से, ची.क.पा. ने लंबे संघर्ष के सामरिक सिद्धांत का प्रतिपादन किया। माओ ने कहा कि चीन की मुख्य भूमि पर जापान की तकनीकी दृष्टि से बेहतर फौजों को हराने के लिए लंबी अवधि की लगातर लड़ाई की आवश्यकता है। 15 अगस्त 1937 को ची.क.पा. ने 'जापान विरोधी' प्रतिरोध और राष्ट्रीय कल्याण के लिए दस महान नीतियों को स्वीकार किया :

1. जापानी साम्राज्यवाद का उन्मूलन।
2. पूरी फौजी लामबंदी।
3. राष्ट्र की पूरी लामबंदी।
4. राजनीतिक प्रणाली का सुधार।
5. जापान विरोधी विदेश नीति।
6. युद्धकालीन आर्थिक नीति।
7. जनता के कल्याण की नीति।
8. जापान विरोधी शिक्षा नीति।
9. देशद्रोहियों, कठपुतलियों और जापान समर्थक तत्वों का पूर्ण विनाश।
10. जापान के विरुद्ध राष्ट्रीय एकजुटता।[15]

माओ त्सेतुंग ने पूर्ण और आंशिक प्रतिरोध की नीतियों के बीच अंतर स्पष्ट करते हुए कहा था :

> संयुक्त मोरचे में सर्वहारा वर्ग बुर्जुआ वर्ग का नेतृत्व करेगा या बुर्जुआ वर्ग सर्वहारा

> वर्ग का?...क्वोमिन्तांग को जापान के प्रतिरोध के दस बिंदु कार्यक्रम के स्तर तक कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा प्रस्तावित पूर्ण प्रतिरोध की नीति के स्तर तक उठाया जा सकता है? या फिर कम्युनिस्ट पार्टी को ही जमींदारों और पूंजीपतियों की क्वोमिन्तांग तानाशाही के स्तर पर, आंशिक प्रतिरोध के स्तर पर, नीचे गिरना होगा?

इन प्रश्नों का माओ ने जो जवाब दिया उसे हम नीचे उद्धृत कर रहे हैं :

> जापान विरोधी राष्ट्रीय क्रांतिकारी युद्ध में विजय की कुंजी संयुक्त मोरचे के अंतर्गत 'आजादी और पहल' के सिद्धांत की व्याख्या, मान्यता और अमल में निहित है।[16]

निरंतर युद्ध के बारे में शीर्षक कृति में माओ ने बताया कि चीनियों के लिए इस युद्ध के तीन चरण होंगे : सामरिक रक्षात्मक, सामरिक गतिरोध और सामरिक आक्रामक। इन चरणों से गुजरते हुए चीन हीनता से समानता की ओर और समानता से श्रेष्ठता की ओर बढ़ेगा लेकिन जापान श्रेष्ठता से समानता की ओर और समानता से हीनता की ओर आएगा। पहला चरण अक्तूबर 1938 में समाप्त हो गया जब जापान ने ग्वांगचू और वूहान पर विजय प्राप्त की ली। इस चरण की दो प्रमुख विशेषताएं थीं। पहली, हमलावर जापानी फौजें चीन के विशाल भूभाग के अंदर घुसती चली आईं लेकिन अलग-अलग रास्तों से, और उनके आक्रमण अग्रिम युद्ध क्षेत्रों में चरम सीमा पर पहुंच गए। दूसरी, चीनी जनता की सेना ने शत्रु की कतारों के पीछे नए रणक्षेत्र शुरू कर दिए और उनका तेजी से विस्तार किया।

क्वोमिन्तांग के प्रतिरोध के बावजूद जापान ने संपूर्ण तटवर्ती चीन, बड़े शहरों और सघन जनसंख्या वाले विशाल भूभाग पर कब्जा कर लिया। नानचिंग में जापानी सैन्यवादियों ने तीन लाख चीनी सैनिकों और नागरिकों की नृशंस हत्या कर दी। आठवीं रूट आर्मी ने तुरंत लड़ाई के मोरचे पर कूच किया। उसकी रणनीति और कार्यनीतियों के बारे में निर्णय करने के लिए पार्टी ने एक रणक्षेत्र उपआयोग बनाया और चू ते को उसका सचिव नियुक्त किया। सितंबर के मध्य में आठवीं रूट आर्मी शांशी पहुंची और वहां उसने पहली जीत हासिल की और इस भ्रम को तोड़ दिया कि जापान की शाही फौज अपराजेय है। इस विजय ने बहुत लोगों को यकीन दिला दिया कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी दृढ़ संकल्प के साथ न सिर्फ जापान का प्रतिरोध करती है बल्कि उसमें जापानी फौज को हराने की योग्यता और शक्ति भी है। इस तरह कम्युनिस्ट सेना ने दुश्मन की कतारों के पीछे लड़ाई का एक नया *मोरचा खोल दिया।*

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की यह नीति बिलकुल सही थी। शत्रु की पंक्तियों के पीछे लड़ाई के इस मोरचे ने अधिकृत क्षेत्रों में जापानी प्रशासन को अस्थिर कर दिया। अधिकृत क्षेत्रों की स्थिति ने आठवीं रूट आर्मी को इस तरह की लड़ाई लड़ने का मौका दिया। *ग्रामीण क्षेत्रों में हमलावर अपना नियंत्रण स्थापित करने में असमर्थ थे, जबकि क्वोमिन्तांग* प्रशासन वहां ध्वस्त हो गया और उसके अधिकारी अपने प्रशासकीय दायित्वों को छोड़कर भाग गए थे। उत्पीड़ित जनता साम्राज्यवादियों के खिलाफ लड़ने की इच्छुक थी। इन

कारणों से कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में आठवीं रूट आर्मी शत्रु की पंक्तियों के पीछे क्षेत्रों में प्रवेश कर सकती थी, वहां वह जनता के सैन्य बलों को संगठित कर सकती थी और इस तरह जापान विरोधी आधार क्षेत्रों की स्थापना कर सकती थी। युद्ध की कार्यनीति के बारे में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का निश्चय था, 'छापामार लड़ाई की नीति बुनियादी है, लेकिन अनुकूल परिस्थितियों में गतिशील युद्ध के मौके को छोड़ना नहीं चाहिए।'[17]

एक वर्ष से अधिक समय तक, आठवीं रूट आर्मी और नई चौथी आर्मी पहाड़ों में छापामार युद्ध सफलता पूर्वक संचालित करती रही। अक्तूबर 1938 तक उन्होंने जापानी फौजों के साथ 1,600 मुठभेड़ों में 54,000 जापानी सैनिकों को हताहत या गिरफ्तार किया। आठवीं रूट आर्मी में 1,56,000 जवान और नई चौथी आर्मी में अब 25,000 जवान युद्धरत थे। उन्होंने थोड़े ही समय में उत्तरी और मध्य चीन के अनेक प्रांतों और सीमांत क्षेत्रों में जापान विरोधी आधार क्षेत्रों की स्थापना कर ली। कम्युनिस्ट सेनाओं का सामान्य सामरिक पृष्ठभूमि क्षेत्र शांशी-कांसू-निंगशिया सीमांत प्रदेश था। कम्युनिस्ट सरकार ने वहां एक जापान विरोधी सैनिक और राजनीतिक विद्यालय खोला जिसमें सैनिकों, सैनिक अफसरों और पार्टी के काडरों को प्रशिक्षित किया जाता था। युन्नान में जापान विरोधी युद्ध के संचालन के लिए अनेक शिक्षण संस्थाएं खोली गई थीं, जिनमें महिलाओं के लिए एक विश्वविद्यालय भी था। इनमें पढ़ने के लिए चीन के विभिन्न भागों से छात्र-छात्राएं आते थे। जापान विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोरचे की स्थापना के बाद कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी राजनीतिक, सांस्कृतिक और विचारधारात्मक गतिविधियों को क्वोमिन्तांग शासित क्षेत्रों में भी शुरू कर दिया था और धीरे-धीरे उनका विस्तार हो रहा था। भारत से डाक्टर-नर्सों की एक टीम के साथ डाक्टर डी.एस. कोटनीस भी चीन गए थ, जहां उन्होंने कम्युनिस्टों के ही एक आधार क्षेत्र में चिकित्सा का कार्य किया था।

प्रतिरोध, एकता और प्रगति

इसी समय चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को वांग मिंग गुट के 'दक्षिणपंथी भटकाव के खिलाफ संघर्ष करना पड़ा। कम्युनिस्ट पार्टी की छठी केंद्रीय समिति के छठे प्लेनरी सेशन ने वांग मिंग की त्रुटियों को प्रभावी तरीके से खत्म कर दिया और जापानी आक्रमणकारियों के खिलाफ लड़ाई में स्वतंत्र पहल की नीति की फिर से पुष्टि कर दी। प्रतिरोध युद्ध अब सामरिक साम्यावस्था के चरण में पहुंच चुका था। जापानियों ने जब वूहान पर विजय प्राप्त कर ली तो अक्तूबर 1938 से 1944 की शुरुआत तक उनकी सेनाएं मोरचों की अग्रिम पंक्तियों पर सामरिक आक्रमणों को समाप्त कर अपनी पृष्ठभूमि के क्षेत्रों में आठवीं रूट आर्मी और नई चौथी आर्मी से युद्ध करने में उलझ गईं।'[18]

इस समय विश्व पूंजीवाद आर्थिक और राजनीतिक संकट का सामना कर रहा था। जर्मनी, जापान एवं इटली की फासिस्ट शक्तियां विश्वयुद्ध का षड्यंत्र रच रही थीं।

पूंजीवादी लोकतंत्र चीन और अन्य उत्पीड़ित राष्ट्रों की कीमत पर फासिस्ट शक्तियों के प्रति तुष्टीकरण की नीति अपना रहे थे। तदनुसार, ब्रिटेन और अमरीका ने क्वोमिन्तांग सरकार को फुसलाने की कोशिश की कि वह जापान के सामने आत्मसमर्पण कर दे। दिसंबर 1938 में जापान समर्थक क्वोमिन्तांग गुट ने क्वोमिन्तांग के उपराष्ट्रपति वांग चिंगवेई के नेतृत्व में जापानियों के सम्मुख आत्मसमर्पण कर दिया। 1940 में जापान ने उसे तथाकथित 'चीनी गणतंत्र की राष्ट्रीय सरकार' का प्रधान नियुक्त कर दिया। च्यांग काई शेक के नेतृत्व में पश्चिम समर्थक क्वोमिन्तांग दल ने जापान के विरुद्ध निष्क्रिय प्रतिरोध और कम्युनिस्ट पार्टी के खिलाफ सक्रिय विरोध की नीति अपनाई।

क्वोमिन्तांग ने कम्युनिस्ट पार्टी के विरुद्ध दमन, नियंत्रण परिसीमन, सतर्कता और युद्ध की नीति अपनाई। कम्युनिस्ट पार्टी की प्रतिक्रिया संघर्ष, एकता और प्रगति की नीति द्वारा अभिव्यक्त हुई। उसने देशद्रोही वांग चिंगवेई के विरुद्ध दृढ़ संकल्प के साथ लड़ाई लड़ी, च्यांग काई शेक के साथ द्विदलीय सहयोग कायम रखने की पूरी कोशिश की, और राष्ट्रीय संयुक्त मोरचे को मजबूत करने और उसका विस्तार करने का प्रयत्न किया। जब जापानी फौजों ने अधिकृत क्षेत्रों में प्रतिरोधी शक्तियों पर हमले किए और 'सर्वनाश' (सभी को मारो, आग में जलाओ और नष्ट करो) की कार्रवाइयां शुरू कीं तो कम्युनिस्ट पार्टी ने हमलावरों से लड़ने की मुख्य जिम्मेदारी संभाल ली। 1939 और 1940 में जापानी आक्रांताओं ने केवल उत्तरी चीन में 109 'सर्वनाश की कार्रवाइयां' कीं जिनमें उन्होंने पांच लाख फौजियों का उपयोग किया।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति के आदेशानुसार आठवीं रूट आर्मी ने उत्तरी चीन में छापामार युद्ध लड़ा, नई चौथी आर्मी ने मध्य चीन में लड़ाई की तथा दक्षिणी चीन में जापान विरोधी तोंगचियांग आधार क्षेत्र की स्थापना की। लाल सेना की छापामार टुकड़ी ने हनान द्वीप पर लड़ाई लड़ी। लंबे समय तक युद्ध को चलाने के लिए, कम्युनिस्ट पार्टी ने आधार क्षेत्रों में राजनीतिक और प्रशासनिक इकाइयों की स्थापना की। उनका संगठन 'तीन- तिहाइयों' की प्रणाली के आधार पर किया गया जिसमें कम्युनिस्टों, गैर पार्टी प्रगतिशील वामपंथियों और मध्यमार्गियों में प्रत्येक को एक-तिहाई पदों पर नियुक्त किया जाता था। इस वक्त कम्युनिस्ट पार्टी का खास काम अधिकृत क्षेत्रों में जापान के विरुद्ध प्रतिरोध संघर्ष के लिए किसानों को संगठित करना था। जापान विरोधी युद्ध में सभी ग्रामीण वर्गों का सहयोग लेने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी ने नरम कृषि नीति का अनुसरण किया।

प्रसिद्ध 'सौ-रेजीमेंट' अभियान मे भारी पैमाने पर आठवीं रूट आर्मी ने हमलों द्वारा यातायात के मार्गों को नष्ट किया, जापानी और कठपुतली सरकार की फौजों पर आक्रमण किए और कुछ प्रशासनिक केंद्रों पर भी छिटपुट हमले किए। आधार क्षेत्र के कुछ शहरों पर भी आक्रमण किया गया। च्यांग काई शेक ने खुश होकर कम्युनिस्ट सेना-संचालक चू ते को बधाई का तार भेजा, 'तुम्हारी सेना ने किसी संकोच के बिना इस सुअवसर का उपयोग करते हुए आक्रमण शुरू कर दिया और इस तरह दुश्मन को भारी नुकसान उठाना पड़ा। मैं इस तार को प्रशंसा के रूप में भेज रहा हूं।'[19] तथापि क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट

पार्टी के बीच के वर्गीय अंतर्विरोधों का जापान विरोधी संघर्ष के दौरान कोई हल नहीं निकल सका। क्वोमिन्तांग नियंत्रित क्षेत्रों में च्यांग काई शेक ने कम्युनिस्ट गतिविधियों का सक्रियता से दमन किया, अपने 'फासिस्ट' शासन को मजबूत किया एवं कम्युनिस्ट ग्रुपों और अन्य गैर-पार्टी देशभक्तों को नष्ट किया। उसने कम्युनिस्टों के नेतृत्व में स्थापित जापान विरोधी आधार क्षेत्रों पर भी हमले शुरू कर दिए।

पहले कम्युनिस्ट विरोधी आक्रमण 1939-40 की सरदियों में, दिसंबर-जनवरी के महीनों में, शांशी, हपेइ और कुछ अन्य क्षेत्रों में किए गए। परंतु आठवीं रूट आर्मी ने उन्हें नाकाम कर दिया। दूसरी बार ये हमले दक्षिणी आनहुई में हुए। नई चौथी आर्मी ने बहादुरी से मुकाबला किया, लाल सेना के अधिकांश सैनिक मारे गए या कैद कर लिए गए और सिर्फ 2,000 सिपाही दुश्मन की कतारों को तोड़कर बाहर निकलने में सफल हुए। यह मुठभेड़ की लड़ाई नहीं थी, बल्कि च्यांग काई शेक ने अप्रैल 1927 के आकस्मिक विद्रोह के नमूने पर राष्ट्रीय संयुक्त मोरचे को तोड़ने के लिए षड्यंत्र रचा था। कम्युनिस्ट पार्टी ने आत्मरक्षा की नीति का मजबूती से पालन किया लेकिन जापान विरोधी सैनिक गठबंधन को कायम रखा। उसने पार्टी के खिलाफ क्वोमिन्तांग के राजनीतिक प्रचार का भी दृढ़ निश्चय के साथ विरोध किया। इन कार्रवाइयों के लिए चुंगछिंग में कम्युनिस्ट पार्टी के सर्वोच्च प्रतिनिधि चोउ एनलाई ने क्वोमिन्तांग अधिकारियों से जोरदार विरोध प्रकट किया।

1941 और 1942 में जापान के विरुद्ध जनता की सेनाओं द्वारा शत्रु के अधिकृत क्षेत्रों में प्रतिरोध संघर्ष कठिनतम दौर में पहुंच गया। जापान के युद्ध मंत्री, हिदेकी तोजा ने घोषणा की कि जापानी सेना उत्तरी चीन में प्रत्येक उस व्यक्ति को जान से मार देगी जो आत्मसर्मण करने से इनकार करेगा। जापानी सेना 'महत्तर पूर्व एशिया के सह-समृद्धि क्षेत्र' की स्थापना खून की नदियां बहाकर करेगी। इस समय चीन को जापानी सेनाओं की मुख्य शक्ति से लड़ना पड़ रहा था। जबकि ब्रिटेन और अमरीका के विरुद्ध दक्षिण-पूर्व एशिया और प्रशांत सागर के युद्धक्षेत्र में केवल चार लाख जापानी सैनिक लड़ रहे थे, चीन के जापान अधिकृत प्रदेशों में 13 लाख जापानी फौजी तैनात थे जो कम्युनिस्ट आधार क्षेत्रों में चीन के छापामार सैनिकों से युद्ध कर रहे थे। अतः 'चीनी जनता का यह प्रयास, जिसने जापानी सेना की मुख्य शक्तियों को बांधकर रखा हुआ था, विश्वव्यापी, फासिस्ट विरोधी युद्ध के लिए महान योगदान था।'[20]

इस समय आठवीं रूट आर्मी, नई चौथी आर्मी, छापामार बलों और जनता के स्वयंसेवी सैनिकों ने 42,000 से ज्यादा मुठभेड़ों में लड़ाई लड़ी और उनमें 3,31,000 जापानी सैनिकों को हताहत किया या बंदी बनाया। शुरू में कम्युनिस्ट पार्टी को अपने आधार क्षेत्रों का लगभग 50 प्रतिशत भाग खोना पड़ा लेकिन अगले दो वर्षों में उस पर उसने फिर से कब्जा कर लिया। इस कठिन समय में, पार्टी ने आधार क्षेत्रों के प्रशासन और उनकी अर्थव्यवस्था को मजबूत करने के लिए बहुत से कारगर कदम उठाए। उसने शांशी-कांसू-निंगशिया सीमांत क्षेत्र के माडल को जापान विरोधी आधार क्षेत्रों में दुश्मन की कतारों के पीछे सफलतापूर्वक लागू किया। आत्मरक्षा और आत्मनिर्भरता की मिली-जुली

नीति ने इन मुक्त क्षेत्रों को जापानी और कभी-कभी क्वोमिन्तांग हमलों का मुकाबला करने की ताकत दी और इस प्रकार वे आधार क्षेत्र अपना अस्तित्व कायम रखने में कामयाब रह सके।

जापान विरोधी युद्ध में कम्युनिस्ट पार्टी की छापामार लड़ाई की कार्यनीतियां बुनियादी तौर से वही थीं, जिनका उसने पहले गृहयुद्ध में उपयोग किया था। दोनों के बीच मुख्य अंतर या तो जनता की लामबंदी के मुद्दों से जुड़ा था या विश्व स्तर पर संपूर्ण रणनीति के प्रभाव से। मुख्य मुद्दे थे—राष्ट्रीय पुनरुत्थान, राष्ट्रीय चेतना का विकास, जापान की क्रूरता का प्रचार और फासीवाद की विश्वव्यापी हार में चीन की बड़ी भूमिका।

नव-जनवाद के लिए संघर्ष

सर्वमान्य लेनिनवादी सिद्धांत के आधार पर कि पूर्व-पूंजीवादी देशों में क्रांति के दो चरण होंगे, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने घोषणा की कि इनमें पहले चरण की शक्ल वही होगी जिसका वर्णन माओ ने 'नव-जनवाद' के रूप में किया है। यह 'नव-जनवादी क्रांति' पुरानी बुर्जुआ-लोकतांत्रिक क्रांति से इस मायने में भिन्न होगी कि उसका नेतृत्व 'बुर्जुआ-वर्गीय' नहीं होगा। यह 'अनेक क्रांतिकारी वर्गों की मिली-जुली क्रांतिकारी-जनवादी तानाशाही' होगी।[21] इस कथन ने लेनिनवादी सिद्धांत का जापान विरोधी संघर्ष और क्वोमिन्तांग प्रतिक्रियावादियों के खिलाफ चीन की परिस्थितियों के संदर्भ में अनुकूलन कर लिया था। लेनिन ने 'मजदूरों और किसानों के क्रांतिकारी जनवादी अधिनायक तंत्र' का उल्लेख किया था। उन्होंने कुछ विशेष परिस्थितियों में बुर्जुआ राष्ट्रवादियों से गठबंधन करने का सुझाव भी दिया था। परंतु उन्होंने कभी भी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में स्थापित 'क्रांतिकारी-जनवादी अधिनायक तंत्र' के अंतर्गत 'बुर्जुआजी' को शामिल नहीं किया था। यह केवल माओ त्सेतुंग की ही संकल्पना थी, जिसने 'जनवादी प्रशासनों' में 'राष्ट्रीय बुर्जुआजी' को भी उचित प्रतिनिधित्व दिया था। 1939 से 1945 के बीच कम्युनिस्ट नियंत्रित जापान विरोधी आधार क्षेत्रों में और जापानी हमलावरों से राष्ट्रीय स्तर पर जूझ रहे बहुवर्गीय गठबंधन में शासन और राजनीतिक नेतृत्व के स्तर पर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग को एक मित्र के रूप में शामिल कर लिया था।

इस नवीकरण का ध्येय जापान विरोधी युद्ध में और फासीवाद के खिलाफ विश्वव्यापी संघर्ष में संपूर्ण चीनी जनता के क्रांतिकारी चरित्र पर जोर देना था। यद्यपि माओ ने स्तालिन का अनुसरण करते हुए कहा कि चीन की साम्राज्य विरोधी क्रांति 'सर्वहारावर्गीय विश्व समाजवादी क्रांति का ही एक हिस्सा है', लेकिन उस समय उन्होंने एशिया के लिए दावा नहीं किया, जैसा बाद में किया कि विश्व क्रांति में उसकी केंद्रीय भूमिका है। उन्होंने यह पारंपरिक मार्क्सवादी दृष्टिकोण स्वीकार किया कि अग्रगामी पूंजीवादी देशों का सर्वहारा वर्ग ही समाजवादी क्रांति की प्रधान शक्ति की भूमिका निभा सकता है। इसके मित्र और

सहायक उत्पीड़ित उपनिवेशी और अर्ध-उपनिवेशी देशों के अवाम होंगे। माओ त्सेतुंग का विचार था कि कम्युनिस्ट ही पहले नव-जनवादी क्रांति बाद में समाजवादी क्रांति में चीनी जनता का नेतृत्व कर सकते हैं। निश्चित रूप से ये विचार क्वोमिन्तांग और च्यांग काई शेक को खुश नहीं कर सकते थे।

परंतु आठवीं रूट आर्मी, नई चौथी आर्मी, छापामार दलों और जनता की स्वयंसेवी वाहिनी ने दुश्मन की कतारों के पीछे जो जीतें हासिल कीं और कम्युनिस्ट पार्टी की रहनुमाई में आधार क्षेत्रों में 'तीन-तिहाइयों' द्वारा कायम प्रशासन प्रणाली को जो कामयाबी मिली, उससे क्वोमिन्तांग के मन में डर पैदा हो गया। यहां कम्युनिस्ट नेतृत्व ने नव-जनवादी राज्य का एक कामयाब माडल बनाया जो क्वोमिन्तांग नियंत्रित क्षेत्रों में कायम जमींदारों पूंजीपतियों की 'फासिस्ट' हुकूमत के मुकाबले बहुत बेहतर था। इस संबंध में चामर्स जानसन का मत है :

> हालांकि कम्युनिस्ट फौज असलियत में जापानियों से लगातार जंग लड़ रही थी, लेकिन उसके तौर-तरीकों ने यह बात बिलकुल साफ कर दी थी कि चीन में जापान पर जीत हासिल करने वाला एक ही है, किसी दूसरे के लिए जगह नहीं।[22]

चूंकि कम्युनिस्ट सभी जगहों पर जापानी हमलावरों से लड़ने वाले दृढ़संकल्पी योद्धा थे, इसलिए क्वोमिन्तांग द्वारा उन पर हमले और हत्या की नीति ने उन्हें वस्तुत: 'राष्ट्रीय शहीदों' का सम्मान और दर्जा दे दिया। चामर्स जानसन का कथन है, 'कम्युनिस्ट धड़ल्ले से राष्ट्रवादियों के सैनिक आदेशों का तब तक उल्लंघन कर सकते थे जब तक वे क्वोमिन्तांग सरकार की तुलना में अधिक जापान विरोधी छवि रखते थे।'[23] इसी संदर्भ में स्टुअर्ट श्रैम का मत है :

> यह मूल्यांकन वस्तुत: भविष्य के संपूर्ण जापान विरोधी युद्ध का सारांश प्रस्तुत करता है। इस युद्ध के दौरान माओ और उनके साथियों ने दिखाने के लिए भी क्वोमिन्तांग सरकार के आदेशों का पालन करना बंद कर दिया, तो भी चीन के राष्ट्रीय हितों के सुदृढ़तम रक्षकों के बतौर उनकी इज्जत और प्रतिष्ठा लगातार बढ़ती रही।[24]

माओ त्सेतुंग का दावा था कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ऐसे क्रांतिकारी आंदोलन के बीच से गुजरी है जो 'निरंतर और अविराम चलते रहे थे और असाधारण रूप से जटिल थे, रूसी क्रांति की अपेक्षा अधिक जटिल।' और फिर आगे कहा, 'राष्ट्रीय मुक्ति के संपूर्ण जापान विरोधी संघर्ष के दौरान चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने अपना कर्तव्य बहुत अच्छी तरह निभाया है।'[25] इस समय चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने पश्चिमी बुर्जुआ लोकतंत्र और अपने 'नव-जनवाद के बीच एक विलक्षण समानता भी महसूस की। इस संबंध में एक दिलचस्प मिसाल' *लिबरेशन डेली* का वह संपादकीय लेख है, जिसने अठारहवीं सदी में राष्ट्रीय स्वतंत्रता और लोकतंत्र के लिए अमरीका के संघर्ष और बीसवीं सदी में चीन के संघर्ष के बीच विलक्षण समानता देखी :

> चीन की कम्युनिस्ट पार्टी और अन्य लोकतांत्रिक शक्तियों में लोकतांत्रिक अमरीका को एक सहकर्मी, और सुन यातसेन को एक उत्तराधिकारी मिल गया है।...जिस काम को हम कम्युनिस्ट आज कर रहे हैं, यह वही कार्य है जिसको बहुत पहले अमरीका में वाशिंगटन, जैफर्सन और लिंकन ने पूरा किया था। इसे निश्चित रूप से लोकतांत्रिक अमरीका की सहानुभूति प्राप्त होगी, वस्तुत: यह सहानुभूति मिल भी चुकी है।[26]

यह निस्संदेह युद्धकाल के साथी और मित्र के प्रति सद्‌भाव का प्रदर्शन था। जुलाई 1944 में राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने प्रस्ताव किया कि अमरीकी जनरल स्टिलवेल को नेशनलिस्ट और कम्युनिस्ट सेनाओं का संयुक्त सेनाध्यक्ष बना दिया जाए। संयुक्त कमान के स्वाभाविक निष्कर्ष के रूप में अमरीकी सरकार ने यह प्रस्ताव भी किया कि चीन में कम्युनिस्ट भागीदारी के आधार पर एक मिली-जुली सरकार का गठन भी किया जाए। इस विचार को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने तुरंत स्वीकार कर लिया परंतु क्वोमिन्तांग और च्यांग काई शेक ने अमरीका के दोनों प्रस्तावों का घोर विरोध किया। माओ त्सेतुंग ने क्वोमिन्तांग नेता की भर्त्सना करते हुए कहा कि च्यांग काई शेक ने 'जापान विरोधी प्रतिरोध युद्ध में नेता के रूप में अपनी स्थिति और प्रतिष्ठा को खो दिया है।' माओ ने महसूस किया कि उसने 'चीनी गणतंत्र की गरिमा' को ठेस पहुंचाई थी' और यह 'च्यांग की नस्लवादी घृणा और भय की अभिव्यक्ति' थी। माओ ने 'चीनी युद्धक्षेत्र में मित्रों की संयुक्त उच्च कमान' की स्थापना का प्रस्ताव पूरी तरह उचित माना क्योंकि उस वक्त क्वोमिन्तांग सरकार और उसके सैन्य बलों में व्यापक रूप से भ्रष्टाचार फैल चुका था।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी सातवीं कांग्रेस अप्रैल 1945 में युन्नान में की। माओ त्सेतुंग ने कांग्रेस को संबोधित करते हुए कहा :

> पश्चिम में फासिस्ट जर्मनी के विरुद्ध युद्ध का सफल अंत हो रहा है।...जापानी हमलावरों को हराना अभी बाकी है।...क्या इस काम को पूरा करना संभव है? मैं सोचता हूं कि यह संभव है। पहले...बारह लाख दस हजार सदस्यों की एक अनुभवी और मजबूत कम्युनिस्ट पार्टी है। दूसरे...9 करोड़ 55 लाख जनसंख्या वाले शक्तिशाली मुक्त क्षेत्रों की स्थापना की जा चुकी है जिनमें 9 लाख 10 हजार नियमित सैनिक हैं और 22 लाख स्वयंसेवी जन-सैनिक हैं। तीसरे, हमें राष्ट्र की विशाल जनता का समर्थन प्राप्त है...और दुनिया की बहुसंख्यक जनता भी हमारे साथ है। इन हालात में हमलावर को शिकस्त देना और नए चीन का निर्माण करना बिलकुल संभव है।[27]

जब स्टिलवेल संकट का समाधान पूरी तौर से च्यांग काई शेक के पक्ष में हो गया और रूजवेल्ट ने उसे अमरीका वापस बुला लिया, तो च्यांग ने कम्युनिस्ट भागीदारी द्वारा मिली-जुली केंद्रीय सरकार के गठन का प्रस्ताव भी नामंजूर कर दिया। नए अमरीकी राजदूत पैट्रिक हर्ले के क्वोमिन्तांग समर्थक दृष्टिकोण से उत्तेजित होकर माओ त्सेतुंग ने घोषणा की :

> चूंकि मैं इन जंग लगी बंदूकों की मदद से जापान के साथ लड़ने में सक्षम हुआ हूं इसीलिए मैं अमरीकियों से भी युद्ध लड़ सकता हूं। पहला कदम इस हर्ले की छुट्टी करना है, उसके बाद हम देख लेंगे।[28]

जापानी फौजों के खिलाफ कम्युनिस्टों की आक्रामक कार्रवाइयां 1945 की गरमियों में तेज कर दी गईं। जापान अधिकृत नगरों की घेराबंदी हो गई और बिखरे हुए मुक्त क्षेत्रों को आपस में जोड़ दिया गया। क्रमशः उन्होंने छापामार युद्ध को गतिशील युद्ध में बदल दिया और इस प्रकार भरपूर प्रत्याक्रमण के लिए जरूरी स्थितियां बन गईं।

8 अगस्त को सोवियत संघ ने जापान के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। सोवियत सेनाओं के आक्रमण ने मंचूरिया में तैनात जापान की क्वांटुंग सेना को हराकर उसे भारी नुकसान पहुंचाया और युद्ध का अंत निश्चित कर दिया। इसी क्षण चीन में जापान विरोधी शक्तियों ने भरपूर प्रत्याक्रमण आरंभ कर दिया। क्वोमिन्तांग सरकार की मुख्य फौजें अब भी युद्धक्षेत्रों से दूर पश्चिमी चीन में तैनात थीं। जापान अधिकृत अधिकांश शहर, रेल-मार्ग, और तटवर्ती प्रदेश पूर्व में थे जिनके चारों ओर कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा संचालित आधार क्षेत्र स्थित थे। इसलिए कम्युनिस्ट सेनाओं ने जापान विरोधी आधार क्षेत्रों से जापानी और कठपुतली सरकार की फौजों के विरुद्ध जोरदार प्रत्याक्रमण शुरू कर दिया।

प्रत्याक्रमण की इन कार्रवाइयों द्वारा आठवीं रूट आर्मी, नई चौथी आर्मी और जन-सैनिकों की वाहिनी ने 150 नगरों और जनपदों को आजाद कर लिया और उत्तरी तथा मध्य चीन के विशाल भूभाग को मुक्त कर लिया। 2 सितंबर 1945 को जापानी प्रतिनिधियों ने चीन के साथ आत्मसमर्पण की संधि पर हस्ताक्षर कर दिए और 12 लाख 80 हजार जापानी सैनिकों ने हथियार डाल दिए। इस प्रकार जापान विरोधी प्रतिरोध युद्ध का चीन में अंत हो गया और इसी के साथ द्वितीय विश्वयुद्ध भी समाप्त हो गया। (यहां हमें याद रखना चाहिए कि जापान की हार के लिए चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की सही समझ और साहस ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और इसी कारण जनता के उस हिस्से में भी इसकी लोकप्रियता बढ़ती गई जहां लोग उनके सामाजिक तथा आर्थिक कार्यों को देख नहीं पाए थे। अब चीन का विशाल जनसमूह कम्युनिस्टों के साथ था और जब गृहयुद्ध ने तेजी पकड़ी तो उन्होंने च्यांग काई शेक की सरकार को बेबस कर दिया और अंत में उसको ताइवान में पनाह लेनी पड़ी। इस द्वीप का नाम पुर्तगालियों ने फारमूसा रखा था।)

संदर्भ और टिप्पणियां

1. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 165.
2. कानरेड ब्रांट इत्यादि, *ए डाक्युमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 240.
3. हू शैंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 162.
4. 'अपोज जापान'स आकूपेशन आफ मंचूरिया', *दि कम्युनिस्ट इंटरनेशनल डाक्यूमेंटरी कंसर्निंग दि चाइनीज रिवोल्यूशन (1929-39)*, खंड II. पृ. 167.

5. सूंग चिंग लिंग, 'दि क्वोमिन्तांग इज नो लांगर ए पालिटिकल पावर', *दि स्ट्रगल फॉर न्यू चाइना*, पृ. 30.
6. 'आन न्यू डेमोक्रेसी', *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड II, पृ. 372.
7. हू शेंग (सपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 178.
8. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 193.
9. *रेजोल जुत्सिल* VII *व्सेमिनोंगो कांग्रेस कोम्युनिस्टीचेस्कोगो इंटरनेशनाला*, पृ. 25-26, इस कांग्रेस में वांग मिंग ने 'राष्ट्रीय रक्षा की सरकार' की मांग की थी.
10. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 197-198.
11. जापानी अखबार, *आसाही शिम्बून* के एक संवाददाता के साथ साक्षात्कार, 14 फरवरी 1935 को.
12. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 201.
13. वही, पृ. 203 (पाद टिप्पणी).
14. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ 219.
15. कानरेड ब्रांड इत्यादि, *ए डाक्युमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ 242-45.
16. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 221.
17. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड II, पृ. 173.
18. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 242.
19. वही, पृ. 252.
20. वही, पृ. 267.
21. स्टुअर्ट श्रैम, *पालिटिकल थाट आफ माओ*, पृ. 161.
22. चामर्स जानसन, *पीजेंट नेशनलिज्म एंड कम्युनिस्ट पावर*, पृ. 139.
23. वही, पृ. 165 (स्टुअर्ट श्रैम में उद्धृत, पृ. 219)
24. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 219.
25. स्टुअर्ट श्रैम, *पालिटिकल थाट आफ माओ*, पृ. 289-90.
26. चीयह-फांग चिह-पाओ, 4 जुलाई 1944.
27. कानरेड ब्रांट इत्यादि, *ए डाक्युमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 290.
28. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग* में उद्धृत, पृ. 232.

अध्याय दस

चीनी समाज के अंतर्विरोध

दो विश्व दृष्टिकोण

माओ त्सेतुंग ने 'आन प्रैक्टिस' निबंध लिखने के बाद दूसरा निबंध 'आन कंट्रैडिक्शंस' लिखा। इन दोनों निबंधों के लिखने का उद्देश्य उस समय चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में प्रचलित 'मताग्रहवाद' का विरोध करना था। मनुष्य के ज्ञान के पूरे इतिहास में इन्हीं दोनों विश्व दृष्टिकोणों ने विश्व के विकास के नियम की संकल्पना और व्याख्या करने का प्रयास किया है। इन दोनों दृष्टिकोणों को आधिभौतिक और द्वंद्वात्मक नाम दिए जा सकते हैं। वस्तुओं में अंतर्विरोध के नियम को विपरीतों की एकता के नियम के रूप में द्वंद्वात्मक विश्व दृष्टिकोण का लक्ष्य माना जा सकता है। दूसरी तरफ, आधिभौतिक सिद्धांत की विशेषता यह है कि वह चीजों के विकासात्मक अर्थात अंतर्विरोध-रहित विश्व दृष्टिकोण पर आधारित है। लेनिन का कथन है : 'अपने सही अर्थ में द्वंद्ववाद वस्तुओं के सारतत्व (इस्सेंस) में ही अंतर्विरोध का अध्ययन है।'[1]

जैसा माओ का संकेत है, लेनिन ने यह भी बताया था कि द्वंद्ववाद का नियम किसी फल की गुठली जैसा है अर्थात संपूर्ण फल को दो भागों में तोड़कर उसके दोनों अंतर्विरोधी हिस्सों का संज्ञान करो। परंतु आधिभौतिक विद्या विकास की परिभाषा कमोबेश पुनरावृत्ति के चक्र के रूप में करती है। चीन में आधिभौतिक ज्ञान का एक नाम श्वान-श्वेह भी है। बहुत समय तक मानवीय चिंतन में आदर्शवादी विश्व दृष्टिकोण को प्रधानता दी जाती थी। पश्चिम में शुरू में बुर्जुआ वर्ग का भौतिकवादी दृष्टिकोण भी आधिभौतिकवाद पर आधरित था। अत्यधिक विकसित पूंजीवाद में पूंजीपति तथा मजदूर वर्गों के बीच संघर्ष के विकास के बाद, 'भौतिकवादी द्वंद्ववाद के मार्क्सवादी विश्व दृष्टिकोण का उदय हुआ। तब खुले और नंगे चेहरे के साथ प्रतिक्रियावादी आदर्शवाद के अलावा, पूंजीपति वर्ग के बीच भ्रष्ट विकासवाद द्वंद्वात्मक भौतिकवाद के विरोध में सामने आया।'[2]

भ्रष्ट विकासवादी विश्व दृष्टिकोण चीजों को स्थिर, एकाकी और आंशिक रूप में देखता है। वह सोचता है कि सभी वस्तुएं अलग-थलग और अपरिवर्तनीय हैं और यह उनका स्थायी चरित्र है। परिवर्तन, अगर होता है, तो वह परिमाणात्मक होगा और उसके पीछे बाह्य कारक होंगे। जैसा माओ का कथन है, आधिभौतिक विश्व दृष्टिकोण की मान्यता है कि पूंजीवादी शोषण, पूंजीवादी प्रतियोगिता, पूंजीवाद की व्यक्तिवादी विचारधारा इत्यादि, पूरे इतिहास में हमेशा मौजूद रही है। यह मान्यता सामाजिक विकास की व्याख्या जलवायु, भूगोल या संस्कृति के संदर्भ में करती है। इसके अलावा, भ्रष्ट विकासवाद की

संकल्पना चीजों की गुणात्मक विविधता की व्याख्या नहीं कर सकती और न वह इस घटना का विवेचन कर सकती है कि कोई एक गुण किसी दूसरे गुण में किस तरह बदल जाता है। चीन में एक कहावत है, 'जैसे प्रकृति के नियम कभी नहीं बदलते, वैसे ही मनुष्य का धर्म (ताओ) भी कभी नहीं बदलता।'[3]

आधिभौतिक या भ्रष्ट विकासवादी विश्व दर्शन के विपरीत, द्वंद्वात्मक भौतिकवादी विश्व दर्शन चीजों के विकास को उनकी आंतरिक और आवश्यक, उनकी अपनी गतिशीलता के रूप में देखता है। प्रत्येक चीज की अंत:क्रिया अपने इर्द-गिर्द की सभी चीजों के साथ होती रहती है। माओ कहते हैं :

> अंतर्विरोध प्रत्येक वस्तु के अंतर्गत उसके विकास का बुनियादी कारण है, जबकि उसके पारस्परिक संबंध और अंत:क्रियाएं गौण कारण हैं। इसलिए द्वंद्वात्मक भौतिकवाद प्रभावी रूप से बाहरी कारणों या किसी बाहरी इच्छा शक्ति के सिद्धांत का खंडन करता है। इस सिद्धांत का समर्थन आधिभौतिक यांत्रिक भौतिकवाद और भ्रष्ट विकासवाद दोनों करते हैं।[4]

इसी प्रकार, सामाजिक विकास भी मुख्य रूप से आंतरिक अंतर्विरोधों की वजह से ही होता है। साम्राज्यवादी रूस सोवियत रूस में परिवर्तित हो गया और सामंती जापान, जिसने दुनिया के लिए अपने दरवाजे बंद कर रखे थे, एक पूंजीवादी देश बन गया लेकिन इनमें किसी भी देश की जलवायु या भूगोल में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

पूंजीवाद और साम्राज्यवाद के युग में विभिन्न देशों के आर्थिक और राजनीतिक संबंधों की अंत:किया में बहुत वृद्धि हुई है। रूसी क्रांति का दूसरे देशों की आंतरिक दशाओं पर और चीन की आंतरिक परिस्थितियों पर बहुत ज्यादा प्रभाव पड़ा। परंतु सामाजिक विकास पर बाहरी कारणों का असर अंदरूनी कारणों के द्वारा ही पड़ता है। माओ का मत है :

> 1927 में चीन में बड़े पूंजीपतियों के हाथों सर्वहारा वर्ग की हार इसलिए हुई क्योंकि उस वक्त स्वयं चीनी मजदूर-किसान वर्ग में (चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के अंतर्गत) अवसरवाद की प्रवृत्ति बढ़ गई थी। जब हमने अवसरवाद की इस प्रवृत्ति का खात्मा कर दिया, तो चीनी क्रांति की प्रगति फिर शुरू हो गई। बाद में, चीन की क्रांति को फिर कड़ी मुसीबतों को झेलना पड़ा और दुश्मन की ताकत बहुत बढ़ गई, क्योंकि हमारी पार्टी के अंदर दुस्साहसी प्रवृत्ति बढ़ गई थी। जब हमने इस दुस्साहस को समाप्त कर दिया, तो हमारी क्रांति की प्रगति फिर होने लगी।[5]

अंतर्विरोधों की सार्वभौमिकता

द्वंद्वात्मक भौतिकवादी विश्वदर्शन ने प्राकृतिक और मानवीय इतिहास के बहुत से पहलुओं

का विश्लेषण कुछ सामान्य अथवा सार्वभौमिक अंतर्विरोधों की सहायता से किया है। परंतु कुछ मार्क्सवादी, जो मताग्रही होते हैं, इस बात को समझने में असफल रहते हैं कि अंतर्विरोधों की सार्वभौमिकता शुद्ध रूप से अंतर्विरोधों की विशिष्टता में ही निहित होती है। अंतर्विरोध की सार्वभौमिकता के दो अर्थ होते हैं :

1. सभी चीजों के विकास की प्रक्रिया में अंतर्विरोध का अस्तित्व होता है, और
2. विपरीत तत्वों की गतिशीलता आरंभ से अंत तक जारी रहती है।

एंगेल्स का विचार था कि 'गति स्वयं एक अंतर्विरोध है।'[6] लेनिन ने विपरीत तत्वों की एकता के नियम को समझाते हुए कहा कि यह प्रकृति (जिसमें मन और समाज शामिल हैं) की सभी घटनाओं और प्रक्रियाओं में अंतर्विरोधी, परस्पर एकाकी, विपरीत प्रवृतियां के अस्तित्व की स्वीकृति (खोज) है।'[7]

इस प्रकार, सभी चीजों में मौजूद अंतर्विरोधी पहलुओं की आपसी निर्भरता और इन पहलुओं के बीच का संघर्ष सभी चीजों के जीवन का स्वरूप निश्चित करते हैं और उन्हें विकास के योग्य बनाते हैं। जिसमें अंतर्विरोध नहीं है, ऐसी चीज का अस्तित्व संभव नहीं है। इसके बाद, माओ सार्वभौमिक अंतर्विरोध की संकल्पना की व्याख्या के लिए एंगेल्स का एक लंबा उद्धरण प्रस्तुत करते हैं। इसका सारांश निम्नलिखित है : 'अंतर्विरोध सरल यांत्रिक परिवर्तन और पदार्थ की गति के उच्चतर स्वरूप, दोनों में पाया जाता है। प्राणियों का जीवन और विकास उच्चतर स्वरूपों के उदाहरण हैं। जीवन, ज्ञान, विचार और कार्य इन सभी के अंतर्विरोधी पहलू होते हैं। प्राकृतिक विज्ञानों में अंतर्विरोधों की बहुलता है, लेकिन सामाजिक विज्ञान में उनका अस्तित्व वर्ग संघर्ष में दिखाई पड़ता है।'[8] लेनिन के अनुसार :

> गणित में अंतर्विरोध का अस्तित्व अवकलन और समाकलन के रूप में होता है, भौतिकी में सकारात्मक और नकारात्मक विद्युत के रूप में ; यांत्रिकी में क्रिया और प्रतिक्रिया के रूप में ; तथा रसायन शास्त्र में यह परमाणुओं के संयोग और विच्छेद के रूप में पाया जाता है।[9]

माओ ने कहा :

> भिन्न प्रकार के विचारों के बीच पार्टी में लगातार संघर्ष और विरोध होता रहता है। यह पार्टी के अंदर समाज में वर्गों के बीच और नूतन तथा पुरातन के बीच होने वाले संघर्ष का प्रतिबिंब होता है। अगर पार्टी में कोई संघर्ष न हो तो पार्टी की जिंदगी खत्म हो जाएगी।[10]

माओ सोवियत (रूसी) दार्शनिक देबोरिन के इस मत की आलोचना करते हैं कि अंतर्विरोध किसी प्रक्रिया की शुरुआत में प्रकट नहीं होता बल्कि तभी उभरकर आता है जब वह प्रक्रिया विकसित होकर किसी निश्चित चरण में पहुंचती है। इस प्रकार देबोरिन का दृष्टिकोण आधिभौतिक हो जाता है क्योंकि वह बाहरी कारण को अधिक महत्व देता है।

मूर्त संदर्भ में, वह केवल भेदों को देखता है, अंतर्विरोधों को नहीं। बुखारिन भी उसी की भांति धनी और निर्धन किसानों के बीच में केवल भेद देखता था, अंतर्विरोध नहीं। फ्रांसीसी क्रांति के संदर्भ में उसे 'थर्ड एस्टेट' के अंतर्गत वर्गीय अंतर्विरोध नजर नहीं आए जबकि 'थर्ड एस्टेट' में पूंजीपति, मजदूर, किसान, इत्यादि वर्ग शामिल थे। अंतर्विरोधी संबंध शत्रुता की भावना में विकसित हो सकता है और नहीं भी। तथापि माओ के अनुसार अंतर्विरोध निरपेक्ष और सार्वभौमिक होता है। यह सभी चीजों में उनके विकास के मार्ग में शुरू से अंत तक मौजूद रहता है।

नई प्रक्रिया के प्रारंभ का अर्थ है कि पुरानी एकता अपने अंदरूनी विपरीत तत्वों को इकट्ठा कर जन्म ले रही है। नई प्रक्रिया में नए अंतर्विरोध निहित होते हैं और इन नए अंतर्विरोधों को अंगीकृत करते हुए नए इतिहास की शुरुआत होती है और नवीकरण की यह प्रक्रिया अनंत रूप से जारी रहती है। मार्क्स ने *कैपीटल* में विपरीत तत्वों की इस गतिशीलता का एक माडल प्रस्तुत किया था जो सभी चीजों के विकास की प्रक्रिया में शुरू से अंत तक अंतर्निहित रहता है।

माओ चाहते थे कि चीन की कम्युनिस्ट पार्टी इस द्वंद्वात्मक भौतिकवादी पद्धति को अच्छी तरह समझे। तभी वह चीनी क्रांति के अतीत और वर्तमान का सही विश्लेषण कर सकेगी और भविष्य के मार्ग का निर्धारण कर सकेगी।

अंतर्विरोध की सापेक्षता

अंतर्विरोध की निरपेक्षता और सार्वभौमिकता के विवेचन के बाद, अब हम उसकी सापेक्षता पर विचार करेंगे। सापेक्षता को हम उसकी विशिष्टता भी कह सकते हैं। इस प्रश्न को हम अनेक स्तरों पर ले सकते हैं। पहला, पदार्थ की गति के प्रत्येक स्वरूप में उसकी अपनी विशिष्टता निहित होती है। यह गति अनेक स्वरूपों को ग्रहण करती है। हमें गति के इन स्वरूपों के बीच में गुणात्मक अंतर का अवलोकन करना चाहिए। गति के प्रत्येक स्वरूप में उसी के अंदर उसका सापेक्ष अंतर्विरोध उपस्थित रहता है। यह संसार में वस्तुओं की अत्यधिक विविधता का आधार या आंतरिक कारण होता है। गति के प्रत्येक स्वरूप के विशिष्ट सारतत्व का निर्धारण उसी के विशिष्ट अंतर्विरोध द्वारा होता है। यह प्राकृतिक, सामाजिक और वैचारिक घटनाओं के विषय में समान रूप से सही होता है।

विशेष चीजों के ज्ञान से चीजों के सामान्य ज्ञान की दिशा में प्रगति हमेशा क्रमिक रूप से होती है। अनेक चीजों के विशिष्ट सारतत्व को जानने के बाद ही हम सामान्यीकरण की कोशिश कर सकते हैं और चीजों के सामान्य सारतत्व को समझ सकते हैं। इसके पूरक के रूप में हमें अनेक मूर्त चीजों का अध्ययन करना चाहिए तभी हम अपने ज्ञान को अमूर्त और अर्थहीन होने से बचा सकते हैं। माओ का कहना है :

हमारे मताग्रहवादी आलसी टट्टू हैं। वे मूर्त वस्तुओं के कष्टसाध्य अध्ययन से हमेशा

> दूर रहते हैं। वे समझते हैं कि सामान्य सचाइयां शून्य से उदित होती हैं...उन्हें ज्ञान के मार्क्सवादी सिद्धांत का कुछ भी ज्ञान नहीं होता।[11]

हमें यह समझ लेना चाहिए कि जिन अंतर्विरोधों में गुणात्मक भिन्नता होती है, उनका समाधान भी गुणात्मक रूप से भिन्न तरीकों द्वारा ही किया जा सकता है। उदाहरण के लिए सामंतवादियों और जनता के बीच में अंतर्विरोध का समाधान जनवादी क्रांति द्वारा किया जा सकता है लेकिन बुर्जुआजी और सर्वहारा वर्ग के बीच अंतर्विरोध का हल समाजवादी क्रांति द्वारा ही किया जा सकता है। चीन की विशाल जनता और जापानी साम्राज्यवाद के बीच अंतर्विरोध के समाधान के लिए राष्ट्रीय क्रांतिकारी युद्ध की आवश्यकता है। समाजवाद में मजदूरों और किसानों के बीच के अंतर्विरोध का हल कृषि के समूहीकरण और यांत्रीकरण के द्वारा हो सकता है, इत्यादि। समाज और प्रकृति के बीच अंतर्विरोध के समाधान के लिए उत्पादक शक्तियों के विकास की पद्धति का उपयोग करना चाहिए। कम्युनिस्ट पार्टी के नीतिगत मतभेदों से उत्पन्न विवादों और अंतर्विरोधों का सुलझाने के लिए आलोचना और आत्मालोचना की पद्धति का अनुसरण करना चाहिए।

माओ त्सेतुंग का विश्वास है कि मार्क्सवादियों-लेनिनवादियों को इस सिद्धांत का पालन करना चाहिए कि भिन्न-भिन्न प्रकार के अंतर्विरोधों के समाधान के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की पद्धतियों की आवश्यकता होती है। माओ का कथन है :

> मताग्रहवादी इस सिद्धांत का पालन नहीं करते; वे यह नहीं समझते कि भिन्न-भिन्न प्रकार की क्रांतियों की स्थिति में अंतर होता है और...अलग-अलग अंतर्विरोधों के हल के लिए अलग-अलग तरीकों की जरूरत पड़ती है। इसके विपरीत वे अनिवार्य रूप से...एक अपरिवर्तनीय फार्मूले को पकड़ लेते हैं और उसी को मनमाने ढंग से प्रत्येक स्थिति में लागू कर देते हैं, जिसकी वजह से क्रांति की प्रक्रिया को बहुत हानि पहुंचती है।[12]

चीन की बुर्जुआ जनवादी क्रांति के दौरान, बहुत ही जटिल अंतर्विरोध दिखाई देते हैं। इनको निम्नांकित रूप से देखा जा सकता है :

1. उत्पीड़ित वर्गों और साम्राज्यवाद के बीच में,
2. जनता और सामंतवाद के बीच में,
3. सर्वहारा और बुर्जुआ वर्गों के बीच में,
4. किसानों और जमींदारों के बीच में या विभिन्न प्रतिक्रियावादी समूहों के बीच में।

इन अंतर्विरोधों के प्रति हमारा बरताव एक जैसा नहीं हो सकता। क्रांतिकारियों को इनका अध्ययन उनकी सर्वांगता, उनके आपसी संबंधों और उनके सभी पहलुओं के संदर्भ में करना चाहिए। यह बहुत जरूरी है कि हम मूर्त समस्याओं का अध्ययन करें अर्थात 'मूर्त स्थितियों का मूर्त विश्लेषण करें।'[13]

माओ चेतावनी देते हुए कहते हैं :

> हमारे मताग्रहवादियों ने लेनिन की शिक्षाओं का उल्लंघन किया है; वे कभी अपने दिमाग का इस्तेमाल किसी चीज के मूर्त विश्लेषण के लिए नहीं करते; और अपने लेखन और भाषणों में हमेशा घिसे-पिटे वाक्यों का प्रयोग करते हैं जिसका कुछ अर्थ नहीं होता और इस प्रकार हमारी पार्टी में कार्य की बहुत खराब शैली का प्रयोग करते हैं।[14]

आत्मपरकता, एकांगता और सारहीनता

कहने की आवश्यकता नहीं है कि अपनी सोच और काम में मताग्रही तीन गलतियां करते हैं :

> पहली त्रुटि आत्मपरक होने में है। समस्याओं पर उनकी दृष्टि वस्तुपरक नहीं होती। सवालों के हल के लिए वे भौतिकवाद का उपयोग नहीं करते। क्रांतिकारी परिस्थितियों में परिवेश में होने वाले वस्तुपरक परिवर्तनों के साथ व्यवहार का अनुकूलन होना चाहिए। कभी-कभी चिंतन वास्तविकता से पीछे रह जाता है क्योंकि मनुष्य का संज्ञान सामाजिक स्थिति के कारण संकुचित हो जाता है। क्रांतिकारियों में रूढ़िवादी बदलती हुई वस्तुपरक स्थितियों के अनुसार अपने विचारों को बदलने में असफल रहते हैं और इसीलिए दक्षिणपंथी अवसरवाद के शिकार हो जाते हैं।

'वामपंथी' शब्दजाल रचने वालों का चिंतन वस्तुपरक प्रक्रिया से आगे दौड़ता है। उनमें कुछ अपनी कल्पनाओं को सच समझ लेते हैं, और कुछ वर्तमान में ऐसे आदर्शों को प्राप्त करना चाहते हैं जो भविष्य में ही उपलब्ध हो सकते हैं। उनके बारे में माओ का कथन है:

> आदर्शवाद और यांत्रिक भौतिकवाद, अवसरवाद और दुस्साहसवाद, सभी आत्मपरक और वस्तुपरक के बीच में विच्छेद और ज्ञान तथा व्यवहार के बीच में अलगाव के दुष्प्रभाव से ग्रस्त हैं। अतः मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांत... के लिए यह जरूरी है कि वह मजबूती के साथ गलत विचारधाराओं का विरोध करे।[15]

एकांगी होने का अर्थ किसी अंतर्विरोध के दोनों पहलुओं को न समझना है। इसका अर्थ है कम्युनिस्ट पार्टी को समझना लेकिन क्वोमिन्तांग को न समझना, चीन को समझना परंतु जापान को नहीं, सर्वहारा वर्ग को समझना किंतु पूंजीपति वर्ग को नहीं, किसानों को समझना किंतु जमींदारों को नहीं, अतीत को समझना लेकिन वर्तमान को नहीं अर्थात किसी मुकदमे में सिर्फ वादी पक्ष को समझना लेकिन प्रतिवादी पक्ष को नहीं, केवल अंश को समझना, पूर्ण को नहीं, इत्यादि। इस प्रसंग में लेनिन की बात हमें ध्यान में रखनी चाहिए :

> किसी वस्तु को समझने के लिए हमें उसके सभी पक्षों, सभी संबंधों और सभी 'मध्यस्थताओं' का अवबोध और अध्ययन करना चाहिए। हम इसे कभी पूर्ण रूप से ग्रहण नहीं कर सकते लेकिन सर्वांगीणता की मांग भूलों और सीमाओं के विरुद्ध सुरक्षा-कवच है।[16]

सारहीनता का अभिप्राय यह है कि हम अंतर्विरोध के लक्षणों पर उसकी समग्रता के संदर्भ में या उसके सभी पहलुओं की विशेषताओं पर विचार करने से इनकार कर देते हैं। इसका अर्थ गहराई में जाकर मूर्त तथ्यों पर विचार करने की जरूरत से इनकार करना, विषय की अस्पष्ट रूपरेखा पर नजर डालकर अंतर्विरोध के समाधान की (विवाद के फैसले की, महत्वपूर्ण कार्य को करने की, सैनिक अभियान के संचालन की) चेष्टा करना है। तुरंत निर्णय करने की यह पद्धति हमें असफलताओं की ओर ले जाती है। 'चीन में मताग्रही और अनुभववादी साथियों ने जो त्रुटियां की हैं उनका कारण शुद्ध रूप से चीजों के बारे में उनके दर्शन की आत्मपरक, एकांगी और सतही पद्धति में निहित है।'

अगर लोग किसी चीज के विकास की प्रक्रिया में उसके चरणों पर ध्यान नहीं देते, तो वे उसके अंतर्विरोधों के सही हल की खोज नहीं कर सकते। जब प्रतियोगिता पर आधारित पूंजीवाद साम्राज्यवाद में रूपांतरित हो गया तो पूंजीपतियों और मजदूरों के बीच मौजूद बुनियादी अंतर्विरोध के चरित्र में कोई परिवर्तन नहीं हुआ, परंतु पारंपरिक मार्क्सवाद का, साम्राज्यवाद और सर्वहारा वर्गीय क्रांति के युग में, लेनिनवाद में अनुकूलन करना पड़ा। यूरोप और सोवियत संघ में साम्यवाद के पतन के बाद इन सभी देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों के लिए अपनी रणनीति, कार्यनीति एवं विचारधारा पर पुनर्विचार और उनका पुनर्मूल्यांकन करना आवश्यक है।

चीन में अंतर्विरोधों का समाधान

चीन की बुर्जुआ जनवादी क्रांति के अनेक चरण हैं। इसके दो ऐतिहासिक चरण बहुत स्पष्ट रूप से बताए जा सकते हैं :

1. पहले चरण में क्रांति का नेतृत्व बुर्जुआ वर्ग के हाथों में था।
2. दूसरे चरण में यह नेतृत्व सर्वहारा वर्ग के हाथों में आ गया।

पहले चरण की शुरुआत 1911 की क्रांति और उत्तरी युद्ध-सामंतों के शासन तंत्र से हुई। इसी चरण में पहले राष्ट्रीय संयुक्त मोरचे की स्थापना हुई, संयुक्त मोरचा टूटा, और बुर्जुआ वर्ग ने जनवादी क्रांति के प्रति विश्वासघात करते हुए क्रांति विरोधी नीति अपनाई।

दूसरा चरण कृषि क्रांतिकारी युद्ध, मंचूरिया पर जापानी आक्रमण और नए युद्ध-सामंतों के विरुद्ध संघर्ष से शुरू हुआ। इसी चरण में दूसरे राष्ट्रीय संयुक्त मोरचे की स्थापना हुई। जापान के विरुद्ध प्रतिरोध की लड़ाई लड़ी गई और अंततः जनवादी गणतंत्र की स्थापना की गई।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व ने 'जनवादी' क्रांति के चरित्र में मौलिक परिवर्तन कर दिया, सामाजिक वर्गों का नया गठबंधन बनाया, किसान क्रांति में योगदान किया, क्रांति के साम्राज्यवाद विरोधी और सामंतवाद विरोधी पहलुओं को अधिक उग्र और प्रगतिशील बनाया, और समाजवादी क्रांति की दिशा में संक्रमण की संभावना पैदा की। चीनी क्रांति के चरण अनेक विशिष्ट लक्षणों वाले हैं जैसे कुछ अंतर्विरोधों की तीव्रता जो कृषि क्रांति और बाद में सांस्कृतिक क्रांति के मौकों पर दिखाई पड़ी, कुछ अन्य अंतर्विरोधों का आंशिक समाधान और फिर कुछ अन्य अंतर्विरोधों का उदय। हमें इन अंतर्विरोधों का अध्ययन न केवल उनकी समग्रता या आपसी संबंधों के संदर्भ में करना चाहिए बल्कि प्रत्येक अंतर्विरोध के दोनों पहलुओं की भी पूरी जांच-पड़ताल करनी चाहिए।

उदाहरण के लिए क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्ट पार्टी पर विचार कीजिए। पहले एक पहलू अर्थात क्वोमिन्तांग पर विचार कीजिए। पहले संयुक्त मोरचे के समय क्वोमिन्तांग ने सुन यातसेन की तीन महान नीतियों को...रूस के साथ गठबंधन, कम्युनिस्ट पार्टी के साथ सहयोग और किसानों तथा मजदूरों की सहायता...क्रियान्वित किया; इसलिए वह लोकतांत्रिक क्रांति के लिए विभिन्न वर्गों का क्रांतिकारी गठबंधन था। 1927 के बाद क्वोमिन्तांग बिलकुल अपने विरोधी स्वरूप में परिवर्तित हो गई अर्थात वह जमींदारों और बड़े पूंजीपतियों के प्रतिक्रियावादी गठबंधन में रूपांतरित हो गई। दिसंबर 1936 में शियान प्रकरण के बाद, क्वोमिन्तांग ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के विरुद्ध गृहयुद्ध समाप्त कर दिया और उसके साथ मिलकर जापानी साम्राज्यवाद के खिलाफ युद्ध करने के लिए तैयार हो गई। इस प्रकार एक लोकतांत्रिक शक्ति के रूप में वह फिर उभरी। परंतु जापान की पराजय के बाद, क्वोमिन्तांग का रूपांतरण फिर एक प्रतिक्रियावादी शक्ति में हुआ और कम्युनिस्ट पार्टी के लिए जरूरी हो गया कि वह गृहयुद्ध द्वारा उसका विनाश करे और उसके बाद चीन में जनवादी गणतंत्र की स्थापना करे।

अब दूसरे पहलू, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी, पर विचार कीजिए। पहले संयुक्त मोरचे के समय, कम्युनिस्ट पार्टी क्रांति के चरित्र, कार्यों और पद्धतियों को समझने में अपरिपक्व थी हालांकि इसने हिम्मत के साथ 1924-27 की क्रांति का नेतृत्व किया। फलत: वह चेन तूश्यू की 'वामपंथी दुस्साहसवाद' का शिकार हो गई और इस वजह से उसे क्रांति में हार का सामना करना पड़ा। 1927 के बाद पार्टी (सी.पी.सी.) ने कृषि क्रांति का नेतृत्व किया, लाल सेना का निर्माण किया और क्रांतिकारी आधार क्षेत्रों की स्थापना की। तथापि उसने दुस्साहसी गलतियों को फिर दोहराया जिससे दक्षिणी चीन में उसकी सेना और सोवियत सरकारों को भारी क्षति उठानी पड़ी।[17]

1935 के बाद, कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी त्रुटियों में सुधार किया, नए संयुक्त मोरचे का नेतृत्व करते हुए जापान विरोधी युद्ध में विजय प्राप्त की, और उसके बाद क्वोमिन्तांग के विरुद्ध क्रांतिकारी गृहयुद्ध लड़ा और विजय के पश्चात चीनी जनवादी गणतंत्र की स्थापना की। माओ का कहना है :

> इससे भी अधिक बुनियादी बात...दोनों पार्टियों के वर्गीय आधार और उससे उत्पन्न अंतर्विरोधों की जांच करना है जो प्रत्येक पार्टी तथा अन्य शक्तियों के बीच विभिन्न कालों में उभरकर आए।...कम्युनिस्ट पार्टी के साथ पहले चरण में अपने प्रथम सहयोग के समय क्वोमिन्तांग का विदेशी साम्राज्यवाद के साथ अंतर्विरोध था और इसीलिए वह साम्राज्यवाद विरोधी दल था: दूसरी ओर देश के अंदर जनता के विशाल जनसमूहों से भी क्वोमिन्तांग का अंतर्विरोध था।...जिस काल में उसने कम्युनिस्ट विरोधी युद्ध लड़ा, क्वोमिन्तांग ने साम्राज्यवाद और सामंतवाद के साथ, जनता के विशाल जनसमूहों के विरुद्ध, गठबंधन कर लिया...इसके कारण जनता और उसके बीच अंतर्विरोध और भी तेज हो गए।...जहां तक कम्युनिस्ट पार्टी की बात है, वह सदैव साम्राज्यवाद और सामंतवाद के खिलाफ जनता के विशाल जनसमूहों के साथ पंक्तिबद्ध खड़ी रही है।[18]

इसके बावजूद कम्युनिस्ट पार्टी ने समयानुसार राजनीतिक परिस्थितियों के बदलने पर क्वोमिन्तांग तथा अन्य शक्तियों के साथ गठबंधन और संघर्ष की नीतियों में परिवर्तन किए।

कुछ अन्य सैद्धांतिक सवाल

अंतर्विरोधों की विशिष्टता के विषय में दो और बातें विचारणीय हैं। पहली बात है मुख्य अंतर्विरोध और दूसरी बात है किसी अंतर्विरोध का मुख्य पहलू। उदाहरण के लिए पूंजीवादी समाज में दो सामाजिक शक्तियां, बुर्जुआ वर्ग और सर्वहारा वर्ग, जिनमें अंतर्विरोध होता है, मुख्य अंतर्विरोध का निर्माण करते हैं। दूसरे अंतर्विरोध जैसे अवशिष्ट सामंती वर्ग और पूंजीपति वर्ग के बीच में, निम्न बुर्जुआ किसानों और बुर्जुआ वर्ग के बीच में, मजदूरों और किसानों के बीच में, एकाधिकारी पूंजीपतियों और शेष पूंजीपतियों के बीच में, बुर्जुआ लोकतंत्र और बुर्जुआ फासीवाद के बीच में, तथा साम्राज्यवाद और उपनिवेशी जनता के बीच में इन सभी गौण अंतर्विरोधों को मुख्य अंतर्विरोध प्रभावित या निर्धारित करता है।

चीन जैसे अर्ध-उपनिवेशी देश में, मुख्य और गौण अंतर्विरोधों का आपसी संबंध अपेक्षाकृत ज्यादा जटिल तसवीर प्रस्तुत करता है। चीन जैसे अर्ध-उपनिवेश में साम्राज्यवादी आक्रमण के समय, उसके विभिन्न सामाजिक वर्ग, कुछ देशद्रोहियों को छोड़कर, अस्थायी रूप से राष्ट्रीय युद्ध में एकजुट हो सकते हैं और साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ सकते हैं। इस परिस्थिति में सभी देशभक्त वर्गों से आए राष्ट्रवादी रक्षाकर्मियों और साम्राज्यवादी हमलावरों के बीच की लड़ाई मुख्य अंतर्विरोध बन जाती है और सभी अंतर्वर्गीय अंतर्विरोध गौण हो जाते हैं। चीन में ऐसी ही स्थिति 1840 के अफीम युद्ध के समय, 1900 के यी हो तुआन युद्ध के समय और 1937 से 1945 के बीच चीन-जापान युद्ध के समय थी।

कहना न होगा कि परिस्थितियों के बदलने से अंतर्विरोधों का चरित्र भी बदल जाता

है। जब साम्राज्यवाद किसी राष्ट्र का शोषण राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक तरीकों से करता है तो अर्ध-उपनिवेशों के शासक वर्ग साम्राज्यवाद के सामने आत्मसमर्पण कर देते हैं और पराधीन वर्गों के संयुक्त उत्पीड़न के लिए गठबंधन कर लेते हैं। इस परिस्थिति में संपूर्ण जनता गृहयुद्ध का सहारा लेती है और सामंतवादियों और उनके संरक्षक साम्राज्यवादियों के खिलाफ संघर्ष करती है। चीन में ऐसा ही संघर्ष 1911 की राष्ट्रीय क्रांति में, 1924-27 के क्रांतिकारी युद्ध में और 1946-49 के क्रांतिकारी गृहयुद्ध के दौरान हुआ।

इन युद्धों में साम्राज्यवाद प्रतिक्रियावादियों की सहायता करने के लिए अप्रत्यक्ष तरीकों का सहारा लेता है। युद्ध-सांमतों के आपसी युद्ध भी गौण अंतर्विरोध थे। परंतु उनका सामाजिक चरित्र प्रगतिशील नहीं था क्योंकि विभिन्न प्रतिक्रियावादी शासक समूहों के इन संघर्षों में विचारधाराओं का टकाराव नहीं था। युद्ध-सामंत व्यक्तिगत स्वार्थों और सत्ता के लिए लड़ते थे और सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र में यथास्थिति बनाए रखने का समर्थन करते थे।

जब क्रांतिकारी गृहयुद्ध साम्राज्यवाद और स्थानीय प्रतिक्रियावादियों के अस्तित्व के लिए खतरा पैदा करता है, तो साम्राज्यवाद या तो अंदर से क्रांतिकारी मोरचे में फूट डाल देता है, या स्थानीय प्रतिक्रांतिकारियों की सहायता करने के उद्देश्य से सैनिक हस्तक्षेप करता है। च्यांग काई शेक ने 1927 में शंघाई विद्रोह द्वारा क्रांतिकारी मोरचे को छिन्न-भिन्न कर दिया। रूसी क्रांति के दौरान विभिन्न पूंजीवादी देशों ने सैनिक हस्तक्षेप किया जिसका उद्देश्य रूसी प्रतिक्रियावादियों का समर्थन करना और बोल्शेविक सरकार को सत्ता से हटाना था। इस संबंध में माओ का विचार है :

> ऐसे समय में विदेशी साम्राज्यवादी और देशी प्रतिक्रियावादी एक साथ एक ध्रुव पर खड़े हो जाते हैं जबकि जनता के सभी जनसमूह दूसरे ध्रुव पर खड़े होते हैं। इस तरह दोनों के बीच मुख्य अंतर्विरोध स्थापित हो जाता है। यह अंतर्विरोध दूसरे अंतर्विरोधों के विकास को निर्धारित या प्रभावित करता है।...चाहे कुछ भी हो, इसमें बिलकुल संदेह नहीं है कि प्रक्रिया के विकास के प्रत्येक चरण में केवल एक मुख्य अंतर्विरोध होता है, जो उसमें प्रमुख भूमिका निभाता है।[19]

किसी भी अंतर्विरोध में, चाहे वह मुख्य हो या गौण, क्या उसके दो अंतर्विरोधी पहलुओं के वजन को बराबर माना जा सकता है? माओ का जवाब है कि नहीं। किसी भी अंतर्विरोध में. अंतर्विरोधी पहलुओं का विकास हमेशा विषम होता है। उनकी प्रकट साम्यावस्था सापेक्ष और अस्थायी होती है, जबकि उनका असंतुलन बुनियादी और स्थायी चीज है। किसी भी अंतर्विरोध के विकास में उसका मुख्य पहलू ही निर्णायक और निर्धारक भूमिका निभाता है। परंतु यह परिस्थिति स्थिर नहीं है। किसी अंतर्विरोध के मुख्य और गौण पहलू एक दूसरे में रूपांतरित भी हो सकते हैं और इसके अनुसार उस चीज के चरित्र में भी परिवर्तन हो जाता है।

पूंजीवादी समाज में पूंजीवाद की स्थितियों में परिवर्तन हुआ है। पहले यह पुरानी सामंतवादी व्यवस्था में एक अधीनस्थ ताकत था और नए पूंजीवादी ढांचे के अंतर्गत यह प्रभुत्वशाली शक्ति में रूपांतरित हो गया। तदनुसार समाज के चरित्र में भी परिवर्तन हुआ और सामंतवादी समाज पूंजीवादी समाज में बदल गया। इसी प्रकार जो सामंती शक्तियां पहले बलवान थीं, पहले कमजोर हुईं और नए पूंजीवादी युग में फिर उनको नष्ट कर दिया गया। बुर्जुआ वर्ग, जिसकी भूमिका प्रारंभिक पूंजीवाद में प्रगतिशील थी, पूंजीवाद के अंतिम चरण में प्रतिक्रियावादी बन गया और तदनुसार उसकी भूमिका भी अधोगामी हो गई और अंत में सर्वहारा वर्ग समाजवादी क्रांति द्वारा उसे सत्ता च्युत भी कर सकता है। चीन पर नजर डालते हुए माओ व्याख्या करते हैं :

> जिन परिस्थितियों में चीन को एक अर्ध-उपनिवेश बनाया गया, उसमें साम्राज्यवाद ही अंतर्विरोध के अंतर्गत मुख्य स्थिति पर आसीन है अर्थात उसका मुख्य पहलू है। ...परंतु यह परिस्थिति अनिवार्यतः बदलेगी...साम्राज्यवाद का उन्मूलन होगा और पुराना चीन अनिवार्य रूप से नए चीन में बदल जाएगा।...पुराने सामंती जमींदार वर्ग को भी उखाड़ फेंका जाएगा, और शासक की स्थिति से वह शासित की स्थिति में आ जाएगा; और इस वर्ग की भी क्रमशः मौत हो जाएगी। सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में शासित जनता भविष्य में शासक बन जाएगी। उस स्थिति में चीनी समाज की प्रकृति में भी परिवर्तन हो जाएगा और पुराना अर्ध-उपनिवेशी और अर्ध-सामंती समाज 'नव-जनवादी' समाज में परिवर्तित हो जाएगा।[20]

चीन के आधुनिक इतिहास में पारस्परिक रूपांतरण के अनेक दृष्टांत हैं। छिंग राजवंश ने चीन पर लगभग तीन सदियों तक शासन किया था परंतु सुन यातसेन के नेतृत्व में क्रांतिकारी तुंग मेंग हुई ने 1911 में उसको सत्ता से उखाड़ दिया। 1924-27 के क्रांतिकारी युद्ध में,क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट गठबंधन की क्रांतिकारी सेनाएं दक्षिण में दुर्बल स्थिति से सबल स्थिति में पहुंच गईं और उसके बाद उन्होंने उत्तरी अभियान में विजय प्राप्त की और उत्तरी युद्ध-सामंत, जो कभी ताकतवर थे, पराजित हो गए।

1927-36 के काल में कम्युनिस्ट पार्टी के सैन्य बलों को क्वोमिन्तांग आक्रमणों से भारी क्षति पहुंची और 'लंबी यात्रा' के दौरान उन्हें लगभग नष्ट कर दिया गया। परंतु अपनी कुछ दुस्साहसी और अवसरवादी त्रुटियों को सुधारने के बाद मजबूत सैनिक और राजनीतिक ताकत के रूप में उनका फिर अभ्युदय हुआ। मुक्त आधार क्षेत्रों में जमींदारों की शासकीय स्थिति का अंत हो गया तथा किसानों और उनके साथियों को शासकीय स्थिति प्राप्त हुई। द्वंद्वात्मक भौतिकवाद इसलिए यह जरूरी समझता है कि मुख्य और गौण अंतर्विरोधों पर तथा उनके मुख्य और गौण पहलुओं पर सावधानी से विचार करते हुए ही विकास की प्रक्रिया का परीक्षण किया जाए।

एकता, संघर्ष और शत्रुता

लेनिन का कहना था :

> विपरीत तत्व कैसे एकतायुक्त हो सकते हैं और हो जाते हैं (वे ऐसे कैसे बन सकते हैं), किन दशाओं में वे एक दूसरे में रूपांतरिक होकर एकतायुक्त बनते हैं—मनुष्य का मस्तिष्क इन विपरीत तत्वों को मृत या कठोर क्यों न समझे बल्कि उन्हें जीवंत, सापेक्ष और गतिशील क्यों समझे और माने, जो खुद को एक दूसरे में रूपांतरित करने में सक्षम हैं।[21]

माओ के अनुसार एकता, एकात्मता संघटना, अंत:प्रवेश, अंतर्निभरता, अंतस्संबंध या परस्पर सहयोग—ये सभी शब्द एक ही अर्थ के द्योतक हैं। माओ आगे बताते हैं :

> प्रत्येक प्रक्रिया में अंतर्विरोधी पहलू एक दूसरे से अलग रहते हैं, एक दूसरे से संघर्ष करते हैं और एक दूसरे के विरोधी होते हैं किसी अपवाद के बिना, वे सभी चीजों के विकास की प्रक्रिया में और संपूर्ण मानवीय चिंतन में अंतर्निहित होते हैं।[22]

एक पहलू का अस्तित्व अपने विरोधी पहलू के अस्तित्व की पूर्वापेक्षा करता है। जमींदारों का सहअस्तित्व किसानों के साथ होता है, पूंजीपतियों का सर्वहारा वर्ग के साथ और साम्राज्यवादियों का अपने उपनिवेशों के साथ। इसी प्रकार किसानों की स्थिति में जमींदारों की स्थिति, सर्वहारा वर्ग के अस्तित्व में पूंजीपतियों की स्थिति और उपनिवेशों के अस्तित्व में साम्राज्यवाद की मौजूदगी अभिप्रेत है। परंतु अस्तित्व की अंतर्निर्भरता से इस मामले की समाप्ति नहीं हो जाती। इससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण इन पहलुओं का एक दूसरे में रूपांतरण है। किसी चीज के अंदर प्रत्येक अंतर्विरोधी पहलू में क्षमता होती है कि वह खुद को अपने से विपरीत पहलू में रूपांतरित कर सके। अंतर्विरोध की एकता का यह दूसरा अर्थ है। क्रांति के द्वारा, सर्वहारा वर्ग, एक पराधीन वर्ग, शासक वर्ग में रूपांतरित हो जाता है, जैसा कि 1917 की रूसी क्रांति के समय हुआ था। ऐसा ही 1949 में चीनी क्रांति के अवसर पर हुआ। पूंजीपति, जो पूंजीवादी समाज में एक शासक वर्ग है, समाजवादी क्रांति के बाद अपना यह पद खो देते हैं। इतिहास में युद्ध और शांति का निरंतर रूपांतरण होता रहता है। शत्रु राष्ट्र मैत्री के सूत्र में बंध जाते हैं और मित्र राष्ट्र विरोधी शत्रुओं मे रूपांतरित हो जाते हैं।

एकता और संघर्ष के संबंध की व्याख्या करते हुए लेनिन ने कहा था :

> एकता (संघटना, एकात्मता, समान क्रिया) विपरीत तत्वों के लिए सशर्त, अस्थिर, अस्थायी और सापेक्ष होती है। एक दूसरे से बिलकुल अलग विपरीत तत्वों का संघर्ष निरपेक्ष होता है, जिस प्रकार गति और विकास निरपक्ष होते हैं।[23]

जब कोई चीज गति के पहले चरण में होती है तो परिवर्तन केवल परिमाणात्मक होता है।

जब वह चीज गति के दूसरे चरण में पहुंचती है तो उसमें गुणात्मक परिवर्तन होता है। सामंतवादी समाज कुछ सदियों तक केवल क्रमिक अथवा परिमाणात्मक परिवर्तनों से गुजर रहा था। परंतु 1789 की फ्रांसीसी क्रांति ने सामंती समाज में गुणात्मक परिवर्तन कर दिया और उसे एक बुर्जुआ समाज में रूपांतरित कर दिया। इसलिए, सामाजिक व्यवस्थाओं में रूपातंरण के लिए क्रांतिकारी संघर्षों की आवश्यकता होती है। इसलिए माओ का कहना है : 'एकता में संघर्ष निहित होता है, विशिष्टता में सार्वभौमिकता अभिप्रेत होती है, और वैयक्तिकता में सामान्यता का अस्तित्व छिपा होता है।'[24]

लेनिन के एक उद्धरण के अनुसार, '... निरपेक्ष सापेक्ष के अंदर होता है।'[25]

विपरीतों के संघर्ष में शत्रुता की समस्या भी शामिल है। माओ का कहना है कि शत्रुता विपरीतों के संघर्ष का ही एक स्वरूप है। मानवीय इतिहास में वर्गों के बीच शत्रुता विपरीतों के संघर्ष की ही एक अभिव्यक्ति है। ऐसे वर्ग लंबे समय तक उसी समाज में अंतर्विरोधी संबंध होने के बावजूद, शत्रुता की खुली अभिव्यक्ति किए बिना, सहअस्तित्व की स्थिति में रह सकते हैं। सामंतवादी या पूंजीवादी समाज में संघर्ष प्रारंभ में शत्रुतारहित हो सकता है परंतु फिर एक चरण आता है जब यह संघर्ष क्रांतिकारी हिंसा का स्वरूप धारण कर लेता है और इस प्रकार वह शत्रुतायुक्त अंतर्विरोध में रूपांतरित हो जाता है।

जब तक समाज में वर्गों का अस्तित्व कायम है, तब तक सही और गलत विचारों के बीच के अंतर्विरोध कम्युनिस्ट पार्टी के अंदर वर्गीय अंतर्विरोधों के रूप में प्रतिबिंबित होते रहेंगे। प्रारंभ में वे केवल बहस के मुद्दे होंगे और शत्रुतारहित अंतर्विरोध ही होंगे। स्तालिन के शासन तंत्र में, विचारधारा संबंधी और नीतिगत विवादों ने बाद में शत्रुतापूर्ण रक्तिम कलहों का रूप ग्रहण कर लिया। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने प्रारंभ में 'वामपंथी' और 'दक्षिणपंथी' गलतियों का सुधार आलोचना और आत्मालोचना द्वारा करना चाहा परंतु सांस्कृतिक क्रांति और उसके प्रति तेंग श्याओ पिंग के दृष्टिकोण ने राजनीति और विचारधारा संबंधी विवादों को शत्रुतापूर्ण अंतर्विरोध में बदल दिया। फलतः चीन में भी हिंसा द्वारा विरोधियों के दमन की नीति अपनाई गई। लेनिन ने कहा था : 'शत्रुता और अंतर्विरोध एक या एक जैसी चीज बिलकुल नहीं है। समाजवाद में शत्रुता का लोप हो जाएगा किंतु अंतर्विरोध शेष रहेगा।'[26]

अंतर्विरोधों का सही समाधान

माओ ने 1957 में इस विषय पर एक निबंध लिखा जिसमें उन्होंने समाजवादी चीन के संदर्भ में जनता के बीच के अंतर्विरोधों का विवेचन किया। उनका विश्वास था कि चीनी समाज के सामने दो प्रकार के नए अंतर्विरोध उभरकर आए हैं—'हमारे तथा शत्रु के बीच और जनता के बीच के अंतर्विरोध। दोनों की प्रकृति बिलकुल अलग है।'[27] जनता और उसके शत्रु की संकल्पना चीनी राष्ट्रीय क्रांति के विभिन्न कालों में बदलती रही है, जैसे कृषि क्रांति, देशभक्तिपूर्ण युद्ध, जनवादी गणतंत्र के लिए गृहयुद्ध; और अब समाजवादी निर्माण के लिए संघर्ष के समय यह बदलती रही है। माओ ने कहा :

> वर्तमान चरण में, जो समाजवाद के निर्माण का काल है, वे सभी वर्ग, तबके और सामाजिक समूह, जो समाजवादी निर्माण के उद्देश्य के पक्ष में हैं, उसका समर्थन करते हैं और उसके लिए काम करते हैं— वे सभी जनता की श्रेणी में शामिल हैं, जबकि ऐसी सामाजिक शक्तियां और समूह जो समाजवादी क्रांति का विरोध करते हैं और समाजवादी निर्माण पर घातक प्रहार करते हैं—वे सभी जनता के दुश्मन हैं।[28]

'हमारे और दुश्मन' के बीच का अंतर्विरोध शत्रुतापूर्ण है। श्रमजीवी जनता के आपसी अंतर्विरोध शत्रुतारहित हैं परंतु शोषक राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग और शोषित श्रमिक वर्ग के बीच शत्रुतारहित और शत्रुतापूर्ण दोनों प्रकार के अंतर्विरोध हैं। मजदूरों, किसानों, बुद्धिजीवियों और देशभक्त बुर्जुआ उद्योगपतियों के अंतर्वर्गीय और प्रत्येक वर्ग के आंतरिक अंतर्विरोध सामान्य रूप से शत्रुतारहित हैं लेकिन उनमें कभी-कभी शत्रुता की अभिव्यक्ति भी संभव है। इसके अलावा, वर्तमान सरकार और जनता के बीच कुछ अंतर्विरोध अब भी मौजूद हैं। इनमें अधिकांश शत्रुतारहित हैं। यह बात हंगरी में 1956 के विद्रोह के बाद सरकार के प्रति चीनी जनता की निष्ठा से प्रमाणित हो गई क्योंकि प्रतिक्रांतिकारियों के प्रचार के बावजूद चीन में ऐसी कोई उथल-पुथल नहीं हुई।

चूंकि दोनों अंतर्विरोधों की प्रकृति भिन्न है, इसलिए उनका समाधान भी भिन्न तरीकों से किया जाना चाहिए। इस प्रसंग में माओ का कहना है :

> जनता का जनवादी अधिनायक तंत्र दो तरीकों से काम करता है। दुश्मनों के प्रति यह तानाशाही के तरीके का इस्तेमाल करता है, अर्थात जब तक जरूरत हो वह उन्हें राजनीतिक गतिविधि में भाग लेने की अनुमति नहीं देता और उन्हें जनवादी सरकार के कानूनों के पालन के लिए बाध्य करता है। वह उन्हें श्रम करने के लिए और इससे श्रम द्वारा नए मानवों में अपना रूपांतरण करने के लिए प्रेरित करता है। इसके विपरीत, जनता के प्रति वह लोकतंत्र का तरीका अपनाता है, उस पर दबाव नहीं डालता, उसे राजनीति में भाग लेने के लिए प्रेरित करता है, वह उन्हें ऐसा करने और वैसा न करने का कोई हुक्म नहीं देता बल्कि लोकतंत्र द्वारा उन्हें शिक्षा देता है और समझाने की चेष्टा करता है। यह शिक्षा जनता की स्व-शिक्षा है और उसका बुनियादी तरीका आलोचना और आत्मलोचना पर आधारित है।[29]

माओ त्सेतुंग के अनुसार, समाजवादी समाज में अंतर्विरोध सामंतवादी या पूंजीवादी समाज के अंतर्विरोधों से बुनियादी तौर से भिन्न होते हैं। पूंजीवादी समाज में, अंतर्विरोधों का नतीजा हिंसक संघर्षों और प्रचंड शत्रुताओं के रूप में दिखाई पड़ता है। उनकी अभिव्यक्ति तीखे संघर्षों के माध्यम से होती है, जिनका समाधान पूंजीवादी व्यवस्था के अंतर्गत संभव नहीं है। इनके समाधान के लिए समाजवादी क्रांति की आवश्यकता पड़ती है। इसके विपरीत, समाजवादी समाज के अंतर्गत अंतर्विरोधों की स्थिति बिलकुल भिन्न होती है

क्योंकि उनका चरित्र सामान्य रूप से शत्रुतारहित होता है और उनका समाधान स्वयं समाजवादी व्यवस्था के अंतर्गत किया जा सकता है।

प्रतिक्रांतिकारियों का दमन विपरीत तत्वों का ऐसा संघर्ष है जो जनता और प्रतिक्रियावादियों के बीच शत्रुतापूर्ण अंतर्विरोध पर आधारित है। जमींदारी व्यवस्था का उन्मूलन, कृषि का समूहीकरण, कम्यूनों की स्थापना, सांस्कृतिक क्रांति की प्रक्रिया, तेंग श्याओ पिंग के नेतृत्व की पुन: स्थापना, लिन प्याओ गुट का दमन, चियांग छिग और उसके साथियों का दमन, शुद्धीकरण अभियान, छात्रों-युवाओं का जनवादी आंदोलन, वामपंथी दुस्साहस और दक्षिणपंथी अवसरवाद का दमन इत्यादि घटनाएं राजनीतिक, आर्थिक और वैचारिक स्तरों पर शत्रुतापूर्ण अंतर्विरोधों को द्योतित करती हैं।

यूरोप में कम्युनिस्ट सरकारों के पतन ने अनेक अंतर्विरोधों को उजागर किया जो जनमत की दृष्टि से बहुत समय तक ओझल रहे थे। इनकी अब विस्तार से जांच-पड़ताल की जानी चाहिए। अंतर्विरोध के सिद्धांत में हीगेल की भाषा और शब्दावली का जरूरत से ज्यादा उपयोग हुआ है और सचाई का बयान अपेक्षाकृत सरल भाषा में भी हो सकता है। तथापि, इस कथन का यह उद्देश्य नहीं है कि इतिहास का अध्ययन अद्वंद्ववादी पद्धति से किया जाए या उसमें अंतर्विरोधों का उपयोग न किया जाए।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. वी.आई. लेनिन, *कांस्पेक्टस आफ हीगेल्स लेक्चर्स आन दि हिस्टरी आफ फिलासफी*, खंड XXXVIII, पृ. 249.
2. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड I, पृ. 312.
3. तुंग शेंग-शू की एक कहावत (179-104 ई पू.) हान राजवंश कालीन कन्फ्यूशियसवाद का एक प्रसिद्ध अधिवक्ता.
4. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड I, पृ. 372.
5. वही, पृ. 314-315
6. फ्रेडरिक एंगेल्स, 'डायलेक्टिक्स क्वांटिटी एंड क्वालिटी', *एंटी ड्यूहरिंग*, पृ. 166.
7. वी. आई. लेनिन, 'आन दि क्वेश्चन आफ डायलेक्टिक्स', *कलेक्टेड वर्क्स*, खंड XXXVIII, पृ. 357-58
8. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड I, पृ. 316-17.
9. लेनिन का उद्धरण, वही, पृ. 317.
10. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, पृ. 317
11. वही, पृ. 321.
12. वही, पृ. 322.
13. वही, पृ. 251
14. वही, पृ. 323.
15. वही, पृ. 307.
16. वी.आई. लेनिन, 'वंस अगेन आन दि ट्रेड यूनियंस', *सेलेक्टेड वर्क्स*, खंड IX पृ. 66.

17. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, पृ. 324.
18. वही, पृ. 327.
19. वही, पृ. 332.
20. वही, पृ. 334.
21. वी. आई. लेनिन, 'कांस्पेक्टस आफ हीगेल्स साइंस आफ लाजिक', *कलेक्टेड वर्क्स*, खंड XXXVIII, पृ. 97-98.
22. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड I, पृ. 337.
23. वी.आई.लेनिन, 'आन दि क्वेश्चन आफ डायलेक्टिस', *कलेक्टेड वर्क्स*, खंड XXXVIII, पृ 358.
24. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड I, पृ. 343.
25. वी.आई. लेनिन, 'आन दि क्वेश्चन आफ डायलेक्टिस', *कलेक्टेड वर्क्स*, खंड XXXVIII, पृ. 358.
26. वी. आई. लेनिन, 'रिमार्क्स आन एन.आई. बुखारिन्स *इकानामिक्स आफ दि ट्रांजीशनल पीरियड*', *सेलेक्टेड वर्क्स*, खंड XI, पृ. 357
27. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड V, पृ. 384.
28. वही, पृ. 385.
29. वही, पृ. 394.

अध्याय ग्यारह

शुद्धीकरण अभियान

1942 के अभियान की पृष्ठिभूमि

1941 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी दो मोरचों पर संघर्ष कर रही थी। 4 जनवरी 1941 को नई चौथी आर्मी के मुख्यालय पर तैनात 9,000 सैनिकों को किसी चेतावनी के बगैर क्वोमिन्तांग की फौजों ने घेर लिया और दस दिनों तक लड़ाई के बाद उनमे से अधिकांश को मार दिया। इस घटना के बाद कम्युनिस्ट पार्टी और क्वोमिन्तांग के बीच जापान विरोधी युद्ध में किसी वास्तविक सहयोग की संभावना का अंत हो गया। इसी समय जापानियों ने भी कम्युनिस्टों पर अपने आक्रमण और ज्यादा तेज कर दिए, कम्युनिस्ट 'अपना सौ रेजीमेंटों का हमला' दोहरा न सकें, इसलिए जापानियों ने जुलाई 1941 में तीन बदनाम नीतियों को (सब कुछ जलाओ, सबको जान से मारो, सब कुछ लूट लो) उत्तरी चीन में कम्युनिस्ट आधार क्षेत्रों पर लागू कर दिया। इसके कारण आगजनी और जनहत्या की घटनाओं ने किसानों के मन में उनसे लड़ने का संकल्प और भी दृढ़ कर दिया। इसने कम्युनिस्टों की स्थिति और भी सुदृढ़ कर दी।

क्वोमिन्तांग ने कम्युनिस्ट आधार क्षेत्रों की पूरी आर्थिक नाकाबंदी कर रखी थी। इससे चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के सामने कठिन आर्थिक और राजनीतिक समस्याएं उत्पन्न हो गईं। आर्थिक चुनौती का सामना करने के लिए पार्टी ने स्वयं अपने क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ाने के सफल प्रयास किए। लाल सेना ने कृषि और औद्योगिक उत्पादन में हाथ बंटाया। पार्टी ने किसानों के बीच आपसी मदद की टीमों को प्रोत्साहन दिया। 'राजनीतिक चुनौती का सामना करने के लिए पार्टी ने चेंग-फेंग अर्थात शुद्धीकरण अभियान का सहारा लिया और फरवरी 1942 में इस अभियान की औपचारिक घोषणा कर दी।'[1]

शुद्धीकरण अभियान के दो उद्देश्य थे। इनमें किसी की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती थी। एक ओर, उसका उद्देश्य कठिन परिस्थिति में कम्युनिस्ट पार्टी में अनुशासन और एकजुटता को मजबूत करना, नए पार्टी काडरों को मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धांतों और व्यवहार का न्यूनतम ज्ञान प्रदान करना और पार्टी के सदस्यों की विचारधारात्मक चेतना बढ़ाना था। दूसरी ओर, जैसा स्टुअर्ट श्रैम का कहना है, उसका उद्देश्य विशेष पाठ्यक्रम की सहायता से माओ त्सेतुंग के चिंतन के विशिष्ट पहलुओं से सभी पार्टी कार्यकर्ताओं को परिचित कराना था। शुद्धीकरण अभियान एक तरह से मार्क्सवाद का 'चीनीकरण' करना चाहता था। माओ ने अक्टूबर 1938 में छठे प्लेनम के दौरान इस 'चीनीकरण' की परिभाषा निम्नलिखित शब्दों में की थी :

> हजारों साल से हमारे महान राष्ट्र के इतिहास में हमारी राष्ट्रीय विशिष्टताएं और अनेक बहुमूल्य गुणवत्ताएं दिखाई पड़ी हैं।... हम मार्क्सवादी इतिहासवादी हैं। हमें इतिहास का अंग-भंग नहीं करना चाहिए। कन्फ्यूशियस से लेकर सुन यातसेन तक समीक्षक की दृष्टि से हमें उसका सारतत्व समझना चाहिए, और इस अतीत में जो कुछ मूल्यावन है अपने को उसका उत्तराधिकारी बनाने की चेष्टा करनी चाहिए।... कम्युनिस्ट मार्क्सवादी अंतर्राष्ट्रीयतावादी होता है, परंतु मार्क्सवाद को राष्ट्रीय स्वरूप ग्रहण करना चाहिए...अगर चीनी कम्युनिस्ट, जो महान चीनी राष्ट्र का अंग है, जो रक्त और मांस द्वारा जनता से जुड़ा हुआ है, मार्क्सवाद की चर्चा करता है जिसमें चीनी विशिष्टताओं के लिए कोई जगह नहीं है, तो यह मार्क्सवाद खोखली अमूर्तता है। इसीलिए मार्क्सवाद का चीनीकरण ... ऐसी समस्या है जिसे समझना आवश्यक है और इसका समाधान पूरी पार्टी को तुरंत करना चाहिए।[2]

5 मई 1941 को पार्टी कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए माओ ने अपने भाषण में इसी विषय पर खास जोर दिया :

> जब मार्क्सवाद लेनिनवाद के कुछ विद्वानों को बोलना होता है, तो वे हमेशा यूनान की बातें करते हैं ; वे स्मृति से मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन के उद्धरणों को दोहराते हैं, परंतु अपने पूर्वजों के विषय में क्षमा मांगते हुए कहते हैं कि वे सब कुछ भूल गए हैं।... अतीत के कुछ दशकों में विदेशों से लौटने वाले विद्यार्थी यही गलती करते थे।[3]

फरवरी 1942 में शुद्धीकरण अभियान आरंभ करते हुए, माओ त्सेतुंग ने सामान्य रूप से पार्टी के औपचारिकतावाद और विशेष रूप से विदेशी औपचारिकतावाद की भरपूर आलोचना की। पिछले साल माओ ने उन विद्यार्थियों की निंदा की थी जो यूरोप, अमरीका और जापान से लौटकर आए थे, परंतु जिस 'विदेशी औपचारिकतावाद' का वे इस समय विरोध करना चाहते थे वह सोवियत माडलों की नकल था। इस प्रकार शुद्धीकरण अभियान आंशिक रूप से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में अतिसोवियत (रूसी) प्रभाव के विरुद्ध भी लक्षित था। कम्युनिस्ट पार्टी के एक अधिकृत इतिहास में कहा गया है कि इस अभियान का निशाना 'कामरेड वांग मिंग जैसे मताग्रहवादी थे' जो 'पार्टी के ऐतिहासिक अनुभव से अपरिचित थे' और 'मार्क्सवादी कृतियों से सिर्फ शब्दों या वाक्यांशों को उद्धृत कर सकते थे।'[4]

चीन में कम्युनिस्ट पार्टी को स्थापित हुए दो दशकों से ज्यादा हो चुके थे। उसने न सिर्फ महान विजयें प्राप्त की थीं, बल्कि गंभीर नुकसान भी उठाए थे। वांग मिंग और उसके गुट की मताग्रही गलतियों ने पार्टी को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचाया था। 1935 में त्सुनयी सम्मेलन से छठे प्लेनरी सेशन तक कम्युनिस्ट पार्टी ने कृषि क्रांतिकारी युद्ध के अंतिम वर्षों में की गई 'वामपंथी' गलतियों की आलोचना की थी और वांग मिंग की गलतियों को सुधारा था और उसके बाद जापान विरोधी युद्ध के शुरू के वर्षों में वांग मिंग

ने 'दक्षिणपंथी' अवसरवादी गलतियां कीं, जिनकी पार्टी ने आलोचना की और उन्हें सही किया। तथापि, कम्युनिस्ट पार्टी ने अभी तक 'वामपंथी' दुस्साहसी गलतियों और 'दक्षिणपंथी' अवसरवादी भटकाव के मूल कारणों की व्याख्या नहीं की थी और न ही उन्हें व्यवस्थित तरीके से पार्टी के साधारण कार्यकर्ताओं को समझाने का प्रयत्न किया था। इसीलिए शुद्धीकरण अभियान चलाने की जरूरत महसूस की गई जिससे पार्टी के कार्यकर्ताओं को इस बारे में पूर्ण सत्य का ज्ञान कराया जाए। तभी वे भविष्य में ऐसे विचलनों से बच सकते थे।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षा आंदोलन

पार्टी के स्तर पर शुद्धीकरण आंदोलन व्यापक रूप से फरवरी 1942 में शुरू किया गया। इसका आरंभ माओ त्सेतुंग के दो भाषणों से हुआ : 'पार्टी की कार्यशैली को ठीक करो' और 'घिसे-पिटे पार्टी-लेखन का विरोध करो।' कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने माओ की अध्यक्षता में सामान्य अध्ययन समिति का गठन किया, जो शिक्षा आंदोलन के मार्गदर्शन के लिए कार्यक्रम बनाए। इस आदोलन के पांच चरण थे :

1. आंदोलन का महत्व समझना;
2. अध्ययन शैली की जांच-पड़ताल;
3. पार्टी की कार्यशैली का परीक्षण;
4. लेखन शैली की जांच- पड़ताल; और
5. पार्टी के ऐतिहासिक अनुभव की समीक्षा।

यह संपूर्ण पार्टी में एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी आंदोलन था। इसका लक्ष्य पार्टी की कार्यशैली में सुधार करना और उस विचारधारा के जीवंत सिद्धांतों के साथ समन्वय करना था, जिसका माओ ने चीन की विशिष्ट आवश्यकताओं के संदर्भ में नया रूप दिया था।

शुद्धीकरण अभियान का सबसे सार्थक कार्य आत्मपरकता के खिलाफ संघर्ष था। ऐतिहासिक दृष्टि से, आत्मपरकता ने विगत कुछ समय से चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को प्रभावित और दूषित कर रखा था। 'वामपंथी' दुस्साहस और 'दक्षिणपंथी' अवसरवाद दोनों का उद्‌गम आत्मपरकतावाद ही था। इसमें सिद्धांत को व्यवहार से अलग कर दिया जाता है और आत्मपरक सोच का वस्तुपरक तथ्यों से विच्छेद हो जाता है। ऐसी गलतियां करने वाले नेता और कार्यकर्ता समस्याओं का हल या तो किताबों में या अन्य देशों के अनुभवों में ढूंढ़ते थे तथा अपने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवेश के तथ्यों की उपेक्षा करते थे। इसका नतीजा पार्टी और लाल सेना के लिए कुछ सीमा तक घातक सिद्ध हुआ।

माओ त्सेतुंग ने वस्तुपरक तथ्यों के आधार पर विचारों और नीतियों के विकास का

प्रयत्न किया और इस तरह पार्टी को 'वामपंथी' और 'दक्षिणपंथी' विचलनों से होने वाले नुकसान की भरपाई करने की पूरी कोशिश की। संपूर्ण पार्टी को यही करना सीख लेना चाहिए। भविष्य में पार्टी की सफलता आत्मपरकता के इस खतरे के खात्मे पर निर्भर है। अपनी रिपोर्ट 'अध्ययन में सुधार करो' में माओ ने 'तथ्यों से सत्य को खोजने' के महत्व पर बल दिया। माओ ने बताया :

> वस्तुपरक रूप से केवल तथ्यों का अस्तित्व होता है, सत्य का अर्थ उनके आंतरिक संबंधों से है अर्थात वे नियम जो उनमें निहित होते हैं...और खोजने का अर्थ अध्ययन करना है...हमें आत्मपरक कल्पना पर, क्षणिक उत्साह पर, या निर्जीव पुस्तकों पर निर्भर नहीं होना चाहिए, बल्कि उन तथ्यों पर निर्भर होना चाहिए जिनका वास्तविक अस्तित्व होता है। हमें विस्तार से शोध-सामग्री का अध्ययन करना चाहिए और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सामान्य सिद्धांतों से मार्गदर्शन ग्रहण कर सही निष्कर्षों पर पहुंचना चाहिए।[5]

अपने भाषण *पार्टी की कार्यशैली में सुधार करो* में माओ त्सेतुंग ने कहा कि सभी पार्टी सदस्यों को सीख लेना चाहिए कि :

> चीन के इतिहास, और चीन की अर्थनीति, राजनीति, सामरिक मामलों और संस्कृति के गंभीर अध्ययन में मार्क्सवादी दृष्टिकोण, परिप्रेक्ष्य और पद्धति को कैसे लागू करें, और विस्तृत शोध-सामग्री के आधार पर प्रत्येक समस्या का ठोस विश्लेषण करते हुए उसके जरिए फिर सैद्धांतिक निष्कर्ष कैसे निकालें।[6]

माओ ने कहा कि आत्मपरकता पार्टी में घिसे-पिटे सारहीन लेखन को बढ़ावा देती है। अगर इसे सुधारा न जाए तो यह पार्टी में ओजस्वी, क्रांतिकारी चिंतन का रास्ता रोक देगी, तथ्यों से सत्य की खोज में बाधक सिद्ध होगी और आत्मपरक विचारों का खात्मा करने के बजाए उन्हें प्रोत्साहन देगी।

शुद्धीकरण आंदोलन का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य पंथवाद के विरुद्ध संघर्ष था। कम्युनिस्ट पार्टी की एकता की गारंटी केवल विचारों की एकता से नहीं हासिल की जा सकती। उसके लिए सांगठनिक एकता की आवश्यकता भी होती है। जब चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में आत्मपरक सोच का बोलबाला था, तो उसने संगठन के स्तर पर पंथवादी व्यवहार और आदतों को बढ़ावा दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि पार्टी के उन असंतुष्ट सदस्यों का विरोध और दमन किया गया जो अपने चिंतन और व्यवहार में तथ्यपरक वास्तविकता का सम्मान करते थे। त्सुनयी सम्मेलन के बाद पंथवाद पर अंकुश लगा दिया गया। तथापि वह कभी-कभी फिर प्रकट हो जाता था और अल्प मत की प्रवृत्ति के रूप मे उसकी अभिव्यक्ति कम्युनिस्ट पार्टी के आंतरिक और बाह्य संबंधों में हुई।

अपने भाषण *पार्टी की कार्यशैली में सुधार करो* में माओ ने बताया कि पार्टी की आंतरिक पंथवादिता के अवशेष धरातल पर आ गए। इसके अनेक रूप थे और उनका

उद्गम 'पर्वतीय आधार क्षेत्रों की मानसिकता' से हुआ था। जब कम्युनिस्टों ने देश के पहाड़ी इलाकों में अलग-अलग मुक्त क्षेत्र बनाए, तो भौगोलिक अलगाव की वजह से उनमें पंथवाद की प्रवृत्ति पनपी। माओ ने ऐसे विच्छेदवादी तत्वों के पंथवाद की आलोचना करते हुए कहा कि उनकी यह 'आजादी' क्रांति के उद्देश्यों में बाधक है। माओ ने कहा :

> हमें केंद्रीकृत, एकजुट पार्टी का निर्माण करना चाहिए और सभी सिद्धांतहीन, गुटबंदी पर आधारित कलहों को पूरी तौर से खत्म कर देना चाहिए। हमें व्यक्तिवाद और पंथवाद के खिलाफ संघर्ष करना चाहिए जिससे पार्टी अपने साझा लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एकजुट होकर आगे बढ़ सके।[7]

जिस पर्वतीय गढ़ की मानसिकता की माओ ने निंदा की वह गुटों के निर्माण की प्रवृत्ति थी। इसका उदय लगातार छापामार लड़ाई की स्थिति में हुआ था, जिसमें ग्रामीण क्रांतिकारी आधार क्षेत्र बिखरे हुए और एक दूसरे से कटे हुए थे। इनमें अधिकांश क्षेत्रों की स्थापना पहले पहाड़ी इलाकों में हुई थी। ये क्षेत्र, एकाकी पर्वतीय गढ़ की तरह, स्वतंत्र और आत्मनिर्भर इकाई के रूप में कार्य करते थे।

इस प्रकार की मानसिकता से ग्रस्त पार्टी के कार्यकर्ता संपूर्ण के हितों को स्वयं अपने भाग के हितों की तुलना में कम महत्व देते थे। यद्यपि शब्दों में वे पार्टी के लिए आदर भाव का प्रदर्शन करते थे लेकिन व्यवहार में अपनी 'आजादी' पर ही जोर देते थे। इस उद्देश्य से वे पार्टी में गुटबंदी करते थे, 'और इस प्रकार बुर्जुआ राजनीतिक दलों की भ्रष्ट कार्य शैली कम्युनिस्ट पार्टी के अंदर ले आते थे।'[8]

पंथवाद की अभिव्यक्ति गैर-पार्टी जनता के साथ कम्युनिस्ट पार्टी के बाह्य संबंधों में भी होती थी। पार्टी के कुछ कार्यकर्ता उनके साथ सहयोग नहीं करते थे और 'बंद दरवाजे' की मानसिकता से ग्रस्त थे। इस मानसिकता का विकास पार्टी में उस वक्त हुआ जब पार्टी में 'वामपंथी विचलनवादी' प्रवृत्ति उभार पर थी।

जनता और पार्टी कार्यकर्ता

शांशी-कांसू निंगशिया सीमांत क्षेत्र की विधानसभा के प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए अपने भाषण में माओ त्सेतुंग ने इस बात पर विशेष बल दिया कि चीनी समाज के दोनों ध्रुवांत बहुत छोटे हैं लेकिन मध्यवर्ती हिस्सा बहुत बड़ा है। पूंजीपति और सर्वहारा वर्ग रूपी दोनों ध्रुवांत अल्पसंख्या में हैं। लेकिन जनता की विशाल बहुसंख्या या तो किसानों की है या मध्य में स्थित निम्न बुर्जुआ वर्ग की इसलिए पार्टी के लिए यह बहुत जरूरी है कि वह इन वर्गों के हितों का पूरा ध्यान रखे और गैर-पार्टी जनता के साथ संसर्ग बढ़ाए। माओ त्सेतुंग ने सलाह दी :

> कम्युनिस्ट पार्टी को समाज के किसी एक वर्ग के लिए नहीं बल्कि संपूर्ण जनता के हितों के लिए कार्य करना चाहिए। कम्युनिस्टों को पार्टी से बाहर के लोगों के विचारों

> को बड़े ध्यान से सुनना चाहिए और उन्हें अपनी बात कहने का पूरा मौका देना चाहिए। अगर वे जो कुछ कहते हैं, वह सही है तो उसका स्वागत करना चाहिए और उनके महत्वपूर्ण विचारों से शिक्षा लेनी चाहिए। अगर वह सही नहीं है तो भी उन्हें अपनी बात खत्म करने का मौका देना चाहिए और जब वे अपनी बात कह चुकें तो उन्हें बहुत धैर्य के साथ सचाई से अवगत कराना चाहिए। कम्युनिस्ट को कभी हठवादी अथवा मदांध नहीं होनी चाहिए।... राज्य के मामले संपूर्ण राष्ट्र के सार्वजनिक मामले होते हैं; वे किसी एक पार्टी या ग्रुप के निजी मामले नहीं होते। इसीलिए कम्युनिस्टों का कर्तव्य है कि वे गैर-पार्टी जनता से लोकतांत्रिक तरीके से सहयोग करें और उन्हें किसी अधिकार से वंचित न करें और न स्वयं सभी चीजों पर अपना एकाधिकार जमाने की कोशिश करें।[9]

राजनीतिक दल के रूप में कम्युनिस्ट पार्टी को राष्ट्र के हित में काम करना चाहिए। इसलिए पार्टी के कार्यकर्ताओं को भी कभी निजी ध्येयों की प्राप्ति की चेष्टा नहीं करनी चाहिए। पार्टी पर जनता की निगरानी होनी चाहिए और उसे लोगों की इच्छाओं का आदर करना चाहिए। उसके काडरों को जनता के बीच में रहना चाहिए, बढ़-चढ़कर नहीं बोलना चाहिए, घमंड नहीं दिखाना चाहिए, या मालिकाना बरताव नहीं करना चाहिए। शुद्धीकरण आंदोलन में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने प्रत्येक स्तर पर अपने कार्यकर्ताओं को विचारधारात्मक और राजनीतिक सिद्धांतों में दीक्षित करने का पूरा प्रयास किया। ल्यू शाओ-छी ने एक पुस्तक *अच्छा कम्युनिस्ट कैसे बनें* लिखी। चेन युन ने एक दूसरी किताब *हाऊ टु बी ए कम्युनिस्ट पार्टी मेंबर* लिखकर बताया कि कम्युनिस्ट पार्टी का सदस्य कैसे बना जाए। इन पुस्तकों का उद्देश्य पार्टी के प्रत्याशियों और सदस्यों का मार्गदर्शन करना था।

शुद्धीकरण आंदोलन की नीति थी कि 'अतीत की गलतियों से शिक्षा लो जिससे भविष्य में उन गलतियों से बच सको।'

यह नीति 'वामपंथी विचलनवादियों' की नीति से बिलकुल भिन्न थी क्योंकि वे 'कठोर संघर्षों' और 'क्रूर प्रहारों' की नीति की मांग करते थे :

> शुद्धीकरण की शुरुआत पार्टी दस्तावेजों के गंभीर अध्ययन से होती थी और उसके बाद आलोचना और आत्मालोचना का सिलसिला शुरू होता था। अपनी सोच, अपने काम, पिछले रिकार्ड और अपने क्षेत्रों और विभागों के अपने कार्य की जांच-पड़ताल द्वारा पार्टी के सदस्यों से उम्मीद की जाती थी कि वे उन परिस्थितियों और कारणों को स्वयं तय करें जिनकी वजह से उन्होंने गलतियां कीं और इन गलतियों की प्रकृति क्या थी। इस प्रकार वे समझ और विचार की एकता हासिल कर लेते थे और अपनी त्रुटियों को खुद सही करने का तरीका सीख जाते थे। इस प्रक्रिया में स्वयं अपनी आलोचना करने पर विशेष बल दिया जाता था।[10]

मई 1942 में कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने साहित्य और कला पर बहस के लिए युन्नान गोष्ठी का आयोजन किया। इस गोष्ठी में माओ ने सुझाव दिया कि क्रांतिकारी कला

और साहित्य का उद्देश्य जनता की सेवा करना है अर्थात मजदूरों, किसानों और सैनिकों के हित के लिए साहित्य और कला का सृजन करना। उन्होंने कई विवादित मुद्दों का समाधान किया और साहित्यकारों तथा कलाकारों को सलाह दी कि वे वर्ग के सवाल का सर्वांगीण अध्ययन करें और वर्ग शत्रु, आम जनता और संयुक्त मोरचे के मित्रों के प्रति सही दृष्टिकोण अपनाएं। गोष्ठी की समाप्ति के बाद साहित्यकारों और कलाकारों ने अपने ज्ञान का विस्तार करना आंरभ कर दिया। यह कार्य भी शुद्धीकरण आंदोलन का ही एक अंग था।

मार्च 1943 में कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति के पोलिट ब्यूरो ने सर्वसम्मति से माओ को अपना अध्यक्ष चुन लिया और एक महत्वपूर्ण निर्णय लिया : 'केंद्रीय शासनांगों के पुनर्गठन और सरलीकरण के विषय में निर्णय'। माओ त्सेतुंग ने केंद्रीय समिति के सचिव का पद भी संभाल लिया। शुद्धीकरण आंदोलन के अंग के रूप में, कम्युनिस्ट पार्टी के वरिष्ठ काडरों ने पार्टी के अनुभवों की समीक्षा और मूल्यांकन किया।

केंद्रीय समिति ने पार्टी के इतिहास पर बहस चलाने के लिए अनेक संगोष्ठियों का आयोजन किया। इनमें पार्टी के अनेक प्रादेशिक संगठनों के अनुभवों पर विचार किया गया। इन प्रदेशों के नाम निम्नलिखित हैं :

1. हुनान-चियांग्शी-हुपे
2. चियांग्शी-हुनान
3. हुपे-हनान-आनहुई
4. फूचियन-क्वांगतुंग सीमांत क्षेत्र
5. पूर्वोत्तर चियांग्शी
6. पश्चिमी फूचियन
7. चाचोउ-मोशियान क्षेत्र

इन मंचों पर लाल सेना की सातवीं आर्मी, पांचवीं आर्मी और उत्तरी चीन के पार्टी संगठनों पर भी बहस हुई। जुलाई 1942 में चू ते ने घाषणा की :

> हमारी पार्टी ने संघर्ष में बेहतरीन अनुभव संचित किया है, मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांत को अच्छी और सही तरह से समझ लिया है तथा व्यवहार में मार्क्सवाद और लेनिनवाद के चीनी सिद्धांत को ग्रहण कर लिया है, जो चीनी क्रांति का मार्गदर्शन करेगा।[11]

8 जुलाई 1943 को वांग च्याशियांग ने एक लेख प्रकाशित किया *चीन की कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी राष्ट्र की मुक्ति का मार्ग।* यह लेख *लिबरेशन डेली* में प्रकाशित हुआ और इस लेख में 'माओ त्सेतुंग थाट' की संकल्पना प्रस्तुत की गई। इस संकल्पना का चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अंदर स्वागत हुआ और उसे पार्टी के सदस्यों का व्यापक समर्थन प्राप्त हुआ। स्टुअर्ट श्रैम के शब्दों में इसका अभिप्राय मार्क्सवाद का चीनीकरण था।

20 अप्रैल 1945 को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की छठी केंद्रीय समिति के सातवें प्लेनरी

सेशन ने एक प्रस्ताव पारित किया, 'हमारी पार्टी के इतिहास संबंधी कुछ सवालों पर प्रस्ताव'। इसके द्वारा पार्टी के सभी सदस्यों को समझाया गया कि चीन की नव-जनवादी क्रांति के बुनियादी सवाल क्या हैं। इनकी व्याख्या मार्क्स, लेनिन और माओ त्सेतुंग की शिक्षाओं के अनुसार की गई और बताया गया कि इनके विचारों को समन्वित तरीके से ग्रहण करना चाहिए। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने इस प्रकार न केवल यह समझ लिया कि जनवादी क्रांति में विजय प्राप्त करने के लिए संघर्षों में लड़ने का सही तरीका क्या है बल्कि यह भी समझ लिया कि जनवादी क्रांति का भविष्य में एक समाजवादी क्रांति में रूपांतरण किस प्रकार किया जाए। 'इस प्रस्ताव ने सातवीं पार्टी कांग्रेस के अधिवेशन के लिए विचारधारात्मक आधार प्रस्तुत कर दिया और चीनी क्रांति की दिशा में आगे कदम बढ़ाया। इसने शुद्धीकरण आंदोलन की सफल समाप्ति को दर्ज किया।'[12]

शुद्धीकरण अभियान का मूल्यांकन

सितंबर और दिसबंर 1943 के बीच पहला शुद्धीकरण अभियान अपने अंतिम चरण में पहुंच गया था। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के पोलिट ब्यूरो ने लगातार तीन संगोष्ठियों का आयोजन किया। इनमें कृषि क्रांतिकारी युद्ध के दौरान वांग मिंग की 'वामपंथी' त्रुटियों पर और जापान विरोधी संघर्ष के प्रारंभिक वर्षों में उसकी 'दक्षिणपंथी' गलतियों पर बहस हुई। माओ त्सेतुंग ने जोर देकर कहा कि वांग मिंग की भूलों पर विचार करते समय हमें उन्हें ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए। पार्टी के सदस्यों को वस्तुपूरक असलियत से शुरुआत करनी चाहिए, स्वयं अपनी आलोचना करनी चाहिए और पार्टी की एकता की गारंटी करनी चाहिए। उन्होंने कहा कि 'रोगी की रक्षा के लिए हमें बीमारी का इलाज करना चाहिए।'

वांग मिंग ने बीमारी के आधार पर इस प्रक्रिया में भाग लेने से इनकार कर दिया। माओ त्सेतुंग और चोउ एनलाई फिर भी वांग मिंग से उसके घर पर मिले और उसकी गलतियों के मुद्दे पर उससे बातचीत की। अंत में वांग मिंग अपने सहकर्मियों की समालोचना से सहमत हो गया और इस सवाल पर पार्टी के निर्णय का उसने अनुमोदन भी कर दिया। माओ के सुझाव पर सातवीं पार्टी कांग्रेस में वांग मिंग को केंद्रीय समिति के सदस्य के रूप में फिर चुन लिया गया। पार्टी में उसकी स्थिति फिर सामान्य और सम्मानित हो गई।

शुद्धीकरण आंदोलन में कुछ दुर्घटनाएं भी हुईं । कुछ दिनों के लिए युन्नान में गलत अभियान चला। 3 अप्रैल 1943 को केंद्रीय समिति ने एक निर्णय किया 'शुद्धीकरण आंदोलन को जारी रखने का फैसला', जिसमें कहा गया कि पार्टी की कार्यशैली को सुधारने की प्रक्रिया में पार्टी के सभी सदस्यों की पृष्ठभूमियों की विस्तृत जांच-पड़ताल की जाए। इस फैसले में केंद्रीय समिति ने पार्टी में छिपे हुए प्रतिक्रांतिकारियों की संख्या का बहुत बढ़ा-चढ़ाकर आकलन कर लिया। 15 जुलाई को कांग शेंग ने, जो जांच-पड़ताल करने वाली टीम का महत्वपूर्ण सदस्य था और केंद्रीय समिति का भी सदस्य था, कार्यकर्ताओं

की बैठक में एक सनसनीखेज रिपोर्ट पेश की, जिसका शीर्षक था, 'जिन्होंने गलतियां की हैं, उनका सफाया करो।'

हू शेंग संपादित पार्टी के इतिहास में बताया गया है :

> इस रिपोर्ट ने तथाकथित सफाया अभियान की शुरुआत कर दी। बलप्रयोग द्वारा अपराधों की स्वीकृति कराई गई और फिर उन पर विश्वास कर लिया गया। दस-पंद्रह दिनों तक, भारी संख्या में लोगों पर गलत आरोप लगाए गए और उनके साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार किया गया। शुद्धीकरण आंदोलन में ऐसी गलती नहीं होनी चाहिए थी।

इस अधिकृत इतिहास में माना गया है कि यह घटना एक अस्थायी भटकाव था जिसको केंद्रीय समिति ने अपने आदेशों द्वारा जल्दी ही रोक दिया। इसको इस आंदोलन की विशाल उपलब्धियों को नकारने के लिए उद्धृत नहीं किया जा सकता। इसका मूल्यांकन इन शब्दों में किया गया है :

> सर्वोपरि, शुद्धीकरण आंदोलन ने महान संवाद को जन्म दिया...जिसमें महत्वपूर्ण सवालों पर बहस हुई। इनमें शामिल था कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद को ..किस प्रकार लागू किया जाए, और 'मताग्रही दृष्टिकोण' के बिना, इसे 'चीनी क्रांति की वास्तविकताओं से' कैसे जोड़ा जाए।[13]

कानरेड ब्रांट इत्यादि के अनुसार, शुद्धीकरण आंदोलन ने कम्युनिस्ट पार्टी के समक्ष मौजूद तीन समस्याओं का समाधान किया :

> 1. परंपरा-विरोधी चिंतन की समस्या : यह समस्या राजनीतिक, वैचारिक और सांगठनिक क्षेत्रों में बुर्जुआ उदारवादी विचारों के प्रवेश से उत्पन्न हुई थी;
> 2. मार्क्सवाद के चीनीकरण की समस्या : इसे क्रियान्वित करने के लिए 'विदेशी औपचारिकतावाद' अर्थात मार्क्सवादी आधार ग्रंथों और सोवियत राजनीतिक अनुभवों पर निर्भरता को छोड़ना सिखाया गया; और
> 3 पार्टी के अंदर उत्साह और आत्मविश्वास की समस्याएं : इसके हल के लिए शुद्धीकरण के दस्तावेजों का अध्ययन, माओ त्सेतुंग के चिंतन का ज्ञान और पार्टी अनुशासन में सख्ती जरूरी थी। शुद्धीकरण का मकसद था कि पार्टी को जैविकीय संरचना की तरह अधिकतम केंद्रीकृत, अधिकतम अनुशासित विशिष्ट वर्ग का संगठन बनाया जाए।[14]

स्टुअर्ट श्रैम का मूल्यांकन है :

> दार्शनिक के रूप में माओ के योगदान के गुण कुछ भी हों, इसमें संदेह नहीं कि 1942-44 में शुद्धीकरण आंदोलन के अंत तक उन्होंने अपने साथियों में इस आदत को विकसित कर दिया था कि वे राजनीतिक समस्याओं पर उनके चीनी संदर्भ में ही

विचार करें। उन्होंने मास्को से अपने नेतृत्व की स्वंतत्रता का भी ऐलान कर दिया था। मई 1943 में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल का विघटन कर दिया गया। माओ ने इस अवसर का उपयोग करते हुए अपनी पार्टी की उपलब्धियों की बेहद प्रशंसा की।[15]

दूसरे शुद्धीकरण अभियान का लक्ष्य

इस शुद्धीकरण अभियान का उद्देश्य जनता के बीच उभरते हुए अंतर्विरोधों का सही समाधान खोजना था। वास्तव में पार्टी की कार्यशैली के सुधार का प्रस्ताव आठवीं राष्ट्रीय पार्टी कांग्रेस में किया गया था। युन्नान शुद्धीकरण आंदोलन से इसके संबंध पर बल देते हुए, माओ ने बताया कि आत्मपरकता, नौकरशाही और गुटबंदी की मानसिकताएं पार्टी के अनेक सदस्यों की सोच और कार्यशैली में अब भी मौजूद हैं। आठवीं पार्टी केंद्रीय समिति के छठे प्लेनरी सेशन में उन्होंने हंगरी और पोलैंड की घटनाओं की चर्चा की। केंद्रीय समिति की नवंबर 1956 की इस बैठक में उन्होंने पार्टी के सभी काडरों से अनुरोध किया कि वे अपना आचरण सुधारें और उन सभी दोषों को दूर करें जिनसे चीन में इस प्रकार की घटनाओं की कोई संभावना न रहे। केंद्रीय समिति ने निर्णय किया कि अगले वर्ष पार्टी के साधारण सदस्यों में राष्ट्रव्यापी शुद्धीकरण अभियान चलाया जाए। उसके लिए तैयारियां अभी से शुरू की जाएं।

माओ ने बताया कि जनसाधारण और उनके शासकों के बीच जनवादी चीन में अब भी शत्रुतारहित अंतर्विरोध है : इन शासकों में राज्य स्तर पर और पार्टी के स्तर पर तथा अर्थव्यवस्था और संस्कृति के क्षेत्रों में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व है। सभी प्रशासकों और सत्ताधारियों से माओ ने अनुरोध किया कि वे आत्मपरकता, नौकरशाही प्रवृत्ति और गुटबंदी का अपने व्यवहार और चरित्र से खात्मा करें। इसके साथ-साथ जनता को समाजवादी जीवन पद्धति में शिक्षित किया जाए। तथापि, विशेषाधिकार प्राप्त और शक्तिशाली समूहों के सदस्यों में शुद्धीकरण अभियान के पहले पहलू को प्राथमिकता दी जाए। माओ का आगामी कालों एवं महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के वक्त बुनियादी दृष्टिकोण यही था।

1956 की शरद और शीत ऋतु में, पोलैंड और हंगरी की घटनाओं की प्रतिध्वनि चीन में भी सुनाई पड़ी। लंबी छलांग में सफलता नहीं मिली थी; खाद्य पदार्थों की कमी थी, विद्यार्थियों और श्रमिकों ने चीन के महानगरों में हड़तालें की थीं। बुद्धिजीवी 'शत-शत फूल खिलें और शत-शत चिंतन प्रणालियां होड़ करें' का उपयोग करते हुए अपनी पार्टी विरोधी ओर राज्य विरोधी भावनाओं की अभिव्यक्ति कर रहे थे। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अधिकृत इतिहास में कहा गया है : 'इन नए अंतर्विरोधों के उदय होने पर विचारधारात्मक रूप से अनेक पार्टी सदस्य और काडर, निष्क्रियता की स्थिति में आ गए। कुछ काडरों ने जो नई चीजों का मूल्यांकन पुराने मानकों द्वारा करते थे, इन सभी अप्रिय घटनाओं को और

जनता द्वारा पार्टी की तीखी आलोचनाओं को वर्ग संघर्ष की अभिव्यक्ति माना तथा भौंड़े और सरलीकृत तरीके से उनका दमन करने का प्रयत्न किया।

फरवरी 1957 में माओ त्सेतुंग ने 1,800 से अधिक डेलीगेटों की सर्वोच्च राज्य कानफ्रेंस को संबोधित करते हुए कहा :

> अंतर्विरोधों का अस्तित्व सार्वभौमिक है और समाजवादी समाज भी अंतर्विरोधों से भरा हुआ है। शुद्ध रूप से ये अंतर्विरोध ही समाजवादी समाज को प्रगति की दिशा में प्रेरित करते हैं। बुनियादी अंतर्विरोध समाजवादी समाज में अब भी उत्पादन संबंधों और उत्पादन शक्तियों के बीच और अधिसंरचना तथा आर्थिक आधार के बीच होते हैं। तथापि, उनका चरित्र और उनके लक्षण पुरातन समाजों के अंतर्विरोधों के चरित्र और उनके लक्षणों से बिलकुल भिन्न होते हैं। इन अंतर्विरोधों का समाधान स्वतः अपने पुनः अनुकूलन से या स्वयं समाजवादी व्यवस्था के पूर्णत्व के जरिए निरंतर होता रहता है।[17]

बदलती हुई परिस्थितियों में शुद्धीकरण की जरूरत पर जोर देते हुए माओ ने बताया :

> आज की स्थितियां निम्नलिखित हैं : बड़े पैमाने पर विप्लवी वर्गीय जन संघर्ष, जो क्रांति काल की विशेषता थे, अब समाप्त हो गए हैं। परंतु वर्ग संघर्ष का अभी अंत नहीं हुआ है। जनता नई व्यवस्था का स्वागत करती है, परंतु वह अभी नई स्थितियों की अभ्यस्त नहीं हुई है। सरकारी अधिकारी-कर्मचारी अभी अनुभवहीन हैं। उन्हें विशेष नीतियों का और आगे अध्ययन और जांच-पड़ताल करनी चाहिए।[18]

उस समय जनवादी चीन में शुद्धीकरण अभियान का एक महत्वपूर्ण कार्य अलगाव-ग्रस्त बुद्धिजीवियों का सुधार और श्रमजीवी जनता के साथ उनका एकीकरण करना था।

जहां तक कम्युनिस्ट पार्टी का संबंध है, उसका आंतरिक शुद्धीकरण अभियान मार्च 1957 तक शुरू हो चुका था। कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने अनेक आंतरिक आदेश सभी पार्टी काडरों को भेजे थे और पार्टी के अखबारों ने शुद्धीकरण प्रक्रिया की निगरानी के बारे में संपादकीय लेख लिखे थे। माओ त्सेतुंग और ल्यु शाओछी ने दक्षिण चीन की यात्राएं अलग-अलग मार्गों से की थीं। उन्होंने शुद्धीकरण कार्यक्रमों की सफलता के बारे में अपनी रिपोर्टें भेजीं और पार्टी काडरों को समझाया कि समाजवादी क्रांति तथा समाजवादी निर्माण की ओर संक्रमण काल का क्या अर्थ है। इसे समझने के बाद, माओ को आशा थी कि पार्टी कार्यकर्ता जनता के बीच पैदा होने वाले सभी अंतर्विरोधों का समाधान लोकतांत्रिक और शांतिपूर्ण तरीकों से करना सीख जाएंगे। इस प्रकार, साहित्य और कला, विज्ञान और प्रौद्योगिकी समृद्ध होंगे, पार्टी अपनी जीवंतता कायम रख सकेगी, जनता अपने उद्देश्यों को पूरा करेगी, और चीन एक शक्तिशाली और प्यारा देश बन सकेगा।[19] अतः दूसरे शुद्धीकरण अभियान का लक्ष्य था कि जनता के बीच के अंतर्विरोधों का समाधान अहिंसक, विनम्रतापूर्ण और जनवादी तरीके से किया जाए।

नौकरशाही और गुटबंदी

27 अप्रैल 1957 को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने औपचारिक रूप से शुद्धीकरण अभियान पर अपना आदेश पारित किया :

> चूंकि अब पार्टी ने समूचे देश में शासक दल का दर्जा प्राप्त कर लिया है और जनता का व्यापक समर्थन भी पाया है इसलिए हमारे बहुत से कामरेड समस्याओं के हल के लिए प्रशासकीय आदेश को अधीनस्थ अधिकारियों के पास भेजने की सरल विधि अपना सकते हैं। कुछ तत्व...पुराने समाज की कार्य शैली से...विशेषाधिकारों के विचारों से...ग्रस्त हो जाते हैं और...जनता के साथ प्रतिशोध के तरीकों का प्रयोग करते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि सारी पार्टी में सर्वांगीण और गंभीर शुद्धीकरण आंदोलन चलाया जाए जो आत्मपरकता, नौकरशाही और गुटबंदी की रीति-नीति का खात्मा कर सके। यह शुद्धीकरण अभियान गंभीर विचारधारात्मक शिक्षा का आंदोलन होना चाहिए...ऐसा आंदोलन जो उपयुक्त आलोचना और आत्मालोचना द्वारा चलाया जाए।...सामान्य रूप से बड़े पैमाने पर आलोचना सभाओं या दोषारोपण सभाओं का आयोजन करना वर्जित है।[20]

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने शुद्धीकरण अभियान के प्रस्तावों और जनता के बीच मौजूद अंतर्विरोधों के सही समाधान के सिद्धांतों और नीतियों को अपनाया। पार्टी ने आठवीं राष्ट्रीय पार्टी कांग्रेस की लाइन को जारी रखा और विकसित किया। यह समाजवादी निर्माण के विशिष्ट चीनी मार्ग की खोज में नई प्रगति थी। जब शुद्धीकरण के नए कार्यों के लिए निर्देश प्रकाशित किए गए तो सभी स्तरों पर राज्य और पार्टी के संगठनों ने, शिक्षण संस्थाओं ने, वैज्ञानिक शोध संस्थानों ने और सांस्कृतिक संगठनों ने संवादों और संगोष्ठियों का सिलसिला शुरू कर दिया, जनता की आलोचनाओं की सुनवाई की और विचारों की स्वंतत्र अभिव्यक्ति का स्वागत किया। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के संयुक्त मोरचा विभाग ने अनेक मंचों का आयोजन किया जिनमें जनवादी दलों के प्रतिनिधियों और जनसमूहों के अधिवक्ताओं ने भाग लिया। उद्योग और वाणिज्य के क्षेत्रों के अनेक महानुभावों ने भी इन मंचों पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराई।

भारी संख्या में पार्टी काडरों और आम लोगों ने उत्साहपूर्वक पार्टी के आह्वान का स्वागत किया और सरकारी विभागों और पार्टी की इकाइयों में कार्यशैली के सुधार और परिवर्तन के लिए बहुत से सुझाव दिए। मई 1957 में कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने आंतरिक पार्टी-निर्देश जारी किए और उनमें बताया :

> कि पिछले दो महीनों में, जनता के बीच में अंतर्विरोधों पर खुली बहस का आयोजन अनेक मंचों पर किया गया जिनमें गैर-पार्टी महानुभावों ने भाग लिया। इनकी रिपोर्टें अखबारों और पत्र-पत्रिकाओं में छापी गईं; इस प्रकार बड़ी तेज गति से सभी तरह के अंतर्विरोधों का परदाफाश कर दिया गया।...ये आलोचनाएं, जो कुल मिलाकर सभी

> टिप्पणियों की 90 प्रतिशत हैं, शुद्धीकरण के लिए बहुत लाभदायक हैं। इनके आधार पर गलतियों को सही कर लिया गया और पार्टी की कार्यशैली में भी बहुत सुधार हुआ। सामाजिक दबाव के बिना शुद्धीकरण के नतीजे मुश्किल से ही निकलते हैं।[21]

बहुत से पार्टी काडरों और नौकरशाहों ने सोचा कि जनवादी लोकतंत्र, जननीति (मास लाइन), जनता से अपने को एकाकार करना और लोक-कल्याण की चिंता करना और कुछ नहीं बस खोखले शब्द और सारहीन नारे हैं। कुछ पार्टी नेता और प्रशासक अपनी श्रेष्ठता और ऊंचे पद के प्रभाव में अभिजनोचित और मालिकाना बरताव करते थे और जनता के प्रति तिरस्कार का दृष्टिकोण अपनाते थे। वे वास्तव में अफसरशाही के रोग से पीड़ित थे। शुद्धीकरण का अभिप्राय था कि वे इस गलत परिप्रेक्ष्य को पूरी तरह से बदलें। पार्टी काडरों और नौकरशाहों में इस प्रवृत्ति का खात्मा शुद्धीकरण अभियान की प्राथमिक आवश्यकता थी। पार्टी के आंतरिक निर्देशों से पता चलता है कि कम्युनिस्ट पार्टी को पूरी उम्मीद थी कि जनता के बीच में उत्पन्न अंतर्विरोधों का समाधान शुद्धीकरण अभियान द्वारा सही ढंग से हो सकता था। न केवल नौकरशाही मनोवृत्ति बल्कि आत्मपरक दृष्टिकोण और गुटबंदी की प्रवृत्ति को पूरी तौर से खत्म करना शुद्धीकरण आंदोलन का स्वघोषित लक्ष्य था। अभियान का उद्देश्य पार्टी और जनता की एकता को सुदृढ़ करना और समाजवादी निर्माण की तथ्यपरक वास्तविकताओं को ठीक तरह से समझना था, जिससे जनता और राज्य दोनों अपने कार्यों को सहयोग और उत्तरदायित्व की भावना से पूरा कर सकें।

दक्षिणपंथ विरोधी संघर्ष

तथापि, शुद्धीकरण अभियान के दौरान एक जटिल समस्या उठ खड़ी हुई, जिसका रूपांतरण कालांतर में दक्षिणपंथ विरोधी संघर्ष में हुआ। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अधिकृत इतिहास में लिखा है : 'कुछ बुर्जुआ दक्षिणपंथियों ने 'विचारों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति' और 'महान जनतंत्र' का लाभ उठाकर पार्टी और नवोदित समाजवादी प्रणाली के विरुद्ध बेलगाम हमले शुरू कर दिए। राज्य के राजनीतिक जीवन में कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व पर यह कहकर आक्रमण किया गया कि यह 'पार्टी का सर्वांगीण देशव्यापी प्रभुत्व है। उन्होंने दंभ के साथ मांग की कि कम्युनिस्ट पार्टी सरकारी दफ्तरों और स्कूलों पर से अपना नियंत्रण हटाए और संयुक्त राजकीय-निजी उद्यमों से सरकारी प्रतिनिधियों को हटाया जाए।... उन्होंने कहा कि जनवादी लोकतांत्रिक तानाशाही ही पंथवाद, आत्मपरकतावाद और अफसरशाही का पोषण करती है।'[22] अत: बुर्जुआ आलोचकों ने कम्युनिस्ट पार्टी पर आरोप लगाया कि शासन के संचालन में, अर्थव्यवस्था के प्रबंधन में और शिक्षा के नियंत्रण में उसके एकाधिकार और विशेषाधिकार चीन की सभी वर्तमान विपत्तियों और संकटों का मूल कारण हैं।

कम्युनिस्ट पार्टी को इन आक्रमणों की प्रकृति और विस्तार का अनुमान नहीं था। पार्टी ने महसूस किया कि विपक्षी 'दक्षिणपंथ' ताकत परखने के लिए कटिबद्ध है और

उसका इरादा जनता की जनवादी सरकार को उखाड़ना है। पार्टी ने निश्चय किया कि वह प्रतिक्रियावादी प्रचार के विरुद्ध लड़ेगी और उसके आरोपों का प्रत्युत्तर देगी और उनका खंडन करेगी। 19 मई 1957 को पेइचिंग में कुछ यूनिवर्सिटियों और कालेजों में बड़े अक्षरों के पोस्टर लगाए गए। शैक्षिक संस्थाओं, प्रेस, सार्वजनिक सभाओं ने पार्टी लाइन का समर्थन करते हुए देश भर में दक्षिणपंथ विरोधी प्रचार की बाढ़ ला दी और इस तरह कम्युनिस्ट पार्टी ने बड़े अक्षरों के पोस्टरों की लड़ाई जीत ली।

इस कारण देश में कृत्रिम तनाव और असंतुलन फैल गया। माओ ने मई 1957 में एक लेख लिखा, जिसका शीर्षक था *चीजों में अब बदलाव शुरू हो रहा है।* यह लेख कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति की नीति में परिवर्तन का सूचक था। शुद्धीकरण अभियान का केंद्र बिंदु जनता के बीच में अंतर्विरोधों के सही समाधान से हटकर शत्रु के विरुद्ध संघर्ष हो गया और पार्टी की अंदरूनी एकजुटता से हटकर दक्षिणपंथियों से लड़ना और उन्हें हराना हो गया। जनता के बीच के शत्रुतारहित अंतर्विरोधों के समाधन की बात बिलकुल खत्म हो गई और उसके स्थान पर विरोधी सामाजिक शक्तियों के शत्रुतापूर्ण अंतर्विरोध प्रकट हो गए। इन बैर और द्वेष से भरे अंतर्विरोधों का हल लोकतांत्रिक और शांतिपूर्ण उपायों से नहीं हो सकता था।

जुलाई 1957 में, छिनताओ में प्रांतीय और क्षेत्रीय पार्टी सचिवों का एक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में माओ ने शुद्धीकरण आंदोलन और दक्षिणपंथ विरोधी संघर्ष के बीच मौजूद संबंध का विवेचन किया। माओ त्सेतुंग ने समूचे शुद्धीकरण आंदोलन को चार चरणों में बांटने का प्रस्ताव किया :

1. विचारों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति का चरण;
2. दक्षिणपंथियों के हमलों का जवाब देकर उन्हें हराने का चरण;
3. शुद्धीकरण और रूपांतरण पर ध्यान केंद्रित करने का चरण, और
4. दस्तावेजों के अध्ययन द्वारा चेतना विस्तार, आलोचना और आत्मालोचना का चरण।

आठवीं पार्टी केंद्रीय समिति के तीसरे प्लेनरी सेशन में, जो सितंबर-अक्तूबर में हुआ, शुद्धीकरण और दक्षिणपंथ विरोधी आंदोलनों पर विस्तार से विचार-विमर्श हुआ। जनवादी सरकार और कम्युनिस्ट पार्टी ने 1958 की गरमियों में शुद्धीकरण अभियान और दक्षिणपंथ विरोधी आंदोलन को अधिकृत रूप से समाप्त करने की घोषणा कर दी।

जनता के कम्यूनों में शुद्धीकरण

शुद्धीकरण शब्द का प्रयोग अंतिम बार जनता के कम्यूनों के अमल में की गई 'वामपंथी' गलतियों को सही करने के संदर्भ में किया गया। तेंग श्याओपिंग के काल में प्रकाशित *चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अधिकृत इतिहास* में बताया गया है :

> आठवीं केंद्रीय समिति के छठे प्लेनरी सेशन के बाद, जनता के कम्यूनों में शुद्धीकरण का कार्य राष्ट्रव्यापी स्तर पर शुरू हुआ। संपूर्ण जनता के स्वामित्व और साम्यवाद की दिशा में तीव्र संक्रमण की प्रवृत्ति को तुरंत रोक दिया गया। तथापि, कम्यूनों में व्याप्त समतावाद और अति-केंद्रीकरण के दोष समाप्त नहीं हुए। इसके अतिरिक्त, ऊंचे अनुमानित उत्पाद के आधार पर तय ऊंचे खरीद कोटा को पूरा करने की जवाबदेही के कारण उत्पादन टीम की स्वार्थपूर्ण विभागीयता के खिलाफ अनुचित संघर्ष के कारण और उत्पादन के सही आंकड़ों को छिपाने के विरुद्ध संघर्ष की वजह से किसानों के साथ सरकार तथा पार्टी के संबंधों में वास्तव में कोई खास सुधार नहीं हुआ।[23]

इसी पुस्तक में लिखा है, 'माओ ने बाद में टिप्पणी करते हुए कहा कि ऐसा करना 'वामपंथी' दुस्साहस था। उन्होंने एक लघु मंडली में यह भी स्वीकार किया कि पार्टी का मुख्य प्रयत्न पार्टी के भीतर 'वामपंथी' विचारों और आचरण के खिलाफ संघर्ष करना है।'[24] वास्तव में जनता के कम्यूनों में शुद्धीकरण कार्यक्रम राष्ट्रीय अभियान या आंदोलन का स्वरूप ग्रहण नहीं कर सका। पार्टी पर माओ का प्रभुत्व अब भी कायम था। इसीलिए पार्टी के भीतर 'दक्षिणपंथी' जनता के कम्यूनों की कार्यशैली में जिन सुधारों को लागू करना चाहते थे, उन्हें कराने में उन्हें पूरी सफलता नहीं मिल सकती थी। पार्टी के इस तेंग-समर्थक इतिहास में अनेक समस्याओं का उल्लेख है...जैसे 'वामपंथी गलतियां को सही करने के प्रयत्न', 'दक्षिणपंथी विचलन विरोधी संघर्ष की खामियां', 'वामपंथी विचलन से जुड़ी राजनीतिक गलतियों में और वृद्धि,' इत्यादि। परंतु इन त्रुटियों में सुधार के लिए कोई अभियान या आंदोलन नहीं चलाया जा सका।

माओ ने 'महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति' के संचालन में प्रभावी राष्ट्रव्यापी नेतृत्व प्रदान किया लेकिन तेंग ने इसकी निंदा करते हुए कहा कि यह 'दस वर्षों के लिए राष्ट्रव्यापी अराजकता' के अलावा और कुछ नहीं था। माओ ने मांग की थी कि 'पार्टी के मुख्यालय पर हमला करो' और 'प्रत्येक सत्ता का उन्मूलन कर दो।' तेंग का कहना है कि इस तथाकथित क्रांति ने 'चारों तरफ गृहयुद्ध' का वातावरण उत्पन्न कर दिया। तेंगवादी इतिहास में उल्लेख है कि इन सभी घटनाओं के फलस्वरूप पार्टी में शत्रुतापूर्ण और गुटबंदी से प्रेरित संघर्ष शुरू हो गए। इनका समाधान किसी भी शुद्धीकरण अभियान द्वारा संभव नहीं था।

तेंग श्याओपिंग ने 'समाजवाद के प्राथमिक चरण' संबंधी सिद्धांत के प्रसंग में आर्थिक शुद्धीकरण की धारणा का प्रयोग किया। तेरहवीं राष्ट्रीय पार्टी कांग्रेस में उन्होंने 'चीनी विशेषताओं से युक्त समाजवाद' के बारे में चर्चा की और कहा कि इसे अमल में लाने के लिए माओ युग से विरासत में प्राप्त गलतियों को सही करना होगा। परंतु तेंग श्याओपिंग के सिद्धांत में आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किसी शुद्धीकरण अभियान की कोई जगह नहीं थी। 1989 की राजनीतिक उथल-पुथल और थ्यानानमन घटना सरकार

और 'लोकतांत्रिक आंदोलन' के बीच बढ़ते हुए शत्रुतापूर्ण अंतर्विरोध का संकेत दे रही थी। उस समय किसी शुद्धीकरण आंदोलन द्वारा इस प्रकार के अंतर्विरोध का समाधान नहीं हो सकता था।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 220.
2. स्टुअर्ट श्रैम, *पालिटिकल थाट आफ माओ*, पृ. 113-114.
3. बायड काप्टन, *माओ 'ज चाइना-पार्टी रिफार्म डाक्युमेंट्स 1942-44*, पृ. 61-63.
4. हों कान-चिह, *ए हिस्टरी आफ दि माडर्न चाइनीज रिवोल्यूशन*, पृ. 337.
5. *सेलेक्टेड वर्क्स माओ त्सेतुंग*, खंड III, पृ. 22-23.
6. वही, पृ. 38.
7. वही पृ. 43-45.
8. हू शेंग (संपा), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 292.
9. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड III. पृ. 32-34.
10. हू शेंग (संपा), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 293.
11. चू ते, 'इन कामेमोरेशन आफ दि ट्वंटियथ ऐनीवर्सरी आफ दि पार्टी', *लिबरेशन डेली*, 1 जुलाई 1942.
12. हू शेंग (संपा) *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 295.
13. वही, पृ. 296.
14. कानरेड ब्रांट इत्यादि, *ए डाक्युमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 375.
15. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 223.
16. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 520.
17. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड V, पृ. 220.
18. वही, पृ. 395.
19. मार्च 1957 माओ त्सेतुंग के लिखित भाषण की रूपरेखा से हू शेंग की कृति में उद्धृत, पृ. 523.
20. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 523.
21. वही, पृ. 524-25.
22. वही, पृ. 525-26.
23. वही, पृ. 548.
24. वही, पृ. 549.

अध्याय बारह

जनवादी गणतंत्र के प्रारंभिक वर्ष

1949 में जनवादी गणतंत्र की स्थापना जटिल हालात में हुई थी। एक ओर जापानी आक्रमण ने चीन की बिगड़ती हुई अर्थव्यवस्था को गंभीर क्षति पहुंचाई तो दूसरी ओर कम्युनिस्ट लाल सेना तथा च्यांग काई शेक के मध्य चल रहे गृहयुद्ध ने रही सही कसर पूरी कर दी। इस संदर्भ में इमेनुअल सी.वाई. शू ने जो बात कही है उसको हम दोहराना चाहेंगे : '1949 में सरकार को विरासत में बुरी तरह छिन्न-भिन्न अर्थव्यवस्था मिली। मुद्रास्फीति काबू से बाहर हो गई और आसमान छूने लगी।' आगे चलकर वे लिखते हैं कि उसी समय भयंकर बाढ़ ने खेती योग्य भूमि के एक बड़े भाग (30-40 प्रतिशत) को अपनी चपेट में ले लिया और नतीजे के तौर पर औद्योगिक उत्पादन 56 प्रतिशत और खाद्य उत्पादन 70-75 प्रतिशत गिर गया।

क्रांति को सफल बनाने में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने निस्संदेह महत्वपूर्ण भूमिका निभाई लेकिन सत्ता पाने के बाद एक नया दौर शुरू हुआ। अभी तक छोटे पैमाने पर चियांग्शी और युन्नान में जो प्रयोग हुए थे उनसे प्रेरणा तो मिल सकती थी लेकिन समूचे चीन (ताइवान को छोड़कर) पर उनको थोपा नहीं जा सकता था। लूसियन डब्ल्यू. पाई का मत है कि चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने सत्ता संघर्ष के दौरान उन विशिष्ट नीतियों पर कम ही ध्यान दिया था क्योंकि सरकार बनाने के बाद ही उन्हें लागू किया जा सकता था।

ध्यान न देना एक स्वाभाविक क्रिया भी थी। कम्युनिस्ट नेताओं के सामने भयानक मसले मौजूद थे। उनके शत्रु उनको जड़ से मिटा देना चाहते थे। कभी कम्युनिस्ट अपने जीवित रहने के संघर्ष में लगे रहते थे तो कभी जीते हुए क्षेत्रों को बचाने में जुटे रहते थे। इन हालात में भविष्य के लिए सही तथा ठोस प्रोग्राम देना संभव नहीं था। माओ तथा अन्य नेताओं ने कुछ विचार जरूर प्रकट किए थे लेकिन सही अर्थ में 1949 के बाद ही विकास को गंभीरता से लिया गया। नई जनवादी सरकार का प्रशासक के रूप में क्या दायित्व है? इस प्रश्न का ठोस उत्तर देने में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी जुट गई।

युगांतरकारी घटना

1917 की अक्तूबर क्रांति के बाद 1949 में चीनी जनवादी गणतंत्र की स्थापना एक युगांतरकारी घटना थी। 1948 में माओ त्सेतुंग के प्रस्ताव पर कम्युनिस्ट पार्टी ने मई दिवस के लिए निम्नलिखित नारे का चुनाव किया था :

> सभी जनवादी दलों, जनता के संगठनों और सार्वजनिक व्यक्तियों को शीघ्र आह्वान करना चाहिए कि एक राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन बुलाया जाए जो जन कांग्रेस का अधिवेशन बुलाने पर विचार करे, बुलाए तथा जनवादी मिली-जुली सरकार की स्थापना में सहायता करे।[1]

कम्युनिस्ट पार्टी (सी.पी.सी.) के नेतृत्व ने यह सम्मेलन बुलाने के लिए जून 1949 में एक तैयारी समिति का गठन कर दिया। आयोजन समिति में भाषाण देते हुए माओ त्सेतुंग ने कहा कि 'सलाहकार सम्मेलन बुलाना, चीन में जनवादी गणतंत्र की स्थापना करना, और उसका प्रतिनिधित्व करने के लिए जनवादी संयुक्त सरकार का चुनाव करना एक आवश्यक कार्य है।' उन्होंने आगे कहा, 'केवल इसी तरह हमारी मातृभूमि को अर्ध-औपनिवेशिक और अर्ध-सामंती प्रभुत्व से मुक्त कर स्वाधीनता, आजादी, शांति, एकता, समृद्धि और शक्ति के मार्ग पर ले जाया जा सकता है।'[2]

उसी भाषण में माओ त्सेतुंग ने कहा, 'हम किसी भी विदेशी सरकार से राजनयिक संबंधों की स्थापना के लिए बातचीत कर सकते हैं ... बशर्ते वह चीनी प्रतिक्रियावादियों से संबंध तोड़ने के लिए तैयार ... हो ... चीन की जनता सभी देशों की जनता के साथ मैत्रीपूर्ण सहयोग करना चाहती है।'[3] तथापि वे उस समय 'साम्राज्यवादियों' खासकर 'अमरीकी साम्राज्यवादियों' के साथ मैत्री और सहयोग की आशा नहीं कर रहे थे। इस बात को उन्होंने स्पष्ट रूप से अपने लेख *आन पीपुल्स डेमोक्रेटिक डिक्टेटरशिप* में लिखा,जो 30 जून 1949 को प्रकाशित हुआ। माओ ने कहा :

> हम एक पक्ष की ओर झुक रहे हैं। बिलकुल ... बिना किसी अपवाद के सभी चीनवासी या तो साम्राज्यवाद की ओर झुकेंगे या समाजवाद की ओर। दोनों के बीच तटस्थ रहना संभव नहीं है। इसके अलावा कोई तीसरा मार्ग भी नहीं है।[4]

यह लेख जिसमें माओ ने जनता के जनवादी अधिनायकत्व पर विचार प्रकट किए थे, बहुत महत्वपूर्ण था। इसमें दो पूर्ववर्ती लेखों *नव-जनवाद* अर्थात *आन न्यू डेमोक्रेसी* और *संयुक्त सरकार* अर्थात *आन कोलिशन गवर्नमेंट* का सारांश था। माओ त्सेतुंग ने अधिकांश चीनी जनता को देश के आर्थिक और राजनीतिक जीवन में हिस्सा लेने की अनुमति दी थी, निम्न बुर्जुआ वर्ग को न केवल श्रमिकों और कृषकों के मित्र के रूप में संयुक्त मोरचे में शामिल किया था बल्कि उन्हें अनिश्चित काल के लिए जनता का अंग भी मान लिया था। जनता के अभिन्न अंग के रूप में उन्हें सभी अधिकार सुलभ थे जो 'प्रतिक्रियावादियों' को प्राप्त नहीं थे। *'प्रतिक्रियावादियों' में जमींदारों और 'नौकरशाही बुर्जुआजी' को शामिल किया* गया था। यह बुर्जुआ वर्ग क्वोमिन्तांग शासकों से जुड़ा हुआ था।

निम्न बुर्जुआ वर्ग और 'राष्ट्रीय' बुर्जुआ वर्ग को जनता के जनवादी अधिनायकत्व का भागीदार बनाया गया था। यह प्रतिक्रियावादियों के विरुद्ध जनवादी गठबंधन था। माओ त्सेतुंग ने कहा था, 'जनता के सदस्यों के बीच जनवादी आचरण होता है। उन्हें भाषण,

सभा, समुदाय इत्यादि की स्वतंत्रता प्राप्त है। जनता के लिए लोकतंत्र और प्रतिक्रियावादियों पर तानाशाही, इन दोनों तत्वों का समन्वय ही जनता का जनवादी अधिनायकत्व है।' जनवादी राज्य तंत्र द्वारा शत्रु वर्गों का दमन किया जा सकता है। जहां तक राष्ट्रीय बुर्जुआजी का सवाल है, माओ ने कहा :

> जब समाजवाद की स्थापना का समय आएगा, ... तो हम उन्हें शिक्षित और रूपांतरित करने का कार्य करेंगे ... हमें राष्ट्रीय बुर्जुआजी की ओर से विद्रोह का भय नहीं है।[5]

चीनी जनता के राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन का अधिवेशन 21 से 30 सितंबर 1949 तक पेइचिंग में हुआ और उसने मौलिक कानून को स्वीकृति दे दी। सम्मेलन ने एक सामान्य कार्यक्रम भी स्वीकार किया। इसमें कहा गया :

> जन कांग्रेसें और जनता की सरकारें प्रत्येक स्तर पर जनता द्वारा राज्य की शक्ति का प्रयोग करने वाले शासनांग हैं ... राज्य की सत्ता के शासनांग सभी स्तरों पर लोकतांत्रिक केंद्रवाद के आधार पर कार्य करेंगे।[6]

जब तक राष्ट्रीय जन कांग्रेस का अधिवेशन न बुलाया जाए, चीनी जनता के राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन का प्लेनरी सेशन उसी हैसियत से कार्य करेगा।

राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन माओ त्सेतुंग को केंद्रीय जन सरकार का प्रधान और चू ते, ल्यू शाओछी, सुंग चिंग लिंग, ली चीशेन, चांग लान और काओ कांग को उपप्रधान चुन लिया। उसके बाद केंद्रीय जन राज्य परिषद ने चोउ एनलाई को प्रधानमंत्री तथा विदेश मंत्री के पद पर नियुक्त कर दिया।

चीनी जनता की क्रांति की विजय और चीन के जनवादी गणतंत्र की स्थापना ने चीन के इतिहास में एक नए अध्याय का प्रारंभ किया। पहली अक्तूबर 1949 को पेइचिंग के तीन लाख नागरिक थ्यानानमन चौक में एकत्र हुए और उन्होंने जनवादी गणतंत्र की स्थापना का भव्य समारोह देखा। यह एक महान ऐतिहासिक घटना थी। इसने एक सदी का अंत घोषित किया, जिसमें साम्राज्यवादियों ने चीनी सामंतवादियों के साथ गठजोड़ कर चीनी जनता का उत्पीड़न किया था। जैसा माओ ने कहा, चीन की जनता अब सीना तानकर खड़ी हो गई थी और वह नए राज्य की स्वामिनी थी। एक स्वाधीन, एकीकृत और नव-जनवादी चीन का अंततः जन्म हो गया था। हू शंग के शब्दों में :

> चीनी जनक्रांति की महान विजय न केवल राष्ट्रीय स्तर पर अभूतपूर्व थी, बल्कि ऐतिहासिक दृष्टि से उसका विश्वव्यापी महत्व था, जिसकी गणना अक्तूबर समाजवादी क्रांति और द्वितीय विश्वयुद्ध में फासीवाद की पराजय के साथ की जा सकती थी। ... चीनी जनता की यह विजय चीन में मार्क्सवाद-लेनिनवाद की जीत भी थी। इसमें मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सार्वभौम सिद्धांतों का चीनी क्रांति के ठोस व्यवहार के साथ समन्वय किया गया था। इसीलिए यह माओ त्सेतुंग के चिंतन की विजय भी थी।[7]

चीन में हुई इस क्रांतिकारी विजय ने वैश्विक राजनीतिक परिदृश्य में परिवर्तन कर दिया तथा राष्ट्रीय और सामाजिक मुक्ति की शक्तियों को बेहद प्रोत्साहित किया।

कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में संयुक्त सरकार

इस प्रकार पेइचिंग में उस मिली-जुली सरकार की स्थापना हो गई जिसका नेतृत्व कम्युनिस्ट पार्टी के हाथ में था। कम्युनिस्ट संयुक्त सरकार की स्थापना के बारे में पिछले पांच वर्षों से चर्चा कर रहे थे। माओ त्सेतुंग ने इसका प्रस्ताव 1944 में किया था। तथापि यह उससे बिलकुल भिन्न प्रकार की संयुक्त सरकार थी। परंतु अभी भी राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन में चौदह दलों और ग्रुपों के प्रतिनिधि और स्वतंत्र जनवादी व्यक्ति शामिल थे और गैर-कम्युनिस्ट भी गणतंत्र की सरकार तथा उपप्रधानों के बीच मौजूद थे। माओ त्सेतुंग के साथ कार्यरत उपप्रधानों में डॉ. सुन यातसेन की विधवा पत्नी तथा दो अन्य दलों चीनी जनवादी संघ और क्वोमिन्तांग की क्रांतिकारी समिति के प्रतिनिधि कम्युनिस्ट नहीं थे।

परंतु इसमें संदेह नहीं था कि वास्तविक शक्ति चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के हाथों में थी। राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन द्वारा स्वीकृत सामान्य कार्यक्रम में उन सभी बुनियादी सिद्धांतों को शामिल किया गया था जिनका प्रतिपादन माओ त्सेतुंग ने जनता के जनवादी अधिनायकत्व में किया था। इसमें चार वर्गों के गठबंधन के रूप में जनता की परिभाषा को तथा 'एक पक्ष के प्रति झुकाव' पर आधारित वैदेशिक नीति का समावेश भी किया था। परंतु सरकार में गैर-कम्युनिस्टों की उपस्थिति अर्थहीन नहीं थी। इसका अभिप्राय था कि उस समय जनवादी सरकार को व्यापक जन समर्थन प्राप्त था। क्वोमिन्तांग सरकार अपनी लोकप्रियता खो चुकी थी और लोग एक स्थायी और सुदक्ष शासन की कामना करते थे। स्वंय माओ त्सेतुंग ने उस समय नरम नीतियों को चुना था। चीनी जनवादी गणतंत्र के सामने दो महत्वपूर्ण कार्य थे :

पहला कार्य संपूर्ण देश पर सुदृढ़ रूप से राजनीतिक नियंत्रण स्थापित करना था।

दूसरा कार्य युद्ध से क्षत-विक्षत अर्थव्यवस्था का पुनर्निर्माण था जिससे भविष्य के आर्थिक विकास के लिए नींव डाली जा सके।

माओ की इच्छा थी कि राजनीतिक स्थिरता और आर्थिक प्रगति की दिशा में चीन का मार्गदर्शन किया जाए। उन्हें इससे कार्य के लिए तीन दशकों का राजनीतिक अनुभव प्राप्त था। इसमें जापान के विरुद्ध छापामार युद्ध और क्वोमिन्तांग के विरुद्ध गृहयुद्ध के अनुभव भी शामिल थे। इसके साथ-साथ, संघर्ष के इन वर्षों ने उन्हें समर्थन का महत्व भी सिखा दिया था। उन्होंने जन-दिशा और जन-अभियान को भी अपने क्रांतिकारी अनुभव द्वारा सीखा था। किसान परिवार में जन्म होने के कारण जनता की आवश्यकताओं और उसकी मानसिकता के बारे में भी उन्हें ज्ञान था।

बहरहाल नवीन चीन के निर्माण का काम बहुत जटिल था। माओ त्सेतुंग के नेतृत्व की शैली उन्हें किसानों के समीप लाती थी किंतु बुद्धिजीवियों और नगर के उच्च वर्गों को अभद्र और स्थूल लग सकती थी। इसके विपरीत चीन के आधुनिकीकरण का उनका लक्ष्य नगरवासियों को अच्छा लगता था लेकिन ग्रामवासियों के लिए चिंता का विषय बन सकता था। माओ त्सेतुंग का एक गुण सभी देशवासियों को पसंद था। यह गुण था चीन के मान, हितों और मर्यादा की रक्षा के लिए दृढ़ संकल्प। उन्होंने इस गुण को अपनी रूस यात्रा के दौरान भी अभिव्यक्त किया। माओ पहली बार दिसंबर 1949 में चीन के बाहर गए।

कुछ इतिहासकारों के अनुसार माओ त्सेतुंग की दृष्टि में चीन की क्रांति में स्तालिन का योगदान कम ही था। क्वोमिन्तांग से सत्ता छीनने में सोवियत संघ ने चीन के साम्यवादियों को कोई विशेष सहायता नहीं दी थी। स्तालिन की दृष्टि में चीनी कम्युनिस्ट मुख्यत: कृषिगत सुधारवादी थे। इसके अलावा जब क्वोमिन्तांग सरकार नानकिंग छोड़कर कैंटन गई, तो सोवियत राजदूत एकमात्र विदेशी राजनायिक था जो उसके साथ कैंटन गया। नानकिंग में कम्युनिस्ट सेना के प्रवेश के बाद विदेशी राजदूत या तो वहीं रहे या स्वदेश लौट गए। सोवियत सरकार च्यांग काई शेक सरकार से सिंक्यिांग में व्यापारिक सुविधाएं प्राप्त करने के लिए अंत तक बातचीत करती रही।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि स्तालिन कम्युनिस्ट होने के साथ-साथ एक राज्य के प्रशासक भी थे और इसी कारण वे च्यांग काई शेक को भड़काना नहीं चाहते थे।

वैचारिक और राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता की इस पृष्ठभूमि में, स्तालिन और माओ की बातचीत लंबी और कठिन थी। माओ चाहते थे कि 'चीनी जनवादी गणतंत्र के हितों से जुड़े सभी प्रश्नों का समाधान कर लिया जाए।'[8] वे सोवियत संघ में नौ हफ्तों से ज्यादा रहे लेकिन अपने देश के हितों की केवल आंशिक पूर्ति कर सके। फिर भी कुल मिलाकर उनकी यह यात्रा सफल रही।

14 फरवरी 1950 को सोवियत संघ और जनवादी चीन में कुछ महत्वपूर्ण समझौतों पर हस्ताक्षर हुए। इनमें मित्रता, गठबंधन और परस्पर सहायता की संधि भी शामिल थी। इस संधि द्वारा सोवियत रूस ने जापान तथा उसके मित्र देशों द्वारा आक्रमण की स्थिति में चीन को सहायता देने का वचन दिया।

एक दूसरे समझौते द्वारा सोवियत संघ ने चीन को 6 करोड़ डालर का ऋण प्रति वर्ष देना स्वीकार किया। यह पूर्वी यूरोप को दिए जाने वाले ऋणों और क्वोमिन्तांग को दी जाने वाली अमरीकी मदद की तुलना में बहुत छोटी राशि थी। माओ को स्वीकार करना पड़ा कि चीन के दो बंदरगाह, पोर्ट आर्थर और डायरेन 1952 तक रूस के आधिपत्य में रहेंगे। वस्तुत: स्तालिन ने इस समझौते को क्रियान्वित नहीं किया। उनकी मृत्यु के बाद ही ये बंदरगाह चीन को हस्तांतरित किए गए।

डर्क बोडी ने अपनी *पेकिंग डायरी* में लिखा है :

इस बात का बहुत प्रचार किया जा रहा है कि कई सौ व्यक्ति यहां आए हैं जो बीस

> से अधिक क्वोमिन्तांग विरोधी राजनीतिक दलों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनमें लोकतांत्रिक संघ और क्वोमिन्तांग क्रांतिकारी समिति के प्रतिनिधि, विदेश वासी चीनियों के प्रतिनिधि और असंबद्ध व्यक्ति भी हैं। वे निस्संदेह 'संयुक्त' सरकार के गैर-कम्युनिस्ट हिस्से का प्रतिनिधित्व करेंगे।[9]

यह नवीन जनवादी गणतंत्र की उदार, संयुक्त राजनीतिक संस्कृति का प्रमाण था, जिसे चीन की कम्युनिस्ट पार्टी जनता के जनवादी अधिनायकत्व के अंतर्गत विकसित करने का प्रयास कर रही थी।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अधिकृत इतिहास में लिखा है, 'सोवियत नेताओं के लिए चीनी क्रांति की विजय एक अप्रत्याशित घटना थी। यद्यपि उन्होंने उसका स्वागत किया किंतु उन्हें राजनीतिक आशंकाएं भी थीं। सोवियत संघ चीन को अधिक आर्थिक सहायता न दे सका।'[10] संयुक्त राज्य अमरीका ने जनवादी चीन को संयुक्त राष्ट्र में अपना वैध स्थान ग्रहण करने में दीर्घ काल तक बाधा डाली। उसका प्रयास चीन को राजनीतिक रूप से अलग-थलग करने, आर्थिक रूप से उसकी नाकेबंदी करने और सैनिक रूप से उसकी घेराबंदी करने का था।

1949 में चीन की आर्थिक परिस्थिति

चीन 1949 में एक निर्धन और पिछड़ा हुआ देश था। प्रमुख शहरी केंद्रों में उद्योग और व्यापार लगभग ठहरा हुआ था। बांधों, सिंचाई प्रणाली और नहरों की बुरी हालत थी क्योंकि उनकी मरम्मत नहीं हुई थी। रेलवे लाइनों को प्रतिद्वंद्वी सेनाओं ने बार-बार काट डाला था। मुद्रास्फीति ने मुद्रा प्रणाली में लोगों का विश्वास नष्ट कर दिया था। अंत में तीन दशकों से युद्धजन्य असाधारण परिस्थितियों ने लोगों को हताहत कर जनता के कष्ट बहुत बढ़ा दिए थे।

आधुनिक औद्योगिक क्षेत्र बहुत सोमित था और उस पर मुख्यत: विदेशी स्वामित्व था। उसका संकेंद्रण मंचूरिया में और पूर्वीय तटीय प्रांतों के कुछ बड़े नगरों जैसे हार्बिन, तियांगचिन, तथा शंघाई में था। इन स्थानों में विदेशियों को अनेक विशेषाधिकार प्राप्त थे। उद्योगीकरण मुख्यत: लघु उद्योगों तक सीमित था, यद्यपि भारी उद्योगों की भी सांकेतिक उपस्थिति थी। इस्पात का उत्पादन दस लाख टन से भी कम था और मशीन उद्योग लगभग अस्तित्वहीन था। कुछ बड़े शहरों को छोड़कर कहीं बिजली नहीं थी। रेल मार्गों की लंबाई केवल 12,000 मील थी, जो केवल मंचूरिया और तटवर्ती प्रांतों तक सीमित थी।

अधिकांश उत्पादित वस्तएं परपंरागत हस्तशिल्प की थीं। लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर थी। चीन की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से सामंतवादी थी। केवल तटवर्ती नगरों में विदेशी पूंजीवादी उद्योग थे। व्हीलराइट और ब्रूस मैकफार्लेन के अनुसार :

> चीन का औद्योगिक आधार और मूल ढांचा 1914 में रूस के औद्योगिक ढांचे की

> अपेक्षा छोटा था। इसके अलावा, जो उद्योग थे उनकी हालत भी खराब थी। कृषि उत्पादन में भारी कमी हो गई थी; अल्पविकसित यातायात प्रणाली दशकों से चले आ रहे युद्ध के कारण तहस-नहस हो चुकी थी; और चीन आधुनिक काल की अधिकतम पीड़ादायक मुद्रास्फीति से ग्रस्त था।[11]

हान सूयिन इस समय की चीनी परिस्थिति का बहुत सजीव विवरण प्रस्तुत करती हैं। वे कहती हैं :

> फरवरी 1944 में वस्तुओं की औसत कीमतें 1942 के ग्रीष्म काल से 250 गुना ज्यादा थीं। जब क्वोमिन्तांग के पक्ष में युद्ध करते हुए अक्तूबर 1947 में मेरे पति की मृत्यु हो गई तो च्यांग काई शेक सरकार से मुझे एक करोड़ चीनी डालर की राशि प्राप्त हुई। यह राशि तीन ब्रिटिश पौंड के बराबर थी।[12]

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का पुनरुद्धार

जनवादी सरकार की तत्कालीन रणनीति राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का इस तरह पुनरुद्धार करना था, ताकि भविष्य में अर्थव्यवस्था और समाज के समाजवादी रूपांतरण की नींव रखी जा सके। पहले तीन वर्षों में, अर्थव्यवस्था की 'शीर्षस्थ संस्थानों' जैसे बैंकों, वाणिज्य, रेल मार्गों, इस्पात तथा अन्य भारी उद्योगों पर, आर्थिक नियंत्रण स्थापित करना था। भूमि सुधार द्वारा जमींदारों और धनी किसानों की भूसंपत्तियों का निर्धन किसानों में पुनर्वितरण कर दिया गया था। परंतु न तो कृषि और न ही उद्योगों में बड़े पैमाने पर निजी संपत्तियों का अधिग्रहण किया गया था। एकमात्र अपवाद नौकरशाही पूंजीवादियों के बारे में था जिनकी निजी संपत्तियों का राष्ट्रीकरण कर दिया गया था।

इसके विपरीत 'राष्ट्रीय पूंजीपतियों ' को अनुभति दी गई कि वे अपनी संपनियों को अपने पास रख सकते हैं और आर्थिक पुनरुद्धार के कार्य में सरकार की सहायता कर सकते हैं। उन्हें विनिवेशों पर नियमित रूप से ब्याज दिया जाता रहा और अपने उद्योगों के प्रबंध और संचालन के लिए ऊंचे वेतन दिए गए। इसके साथ-साथ जनवादी सरकार संयुक्त राज्य मालिकाने में निजी उद्योगों की स्थापना कर रही थी और पूर्णतया राज्य के स्वामित्व में पूंजी उद्योगों अर्थात मशीनों के उत्पादन के लिए उद्योगों को कायम कर रही थी।

भूमि सुधार का प्रारंभ 1949 के पूर्व मुक्त क्षेत्रों में किया गया और 1952 तक पूर्ण कर लिया गया। पुनर्वितरण द्वारा 30 करोड़ से अधिक किसानों को अतिरिक्त भूमि के आवंटन से लाभ पहुंचा। परंतु भूखंडों के समानीकरण की प्रक्रिया अभी पूर्ण नहीं हुई थी। धनी किसानों के प्रति अपेक्षाकृत नरम नीति अपनाई गई और मध्यम किसानों को भी पुनर्वितरण में हिस्सा दिया गया।

भूमि सुधार के बाद मध्यम किसानों की संख्या में काफी वृद्धि हुई। परंतु धनी और निर्धन किसानों का अस्तित्व भी कायम रहा। अधिकांश जमींदारों को भी अनुमति दी गई

कि अपने भरण-पोषण के लिए पर्याप्त भूमि अपने पास रख सकते थे। पूर्ण समानीकरण के आधार पर भूमि सुधार मध्यम किसानों को असंतुष्ट कर सकता था और उत्पादन पर दुष्प्रभाव डाल सकता था।

इस चरण में जनवादी चीन छोटे भूस्वामी कृषकों का देश बन गया। जनवादी सरकार का अंतिम उद्देश्य भूमि का पूर्ण समानीकरण था, किंतु उस समय इसके लिए भौतिक और राजनीतिक परिस्थितियां अनुकूल नहीं थीं। चीन में अधिकतम मशीनीकरण, वैज्ञानिक मानवीय शक्ति, कुशल और अर्ध-कुशल श्रमशक्ति और इस उद्देश्य के लिए राजनीतिक और सामाजिक चेतना में कमी थी। इस त्रिवर्षीय पुनरुद्धार काल में लागू की जाने वाली नीतियां सफल हुईं।

1952 तक अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में 1949 के पूर्व का उत्पादन स्तर प्राप्त कर लिया गया और कुछ ने उससे भी आगे प्रगति कर ली। यह जनवादी सरकार की महत्वपूर्ण सफलता थी।

ऐश ब्रूक ने अमरीकी कांग्रेस की संयुक्त आर्थिक समिति को अपनी रिपोर्ट में बताया :

> बहुत कम समय में नई सरकार ने डकैती का दमन कर दिया, ध्वस्त रेल मार्गों को चालू कर दिया, उपेक्षित बांधों की मरम्मत कर उनका विस्तार किया, स्थानीय शासन में भ्रष्ट नौकरशाही प्रणाली के स्थान पर पूर्णत: ईमानदार कम्युनिस्ट काडरों की व्यवस्था स्थापित कर दी, एक स्थिर मुद्रा प्रणाली शुरू कर दी और राष्ट्रव्यापी कर प्रणाली का प्रवर्तन किया। सार्वजनिक स्वास्थ्य और स्वच्छता का एक विस्तृत कार्यक्रम बनाया गया, और उपलब्ध भोजन तथा कपड़ों के समान और न्यायोचित वितरण का प्रबंध किया गया।[13]

उन्होंने अपनी रिपोर्ट में आगे लिखा कि पुनरुद्धार काल (1949-52) में चीन की आर्थिक नीति को पूर्ण अंक दिए जा सकते हैं क्योंकि उसने संपूर्ण चीन को राष्ट्रीय आर्थिक इकाई में संगठित कर दिया और सोवियत शैली की नियंत्रित अर्थव्यवस्था की ओर संक्रमण के लिए नींव का निर्माण कर लिया। इस काल के लक्ष्यों—आर्थिक कानून व्यवस्था की स्थापना, अर्थव्यवस्था के शीर्षस्थ निकायों पर आधिपत्य, और उपलब्ध उत्पादन सुविधाओं का पुनरुद्धार—को प्राप्त कर लिया गया।[14]

प्रथम पंचवर्षीय योजना

प्रथम पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य व्यापक औद्योगिक ढांचे की आधारशिला रखना था। इसलिए 50 प्रतिशत से अधिक राशि पूंजी उद्योगों को आवंटित की गई। उपभोक्ता वस्तुओं की तुलना में इनकी द्रुत गति से वृद्धि की योजना बनाई गई, यद्यपि लघु उद्योगों की प्रगति के लिए भी प्रावधान किया गया था। राष्ट्रीय बजट में कृषि के विकास के लिए आवंटित

राशि अपेक्षाकृत बहुत कम थी। यह राशि केवल 6.2 प्रतिशत थी लेकिन इसमें किसानों का निवेश शामिल नहीं किया गया था। जनवादी चीन की आर्थिक रणनीति इस काल में सोवियत योजनाओं की रणनीति पर ही आधारित थी। इस काल का एक नारा था, 'सोवियत संघ से शिक्षा ग्रहण करो।'[15]

बहरहाल चीनियों ने सोवियत प्रतिमान को बहुत लचीले ढंग से क्रियान्वित किया। मूल रूप में नियोजन पद्धति बहुत केंद्रीकृत थी और सभी महत्वपूर्ण लक्ष्यों का निर्धारण पेइचिंग के मंत्रालय करते थे। ये मंत्रालय ही विभिन्न उद्योगों के विकास के लिए उत्तरदायी थे। परंतु चीन जैसे विशाल और जटिल देश में इस प्रणाली ने बरबादी और अव्यवस्था को बढ़ावा दिया। इसलिए 1957 के अंत में उद्योगों पर नियंत्रण में भरपूर विकेंद्रीकरण कर दिया गया। उपभोक्ता उद्योग सामान्य रूप से प्रांतीय सरकार के मंत्रालयों को सौंप दिए गए। केंद्रीय सरकार प्रत्यक्ष रूप से पूंजी उद्योगों अर्थात मशीनों के उत्पादन पर नियत्रण करती थी और शेष अर्थव्यवस्था की निगरानी और देखभाल करती थी। वह निवेश की दर का निर्धारण करती थी, कच्चे माल का आवंटन करती थी तथा वेतन और रोजगार का स्तर निश्चित करती थी।

सोवियत संघ ने 1953 से 1967 के बीच तीन पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत लगभग 300 आधुनिक औद्योगिक कारखानों की स्थापना का वचन चीन को दिया था और संचालन के लिए चीनियों को प्रशिक्षण प्रदान करने का दायित्व भी स्वीकार किया था। इसका कुल खर्च तीन अरब डालर था जो सोवियत संघ ऋण के रूप में चीन को देने के लिए बचनबद्ध था। 1957 के अंत तक इनमें 68 परियोजनाएं पूरी हो गई थीं। 1960 तक, जब सोवियत तकनीशिनों को रूसी सरकार ने अचानक वापस बुला लिया, 154 परियोजनाएं पूर्ण हो चुकी थीं।

इस समय सोवियत संघ द्वारा चीन को दिए गए ऋण की राशि 1.5 अरब डालर थी। 1964 के अंत तक जनवादी चीन ने सभी ऋणों का भुगतान कर दिया। इस प्रकार सोवियत संघ द्वारा चीन को दी जाने वाली मदद का स्वरूप तकनीकी सहायता के रूप में था। अतः चीनियों ने स्वयं ही अपनी पूंजी निवेशों के लिए वित्त का प्रबंध किया।

एक विदेशी आकलन के अनुसार, प्रथम पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत, सकल निर्धारित निवेश 1950 में सकल राष्ट्रीय उत्पाद के 5.5 प्रतिशत से बढ़कर 17.9 प्रतिशत हो गया जो लंबी छलांग के दौरान बढ़कर 25 प्रतिशत हो गया। चीन ने जनता की शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में निवेश किया।

1949 से 1958 के बीच स्नातक विद्यार्थियों की संख्या 4,31,000 हो गई जिसमें 1,30,000 छात्र इंजीनियर थे। यह संख्या पिछले 20 वर्षों के स्नातकों की संख्या से दोगुनी थी। एक सार्वजिनक स्वास्थ्य कार्यक्रम चलाया गया। इसमें निवारक चिकित्सा और स्वच्छ वातावरण पर विशेष बल दिया गया। इसमें जानलेवा रोगों जैसे टाइफाइड, हैजा और प्लेग का खात्मा किया गया और तपेदिक जैसे रोगों को नियंत्रित कर लिया गया।

प्रथम पंचवर्षीय योजना के अधिकांश औद्योगिक लक्ष्यों को प्राप्त कर लिया गया।

भारी उद्योगों का उत्पादन 1957 में औद्योगिक उत्पादन का 48 प्रतिशत था। कच्चे इस्पात का उत्पादन 13.5 लाख मीट्रिक टन से बढ़कर 53.5 लाख मीट्रिक टन हो गया, कोयला 665 लाख से बढ़कर 1,307 लाख हो गया है। खनिज तेल 190 हजार मीट्रिक टन से बढ़कर 632 हजार मीट्रिक टन हो गया, और बिजली का उत्पादन 7.3 अरब किलोवाट से बढ़कर 19.3 अरब किलोवाट हो गया। अधिकृत आंकड़ों के अनुसार योजना काल में औद्योगिक उत्पादन में 128.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई। यह 18 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि थी। पश्चिमी प्रेक्षक योजना काल में 100 प्रतिशत की वृद्धि को स्वीकार करते हैं। उनके अनुसार औसत वार्षिक वृद्धि की दर 14 प्रतिशत थी।

चाहे आंकड़ों में मतभेद हो लेकिन जो प्रगति इस दौरान हुई उसको मानना ही पड़ता है और यह एक चौंका देने वाली प्रगति थी। समाजवादी साहस और समाजवादी सहयोग ने चीन को एक नए मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया।

कृषि रणनीति

कृषि के क्षेत्र में रणनीति थी कि समानीकरण का विस्तार चरणबद्ध रूप से किया जाए और शुरुआत आपसी सहायता टीमों द्वारा की जाए। अगला कदम 1955-56 में सहकारी समितियों का विकास था। सहकारी संघों की दिशा में पहले आंदोलन धीरे-धीरे आगे बढ़ा लेकिन 1955 के उत्तरार्ध में उसकी गति तेज कर दी गई। माओ त्सेतुंग ने नीतिगत परिवर्तन करते हुए कहा :

> पिछले कुछ वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों में पूंजीवाद की स्वत:स्फूर्त शक्तियों में निरंतर वृद्धि हो रही है; सभी स्थानों पर नए धनी किसान उभरकर आ रहे हैं और अनेक खुशहाल मध्यम किसान धनी कृषक बनने का प्रयत्न कर रहे हैं। दूसरी ओर बहुत से निर्धन किसान अब भी गरीबी की हालात में जी रहे हैं क्योंकि उनके पास उत्पादन के लिए पर्याप्त साधनों का अभाव है।[16]

कृषि सहकारी संघों के सवाल पर शीर्षक से माओ के लेख का उद्देश्य था कि आपसी सहायता टीमों को सहकारी संघों में विकसित होने के लिए प्रोत्साहित किया जाए और निजी खेती करने वाले किसान की भूमिका को कम किया जाए। उसका तर्क था कि कृषि सहकारी संघ आपसी सहायता टीमों और निजी किसानों की तुलना में बड़े पैमाने पर फसलों को उगा सकेंगे। माओ त्सेतुंग ने कहा :

> यदि हम कृषि सहकारी संघों की समस्या का समाधान लगभग तीन पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान नहीं कर सकते...यदि हमारी खेती छोटे पैमाने पर कृषि से बड़े पैमाने पर यंत्रचालित कृषि की ओर लंबी छलांग नहीं लगा सकती और नई भूमि को उर्वर बनाकर उन पर राज्य द्वारा संगठित फार्म स्थापित नहीं करते, जिन पर नए

> आवासी मशीनों से खेती कर सकें, तो हमें समाजवादी उद्योगीकरण में भयंकर कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा और हम उसे पूरा नहीं कर सकेंगे।[17]

सहकारी संघों के चार मुख्य लाभ थे :

1. वे छोटी परियोजनाओं के लिए अतिरिक्त श्रमशक्ति उपलब्ध करा सकते थे।
2. वे सदस्यों की बचतों का उपयोग उत्पादन में निवेश के लिए कर सकते थे।
3. वे खेती का अधिक तर्कसंगत प्रबंधन कर सकते थे, क्योंकि वे छोटे खंडित भूखंडों को अधिक बड़े आर्थिक रूप से लाभकारी फार्मों में इकट्ठा कर सकते थे।
4. सहकारी संघ अपने सदस्यों के लिए कल्याण कोष की स्थापना द्वारा श्रेष्ठतर सुरक्षा प्रणाली विकसित कर सकते थे।

अधिकृत आंकड़ों से पता चलता है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत सकल कृषि उत्पाद में 1952 की कीमतों के आधार पर 24.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई; खाद्य अनाजों के उत्पाद में 19.8 प्रतिशत वृद्धि हुई। चूंकि इस दौरान जनसंख्या में 11 प्रतिशत की वृद्धि हुई, इसलिए यह वृद्धि प्रति व्यक्ति अनाज के उत्पादन में 9 प्रतिशत वृद्धि को परिलक्षित करती है। इस संबंध में ऐश ब्रूक की राय है :

> चीनी कम्युनिस्टों ने प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान कृषि का बड़े पैमाने पर मशीनीकरण शुरू नहीं किया और यह बिलकुल सही आर्थिक नीति थी। औद्योगिक प्रयास का लक्ष्य औद्योगिक आधार का विस्तार करना था।...कृषि को शांति की पुनः स्थापना से और सुदृढ़ केंद्रीय सरकार की स्थापना से इस काल में निरंतर लाभ प्राप्त होना ही था।...इस काल में चीनी कम्युनिस्ट नेतृत्व की आर्थिक नीतियों और आर्थिक उपलब्धियों के लिए प्रशंसा करनी ही चाहिए।...प्रमुख औद्योगिक वस्तुओं के उत्पादन में कई गुना वृद्धि के अतिरिक्त, चीनी कम्युनिस्टों ने सोवियत सहायता द्वारा :
>
> - आधुनिक उद्योग की प्रमुख शाखाओं का आधुनिकीकरण किया और उनकी क्षमता बढ़ाई।
> - हजारों कुशल और अर्धकुशल श्रमिकों को प्रशिक्षण दिया।
> - कृषि के उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि की जो जनसंख्या वृद्धि से कहीं अधिक थी।
> - सोवियत शैली की योजना और संख्यिकीय प्रणाली के आधार का निर्माण किया।[18]

प्रथम पंचवर्षीय योजना काल की समाप्ति तक, कम्युनिस्ट चीन ने आर्थिक विकास में द्रुतगति को प्राप्त कर लिया था। अर्थव्यवस्था की इस प्रगति से ईर्ष्या की जा सकती है। प्रगति की तेजी का जनता के नैतिक साहस और उत्साह पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ रहा था। अधिकतर जनता जनवादी सरकार की उपलब्धियों से संतुष्ट थी।

फिर भी कुछ गंभीर समस्याएं थीं। कृषि का विकास काफी तेजी से नहीं हो रहा था। उपभोक्ता उद्योगों के विकास की गति भी धीमी थी। 1956-57 में अनाज और वस्तुओं के माध्यम से करों की वसूली अनाजों के समूचे उत्पादन की कीमत का 25.1 प्रतिशत थी। जबकि 1953-54 में यह वसूली 29.1 प्रतिशत थी। माओ त्सेतुंग ने निश्चय किया कि वे इन समस्याओं का समाधान तीन तरीकों से करेंगे :

1. 1955-56 में कृषि सामूहिक फार्मों की तेजी से वृद्धि;
2. 1958 में कम्यून प्रणाली की स्थापना; तथा
3. 1958-59 में उद्योग के क्षेत्र में प्रगति की लंबी छलांग।

क्षेत्रीयता और उद्योग का विकेंद्रीकरण

एक जटिल समस्या क्षेत्रवाद और उद्योगों के लिए स्थानों के चयन के कारण उत्पन्न होती थी। चीन की जनवादी सरकार इस बात से असंतुष्ट थी कि चीन के प्रमुख उद्योगों का संकेंद्रण तटवर्ती प्रांतों में हो गया था। योजना आयोग ने अपनी नीति की घोषणा करते हुए कहा था :

> नए उद्योगों को देश के विभिन्न भागों में उपयुक्त स्थानों को चुनकर स्थापित किया जाएगा जिससे औद्योगिक उत्पादन कच्चे माल के स्रोतों के समीप हो और ईंधन की सहज आपूर्ति हो सके तथा उपभोक्ता बाजार भी निकटवर्ती क्षेत्रों में मौजूद हों।[19]

परंतु 1956 तक चीन के नियोजनकर्ता ऐसे नए क्षेत्रों को विकसित करने में अनिच्छुक हो गए क्योंकि इसका विपरीत असर आर्थिक विस्तार की सामान्य दर पर पड़ता था। तथापि 1952 के बाद वास्तविक क्षेत्रीय विकास की तसवीर उद्योग के विकेंद्रीकृत नियंत्रण की बढ़ती हुई प्रवृत्ति को परिलक्षित करती थी। परंतु आंतरिक प्रदेशों और नगरों में केवल लघु और मध्यम श्रेणी के उद्योगों को प्रोत्साहन दिया गया था। बड़े पैमाने के उद्योगों का आधुनिक 'सेक्टर' पुराने तटवर्ती आर्थिक केंद्रों में ही संकेद्रित था क्योंकि वहां पर बड़े उद्योगपति, प्रौद्योगिकी के ज्ञाता और 'बुर्जुआ' विशेषज्ञ उपलब्ध थे।

यह 1966 में सांस्कृतिक क्रांति का प्रमुख मुद्दा बन गया। 1958-59 की लंबी छलांग में कोशिश की गई कि दूरवर्ती क्षेत्रों में उद्योगों का विकास किया जाए। इसके बावजूद औद्योगिक संकेंद्रण का यह स्वरूप कायम रहा। उदाहरण के लिए 1960-61 में शंघाई की वार्षिक औद्योगिक क्षमता का मूल्य उससे पीछे के विशालतम औद्योगिक केंद्र तियांचिन की तुलना में पांच गुना अधिक था और तीसरे सबसे बड़े शहरी केंद्र, वूहान, की तुलना में छह गुना ज्यादा था। उद्योगों के आधुनिक 'सेक्टर' का आधा से अधिक भाग चियांग्सू, होपेई और ल्याओनिंग के तीन प्रांतों में संक्रेंदित था।[20]

सुधार और क्रांति

जनवादी चीन में निरंतर जारी सुधार और क्रांति का कार्यक्रम माओ त्सेतुंग के चिंतन पर आधारित था। ल्यू शाओछी ने एक साक्षात्कार में अन्ना लुई स्ट्रांग को बताया :

> माओ त्सेतुंग की महान उपलब्धि यह है कि उन्होंने मार्क्सवाद के यूरोपीय स्वरूप को एशियाई पद्धति में रूपांतरित कर दिया।...चीन एक अर्ध-सामंती और अर्ध-औपनिवेशिक देश है जिसमें अधिकांश जनता भुखमरी से पीड़ित रहती है।...एक अधिक विकसित औद्योगिक अर्थव्यवस्था की दिशा में प्रगति के प्रयास में चीन को ...विकसित देशों के दबाव का सामना करना पड़ता है ... दक्षिण-पूर्व एशिया के अन्य देशों में भी इस प्रकार की स्थितियां मौजूद हैं। चीन ने जिस मार्ग का चयन किया, उसका प्रभाव निश्चित रूप से इन सभी देशों पर पड़ेगा।[21]

माओ त्सेतुंग की इच्छा थी कि सामाजिक परिवर्तन की अपनी रणनीति को क्रियान्वित करने के लिए और समाजवादी अर्थव्यवस्था को विकसित करने के लिए सोवियत रूस द्वारा प्रयुक्त तरीकों का पूरा लाभ उठाया जाए किंतु इसके साथ ही उनका यह संकल्प भी था कि सोवियत तकनीकों का चीनी संदर्भ में उसकी विशेष परिस्थितियों को देखते हुए अनुकूलन किया जाए।

उनके कथनानुसार गंभीर समस्या कृषक वर्ग को शिक्षित करने की थी। परंतु यह कहना ही काफी नहीं था। ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक सांस्कृतिक और बौद्धिक क्रांति की आवश्यकता थी। इस क्रांति का उद्देश्य केवल यह नहीं होना था कि किसान वैज्ञानिक तकनीकों तथा अन्य विद्याओं का ज्ञान प्राप्त करें बल्कि यह भी था कि भूमि के भूखे चीनी कृषकों की व्यक्तिगत मनोदशा में भी बदलाव हो। इसके लिए जरूरी था कि भूमि सुधार की प्रक्रिया में क्रांतिकारी हिंसा का उपयोग भी आवश्यक हो। माओ त्सेतुंग ने इसके औचित्य के निम्नलिखित कारण बताए :

> जमींदार किसानों को जान से मार डालते थे।...स्थानीय गुंडे और दुष्ट जमींदारों के इन अत्याचारों और गांव में फैलाए हुए श्वेत आतंक को देखते हुए कोई यह कैसे कह सकता है कि जब किसान उठ खड़े हों तो वे इनमें कुछ को गोली का निशाना न बनाएं और प्रतिक्रांतिकारियों को दबाने के लिए छोटे पैमाने पर लाल आतंक का प्रयाग न करें।[22]

आर्थिक क्षेत्र में कम्युनिस्ट पार्टी ने काफी नरम नीति का प्रयोग किया। केवल जमींदारों की जमीनों पर कब्जा किया गया, धनी किसानों की भूमि का अधिग्रहण नहीं किया गया। ऊपरी तौर पर, यह नई आर्थिक नीति (एन.ई.पी.) के समय की सोवियत नीति से मिलती जुलती नीति थी। परंतु चीनी कम्युनिस्टों ने शुरू से ही इस नीति का अनुसरण किया था। चीन में रूस जैसा युद्ध साम्यवाद का कोई उग्रवादी चरण नहीं रहा था। सामाजिक परिवर्तन

के दृष्टिकोण से जितना महत्वपूर्ण कृषि सुधार कानून था, उतना ही महत्वपूर्ण विवाह कानून था जिसे 30 अप्रैल 1950 को पारित किया गया। इसके बुनियादी सिद्धांत थे :

> विवाह की सामंती प्रणाली का अंत करो: इसमें अनेक बंधन हैं, पुरुषों का आदर होता है और नारियों का निरादर, तथा संतानों के हितों की उपेक्षा होती है। विवाह की नई प्रणाली कायम करो : इसमें पुरुषों और स्त्रियों को विवाह के मामले में स्वतंत्रता हो, एक पति की एक पत्नी हो, स्त्रियों और पुरुषों के अधिकार समान हों, तथा पत्नियों और संतानों के अधिकारों की रक्षा हो।[23]

माओ त्सेतुंग के मतानुसार सामंतवादी प्रणाली के अंतर्गत नारियां जैसा उत्पीड़न और कष्ट सहती हैं, वह पुरुषों के कष्ट की तुलना में बहुत अधिक है। विवाह कानून का उद्देश्य था : 'प्रत्येक विवाह का आधार और बुनियादी सिद्धांत साथियों का स्वतंत्र चयन हो' और 'विवाह की संपूर्ण सामंती प्रणाली पर' तथा उस पर आधारित परिवार प्रणाली पर घातक प्रहार किया जाए।

इस सुधार का स्पष्ट राजनीतिक ध्येय व्यक्ति पर परिवार का नियंत्रण कमजोर करना था। इस प्रकार नागरिकों को सामाजिक संगठन के नए स्वरूपों में सम्मिलित करने में सुविधा होती थी जिनका उद्देश्य परंपरागत चीन के प्रगतिशील रूपांतरण में मदद करना था। इस क्षेत्र में तथा कृषि नीति के क्षेत्र में, कम्युनिस्ट सामंती समाज में दबी हुई व्यक्तिवादी शक्तियों को मुक्त करने की चेष्टा कर रहे थे, वे उनका उपयोग सामंती समाज की बुनियाद को नष्ट करने के लिए करना चाहते थे और तदुपरांत समाजीकरण के अगले चरण की प्रक्रिया को प्रारंभ करना चाहते थे।

बहरहाल सामाजिक और आर्थिक दोनों क्षेत्रों में प्रगति की रफ्तार धीमी थी। माओ त्सेतुंग को शिकायत थी कि कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य और सक्रिय कार्यकर्ताओं में भी पितृसत्तात्मक पूर्वग्रह थे। और उनमें भी वही 'सामंती दृष्टिकोण पाया जाता था जो पुरुषों को गौरव प्रदान करता है और नारियों को हीन मानता है।'[24] भूमि सुधार के बारे में ल्यू शाओछी को स्वीकार करना पड़ा : 'नव जनवाद के संपूर्ण चरण में धनी कृषक अर्थनीति को' सुरक्षित रखा जाएगा, 'उसे तभी समाप्त किया जाएगा जब यंत्रचालित कृषि के विस्तृत क्रियान्वयन के लिए, सामूहिक फार्मों के संगठन के लिए और ग्रामीण क्षेत्रों में समाजवादी सुधार के लिए परिस्थितियां परिपक्व हो जाए। उसने कहा कि 'ऐसा होने में अभी बहुत समय लगेगा।'[25]

अमरीकी आक्रमण का विरोध और कोरिया की मदद

25 जून 1950 को कोरिया में गृहयुद्ध शुरू हो गया। उत्तर और दक्षिण कोरिया का विभाजन सोवियत संघ और संयुक्त राज्य अमरीका द्वारा 38 उत्तरी अक्षांश रेखा पर जापानी सेना के आत्मसमर्पण की स्वीकृति का नतीजा था। यह द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत कोरिया की

विभाजन रेखा बन गई। कोरिया के गृहयुद्ध के प्रारंभ के तीसरे दिन अमरीका ने घोषणा की कि वह दक्षिण कोरिया को सैनिक सहायता देगा। यह कोरिया के अंदरूनी मामलों में दखलंदाजी थी। उसने अपने सातवें जहाजी बेड़े को ताइवान की खाड़ी में तैनात कर दिया। सोवियत संघ इस समय संयुक्त राष्ट्र संघ से जनवादी चीन को बाहर रखने की गैर कानूनी नीति के विरोध में उसकी सभी संस्थाओं का बहिष्कार कर रहा था। अमरीका ने सुरक्षा परिषद में सोवियत संघ की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर कोरिया में अपने आक्रमण को 'पुलिस कार्यवाही' बताकर उसके लिए समर्थन प्राप्त कर लिया और संयुक्त राष्ट्र के झंडे का दुरुपयोग करते हुए कोरिया में अपनी सेनाएं भेज दीं।

जब दक्षिण कोरिया पर उत्तर कोरिया की विजय सुनिश्चित हो गई तो अमरीकी फौजें उत्तर कोरिया में इंचोन बंदरगाह पर उतरीं और मंचूरिया में चीन की तरफ तेजी से बढ़ने लगीं। 3 अक्तूबर 1950 को चोउ एनलाइ ने चीन में स्थित भारतीय राजदूत से कहा कि वे अमरीका को निम्नलिखित संदेश भेज दें :

> कोरियाई घटना का समाधन शांतिपूर्ण तरीके से होना चाहिए और कोरियाई युद्ध तुरंत समाप्त होना चाहिए। यदि संघर्ष के क्षेत्र का विस्तार के लिए अमरीकी सेनाएं 38 अक्षांश रेखा को पार करती हैं तो हम चुपचाप नहीं बैठेंगे और उदासीन नहीं रहेंगे। हम हस्तक्षेप करेंगे।[26]

माओ त्सेतुंग ने 8 अक्तूबर 1950 को आदेश दिया कि चीनी जनता के स्वयंसेवकों को उत्तर कोरिया में अमरीकी आक्रमण से लड़ने के लिए भेजा जाए। सोवियत संघ ने पहले अपनी वायु सेना द्वारा चीन की स्थल सेना को हवाई सुरक्षा देने का आश्वासन दिया लेकिन ऐन मौके पर उसने ऐसा करने से इनकार कर दिया। 19 अक्तूबर को स्वयंसेवकों ने यालू नदी को पार किया। अमरीकियों को चीनी हस्तक्षेप की आशंका नहीं थी। चीनियों ने छापामार युद्ध और आमने-सामने लड़ाई दोनों रणनीतियों का प्रयोग किया। अमरीका के पास हवाई सुरक्षा और बेहतर हथियारों के बावजूद चीनी और उत्तर कोरियाई सैनिकों ने अमरीकी सेनाओं को कई संग्रामों में हराया। उन्हें अपमानित होकर 38 अक्षांश रेखा पर वापस जाना पड़ा।

कोरियाई युद्ध ने साबित कर दिया कि दक्षिण कोरियाई उत्तर कोरियाई सैनिकों का मुकाबला नहीं कर सकते थे क्योंकि गृहयुद्ध में दक्षिण कोरिया की पराजय निश्चित हो चुकी थी। इसी प्रकार भारी शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित अमरीकी साम्राज्यवादी सेनाओं को चीनी जनता के स्वयंसेवकों और उत्तर कोरियाई सैनिकों ने पुराने हथियारों के बावजूद पराजित कर दिया और संपूर्ण उत्तर कोरिया को उनके कब्जे से मुक्त करा लिया। हस्तक्षेप करने वाली अमरीकी फौजों को, जो चीन की सीमाओं के लिए खतरा पैदा करती थीं, 38 अक्षांश रेखा तक पीछे खदेड़ दिया गया। युद्ध तीन वर्ष तक जारी रहा।

संयुक्त राज्य अमरीका को लाचार होकर 27 जुलाई 1953 को युद्धविराम पर हस्ताक्षर करने पड़े। मार्क डब्ल्यू. क्लार्क, जो संयुक्त राष्ट्र (संयुक्त राज्य कहना ज्यादा ठीक है) की

सेनाओं का प्रधान सेनापति था, इसके विषय में हताशा के भाव में लिखता है:

> मैंने अभूतपूर्व अपयश कमाया है। अमरीका के इतिहास में मैं पहला सेनाध्यक्ष हूं जिसने एक अविजित युद्ध में युद्धविराम समझौते पर दस्तखत किए।[27]

युद्ध के इन तीन वर्षों में उत्तर कोरिया और चीन की सेनाओं ने 10.9 लाख शत्रु सैनिकों को, जिनमें 3,90,000 अमरीकी सैनिक थे, हताहत किया या बंदी बनाया, 12,000 हवाई जहाजों को नष्ट या क्षत-विक्षत किया तथा 2,690 टैंकों और 257 समुद्री जहाजों को विनष्ट किया या तोड़ दिया।

एक चीनी इतिहासकार त्सोंग हुआईवेन का मत है :

> युद्ध में पराजय ने कोरियाई जनता के जनवादी गणतंत्र को नष्ट करने और कोरिया के रास्ते चीन पर आक्रमण करने की अमरीकी योजना को विफल कर दिया। इससे चीन और अन्य देशों की जनता को दिख गया कि जनता की शक्तियां विश्व की नंबर एक साम्राज्यवादी ताकत जैसे ख़ौफनाक दुश्मन को भी धूल चटा सकती हैं। इसने चीनी जनता का विश्वास राष्ट्रीय पुनर्निर्माण में बढ़ाया और एशियाई तथा वैश्विक शांति में योगदान किया।[28]

अक्तूबर 1958 में चीन की सेनाएं उत्तर कोरिया से पूरी तौर से वापस आ गईं। अमरीकी फौजें निरंतर दक्षिण कोरिया में तैनात रहीं और आज भी यह स्थिति बनी हुई है। दक्षिण कोरिया अमरीका का संरक्षित राज्य है। इसलिए कोरियाई युद्धविराम पर दस्तखत होने के पांच दशक बाद भी वहां अमरीकी उपस्थित हैं। वियतनाम ने 1954 में फ्रांसीसियों को हराकर और 1973 में अमरीकी सेनाओं को पराजित कर अपने देश की अखंडता स्थापित कर ली। दुर्भाग्य से कोरियाई राष्ट्र अब भी दो कृत्रिम हिस्सों में विभाजित है। कोरिया में अमरीकी आक्रमण का समर्थन उसके सभी मित्र देशों ने अपनी सेनाएं भेजकर किया था। जापान का उपयोग एक सैनिक अड्डे के रूप में किया गया जो अमरीकी फौजों के लिए आपूर्ति का स्रोत था। इस युद्ध में संयुक्त राष्ट्र के ध्वज का भी दुरुपयोग किया गया।

तीन अवगुण और पांच दुर्गुण

प्रतिक्रांतिकारियों का दमन तीन महान आंदोलनों में से एक था। दो अन्य महान आंदोलन थे भूमि सुधार का क्रियान्वयन और कोरिया में अमरीकी आक्रमण का प्रतिरोध। प्रतिक्रांतिकारी जासूस कारखानों में तोड़-फोड़ करते थे, निजी और सार्वजनिक संपत्ति का विनाश करते थे, निर्माण कार्य में बाधा डालते थे और कम्युनिस्ट पार्टी के 'काडरों' की हत्या करते थे। उन्हें आशा थी कि च्यांग काई शेक चीन की मुख्य भूमि पर वापस आएगा।

पार्टी के नेतृत्व में, प्रतिक्रांतिकारियों के दमन के लिए जनता का आंदोलन चलाया गया और राज्य के ढांचों का उपयोग किया गया। यह राष्ट्रव्यापी अभियान 1951 में समाप्त

हो गया। क्वोमिन्तांग के प्रतिक्रियावादियों को नष्ट कर दिया गया। पार्टी और राज्य ने निजी उद्योग और वाणिज्य के कानूनी प्रबंधन और समुचित विकास के लिए सुरक्षा प्रदान की। फिर भी सामान्य लाभों से असंतुष्ट प्रतिक्रियावादी तत्वों ने राज्य के कर्मचारियों को रिश्वतें देकर गैरकानूनी मुनाफों को प्राप्त करने का प्रयास किया।

अतः पार्टी की केंद्रीय समिति ने पार्टी के कर्मचारियों और राज्य के अधिकारियों के बीच भ्रष्टाचार, बरबादी और नौकरशाही के 'तीन अवगुणों' के विरुद्ध राष्ट्रव्यापी अभियान शुरू किया। उसने पूंजीपतियों द्वारा राज्य के अधिकारियों को रिश्वत देने, टैक्स की चोरी, राज्य की संपत्ति की चोरी, सरकारी अनुबंधों में धोखाधड़ी, और निजी औद्योगिक तथा व्यापारिक संस्थाओं के लिए सूचनाओं की चोरी के 'पांच दुर्गुणों' के खिलाफ भी अभियान छेड़ा।

पार्टी ने इन अवगुणों और दुगुणों से संघर्ष के लिए जनता का आंदोलन तेज किया। उसने सामंती और बुर्जुआ दुर्व्यवहार का जोरदार विरोध किया और दोषियों को दंडित किया। 'बुर्जुआजी के बर्बर हमले को पीछे धकेल दो' संपूर्ण राष्ट्र की मांग बन गई। 'तीन अवगुणों' और 'पांच दुर्गुणों' के विरुद्ध ये अभियान छह महीनों तक जारी रहे। इसके बाद भी पार्टी की केंद्रीय समिति ने कहा, 'सामान्य कार्यक्रम पर आधारित राष्ट्रीय बुर्जुआजी के संबंध में हमारी राजनीतिक और आर्थिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।'[29]

नए चीन का प्रथम संविधान

चीन के जनवादी गणतंत्र का पहला संविधान सितंबर 1954 में स्वीकार किया गया। यह संविधान नव-जनवाद से समाजवाद की ओर संक्रमण का संविधान था। इसका निर्माण उस समय हुआ जब राष्ट्र ऐसे संक्रमण के लिए चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की नीतियों को क्रियान्वित कर रहा था और समाजवादी पुनर्निर्माण की ओर अग्रसर हो रहा था।

इस संविधान पर कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति में बहस 1952 के उत्तरार्ध में शुरू हुई जब देश ने आर्थिक पुनरुद्धार का कार्य पूरा कर लिया था। माओ त्सेतुंग ने पार्टी की सामान्य नीति का प्रतिपादन इन शब्दों में किया :

> चीन के जनवादी गणतंत्र की स्थापना और समाजवादी रूपांतरण के बीच के समय को संक्रमण काल कहते हैं। पार्टी की सामान्य नीति या सामान्य कार्यक्रम इस संक्रमण काल में देश के उद्योगीकरण को बुनियादी तौर से पूरा कर लेना है और कृषि, हस्तशिल्प तथा पूंजीवादी उद्योग और वाणिज्य का समाजवादी रूपांतरण करना है जिसमें काफी लंबा समय लग सकता है।[30]

तत्कालीन परिस्थितियों में, चीन की अर्थव्यवस्था पूर्ण रूप से समाजवादी होने से काफी दूर थी। समाजवादी परिवर्तन प्रारंभ करने के लिए अनुकूल स्थिति का विकास हो रहा था। चोउ एनलाई, चेन युन और ली फूचून के नेतृत्व में प्रथम पंचवर्षीय योजना नव-जनवाद से

समाजवाद की ओर संक्रमण का काम पूरा करने की चेष्टा कर रही थी। जनवादी गणतंत्र का राजनीतिक दृष्टिकोण और उसकी अर्थव्यवस्था की प्रगति ने देश की बुनियादी राजनीतिक प्रणाली यानी जन कांग्रेसों की प्रणाली को लागू करने का मौका दिया। इसे चीनी जनता के राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन ने सामान्य कार्यक्रम में पहले ही परिभाषित कर दिया था। दिसंबर 1952 में इस सलाहकार सम्मेलन ने केंद्रीय जनवादी सरकार से कहा था कि वह राष्ट्रीय जन कांग्रेसों का अधिवेशन बुलाने की व्यवस्था करे।

प्रस्ताव की स्वीकृति के बाद, माओ त्सेतुंग की अध्यक्षता में एक संविधान आयोग और चोउ एनलाई की अध्यक्षता में एक निर्वाचन कानून आयोग की स्थापना कर दी गई। अठारह वर्ष के सभी नागरिक वोट दे सकते थे। स्थानीय स्तरों पर चुनाव जून 1954 तक पूरे हो गए। उसके बाद प्रांतीय स्तर के सदस्यों ने राष्ट्रीय जन कांग्रेस के प्रतिनिधियों का चुनाव किया। राष्ट्रीय जन कांग्रेस का पहला अधिवेशन 15 सितंबर 1954 को पेइचिंग में हुआ। चीन के जनवादी गणतंत्र के संविधान को 20 सितंबर 1954 को अंगीकृत कर लिया गया।

राज्य के चरित्र की परिभाषा करते हुए संविधान ने कहा कि चीन का जनवादी गणतंत्र 'जनता का जनवादी राज्य है जिसका नेतृत्व श्रमिक वर्ग करता है और जो मजदूर-किसान गठबंधन पर आधारित है।' देश की राजनीतिक प्रणाली के बारे में संविधान ने कहा, 'चीन के जनवादी गणतंत्र में समस्त सत्ता जनता में अंतर्निहित होगी।'[31] जिन शासनांगों द्वारा जनता अपनी सत्ता का प्रयोग करती है, वे राष्ट्रीय जन कांग्रेस और स्थानीय जन कांग्रेसें हैं। ये शासनांग लोकतांत्रिक केंद्रवाद की प्रणाली के आधार पर कार्य करते हैं। संविधान के मुताबिक राज्य के शासनांग जनता पर निर्भर होने चाहिए, उन्हें जनता से घनिष्ठ संपर्क रखना चाहिए, उसके मत को ध्यान में रखना चाहिए और उसका मार्गदर्शन स्वीकार करना चाहिए।

संक्रमण काल की सामान्य नीति के विषय में संविधान ने कहा कि जनवादी चीन शोषण की प्रणाली के क्रमिक उन्मूलन और समाजवादी समाज के निर्माण का भरोसा दिलाता है। उसने यह भी कहा कि राज्य पूंजीपतियों के इस अधिकार की रक्षा करता है कि वे कानून के अनुसार उत्पादन के साधनों तथा अन्य पूंजी को अपने स्वामित्व में रखें। राज्य ही इस बात को मार्गदर्शन करेगा कि पूंजीवादी उद्योग और व्यापार का रूपांतरण 'राज्य पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के विभिन्न स्वरूपों में किस तरह करे और क्रमिक रूप से पूंजीवादी स्वामित्व के स्थान पर संपूर्ण जनता के स्वामित्व की स्थापना किस प्रकार करे।'[32]

संविधान के एक संपूर्ण अनुभाग में राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों के क्षेत्रों में स्वशासन की व्यवस्था की गई थी। अपनी वैधानिक सत्ता के अंतर्गत उनके शासनांगों को अधिकार था कि वे स्थानीय स्तर पर वित्त का प्रबंध करें, अपने शासन का संगठन करें और अपनी प्रजातीय विशेषताओं के अनुकूल कानूनों का निर्माण करें। जनवादी गणतंत्र के उच्चतर शासनांगों का यह कर्तव्य था कि वे इन राष्ट्रीय अल्पसंख्यकों के आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक विकास में सहायता करें।

संविधान में नागरिकों के मौलिक अधिकारों और कर्तव्य का विवरण भी था। सभी नागरिकों को 18 वष की आयु के बाद वोट देने और चुनाव के लिए खड़े होने का अधिकार था। इसमें नस्ल, प्रजाति, लिंग, व्यवसाय, सामाजिक उद्गम,धर्म, शिक्षा या संपत्ति के आधार पर कोई भेदभाव नहीं था। जनवादी चीन में नागरिकों को भाषण, प्रेस, सभा, समुदाय, जुलूस और प्रदर्शन का अधिकार था। संविधान ने व्यवस्था दी कि जनवादी चीन के नागरिकों को काम का अधिकार था। राज्य रोजगार की, काम के लिए बेहतर दशाओं की और अच्छे वेतनों की गारंटी सभी नागरिकों के लिए नियोजित आर्थिक विकास द्वारा करेगा। संविधान ने वृद्ध, बीमार और विकलांग लोगों को आर्थिक सहायता देने का भी प्रावधान किया।

एक अनुच्छेद में कहा गया, 'चीन के जनवादी गणतंत्र में स्त्रियों को राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और पारिवारिक जीवन के सभी क्षेत्रों में पुरुषों के बराबर दर्जा दिया गया है। राज्य, विवाह, परिवार, माता और शिशु को संरक्षण देता है।'[13] नागरिकों के कर्तव्य थे—संविधान और कानून का पालन करना, कार्यकाल में अनुशासन रखना, सार्वजनिक व्यवस्था रखना और सामाजिक नैतिकता का आदर करना। उन्हें सार्वजनिक संपत्ति का सम्मान और उनकी रक्षा करनी चाहिए। उन्हें करों का भुगतान करना चाहिए और कानून के अनुसार सैनिक सेवा करनी चाहिए।

विदेश नीति के विषय में संविधान ने कहा कि जनवादी चीन सभी देशों मे समानता, आपसी लाभ तथा एक दूसरे की संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता के परस्पर आदर के आधार पर राजनयिक संबंधों की स्थापना और विकास के लिए तैयार है। चीन के जनवादी गणतंत्र की नीति, अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में विश्व शांति और मानवता की प्रगति के लिए कार्य करना है।

संविधान के प्रारूप पर बहस के दौरान माओ त्सेतुंग और ल्यू शाओछी दोनों ने चीन में लागू संविधानों के इतिहास की चर्चा की। ये संविधान तीन प्रकार के थे। सर्वप्रथम, 19 सांविधानिक अनुच्छेद थे जिन्हें मांचू सरकार ने 1911 में प्रवर्तित किया था जब वह पतनोन्मुख थी। उसके बाद 1923 तक उत्तरी युद्ध सामंतों ने अनेक सांविधानिक प्रारूप बनाए। अंत में क्वोमिन्तांग ने भी 1949 में अपने पतन के पूर्व अपने उन संविधानों की उद्घोषणा की जिन्हें कभी लागू नहीं किया गया। इन सभी संविधानों का उद्देश्य प्रतिक्रियावादी शासन के असली स्वरूप को छिपाना था।

दूसरे प्रकार का संविधान 1911 की क्रांति के उपरांत डॉ. सुन यातसेन ने बनाया था। यह अपने समय के हिसाब से प्रगतिशील संविधान था। यह एक उदारवादी बुर्जुआ संविधान था जिसे साम्राज्यवादी शक्तियों ने लागू नहीं होने दिया क्योंकि वे नहीं चाहती थीं कि चीन स्वतंत्र पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के आधार पर स्वाधीन बुर्जुआ लोकतंत्र बन जाए :

जनवादी गणतंत्र का 1954 का संविधान चीनी जनता के क्रांतिकारी अनुभव का सारांश था जो उसने मुक्ति के पूर्व और मुक्ति के उपरांत प्राप्त किया। इस अनुभव ने

उन्हें शिक्षा दी कि चीन के पास केवल एक मार्ग नव-जनवादी क्रांति का था और इस विजय के बाद उसे नव-जनवादी चरण से समाजवादी समाज में संक्रमण करना था। संविधान को उस समय बनाया गया जब चीन ने समाजवादी समाज का लक्ष्य प्राप्त नहीं किया था। किंतु यह अपनी प्रकृति और दिशा के लिहाजन समाजवादी संविधान ही था।[34]

चीन के अंतर्राष्ट्रीय संबंध

आंतरिक नीति की भांति ही वैदेशिक नीति में, 1952 से 1955 के बीच का समय जनवादी चीन की सरकार के लिए नरम नीति का समय था। सोवियत नीति की भांति चीन की नीति का विकास भी अपनी विशिष्ट तरीके से शांतिपूर्ण सहअस्तित्व की दिशा में हुआ। कोरियाई युद्ध समाप्त करने के लिए नेहरू के प्रयासों ने स्तालिन और माओ त्सेतुंग दोनों को विश्वास दिला दिया कि भारत तथा ऐसे अन्य देशों की विश्व राजनीति में सकारात्मक भूमिका है जो सोवियत अमरीकी शीतयुद्ध में तटस्थ थे। 1951 में भारत और चीन के बीच सांस्कृतिक शिष्टमंडलों का आवागमन हुआ और अप्रैल 1954 में दोनों देशों ने एक संधि की, जिसमें शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के पांच सिद्धांतों, पंचशील, पर दोनों राष्ट्रों की सरकारों ने अपनी सहमति प्रकट की। इनमें से दो सिद्धांत वही थे जिनका सुझाव 1949 में माओ त्सेतुंग ने दिया था जिन्हें नई जनवादी सरकार द्वारा वैदेशिक संबंधों का आधार बनाया गया था।

चीन की सीमा पर स्थित गैर समाजवादी नेताओं के साथ मित्रता की इस नीति की परिणति 1955 के प्रसिद्ध बाडुंग सम्मेलन में हुई। इसके पूर्व 1949 में माओ त्सेतुंग ने एशिया के बुर्जुआ नेताओं की सत्ता से उखाड़ने का आह्वान किया था और यही मत उन्होंने जवाहरलाल नेहरू के बारे में भी व्यक्त किया था। स्टुअर्ट श्रैम का कथन है :

> यहां पर चोउ एनलाई नेहरू के साथ खड़े हुए, जिन्होंने इंडोचीन पर 1954 के जेनेवा सम्मेलन में संभ्रांत और कुशल राजनयिक होने का परिचय दिया था, ये दोनों नेता गैर-यूरोपीय विश्व के दो पमुख प्रतिनिधि थे, जो विचारधारा के आधार पर एक दूसरे से अलग थे लेकिन एशियाई होने के नाते एकजुट हो गए थे।[35]

सोवियत नेताओं की भांति चीनी कम्युनिस्टों को भी निरंतर दो नीतियों में एक का चुनाव करना पड़ता था। पहली नीति मुख्यत: राजनयिक थी जिसमें एशिया और अफ्रीका की गुटनिरपेक्ष 'बुर्जुआ' सरकारों का समर्थन किया जाता था। दूसरी नीति मुख्यत: क्रांतिकारी थी, जिसके अंतर्गत इन्हीं बुर्जुआ मित्रों की सरकारों को सत्ता से उखाड़ने का आह्वान किया जाता था। 1955-56 में सोवियत संघ ने निश्चित रूप से अल्पविकसित देशों के 'राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग ' से दोस्ती करने की नीति शुरू की, जो उसकी विदेश नीति की दीर्घकालिक

विशेषता बन गई। बांडुंग काल में चीन ने भी ऐसे देशों के प्रति अपनी उदार प्रवृत्ति और सहृदय व्यवहार का प्रदर्शन किया।

मार्च 1957 में चोउ एनलाई ने स्वीकार किया कि अनेक एशियाई और अफ्रीकी देशों ने 'राष्ट्रवादियों के नेतृत्व में स्वाधीनता और विकास के मार्ग पर प्रगति शुरू की है।'[36] लेकिन इस नीति का चीनी नेताओं के अनुभव से उत्पन्न कुछ अति गंभीर प्रवृत्तियों से गहरा अंतर्विरोध था। 1957 के उत्तरार्ध में माओ त्सेतुंग की अपेक्षाकृत अधिक उग्रवादी नीति का चरण जब आंतरिक क्षेत्र शुरू हुआ तो उसकी अभिव्यक्ति वैदेशिक नीति में भी हुई।

फिर भी 1957–58 में चीन की आंतरिक और वैदेशिक नीतियों में यह उग्रवादी मोड़ गुणात्मक रूप से भिन्न था। इसका मुख्य कारण है कि इन्हीं वर्षों में मास्को के साथ पेइचिंग के संबंधों में भी एक निर्णायक परिवर्तन हुआ। यह युग तत्कालीन विश्व इतिहास में एक प्रमुख विभाजन–स्थल था। इसके पूर्व चीन की आर्थिक और अन्य नीतियां मौलिक रूप से सोवियत नीतियों के सदृश थीं। टीटो के यूगोस्लाविया के निष्कासन के बावजूद, कम्युनिस्ट ब्लाक की लौह एकजुटता को अक्षुण्ण और अविभाज्य समझा जाता था। स्टुअर्ट श्रैम का अभिमत है :

> तदुपरांत चीन ने ऐसी नीतियों की शृंखला प्रारंभ की जो सोवियत संघ से शैली और तत्व में मौलिक रूप से भिन्न थीं। इस प्रकार ऐसी परिस्थिति विकसित हो रही थी जिसमें साम्यवाद के यूरोप-केंद्रित और एशिया-केंद्रित स्वरूपों के बीच खुला संघर्ष अनिवार्य बन गया।[37]

स्तालिन की मृत्यु की पूर्वसंध्या पर, वर्षों के तनाव के बावजूद, रूस और चीन के आपसी संबंध घनिष्ठ और समरस मालूम होते थे। फरवरी 1953 में माओ त्सेतुंग ने राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन की केंद्रीय समिति को सोवियत अनुभव के अध्ययन का महत्त्व समझाया था। एक महीने बाद स्तालिन की मृत्यु होने पर माओ त्सेतुंग ने उनकी प्रशंसा करते हुए कहा था कि वे 'वर्तमान युग के सर्वोच्च प्रतिभाशाली महामानव' थे। श्रैम का अभिमत है कि इस अंतिम प्रशंसा में या तो जान-बूझकर व्यंग्य किया गया है या इसमें नए सोवियत नेतृत्व के प्रति सम्मान का भाव अभिप्रेत है।

चीन और अमरीका के संबंध इस समय खुली शत्रुता और सीधी मुठभेड़ की दशा में थे। अमरीका तीन दिशाओं से चीन की सुरक्षा को खतरा पैदा करता था अर्थात दक्षिण कोरिया, ताइवान और इंडोचीन की ओर से।

चीन ने अपनी सीमाओं की रक्षा के लिए अमरीकी आक्रमण के विरुद्ध कोरिया में भीषण युद्ध किया था। ताइवान में भगोड़ी क्वोमिन्तांग सरकार को अमरीकी नौसेना ने संरक्षण प्रदान किया था।

जनवादी चीन अब इंडोचीन में वियतनाम, लाओस और कंबोडिया की जनता के स्वाधीनता संघर्ष का समर्थन कर रहा था। फ्रांस के औपनिवेशिक शासक इन देशों में

फ्रांसीसी प्रभुत्व की पुन: स्थापना करना चाहते थे। 1954 के जेनेवा सम्मेलन में चीन ने फ्रांस द्वारा इंडोचीन में जारी औपनिवेशिक युद्ध को अपने कूटनीतिक कौशल से रोक दिया और इस संबंध में अमरीकी योजनाओं को विफल कर दिया। सम्मेलन में एक समझौते द्वारा इंडोचीन के राष्ट्रों की आजादी के अधिकार को प्रायद्वीप में मान्यता दे दी गई।

जनवादी चीन अमरीका की इस नीति से भी अप्रसन्न था कि न तो वह उसे राजनयिक मान्यता देता था और न उसको आर्थिक नाकेबंदी को हटाने का संकेत देता था। उसने अमरीका पर आरोप लगाया कि वह चीन की मुख्य भूमि पर बचे हुए क्वोमिन्तांग तत्वों की प्रतिक्रांतिकारी और तोड़-फोड़ की गतिविधियों का सक्रिय समर्थन करता है। इसके अलावा वह ताइवान में च्यांग काई शेक सरकार को सैनिक और वित्तीय सहायता दे रहा है। त्सोंग हुआइवेन का कथन है: 'नए चीन के प्रति शत्रुता की अमरीकी नीति ने, जो दीर्घ काल तक जारी रही, चीनी जनता और अमरीका के बीच संबंध विकसित नहीं होने दिया।'[38]

परमाणु युद्ध के बारे में माओ त्सेतुंग के विचार इतिहासकारों के बीच चर्चा का विषय बने हुए हैं। कुछ का मत है कि ये यथार्थवादी नहीं थे। उनके अनुसार माओ ने कहा :

> मैंने इस प्रश्न पर एक विदेशी राजनीतिज्ञ से बहस की थी। उसका विश्वास था कि यदि परमाणु युद्ध लड़ा गया, तो संपूर्ण मानव जाति का विनाश हो जाएगा। मैंने कहा कि यदि यह दु:खदायी घटना घटी तो आधी मानव जाति की मृत्यु हो सकती है, लेकिन शेष आधी फिर भी जीवित रहेगी। परंतु साम्राज्यवाद पराजित होकर धराशायी हो जाएगा और संपूर्ण विश्व समाजवादी बन जाएगा।[39]

इस वक्तव्य के सोवियत संस्करण और अन्य चीनी विवरणों के अनुसार, कथित 'विदेशी राजनीतिज्ञ' का नाम जवाहरलाल नेहरू था। माओ त्सेतुंग के मतानुसार परमाणु बम केवल 'कागजी शेर' था। जिस हालत में चीन था उसको साहस दिखाना जरूरी था। यदि परमाणु बम अमरीका की सैनिक शक्ति का प्रतीक थे तो उससे घबराने का अर्थ चीनी जनता का मनोबल गिराना था। इसलिए शायद माओ ने ऐसे विचार रखे लेकिन उनको युद्धप्रेमी समझना गलत होगा।

सौ-सौ फूल खिलें अभियान

माओ त्सेतुंग का विश्वास था कि चीन के लोग लोकतांत्रिक आजादी और समाजवादी अनुशासन के संतुलन को अच्छी तरह समझते थे। 1957 के बसंत में उनकी नीति का यही आधार था, जब 'सौ-सौ फूल खिलें अभियान' अपनी चरम सीमा पर पहुंचा।

स्टुअर्ट श्रैम के अनुसार यह नीति 'उदारीकरण' पर आधरित नहीं थी, जैसा पश्चिमी प्रेक्षकों ने उस समय अनुमान लगाया था। इसका उद्देश्य सभी प्रकार के अभिमतों और विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रदान करना नहीं था। माओ त्सेतुंग का विश्वास था

कि यदि विभिन्न प्रतिद्वंद्वी दृष्टिकोणों के बीच खुली बहस को प्रोत्साहन दिया जाए तो इस वाद-विवाद में श्रेष्ठतर चिंतन पद्धति होने के कारण मार्क्सवाद की विजय सुनिश्चित है।

माओ त्सेतुंग ने सोचा था कि अंत में इस प्रक्रिया के द्वारा गैर-कम्युनिस्ट बुद्धिजीवी, लेखक और सक्रिय कार्यकर्ता मार्क्सवाद की ओर आकर्षित होंगे और उनका रूपांतरण समाजवादी विचारकों में हो जाएगा। गैर-मार्क्सवादियों की आलोचना के जरिए मार्क्सवादियों को भी अपने त्रुटिपूर्ण मतों पर पुनर्विचार कर उन्हें सुधारने का मौका मिलेगा। माओ त्सेतुंग ने कहा :

> सही विचारों को अगर बंद नर्सरी में मौसम के प्रहारों से बचाकर रखा जाए या रोग से बचाने के लिए जरूरी टीके उन्हें न लगाए जाएं तो वे गलत विचारों के ऊपर विजय नहीं पा सकते।[40]

माओ त्सेतुंग की ये आशाएं पूरी नहीं हुईं। आलोचक कुछ खास दुर्गुणों की आलोचना करके ही संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने संपूर्ण प्रणाली की बुनियादी मान्यताओं को ही अस्वीकार कर दिया तथा कम्युनिस्ट पार्टी के हाथों में सत्ता के संकेंद्रण और एकाधिकार का भी विरोध किया।

अतः माओ त्सेतुंग ने अपने सूत्र के दूसरे अंश पर बल देना प्रारंभ कर दिया अर्थात समाजवादी अनुशासन को लेकर एक शुद्धीकरण अभियान 1957 की शुरुआत से प्रारंभ हुआ। इसका मूल लक्ष्य पार्टी और राज्य के 'काडरों' (संगठनकर्मियों) में नौकरशाही प्रवृत्तियों के खिलाफ संघर्ष करना था। इस अभियान को अब 'दक्षिणपंथी तत्वों' के विरुद्ध ओजपूर्ण संघर्ष में बदल दिया गया। इन प्रतिक्रियावादियों को 'नसीहत' देने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में शारीरिक श्रम द्वारा अपना सुधार करने के लिए भेज दिया गया। स्टुअर्ट श्रैम का कथन है कि 'दक्षिणपंथियों' के पुनर्शिक्षण के लिए उन्हें इतने कठोर कामों में लगाया गया कि उनमें से बहुत लोगों का स्वास्थ्य खराब हो गया। पेइचिंग यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर ही शौचालय साफ करते थे (शायद गांधीजी द्वारा चलाए गए आश्रम से चीनी कम्युनिस्ट प्रभावित हो गए हों)। सामाजिक नियंत्रण की कठोर नीतियों का मकसद 'दक्षिणपंथियों' का आत्मबल तोड़ना था या उन्हें पुनर्शिक्षित करना? इस प्रश्न पर गंभीरता से विचार करना चाहिए। फिर भी हम कह सकते हैं कि इस उग्रवादी मोड़ ने चीन में 'समाजवादी कानून' की ओर प्रगति को भी अवरुद्ध कर दिया।

इस अध्याय में पहले ही बताया जा चुका है कि 1949 में संपूर्ण चीन (ताइवान को छोड़कर) के प्रशासन को सही दिशा देना चीन के कम्युनिस्टों के लिए अत्यंत कठिन कार्य था। युद्धों में उजड़ा हुआ चीन उनके हाथ लगा था। यह ठीक है कि उस समय चीन के कम्युनिस्ट उत्साह तथा साहस से भरपूर थे क्योंकि उन्होंने दुनिया की सर्वाधिक आबादी वाले देश पर झंडा फहरा दिया था लेकिन नया चीन बनाने के लिए आर्थिक परिस्थिति बिलकुल अनुकूल नहीं थी।

ऐसी हालत में कम्युनिस्ट पार्टी ने दृढ़ता से इन आर्थिक समस्याओं से निबटने का

पक्का इरादा किया। आर्थिक नीति किसी भी सरकार की जान होती है और उसे समय के अनुकूल ढालना आसान नहीं होता। फिर चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रमुख नेता राजनीति तथा युद्ध के क्षेत्र में अपना लोहा मनवा चुके थे। लेकिन जहां तक अर्थशास्त्र का संबंध था, उनका ज्ञान तथा तजरबा अधिक नहीं था। खुद माओ ने भी कभी इस क्षेत्र में अपनी डींग नहीं हांकी। इसी कारण शुरू में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी को फूंक-फूंककर आर्थिक क्षेत्र में कदम रखना पड़ा।

सामूहिक बल पर चीन की कम्युनिस्ट पार्टी शुरू के वर्षों में बहुत हद तक अपने लक्ष्य प्राप्त करने में सफल हुई और इस तरह 1949 से 1958 तक के वर्षों में चीन ने आर्थिक क्षेत्र में अत्यंत तरक्की की और दुनिया को हैरत में डाल दिया। लेकिन 1959 से 1976 के बीच यानी 'महान लंबी छलांग' और सांस्कृतिक क्रांति ने चीन की अर्थव्यवस्था पर एक करारी चोट मारी और चीन में आर्थिक विकास की गति पिछड़ गई। फिर भी चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने इन बिगड़ते हुए हालात को संभाला और एक बार फिर चीन 1976 के बाद आर्थिक प्रगति के मार्ग पर चल पड़ा। आगामी दुनिया में संयुक्त राज्य अमरीका या चीन आर्थिक क्षेत्र में नंबर एक होगा। अब यह संभावना सामने आ रही है।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. माओ त्सेतुग, *सेलेक्टेड वर्क्स*, खंड IV, पृ. 276.
2. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 249.
3. माओ त्सेतुंग, *सेलेक्टेड वर्क्स*, खंड IV, पृ. 208.
4. वही, पृ. 415.
5. वही, पृ. 417- 19.
6. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 389.
7. वही, पृ. 399-400.
8. *शिन हुआ पेकिंग डायरी*, खंड I, सं. 3, पृ. 579.
9. डर्क बोडे, *पेकिंग डायरी*, 4 मार्च 1949.
10. हू शेंग (संपा), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 313.
11. हान सूयिन, *बर्डलेस समर*, पृ 294.
12. वही, पृ. 20.
13. आर्थर जी. ऐशब्रुक, *एन इकानामिक प्रोफाइल आफ मेनलैंड चाइना*, पृ. 18.
14. वही, पृ. 20.
15. ई. एल. व्हीलराइट और ब्रूस मैकफार्लेन, *दि चाइनीज रोड टु सोशलिज्म*, पृ. 35.
16. वही, पृ. 36.
17. माओ त्सेतुंग, *आन दि क्वेश्चन आफ एग्रीकल्चर का-आपरेटिव्ज*, पृ. 19.
18. ई.एल. व्हीलराइट और ब्रूस मैकफार्लेन, *दि चाइनीज रोड टु सोशलिज्म*, पृ. 40.
19. वही, पृ. 41.
20. वही, पृ. 41-42.

21. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 254.
22. वही, पृ. 258.
23. वही, पृ. 260 (पाद टिप्पणी).
24. वही, पृ 261.
25. *दि ऐग्रेरियन रिफार्म ला आफ दि पीपुल्स रिपब्लिक आफ चाइना* पृ 89
26. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना* पृ 411
27. मार्क डब्ल्यू. क्लार्क, *फ्राम दि डेन्यूब रिवर टू दि यालू रिवर* पृ 11
28. त्सोंग हवाई वेन, *ईयर्स आफ ट्रायल, टर्मोइल एंड ट्रायम्फ*, पृ. 23
29 हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ 432
30. त्सोंग हवाई वेन, *ईयर्स आफ ट्रायल टर्मोइल एंड ट्रायम्फ*, पृ. 40
31. वही, पृ. 43.
32. वही, पृ. 43-44.
33. वही, पृ 44.
34. वही, पृ. 45.
35. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 282.
36. देंकोसे और श्रैम, *मार्क्सिज्म इन एशिया* पृ 414 15.
37 स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 283
38 त्सोंग हवाई वेन, *ईयर्स आफ ट्रायल, टर्मोइल एंड ट्रायम्फ*, पृ 65
39. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 291.
40. वही, पृ 289.

अध्याय तेरह

लंबी छलांग और जन-कम्यून

नवीन उग्रवादी नीति

1958 के वसंत में एक नवीन उग्रवादी आर्थिक नीति की शुरुआत हुई जिसके नारे थे, 'प्रगति की लंबी छलांग' और 'अबाधित क्रांति'। स्टुअर्ट श्रैम इसे 'स्थायी क्रांति' कहना पसंद करते हैं। उनका कहना है कि इस धारणा को व्यक्त करने वाला चीनी भाषा का शब्द *पूतुआन कोमिंग* है जिसका सही अनुवाद 'स्थायी क्रांति' है न कि 'अबाधित क्रांति'।[1] अधिक प्रचलित 'अबाधित क्रांति' शब्द ठीक होगा क्योंकि 'स्थायी क्रांति' त्रात्स्कीवादी क्रांति की संकल्पना के लिए अधिक प्रयुक्त होने लगा है जिससे माओ त्सेतुंग का बुनियादी मतभेद था।

माओ त्सेतुंग के लिए इस शब्द का अभिप्राय चीन (तृतीय विश्व के देश) में ऐसी 'निरंतर' और अबाधित क्रांति से था जो नव-जनवादी चरण में शुरू होकर समाजवादी चरण तक जारी रहेगी। त्रात्स्की को विश्वास था कि सभी देशों को, चाहे वे विकसित हों या विकासशील, समाजवादी क्रांति करने का प्रयास करना चाहिए और कोई भी देश, जब तक प्रमुख पूंजीवादी देशों में क्रांति न हो जाए, अकेले अपने देश में समाजवाद का निर्माण नहीं कर सकता। इसी कारण त्रात्स्की ने स्तालिन की एकदेशीय समाजवादी निर्माण की नीति का विरोध किया और कहा कि जर्मन क्रांति सोवियत रूस में समाजवाद की सफलता की आवश्यक पूर्व शर्त है।

अप्रैल 1958 में, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की आठवीं कांग्रेस के दूसरे सत्र की पूर्वसंध्या पर 'प्रगतिशील लंबी छलांग' और 'अबाधित क्रांति' के लक्ष्यों को घोषित किया गया। इस अवसर पर माओ त्सेतुंग ने चीनी जनता का कायाकल्प करने के अपने संकल्प को निम्नलिखित शब्दों में अभिव्यक्त किया :

> अपनी अन्य अनेक विशेषताओं के अतिरिक्त चीन के साठ करोड़ लोगों की दो खास खूबियां हैं। सर्वप्रथम वे गरीब हैं और दूसरे वे कोरे कागज की तरह हैं। यह बुरी बात मालूम होती है, मगर वास्तव में यह अच्छी बात है। गरीब लोग परिवर्तन चाहते हैं, कुछ काम कर दिखाना चाहते हैं, क्रांति चाहते हैं। कोरे कागज पर धब्बे नहीं होते, और उस पर नए और सुंदर शब्द लिखे जा सकते हैं, साफ-सुथरे कागज पर चित्रकार अति सुदंर और बिलकुल नए चित्र बना सकता है।[2]

इन्हीं कारणों से माओ त्सेतुंग ने सोचा कि चीन को 'संभवत: औद्योगिक तथा कृषि उत्पादन

के क्षेत्र में बड़े पूंजीवादी देशों के बराबर पहुंचने में उतना समय नहीं लगेगा जितना पहले सोचा गया था। अत: मई 1958 में पार्टी कांग्रेस में ल्यू शाओछी ने 'प्रगति की लंबी छलांग' और 'अबाधित क्रांति' के समर्थन में प्रस्ताव रखे जिन्हें माओ त्सेतुंग की अनुमति प्राप्त थी।

जब 1958 की गरमियों में जन-कम्यूनों का निर्माण प्रयोग के रूप में प्रारंभ हुआ तो माओ त्सेतुंग ने उनके विकास के लिए व्यक्तिगत रूप से पहल की और प्रोत्साहन दिया।

सितंबर 1958 में संपूर्ण चीन के सर्वेक्षण के उपरांत माओ त्सेतुंग ने घोषणा की कि कृषिगत वृद्धि के लिए जन-कम्यूनों का संपूर्ण चीन में विस्तार करना आवश्यक है। इसी के साथ-साथ उन्होंने घरेलू फौलाद/इस्पात के छोटे पैमाने पर उत्पादन की बात भी कही और बताया कि ग्रामीण क्षेत्रों में लोहे से इस्पात बनाने के लिए भट्ठियां स्थापित की जा सकती हैं। आर्थिक विकास के बारे में अपने दृष्टिकोण को माओ त्सेतुंग ने निम्नलिखित शब्दों में प्रकट किया :

> इस यात्रा से मैंने जनता की असाधारण ऊर्जा को देखा है। इसके आधार पर किसी भी कार्य को पूरा किया जा सकता है। हमें सबसे पहले लोहे और इस्पात के मोरचे पर अपने कामों को पूरा कर लेना चाहिए। इन क्षेत्रों में जनता का अभियान पहले हो शुरू किया जा चुका है। इसके बावजूद देश में ऐसे स्थान बचे हुए हैं, कुछ ऐसे उद्योग बच गए हैं, जहां इस अभियान को भली भांति लागू नहीं किया गया है।...हमारे कुछ साथी ऐसे हैं जो औद्योगिक क्षेत्र में बड़े पैमाने पर किसी जन अभियान को लागू करने के इच्छुक नहीं हैं। वे औद्योगिक मोरचे पर जन आंदोलन को 'अनियमित' समझते हैं और उसका तिरस्कार करते हुए कहते हैं कि यह काम करने की ग्रामीण शैली' है और 'गुरिल्ला आदत' है। यह बात निश्चित रूप से गलत है।[3]

प्रगति की लंबी छलांग के पहले तक रोमांसवाद को एक प्रतिक्रियावादी सिद्धांत माना जाता था। परंतु 'क्रांतिकारी रोमांसवाद' की बात अलग थी। उसको परिभाषा थी कि यह जीवन में नई चीजों को देखने का प्रयास है, इन नई चीजों पर विचार में निपुण होने का प्रयत्न है और उनके विकास में सहायता करने की चेष्टा है।[4]

लेनिन की भांति माओ त्सेतुंग का भी अभिमत था कि हमें वस्तुपरक परिस्थितियों का ध्यान रखना चाहिए लेकिन बढ़ा-चढ़ाकर उनका आकलन नहीं करना चाहिए और उन्हें निष्क्रियता या कार्य करने की अनिच्छा का बहाना नहीं बनाना चाहिए।

जन-कम्यूनों की प्रणाली का विस्तार 1958 के अंत तक संपूर्ण चीन में कर दिया गया। इस संस्था की स्थापना से माओ त्सेतुंग के व्यक्तित्व में निहित क्रांतिकारी रोमांसवादी प्रवृत्ति का पता चलता है। जन-कम्यूनों की स्थापना का उद्देश्य आर्थिक दृष्टिकोण से राष्ट्रीय विकास की गति को तेज करना था। यह प्रणाली मानव-श्रम के संगठन के लिए एक प्रशासनिक ढांचा प्रदान करती थी जिसके द्वारा दुर्लभ मशीनों की जगह मजदूरों के श्रम का उपयोग किया जा सके तथा खेती के लिए विशाल इकाइयों का निर्माण हो सके। ऐसा होने पर ही उसमें ट्रेक्टरों तथा अन्य मशीनों का उपयोग किया जा सकता था। स्टुअर्ट श्रैम का मत है :

> राजनीतिक दृष्टिकोण से उनका उद्देश्य व्यक्ति पर राज्य का नियंत्रण सुदृढ़ करना था। उनके जरिए बुनियादी स्तर पर शासन, प्रशासन तथा आर्थिक और सैनिक तंत्रों को संयुक्त करने की कोशिश की गई थी। वे होड़ को बढ़ावा देने वाली संस्था जैसे परिवार को कमजोर करते थे। विचारधारा के स्तर पर जन-कम्यून इस बात का प्रमाण थे...कि चीन ने ऐसी सामाजिक पद्धतियों को खोज कर व्यावहारिक रूप दे दिया है जो रूस की तुलना में अधिक अग्रगामी हैं, हालांकि चीनी क्रांति अभी शैशव काल में ही थी।[5]

इसके अलावा, श्रैम का कथन है कि माओ त्सेतुंग के स्वैच्छिकतावाद में कल्पित आदर्शवाद का तत्व भी निहित था। इसकी अभिव्यक्ति 1958 की गरमियों में हुनान के किसानों के एक गीत में हुई थी :

> जन-कम्यून की स्थापना स्वर्ग की यात्रा जैसी है, एक रात की उपलब्धियां युगों से बढ़कर हैं। तेज चाकू निजी जायदाद की जड़ों को काटता है, नए ऐतिहासिक युग का जन्म हो रहा है।[6]

लेनिन का स्वैच्छिकतावाद राजनीति तक सीमित था, किंतु माओ ने उसका विस्तार प्रकृति के क्षेत्र में कर दिया था। माओ का विश्वास था कि अनुर्वर चिंतन तो हो सकता है लेकिन 'अनुर्वर भूमि' भूमि नहीं हो सकती। 'लंबी छलांग' के 'दौरान, उन्होंने कहा कि लोग' कार्य के लिए अपनी आत्मपरक क्षमताओं द्वारा वास्तव में 'प्राकृतिक स्थिति को बदल सकने हैं।' स्तालिन की भी महत्वाकांक्षा थी कि वे 'रेगिस्तानों को बगीचों में बदल दें,' लेकिन उन्होंने यह कभी नहीं कहा कि रेगिस्तान मौजूद नहीं हैं। माओ का विचार था कि चीन में वस्तुपरक कठिनाइयों पर जीत हासिल कर तुरंत साम्यवाद की स्थापना संभव है जिसे मास्को में स्वीकार नहीं किया गया। इस संदर्भ में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी का दृष्टिकोण ठीक था।

'दो पैरों पर चलने' की नीति

1957 तक पश्चिमी लेखकों ने आर्थिक विकास की चीनी रणनीति को आंशिक समर्थन दिया था परंतु प्रगति की लंबी छलांग और 'दो पैरों पर चलने ' की औद्योगिक नीति के बारे में उन्होंने शुरू से संशय प्रकट किया। इसके अंतर्गत विशाल, लघु और मध्य दर्जे के उद्योगों के एक साथ विकास की और परंपरागत तथा आधुनिक तकनीकों के इकट्ठे प्रयोग की बात कही गई थी। इस कार्यक्रम से पश्चिमी अर्थशास्त्रियों को बहुत निराशा हुई। उन्होंने इन नीतियों को विपदाजनक और विफल बताया। ये नीतियां 1959 से 1961 तक के संकट के लिए उत्तरदायी थीं। पश्चिमी प्रेक्षकों का अभिमत था कि चीन के नेताओं ने उनका चयन मुख्य रूप से राजनीतिक कारणों से और विचारधारा से प्रेरित होकर किया

था। व्हीलराइट और मैकफार्लेन का कथन है :

> हम इन मतों से सहमत नहीं हैं। जैसा हम दिखाएंगे...वे लंबी छलांग की गलत धारणा पर आधारित हैं जिसमें उसे कम्यूनों के सृजन, और 'घर के पिछवाड़े' लोहे के उत्पादन का मिश्रण मान लिया गया है। कम्यून प्रणाली का उद्देश्य समाजवाद को मजबूत करना, बाजार के लिए कृषिगत अधिशेष को बढ़ाना और स्थानीय कृषिगत तथा अन्य निवेशगत अवसरों की वृद्धि करना था। 'दो पैरों पर चलने' की औद्योगिक नीति का उद्देश्य औद्योगिक विकास के उन स्रोतों का उपयोग करना था जो कोयले और लोहे की खानों के रूप में उपलब्ध हो सकते थे। इसके लिए देश के अंदरूनी प्रदेश में, कम्यूनों के अंदर और बाहर, छोटे पैमाने पर स्वदेशी प्रौद्योगिकी द्वारा, लघु और मध्यम दर्जे के उद्योगों के विकास का कार्यक्रम भी था। इस अर्थ में इसे तुरंत उद्योगीकरण का कार्यक्रम माना जा सकता था, परंतु यह विकासशील कृषिगत समाजवाद के अंतर्गत ही था और इसमें बड़े पैमाने पर शहरों में श्रमिकों के स्थानांतरण की आवश्यकता भी नहीं थी।[7]

योजना आयोग के प्रधान ली फुचून ने 'दो पैरों पर चलने' की नीति की परिभाषा इन शब्दों में की थी :

> हमारा कार्य बड़े, छोटे और मध्यम दर्जे के उद्यमों के बीच औद्योगिक निर्माण के दौरान, निवेशों के उचित वितरण का निर्णय करना है और इन विभिन्न उद्यमों के निर्माण में समन्वय और परस्पर सहयोग स्थापित करना है। ..अनेक मध्यम और लघु पैमाने के उद्योग...बड़ी प्राथमिक परियोजनाओं के निर्माण में समर्थन और सहायता देने के लिए पूंजी संचय में अपरिहार्य कारक के रूप में योगदान करते हैं।[8]

स्पष्ट है कि श्रम केंद्रित, लघु पैमाने की उत्पादन इकाइयों का यह व्यापक उपयोग चीन की 'कारक-अनुपात' स्थिति से पैदा हुआ था। दरअसल चीन में पूंजी की अपेक्षाकृत कमी थी किंतु मानव-श्रम की बहुलता थी। 'भारी' क्षेत्र में स्थानीय लघु उद्योगों के विकास से भी कुछ आर्थिक लाभ हुए। इन लाभों को संक्षेप में निम्नलिखित शब्दों में बताया जा सकता है :

1. जहां बाजार और कच्चे माल के स्रोत निकट थे, उन कम्यूनों में विविध प्रकार के उद्योगों की स्थापना संभव थी, और यातायात की समस्या का भी समाधान हो जाता था। इसके द्वारा क्षेत्रीय स्वावलंबन भी होता था।
2. इससे उद्योग की भौगोलिक स्थिति में सुधार की बात जुड़ी थी और पिछड़े क्षेत्रों में विकास की सुविधा हो जाती थी।
3. छोटे उद्योगों के उत्पादन में गुणवत्ता की मांग कम थी जिससे कीमतों को कम करते हुए प्रौद्योगिक समाधानों को खोजना जरूरी था।
4. उद्योगों के छोटे पैमाने की वजह से निवेश और उनसे प्राप्त होने वाले लाभ के

बीच अंतराल कम हो जाता था।

5. निम्न पूंजी सघनता संभव थी लेकिन तभी जब स्थानीय रूप से पर्याप्त श्रम मौजूद हो।

चीन में आने वाले पश्चिमी प्रक्षेकों ने 1958-59 में निर्माण और संचालन में बचतों की बाबत बताया। चार्ल्स बीतलहाइम ने कुछ ऐसी मिलों के बारे में बताया जिनका निर्माण तीन दिनों में 300 युआन (150 अमरीकी डालर) में हो गया। इस तरह की छोटी मिलें 12 लाख टन तेल का उत्पादन करती थीं जो 1957 के कुल उत्पादन का 80 प्रतिशत था।

वूहान में बीतलहाइम ने एक 3.5 घन मीटर की इस्पात की छोटी भट्ठी देखी जो एक साल में 180 टन इस्पात का उत्पादन करती थी।

एक अन्य प्रेक्षक एडलर का कथन है कि 1958-59 में इन छोटी भट्ठियों की कुल उत्पादन क्षमता 24,000 घन मीटर थी जो कुल कच्चे लोहे के उत्पाद के 50 प्रतिशत का उत्पादन करती थीं। इस्पात उद्योग में, छोटे और मध्यम दर्जे के 'कन्वर्टरों' ने 30 लाख टन इस्पात का उत्पादन किया, जो कुल इस्पात के उत्पाद का 20 प्रतिशत था।

पश्चिमी अर्थशास्त्रियों का मत है कि लघु उद्योगों के लिए श्रम के संसाधनों का आवंटन आर्थिक दृष्टिकोण से उपयोगी नहीं था। व्हीलराइट और मैकफार्लेन इस कथन से सहमत नहीं हैं। वे कहते हैं :

> इस सिद्धांत के समर्थन में बहुत कम विश्वसनीय प्रमाण प्रस्तुत किए गए हैं।...लघु रासायनिक उद्योग का दृष्टांत बताता है कि 'दो पैरों पर चलने' की नीति का अभिप्राय यह नहीं था कि ग्रामीण उद्योगीकरण के हितों के लिए बड़े उद्योगों और बड़े कारखानों के 'सेक्टर' विकास का बलिदान किया जाए।[9]

इन छोटे उद्यमों में करोड़ों औरतें काम कर रही थीं। उन्हें उनके कामों से छुड़ाकर दूर शहरों में भेजा जाना संभव नहीं था। इसके लिए कम्यूनों के आर्थिक ढांचे को बदलना पड़ता और श्रम-विभाजन का पुनर्गठन करना भी आवश्यक होता।

संपूर्ण लंबी छलांग की रणनीति और उसके अनुकरण अभियान के फलस्वरूप अनेक नई तकनीकों की खोज हुई जिनकी वजह से उत्पादन की दर बढ़ी और उत्पादन की लागत में कमी आई। व्हीलराइट और मैकफार्लेन इस मत को नहीं मानते कि छोटे और मध्यम दर्जे के उद्यमों की स्थापना केवल राजनीतिक कारणों से की गई थी। वे पश्चिमी अर्थशास्त्रियों की इस बात से भी सहमत नहीं हैं कि उनके उत्पादों की कीमतें अधिक थीं लेकिन उनकी गुणवत्ता कम थी और इसलिए उन उद्योगों को बंद करना पड़ा। बहरहाल छोटे और मध्यम दर्जे की भट्ठियों के सचेतन विकास, छोटे रासायनिक उद्योगों और मशीन निर्माण कार्यशालाओं में वृद्धि तथा अल्पकालिक 'घर के पिछवाड़े कारखाना लगाओ' अभियान के बीच अंतर करने की जरूरत है। पश्चिमी आलोचक चीन की आर्थिक नीति को अच्छी तरह समझ सकते हैं अगर वे लंबी छलांग को कम्यूनों, 'पिछवाड़े में लोहे के उत्पादन' और 'दो पैरों पर चलने' की नीति का मिश्रण न मानें।

जन-कम्यूनों का विकास

जन-कम्यून केवल नई प्रशासनिक इकाई अथवा उद्योग की स्थापना में विकेंद्रीकरण की पद्धति ही नहीं थे। वे मुख्य रूप से कृषिगत समाजवाद की स्थापना के प्रयास थे। उनका आधार था सामूहिक श्रम, सामूहिक जीवन-शैली और गांवों में नई गतिविधियां प्रारंभ करने की पद्धति। उन्होंने कृषि के क्षेत्र में श्रम-विभाजन में सुधार किया। वस्तुतः उनका विकास सहकारी संघों से हुआ।

जन-कम्यूनों ने जल संचय केंद्रों, नहरों के निर्माण और सिंचाई के कार्यों में बड़े पैमाने पर सहकारिता के लिए सुविधाएं प्रदान कीं। सितंबर 1958 तक 7,50,000 कृषि सहकारी संघों को 23,384 जन-कम्यूनों में पुनर्गठित कर दिया गया। इनमें 90 प्रतिशत परिवारों को शामिल कर लिया गया।

जन-कम्यून केवल उत्पादन की इकाइयां नहीं थे, वे प्रशासन की इकाइयां भी थे। वे सदस्यों की शिक्षा के लिए, तथा उनके और नागरिकों के स्वास्थ्य और प्रतिरक्षा के लिए भी उत्तरदायी थे।

जन-कम्यूनों के विस्तार के साथ स्वामित्व की समस्याएं, और लेखा-जोखा, नियोजन और आय के वितरण के प्रश्न भी सामने आए। 1958 के अंत तक किसानों ने अपनी निजी संपत्ति की अधिकतर वस्तुओं को समाज के अधिकार में दे दिया था। जन-कम्यूनों के पहले चरण में भूमि, पूंजी, वस्तुओं और उत्पादन का एकमात्र स्वामित्व जन-कम्यूनों को ही दिया गया था। ब्रिगेडों, टीमों या प्रशासनिक जिलों को स्वामित्व के अधिकार से वंचित रखा गया था।

समस्याएं असमान धन और योग्यता वाले सहकारी संघों को एक साथ कर देने से उत्पन्न हुईं। ये समस्याएं उन कम्यूनों में गंभीर हो गईं जहां उपभोग की वस्तुओं के रूप में बराबर वेतन का भुगतान किया जाता था। दिसंबर 1958 में जब वूचांग प्रस्ताव ने जरूरत पर आधारित भुगतान को रोक दिया और काम के अनुसार वेतन देने का फैसला किया तो ग्रामों अर्थात उत्पादन ब्रिगेडों को 'लेखा-जोखा की मुख्य इकाइयों' के रूप में मान्यता मिल गई। अगस्त 1959 के लूशान प्रस्ताव द्वारा इसे वैधता दे दी गई। इसके बाद भी कम्यून औद्योगिक कारखानों के मालिक रहे और राज्य के शासनांगों के साथ संबंधों पर भी उनका ही नियंत्रण कायम रहा।

सहकारी संघ की तरह, जन-कम्यून भी वेतन को स्थगित कर सकता अथवा अवैतनिक सामूहिक श्रम के तरीके का उपयोग कर सकता था। इससे अधिक भी वह कर सकता था लेकिन तभी जब वह नैतिक प्रेरणा देने की स्थिति में हो। अवैतनिक श्रम के उपयोग में जन-कम्यून की इस सुविधा का लाभ न केवल खेती के कार्य में उठाया जा सकता था बल्कि जन संचय और सिंचाई के कामों में भी, और सहकारी संघ की तुलना में अधिक बड़े पैमाने पर। पर्याप्त प्रतिबंधों, निरीक्षकों और प्रेरकों द्वारा श्रम को भौतिक पूंजी के सृजन के लिए पुनर्गठित किया जा सकता था। इसके लिए भोजन और 'वेतन वस्तुओं' की

आपूर्ति से मुद्रा-वेतन के दबाव से छुटकारा मिल जाता था।

इसका यह अर्थ नहीं कि इस संपूर्ण सामूहिक श्रम का सर्वोत्तम लाभ उठाया जा सका। अनेक गलतियां हुईं। बड़े बांधों के निर्माण की व्यग्रता में जल भंडार केंद्रों से खेतों तक नालियां बनाने के काम की उपेक्षा की गई। भूगर्भ मानचित्रों, मिट्टी में मिलावट, नदी के प्रवाह और मौसम में परिवर्तनों की विस्तार से जानकारी नहीं ली गई...बहुत सी नहरों का पानी छिद्रों से निकल जाता था।...कुल मिलाकार, उपलब्धियां त्रुटियों की तुलना में शायद अधिक महत्वपूर्ण थीं, हालांकि 1960-61 के दौरान इसके दुर्गुणों ने तत्कालीन प्राकृतिक मुसीबतों के असर को दोगुना कर दिया।

जन-कम्यून केवल कृषि के सुधार या इसके लिए सार्वजनिक परियोजनाओं के निर्माण के ही लिए नहीं बने थे। इनकी कार्यसूची में उद्योग को भी स्थान दिया गया था। लोहा और इस्पात, तेजाब बनाने के लिए बेकार चीजों का प्रयोग, खाद, खाद्य-प्रक्रिया के उपयोग, इत्यादि का विकास किया गया। इसके अलावा, जन-कम्यून राज्य की सत्ता की एक इकाई था जिसके माध्यम से मानव- शक्ति और उपलब्ध संसाधनों की उत्पादकता का अधिकतम उपयोग किया जा सकता था। 1930 में चीन में प्रति फार्म कार्य दिवसों की औसत संख्या सिर्फ 190 थी पर जन-कम्यूनों में पुरुषों के लिए कार्य दिवसों की यह संख्या 250 और स्त्रियों के लिए 120 निश्चित की गई थी। जन-कम्यून ने सामूहिक श्रम का विशाल पैमाने पर भौतिक संपदा के रूप में सृजन किया था :

> 1957-58 में चीन में 5,800 करोड़ घन मीटर पत्थर और मिट्टी हटाई गई जो 300 पनामा नहरें खोदने के बराबर था। 1958 में खेती के नतीजे भी बिलकुल ठोस थे।... संभवत: 30 प्रतिशत वृद्धि हासिल हुई थी। अन्य परिणाम भी महत्वपूर्ण थे मसलन अधिक संतुलित आर्थिक जीवन और जन-कल्याण पर अधिक खर्च।[11]

1958 59 के चीनी अनुभव ने सिद्ध किया कि श्रम के संसाधनों का भौतिक पूंजी में प्रत्यक्ष रूपांतरण जन- कम्यूनों के माध्यम से सुविधाजनक हो गया। जहां पर प्राकृतिक संसाधन उपलब्ध थे वहां जन-कम्यूनों ने निम्नलिखित बातों की अनुमति दी :

1. कृषि के क्षेत्र में बेरोजगार लोगों का स्थानीय क्षेत्रों में निर्माण-कार्यों में उपयोग। यह 'अप्रकट' बचत थी जो अधिक वित्तीय खर्च के बिना पूंजी के निर्माण में तेजी ला सकती थी।
2. क्षेत्र में कार्यरत श्रमिकों को वेतन वस्तुओं में वेतन दिया जा सकता था। उन्हें शहरों के बड़े उद्योगों में भेजने के लिए उत्साहित करने के लिए मुद्रा के रूप में ज्यादा वेतन देने की आवश्यकता नहीं थी। इससे खाद्य पदार्थों पर दबाव कम रहता था और विकास की वैकल्पिक रणनीति में अंतर्निहित मुद्रास्फीति की संभावना को कम किया जा सकता था।
3. जो लोग खेती में लगे थे उनके खाद्य पदार्थों के उपभोग में वृद्धि की संभावना के बारे में सतर्कता।

4. कृषिगत तथा मध्यम दर्जे के औद्योगिक विकास के बीच परस्पर पूरकता पर आधारित संबंधों का विकास, जिसके अंतर्गत औद्योगिक उपकरणों और यंत्रों, खादों और कीटनाशक दवाइयों की आपूर्ति कृषि के लिए होती थी तथा कृषि खाद्यान्न और कच्चे माल की आपूर्ति रासायनिक तथा अन्य हलके उद्योगों के लिए होती थी।

संकट के वर्ष

प्राकृतिक विपत्तियों, सोवियत आर्थिक सहायता की अचानक समाप्ति और जन-कम्यूनों की सांगठनिक समस्याओं के चलते चीन की आर्थिक वृद्धि धीमी पड़ गई। भारी उद्योग में 1960 की ग्रीष्म ऋतु में सोवियत तकनीशियनों की अचानक वापसी ने अति गंभीर समस्या खड़ी कर दी। लगभग 150 औद्योगिक कारखानों के निर्माण में एक हजार से अधिक सोवियत तकनीशियन संलग्न थे। एक महीने के अंदर इन सभी कारखानों को बंद करना पड़ा। सोवियत तकनीशियन अपने ब्लू प्रिंटों को लेकर स्वदेश चले गए और उसके बाद भविष्य में साज-सामान की आपूर्ति को रोक दिया गया।

इन स्थितियों का समाना करना दुःखदायी था। यह ऐसा था जैसा दावत के बीच में ही खाने की प्लेटों को अचानक गायब कर दिया जाए। चीनी तकनीशियनों ने धीरे धीरे बड़े प्रयासों के बाद अज्ञात प्रक्रियाओं के संचालन की डिजाइनों को समझा और उन आवश्यक यंत्रों और उपकरणों का निर्माण किया, जिनकी आपूर्ति करने से अब रूस ने इनकार कर दिया था। इस घटना ने चीन की प्रगति को कई वर्ष पीछे धकेल दिया। इसका माओ त्सेतुंग पर भी विशेष असर पड़ा। उन्होंने आत्मनिर्भरता और तकनीकी स्वतंत्रता पर अब पहले से भी ज्यादा जोर देना शुरू कर दिया।

इस विषय में व्हीलराइट और मैकफार्लेन का विचार विशेष रूप से उल्लेखनीय है :

> सोवियत तकनीशियनों की अचानक वापसी ने चीनी तकनीशियनों, वैज्ञानिकों और कर्मियों को दृढ़ता से कार्य करने के लिए प्रेरित किया। धीरे-धीरे नई प्रक्रियाओं को समझ लिया गया और आवश्यक उपकरणों का निर्माण किया गया। सोवियत सहायता की अचानक समाप्ति के कारण ज्यादातर मशीनी उपकरणों के डिजाइन चीन में बनने लगे।[12]

गहराता संकट

कृषि के दृष्टिकोण से 1958 का साल अच्छा था। आगामी तीन वर्ष असाधारण रूप से खराब थे। 1959 में खेती का लगभग आधा हिस्सा भारी बाढ़ और गंभीर सूखे से प्रभावित

हुआ। 1960 में बाढ़, सूखे, तूफान और बीमारियों के कारण लगभग 15 करोड़ एकड़ भूमि पर अर्थात कृषि योग्य क्षेत्र के आधे से अधिक भाग पर फसलें गंभीर रूप से नष्ट हो गईं। कुछ क्षेत्रों में पूरी फसल नष्ट हो गई। पीली नदी (हूआंग-हो) शांतुंग प्रांत में पूरे एक महीने तक बिलकुल सूखी पड़ी रही, जो अभूतपूर्व घटना थी। दो आस्ट्रेलियाई अर्थशास्त्रियों, व्हीलराइट और मैकफार्लेन का कथन है :

> अनाज की कमी ने गंभीर रूप ले लिया, परंतु राशनिंग और सामूहिक प्रयास से दुर्भिक्ष से बचाव कर लिया गया। कम्यून प्रणाली ने अपनी क्षमता द्वारा बड़ी संख्या में लोगों को लामबंद कर लिया और इस प्रकार असंदिग्ध रूप से इन कठिनाई के वर्षों में दुर्भिक्ष से बचने में सहायता की।[13]

अल्पविकसित देशों की प्रकृति है कि वे अपर्याप्त बाजार-योग्य कृषि अधिशेष की दशा में औंधे मुंह गिर पड़ते हैं। जब ऐसी स्थिति पैदा होती है तो खाद्यान्न के आयात की इजाजत औद्योगिक वरीयताएं नहीं देतीं। श्रम को मशीन निर्माण उद्योग की दिशा में मोड़ना मुश्किल हो जाता है क्योंकि भोजन श्रम के प्रवाह का अनुसरण नहीं करता। 1959 के बाद चीन को औद्योगिक नीति में परिवर्तन करना पड़ा और इसका कारण आंशिक रूप से कृषिगत उत्पादन में कमी थी। कृषि का भारी और हलके उद्योग की तुलना में प्राकृतिक विपत्तियों की वजह से पुन: अनुकूलन करना पड़ा।

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने एक नया नारा शुरू किया 'अर्थव्यवस्था का आधार खेती है और यही उसका प्रमुख 'सेक्टर' है।' भारी उद्योग को प्राथमिकता देने की नीति को बदल दिया गया। 'दो पैरों पर चलने' की नीति को फिर घोषित किया गया। फरवरी 1960 में अधिकृत नीति इन शब्दों में घोषित की गई :

> यह बिलकुल संभव है कि छोटे उद्यमों को इस प्रकार संचालित किया जाए कि उनके परिणाम अधिक अच्छे और ज्यादा जल्दी निकल सकें।...1960 में हमारे लक्ष्य हैं कि हम धातुओं, रासायनिक, खनिज तेल और विद्युत शक्ति के उद्योगों से जुड़े छोटे आधुनिक उद्यमों का बड़ी संख्या में निर्माण करें और उनका उत्पादन बढ़ाएं।[14]

अगस्त 1960 में इसी नीति पर फिर बल दिया गया :

> इस वक्त उत्पादकता के विस्तार के लिए राज्य के उद्योग का कम्यून के उद्योग के साथ उत्पादन के क्षेत्र में संगठन और घनिष्ठ संयोजन करना आवश्यक है। यही सामंजस्य और संयोजन हमें बड़े उद्यमों तथा छोटे और मध्यम दर्जे के उद्योगों के बीच एवं उत्पादन की आधुनिक और स्वदेशी पद्धतियों के बीच भी करना चाहिए। यह बहुउद्देश्यीय उपयोग और विविध प्रकार के उद्यमों की स्थापना की मांग करता है।...जैसे-जैसे बड़े, छोटे और मंझोले उद्यमों के बीच घनिष्ठ संयोजन स्थापित हो जाता है और जैसे-जैसे संयुक्त उद्यमों के निर्माण के बाद राज्य के उद्योग कम्यूनों के उद्योगों को अधिक समर्थन और सहायता देने लगते हैं, वैसे-वैसे यह संभव हो जाता

> है कि तकनीकी क्रांति को सफल बनाने के लिए और अग्रगामी अनुभवों की लोकप्रियता बनाने के लिए तकनीकी संकेंद्रण किया जाए।[15]

बहरहाल, 'दो पैरों पर चलने' की नीति का अधिकाधिक संबंध, छोटे ओर मंझोले उद्यमों के मशीनीकरण और आधुनिकीकरण के साथ जुड़ गया। यह इस बात का संकेत था कि नवीकरण की प्रवृत्ति थम रही थी और 1960 के अंत तक यह बात साफ हो गई। 1961 में, अधिकृत वक्तव्यों से इस बात का संकेत मिला कि छोटे व्यवसाय बड़े उद्यमों की तुलना में निवेशों के उपयोग के मामले में संतोषजनक विकास नहीं कर पा रहे थे।

विकेंद्रीकरण

लंबी छलांग के सालों में आंतरिक चीन के सुदूरवर्ती क्षेत्रों में नए परिवर्तन हुए। ये परिवर्तन मुख्य रूप से हलके औद्योगिक उत्पादन के क्षेत्र में दिखाई पड़े।

1960 में कपड़े का उत्पादन शंघाई, शीयान, हार्बिन तथा पूर्वी चीन के दूसरे नगरों तक सीमित नहीं रह गया था। शीशे के बरतनों, प्लास्टिक और रबड़ की वस्तुओं से जुड़े उद्योग भी तटवर्ती नगरों के अलावा चीन के अंदरूनी प्रांतों में स्थापित और स्थानांतरित हो रहे थे। शर्करा शोधक कारखाने जो पहले दक्षिण-पूर्वी चीन में केंदित थे, भीतरी प्रदेशों में फैल रहे थे। 1961 में दस हजार प्रकार की हलकी वस्तुओं का उत्पादन पश्चिमी चीन के सुदूरवर्ती प्रांत छिंगहाई में किया जा रहा था। इन चीजों के उत्पादन के लिए सभी कारखानों को पिछले तीन वर्षों (1958-61) में ही लगाया गया था। 1961 में आंतरिक मंगोलिया के चीनी प्रांत में 300 विभिन्न उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन किया जा रहा था।

भारी उद्योग के विकेंद्रीकरण का प्रयास भी किया गया था। परंतु यह छोटे और मंझोले उद्योगों तक के विस्तार तक सीमित था। इन कारखानों में लोहे का उत्पादन किया जाता था अथवा छोटी मशीनें बनाई जाती थीं।

1960 तक लोहे का उत्पादन अठारह प्रशासकीय क्षेत्रों में होने लगा था। मशीनों के निर्माण के कारखाने, जिनमें मामूली स्तर की प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल किया जाता था, 1960 तक तिब्बत, निंगाशिया और छिंगहाई को छोड़कर चीन के सभी प्रांतों में स्थापित हो चुके थे।

लंबी छलांग, जन-कम्यूनों की स्थापना और औद्योगिक विकेंद्रीकरण के फलस्वरूप उद्योगों का एक भारी अनुपात स्थानीय प्रशासनिक नियंत्रण में आ गया। यह प्रवृत्ति चीन की अर्थनीति और राजनीति का स्थायी कारण बन गई। निम्नलिखित तालिका से यह प्रवृत्ति स्पष्ट हो जाती है :

	1957	1958	1959
केंद्रीय नियंत्रण (प्रतिशत)	46.0	27.0	26.0
स्थानीय नियंत्रण (प्रतिशत)	54.0	73.0	74.0

केंद्रीय नियंत्रण, निर्देशन और नियोजन चीन के बड़े आकार की वजह से प्रांतों में दुर्बल हो जाता है। चीन में रेल मार्गों की लंबाई भारत की अपेक्षा दो-तिहाई थी। नदियों और पर्वतों ने भी चीन में क्षेत्रीयता की प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया है।

बड़े पैमाने के उद्योग

1958 के बाद बड़े उद्योगों के विकास की विशेषता उत्पाद की गुणवत्ता और उत्पाद-मिश्रण में बढ़ती विविधता में निहित थी। चीन के नियोजक इसे उत्पाद में परिमाणात्मक वृद्धि का ही एक रूप मानते थे। 1961 के दिसंबर में धातु उद्योग के उपमंत्री ने कहा : 'गुणवत्ता में सुधार और इस्पात के उत्पादों में बढ़ती विविधता का अर्थ परिमाणात्मक वृद्धि भी है। ... ऊंची गुणवत्ता का उत्पाद ज्यादा टिकाऊ होगा। इस्पात की पट्टी जो 40 वर्ष तक चलेगी इस्पात की उन दो पट्टियों के बराबर है जो सिर्फ 20 साल तक चलेगी।' उन्होंने आगे कहा :

> 1958-59 की लंबी छलांग के दौरान इस समस्या से जूझने के लिए शक्तियों को केंद्रित करना संभव नहीं था क्योंकि विविधता में वृद्धि के लिए परिमाणात्मक आधार भी चाहिए। तीन वर्षों की लंबी छलांग के दौरान विशाल परिमाणात्मक विकास के बाद ही हम इस स्थिति में पहुंचे कि विविधता की समस्या पर अपना ध्यान केंद्रित कर सकें।[16]

1958-59 में निर्धारित नीतियों को फरवरी 1960 में निम्नलिखित शब्दों में फिर प्रतिपादित किया गया :

> कुछ लोगों ने कहा है कि जन-कम्यूनों में उद्योगों की स्थापना के लिए अत्यधिक श्रम शक्ति की जरूरत पड़ती है और इससे कृषि उत्पादन प्रभावित होता है। परंतु वास्तव में जन-कम्यूनों में उद्योग के विस्तृत निर्माण के चलते कृषि उत्पादन को प्रबल प्रोत्साहन मिला है और वह लंबी छलांग लगाने में समर्थ और सक्षम हो सका है। कम्यून उद्योग ने खेती उपकरणों, काम के औजारों, रासायनिक खादों और कीटनाशक दवाइयों का भारी मात्रा में उत्पादन किया है और कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए अनुकूल स्थिति बनाई है।[17]

प्राथमिकताओं में परिवर्तन

मार्च 1960 में प्राथमिकताओं में परिवर्तन का पहला संकेत मिला, जिसे निम्नलिखित शब्दों में अभिव्यक्त किया गया :

> हमें देखना चाहिए कि उद्योग के क्षेत्र में जब उत्पादन बढ़ाने का प्रयत्न किया जाए तो उस उद्योग में लगे श्रमिकों की संख्या न बढ़ाई जाए। कम्यून की अर्थव्यवस्था में खेतिहर मजदूरों के पांच प्रतिशत से अधिक का उपयोग वर्जित कर दिया जाए और कृषि कार्यों के व्यस्त मौसम में कम्यून के अधीन उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों को जितना अधिक संभव हो सके, कृषि में स्थानांतरित किया जाए।[18]

इसी महीने में एक अन्य नीतिगत वक्तव्य भी प्रकाशित हुआ जिसमें कुछ अस्पष्टता थी :

> कृषि को अर्थव्यवस्था का आधार और उद्योग को प्रधान क्षेत्र बनाना ही मुख्य नीति है। उद्योग और कृषि को एक साथ प्रोत्साहन दिया जाएगा। परंतु औद्योगिक विकास को प्राथमिकता दी जाएगी। समाजवादी निर्माण के क्रियान्वयन के लिए चीन की यह निरंतर और स्थायी मार्गदर्शक नीति है। भारी उद्योग के विकास की प्राथमिकता आज भी आवश्यक है और भविष्य के समाजवादी समाज में भी आवश्यक रहेगी। ऐसा इसलिए है क्योंकि भारी उद्योग अर्थव्यवस्था की विविध शाखाओं के लिए तकनीकी यंत्रों और उपकरणों और नवीन तकनीकों की आपूर्ति करते हैं।[19]

दिसंबर 1961 में कृषि को प्राथमिकता देने की नीति को स्वीकृति प्राप्त हुई। इसके बावजूद, भारी उद्योग के विकास पर विशेष बल दिया गया :

> कृषि के उत्पादन को विशेष महत्व प्रदान किया गया। विस्तृत पुनरुत्पादन की प्रक्रिया में कृषि और हलके उद्योगों की वृद्धि उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी भारी उद्योग की। समाजवादी उत्पादन का अंतिम लक्ष्य उपभोग की वस्तुओं के उत्पादन का विकास करना ही है।[20]

दस बिंदुओं का कार्यक्रम

16 अप्रैल 1962 को राष्ट्रीय जन-कांग्रेस में भाषाण देते हुए चोउ एनलाई ने दस बिंदुओं का एक कार्यक्रम प्रस्तत किया, जिसमें उन्होंने कृषि के विकास पर और भी अधिक जोर दिया :

1. कृषि के उत्पादन में वृद्धि करना, खासकर अनाज, कपास और तेल पैदा करने वाले बीजों का उत्पादन।

2. हलके और भारी उद्योगों के उत्पादन में तर्कसंगत सामंजस्य तथा दैनिक आवश्यकताओं के उत्पाद में वृद्धि।
3. पूंजी निर्माण में निरंतर कटौती करना।
4. नगरों में आगमन को रोकना और ग्रामीण उत्पादन को प्रोत्साहन देना।
5. स्टाक रजिस्टर बनाना और उसके आधार पर जरूरतमंद क्षेत्र में धन और कच्चे माल को पहुंचाना।
6. मालों की खरीद और आपूर्ति का उचित प्रबंध और बाजार में आपूर्ति की दशा में सुधार करना।
7. निर्यात लक्ष्यों को पूरा करने के लिए मेहनत से काम करना।
8. सांस्कृतिक, शैक्षिक और वैज्ञानिक अनुसंधान का सामंजस्य।
9. व्यय कम करना और राजस्व बढ़ाना।
10. नीचे के क्रमानुसार राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों की योजनाओं के बीच संतुलन स्थापित करना : पहले कृषि, फिर हलके उद्योग और अंत में भारी उद्योग।[21]

लंबी छलांग, जन-कम्यूनों की स्थापना, और उद्योग में विकेंद्रीकरण का मुख्य प्रभाव यह हुआ कि उद्योगों का बहुत बड़ा अनुपात स्थानीय प्रशासकीय नियंत्रण में आ गया। यह प्रवृत्ति चीन की अर्थनीति और राजनीति की स्थायी विशेषता बन गई और उसमें परिवर्तन असंभव हो गया। व्हीलराइट तथा ब्रूस मैकफार्लिन का निष्कर्ष है :

> इस पद्धति का असर यह हुआ कि स्थानीय नियंत्रण में कारखानों की आत्मनिर्भरता बढ़ी और राजनीति में विघटनकारी शक्तियों की शक्ति में वृद्धि हुई। ये प्रवृत्तियां 1961-64 की नई आर्थिक नीति के काल में विस्फोटक हो गई, सांस्कृतिक क्रांति के प्रोत्साहन में उनकी प्रमुख भूमिका थी; 1967-68 में माओवादी सत्ता के दस शासनांगों के रूप में क्षेत्रीय पार्टी समितियों का उन्मूलन इसी प्रवृत्ति का द्योतक था।...1959-61 की प्राकृतिक विपत्तियों के कारण आर्थिक वृद्धि की सामान्य रणनीति ध्वस्त हो गई और औद्योगिक क्षेत्र में ऊंचे लक्ष्यों की ओर प्रगति नहीं हो सकी तथा उद्योगीकरण कार्यक्रम का ठोस आधार बढ़ती हुई मात्रा में विक्रय योग्य कृषिजन्य अधिशेष नहीं प्राप्त हो सका। इस अभाव के कारण तथा योजना लक्ष्यों को लागू करने में मानवीय गलतियों से उत्पन्न गड़बड़ियों के चलते उद्योग तथा कृषि के क्षेत्र में आर्थिक नीति के प्रश्न पर तीखे राजनीतिक और विचारधारात्मक विवाद पैदा हो गए। आगामी वर्षों में इन विवादों की तीव्रता बढ़ती गई।[22]

लंबी छलांग की बुर्जुआ आलोचना

बुर्जुआ अर्थशास्त्रियों ने निरंतर तर्क प्रस्तुत किया है कि कोई भी पिछड़ा देश, जहां श्रमिकों की विशाल संख्या हो, पूंजी-सघन परियोजनाओं को सफलतापूर्वक लागू नहीं कर सकता। तो फिर पूंजी के विकल्प के रूप में श्रम का उपयोग क्यों न किया जाए? जैसे-जैसे, संगठित जनसमूहों ने उत्पादन की अगली पंक्तियों पर धावा किया, वैसे-वैसे शूरमान तथा शेल के कथनानुसार, 'पार्टी के सक्रिय नेताओं में सफलता का उन्माद छाता गया।' जैसे-जैसे उत्पादन के आंकड़े ऊंचाई पर पहुंचे, पार्टी के काडरों ने महसूस किया कि 'उन्हें प्रौद्योगिकी की पूजा' का शिकार बनाया गया है। कम्युनिस्टों ने सोचा कि विशेषज्ञों की कोई जरूरत नहीं है; इसलिए हजारों प्रशिक्षित अर्थशास्त्रियों को नौकरी से निकाल दिया गया। शूरमान तथा शेल के अनुसार, 'प्रगति की लंबी छलांग उत्तेजनामूलक पागलपन थी।'[23]

सोवियत रूस ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के प्रारूप की तैयारी में सहायता की थी, परंतु उपर्युक्त लेखकों के कथनानुसार उन्हें निराशा की स्थिति में स्वदेश लौटना पड़ा। पेइचिंग यूनिवर्सिटी का प्रधान मा यिनछू एक सम्मानित वयोवृद्ध अर्थशास्त्री थे। उनकी तीखी आलोचना उनके इस कथन के लिए की गई कि चीन की विशाल जनसंख्या देश की आर्थिक वृद्धि पर ब्रेक लगा सकती है। अलेक्जैंडर एक्सटाइन ने भी इसी बात पर जोर दिया है। अनेक पश्चिमी प्रेक्षकों ने 'चीनी अर्थव्यवस्था में अवनति देखी और कहा कि यदि कम्युनिस्ट शासन का पतन नहीं होता (जिसकी उन्हें आशा थी) तो अराजकता निरंतर बढ़ती जाएगी।' शूरमान तथा शेल आगे कहते हैं :

> माओ त्सेतुंग के लिए ये वर्ष बहुत भयानक थे। देश के अनेक भागों में उन्हें घटनाओं के इन भयानक मोड़ के लिए दोषी ठहराया जा रहा था। यद्यपि व्यापक जन भुखमरी से बचाव हो गया फिर भी देश में क्षुधा की पीड़ा फैल गई। कारखाने बंद होते चले गए, जैसा कि अमरीका में महान मंदी के दौरान हुआ था। पूर्णतः उद्योगीकृत चीन का स्वप्न गायब हो गया।[24]

परंतु 'अवनति की प्रवृत्ति' का अंत अर्थव्यवस्था के विनाश में नहीं हुआ। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने जनवरी 1961 में अपनी नीति को बदल दिया। कम्युनिस्टों ने विशेषज्ञों की राय लेना जरूरी समझा और विशेषज्ञ भी सहयोग के लिए तैयार हो गए। नेताओं ने 'व्यावहारिक सद्बुद्धि' का परिचय दिया और 'विचारधारा' से प्रेरित अर्थनीति की विफलता को स्वीकार किया।' एक्सटाइन का अभिमत है कि उन्हें समझ में आ गया कि खाद्यान्न और जनसंख्या उनकी सबसे ज्यादा विकट आर्थिक समस्याएं हैं जो गतिरोध पैदा करती हैं। उन्होंने मा यिनछू की बात मानी और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने गर्भनिरोध और कृषि विकास दोनों को आर्थिक नीति का मूल आधार बना दिया।

कांग चाओ के अनुसार, लंबी छलांग आंदोलन के फलस्वरूप :

> राष्ट्र तेजी से आर्थिक दलदल में फंस गया।...लंबी छलांग का सर्वाधिक स्पष्ट नतीजा असाधारण बरबादी में निकला।...बरबादी उद्योगों के बीच असंतुलन के फलस्वरूप हुई।...इसके अतिरिक्त...अर्थव्यवस्था को बहुत गहरे झटके लगे, जिनमें कुछ का असर बहुत दिनों तक बना रहा।...और उन्हें सुधारने के लिए नीतियों में गंभीर परिवर्तनों की जरूरत पड़ी।[25]

कांग चाओ का दावा है कि लंबी छलांग आंदोलन का एक दूरगामी दुष्परिणाम आगामी आकंड़ों की भ्रांति और गड़बड़ी थी जिसने भविष्य के नियोजन के लिए नई कठिनाइयां उत्पन्न कर दीं। चीन की सरकार ने आर्थिक सूचनाओं का प्रकाशन बंद कर दिया जिसके कारण लंबी छलांग के वर्षों का परिणामात्मक मूल्यांकन असंभव हो गया। 'वस्तुओं की गुणवत्ता में गिरावट लंबी छलांग के काल का सार्वभौमिक लक्षण बन गया।' मौसम संबंधी गड़बड़ियां, 'उतनी त्रासद न होतीं यदि चीन के कम्युनिस्टों ने भारी संख्या में...दोषपूर्ण जल-भंडार परियोजनाओं को लंबी छलांग के वर्षों में कार्यान्वित न किया होता।' इसके अलावा, लंबी छलांग की विशेषता उपकरणों और यंत्रों का आवश्यकता से अधिक उपयोग एवं दुरुपयोग, मरम्मत और रखरखाव की सुविधाओं में कमी और यातायात प्रणाली में कठिनाई थी।[26]

लंबी छलांग आंदोलन का एक अनेक अवांछनीय परिणाम यह हुआ कि अधिकांश बड़े उद्योगों के लंबवत होने की वजह से उनमें अनावश्यक विविधीकरण करना पड़ा क्योंकि 'लंबी छलांग' के काल में उत्पादन के लिए आवश्यक कच्चे माल की आपूर्ति बहुत कठिन हो गई थी। परिणाम यह हुआ कि प्रमुख उद्योगों के आसपास अनेक उपग्रह कारखानों की स्थापना जरूरी हो गई।

अंत में लंबी छलांग ने श्रमिकों, प्रबंधकों और तकनीशियनों के नैतिक साहस को क्षति पहुंचाई। अधिकांश नए श्रमिकों को ठेके के आधार पर भरती किया गया था। अत: उनको उन सभी लाभों से वंचित रखा गया जो पुराने नियमित श्रमिकों को उपलब्ध थे। ये लाभ थे—डाक्टरी चिकित्सा, चोट तथा अपंगता के लिए मुआवजा, अवकाश लेने पर पेंशन और निर्भर पारिवारिक सदस्यों के लिए विशेष भत्ता इत्यादि।

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के दो नारे थे 'राजनीति कमांड करती है', और 'मास लाइन' पर भरोसा करो। इनके फलस्वरूप मैनेजरों और तकनीकी व्यक्तियों के नैतिक साहस को नुकसान पहुंचा और 'उद्योग के अंतर्गत प्रशासनिक प्रणाली अस्त-व्यस्त हो गई।' तकनीशियन तथा इंजीनियर ऐसी स्थिति से बहुत अपमानित हुए जिसमें विशेषज्ञों को तकनीकी मामलों में अविशेषज्ञों की बात सुननी पड़ती थी; वैज्ञानिक नियमों की अवहेलना करते हुए राजनीतिक मांग रखी जाती थी; और उत्पादन का दायित्व वस्तुत: 'उन्मादियों' के हाथों में चला गया था। तीखी आलोचना के बावजूद कांग चाओ ने स्वीकार किया :

> कुछ भी हो, लंबी छलांग का वर्णन पूर्ण असफलता के रूप में नहीं किया जा सकता। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि इस काल में उत्पादन में असाधारण वृद्धि हुई।...मनुष्यों की अधिकांश गलतियों की भांति लंबी छलांग आंदोलन के सीख देने वाले प्रभाव थे जिनकी वजह से भविष्य में ऐसी गलतियों से बचा जा सकता था।[27]

विकास के चीनी प्रतिमान की सामान्य रूप मे और लंबी छलांग की विशेप रूप से बुर्जुआ आलोचना का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है। अलेक्जैंडर एक्सटाइन का कहना है कि पचास के दशक के पूर्वार्ध में जब चीन में द्रुत गति से औद्योगिक विकास और कृषिगत रूपांतरण हुआ तो बहुत से लोगों ने विश्वास कर लिया कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने सोवियत विकास के माडल का अल्पविकसित अर्थव्यवस्था की दशाओं के अनुरूप सफलतापूर्वक अनुकूलन कर लिया है। 1958 के उपरांत यह छवि धूमिल हो गई है। एक्सटाइन आगे कहता है :

> कम्यूनों की कठोर नियमबद्धता तथा लंबी छलांग में जनता के श्रम की लामबंदी की परियोजनाओं का विदेशों में नकारात्मक प्रभाव पड़ा। इससे भी ज्यादा महत्व इस बात का था कि 1960-62 के गंभीर आर्थिक संकट ने नाटकीय अंदाज से इस तथ्य को उजागर कर दिया कि चीन की कम्युनिस्ट सरकार ने कृषि के विकास पर अपेक्षाकृत बहुत कम ध्यान दिया है।[28]

चीनी कम्युनिस्ट प्रतिमान की अपील अब भी कायम है। एक्सटाइन के अनुसार इसके तीन कारण हैं—सूचना का अभाव; 1960 के बाद चीनी सरकार द्वारा विकास के आंकड़ों के प्रकाशन पर प्रतिबंध जिससे आर्थिक कठिनाइयों की व्यापकता पर परदा पड़ गया है; तथा अन्य अल्पविकसित देशों में कृषिगत ठहराव और खाद्यान्न की आपूर्ति संबंधी मुश्किलें (विशेष रूप से भारत में)।

दुर्भिक्ष में लंबी छलांग के योगदान संबंधी 'थीसिस'

एक प्रवासी चीनी विद्वान ताली एल. यांग ने अपनी पुस्तक *कैलेमिटी एंड रिफार्म इन चाइना* (स्टैनफोर्ड, 1996) में तर्क प्रस्तुत किया है कि 'बीसवीं सदी में चीन ने जो असंख्य राजनीतिक त्रासदियां झेली हैं उनमें लंबी छलांग के दौरान दुर्भिक्ष और सांस्कृतिक क्रांति के संकट विशेष हैं।' वह आगे कहता है :

> प्रगति की लंबी छलांग ने उतना ही भीषण मानवीय कष्ट पैदा किया जितना सांस्कृतिक क्रांति ने, बल्कि उससे भी अधिक अगर कोई इस कष्ट का मापन मृत लोगों की संख्या से करे तो जनसंख्या विशेषज्ञों का अनुमान है कि 1959-61 के दुर्भिक्ष की लंबी छलांग में तीन करोड़ लोगों की मृत्यु हुई। इसके कारण यह मानवीय इतिहास

का सबसे भयानक अकाल बन गया। फिर भी चीन में और अन्य देशों में दुर्भिक्ष की लंबी छलांग पर बहुत कम ध्यान दिया गया है।[29]

यह अजीब बात है कि जिस समय इतने बड़े पैमाने पर लोग मर रहे थे उस समय ताली एल. यांग के 'विशेषज्ञों' ने इस घटनाक्रम पर कोई ध्यान नहीं दिया। यहां तक कि अमरीकी प्रेस में भी किसी जाने-माने पत्रकार ने इसको विशेष मुद्दा नहीं बनाया। एडगर स्नो ने तबाही का वर्णन जरूर किया है लेकिन उन्होंने करोड़ों लोगों के मरने की बात नहीं कही।

लगभग 60 करोड़ की विशाल जनसंख्या वाले देश में लाखों लोग तो हर साल स्वाभाविक रूप से मृत्यु प्राप्त करते ही रहेंगे। कितने लोग 'लंबी छलांग' के दौरान प्राकृतिक आपदा का शिकार हुए और कितने लोग स्वाभविक कारणों से मृत्यु की गोद में चले गए उनके बारे में आंकड़ों की कमी की वजह से किसी ठोस नतीजे पर पहुंचना कठिन है; लेकिन एक बात तो स्पष्ट है कि यांग द्वारा तीन करोड़ के आकंड़े को अकाल के साथ जोड़ना ठीक नहीं है। और फिर अकाल 'लंबी छलांग' का नतीजा नहीं था। इसका मुख्य कारण प्राकृतिक था। ऐसी भयानक प्राकृतिक आपदा संसार के इतिहास में इतने बड़े पैमाने पर कम देखने को मिलती है। फिर भी चीन की सरकार ने अपनी मजबूरियों के बावजूद इस भयंकर हालत से निबटने के लिए जो किया उससे बहुत हद तक अकाल पर नियंत्रण कर लिया गया। यांग के अनुसार इसके निम्नलिखित कारण हैं :

1. किसानों ने इस त्रासदी को झेला लेकिन उनमें इसका वर्णन करने की न तो योग्यता थी और न ही हिम्मत।
2. दुर्भिक्ष की लंबी छलांग के काल के अभिलेख संग्रहालय के दस्तावेजों को अभी तक गोपनीय रखा गया है।

स्वयं ताली यांग का जन्म शांतुंग प्रांत में चीन के ग्रामीण क्षेत्र में उस समय हुआ जब दुर्भिक्ष की लंबी छलांग के बाद शिशुओं के जन्म में उछाल आया था। दुर्भिक्ष के बारे में लोककथाओं को सुना था, क्षुधा पीड़ित भिखारियों को देखा था, वीरान गांवों से गुजरा था और उस महान संकट के बारे में जीवंत कल्पनाएं की थीं, जिसने जनता को त्रस्त और दु:खी कर दिया था।

ताली यांग का दावा है कि उसकी थीसिस की मौलिकता 'दुर्भिक्ष की लंबी छलांग की अंतर्दृष्टि विरोधी व्याख्या में निहित है। इस व्याख्या में केवल चीनी नेतृत्व की भूमिका पर ही जोर नहीं दिया गया बल्कि उन प्रेरकों पर भी बल दिया गया है जो क्रांति के बाद बने ढांचों के कारण पैदा हुए। दुर्भिक्ष की लंबी छलांग ने...उन निर्णायक मनोवृत्तियों को जन्म दिया जिन्होंने उत्तर-माओ चीन में ग्रामीण समष्टिवादी संस्थागत ढांचे के उन्मूलन में योगदान किया। ... चीन में ग्रामीण सुधार की पद्धतियों, अंतर्वस्तु पारिवारिक उत्तरदायित्व प्रणाली है। इसकी स्थापना दुर्भिक्ष की लंबी छलांग के इतिहास से जुड़ी हुई है। जिन ग्रामीण सुधारों ने चीन को सुधार के युग में प्रवेश की प्रेरणा दी, उनकी गत्यात्मकता को पूरी तरह तब तक समझा नहीं जा सकता जब तक दुर्भिक्ष की लंबी छलांग पर ध्यान न

दिया जाए, हालांकि यह घटना दो दशक पहले घटी थी।'[30]

ताली यांग का मत है कि ग्रामीण सुधार केवल तंग श्याओफिंग जैसे नेताओं के शब्दों और कार्यों का परिणाम नहीं है. वह करोड़ों चीनी जनसाधारण की पहल का नतीजा भी है, जो स्वाभाविक रूप से दुर्भिक्ष की लंबी छलांग की त्रासदी के विरुद्ध अपनी प्रतिक्रिया प्रकट कर रहे थे। उनका तर्क है कि दुर्भिक्ष की लंबी छलांग ने किसानों और बुनियादी स्तर के काडरों के दृष्टिकोण को बदल दिया और कृषकों और पार्टी के कार्यकर्ताओं को प्रेरणा दी कि कुछ क्षेत्रों में संस्थागत परिवर्तन करने की चेष्टा करें। ताली यांग का कथन है :

> नेतृत्व और सामाजिक शक्तियों ने मिलकर, दुर्भिक्ष की लंबी छलांग के विरोध में, एक व्यापक आंदोलन चलाया जिसका ध्येय कृषि के समूहीकरण का अंत करना था। यदि इन दोनों में किसी एक कारक का अभाव होता, तो उसका नतीजा गतिरोध या पक्षाघात में ही दिखाई पड़ता।[31]

मानव के संपूर्ण इतिहास में, दुर्भिक्ष और युद्ध मानव समाजों के लिए प्रलय जैसे विनाशकारी सिद्ध हुए हैं। परंतु कुछ ही दुर्भिक्ष ऐसे हुए हैं जिन्होंने, ताली यांग के शब्दों में, चीन जैसे गंभीर परिवर्तनों को जन्म दिया है। इसके लिए, हमें उस कार्य कारण श्रृंखला की खोज करनी चाहिए जो दुर्भिक्ष की लंबी छलांग को ग्रामीण विसामूहीकरण से जोड़ती है :

> इसे समझने के लिए उन गंभीर संज्ञानात्मक परिवर्तनों पर ध्यान देना होगा जिन्हें दुर्भिक्ष की लंबी छलांग ने नेताओं और जनता दोनों के बीच लोकप्रिय बनाया। बहुत से लोग शुरू में ही कम्यून आंदोलन में बड़े संकोच के साथ शामिल हुए थे। इसका कारण यह था कि दुर्भिक्ष की लंबी छलांग बुनियादी रूप से राजनीतिक थी और अनिवार्य रूप से वह प्रगति की लंबी छलांग के जन-कम्यून आंदोलन से जुड़ी थी। जब विशाल दुर्भिक्ष फैला तो उसके फलस्वरूप जन-कम्यूनों की वैधता खत्म हो गई हालांकि सरकारी प्रचार तंत्र उनका औचित्य बताता रहा...सुधार प्रक्रिया को प्रेरित करने में, चीन के दुर्भिक्ष की लंबी छलांग की वही भूमिका है, जो जापान और जर्मनी में युद्ध में उनकी पराजय ने निभाई थी।[32]

अगर चीन में उस समय स्वतंत्र प्रेस और सक्रिय राजनीतिक विपक्ष होता, तो दुर्भिक्ष की लंबी छलांग निश्चित रूप से ज्यादा भयानक न होती। ताली यांग का कथन है, 'यह स्थिति भारत की स्थिति से विपरीत है जहां, सक्रिय विपक्ष की उपस्थिति में, सरकार के लिए ऐसी भयानक त्रासदी की उपेक्षा करना बहुत कठिन हो जाता है।'[33] वह आगे कहता है कि पूर्ण लोकतंत्रीकरण के अभाव में भी चीन की प्रणाली में 'विकेंद्रीकरण, बाजार-आधारित प्रतियोगिता और कानूनी शासन' द्वारा काफी सुधार किया जा सकता है। नीचे से ऊपर तक, उपभोक्ता समूहों, व्यापार संघों, अन्य समुदायों. किसानों के प्रतिरोधों, छात्रों के प्रदर्शनों और मजदूरों की हड़ताल ने सीमित ही सही, चीनी शासन प्रणाली का उदारीकरण कर दिया है।

पेंग तेहुआई का माओ त्सेतुंग को पत्र

हू शेंग द्वारा संपादित चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अधिकृत इतिहास में लंबी छलांग आंदोलन की त्रुटियों की सावधानी के साथ आलोचना की गई। इसमें पेंग तेहुआई द्वारा माओ त्सेतुंग को लिखित पत्र में जो शिकायतें प्रस्तुत थीं, उन्हें सकारात्मक बताया गया है। उन्होंने लंबी छलांग अभियान की त्रुटियों और विफलताओं की ईमानदारी से आलोचना करने के बाद आशा प्रकट की कि माओ त्सेतुंग उनकी वाम-विचलनवादी गलतियों को सुधारने में सहायता देंगे। हू शेंग लिखते हैं :

> पेंग का पत्र वस्तुपरक यथार्थ और जनता की मांगों को व्यक्त करता है। उसका बुनियादी विषय बिलकुल सही है। पोलिट ब्यूरो के एक सदस्य के लिए पार्टी के चेयरमैन को पत्र लिखकर अपने विचारों की अभिव्यक्ति करना भी पार्टी के सांगठनिक सिद्धांत और नियमों के सर्वथा अनुकूल था।[34]

इस पत्र में कहा गया था कि अतिशयोक्ति, डींग मारने और काल्पनिक सोच की प्रवृत्ति बढ़ रही है और 'तथ्यों से सत्य की खोज का प्रयास नहीं किया जा रहा है।' चारों ओर 'निम्न बुर्जुआ उन्माद' फैल गया है और एक कदम चलकर साम्यवादी स्वर्ग में प्रवेश की इच्छा बढ़ रही है। पेंग ने यह भी लिखा कि 'दक्षिणपंथी रूढ़िवादी त्रुटियों का खात्मा अपेक्षाकृत सरल था किंतु 'वामपंथी' गलतियों को सुधारना मुश्किल काम है। परंतु माओ त्सेतुंग ने आरोप लगाया कि पेंग तेहुआई और उनके मित्र चांग वेंशियन के चिंतन में दक्षिणपंथी विचलन की गलतियां हैं। उन्होंने यह भी कहा कि पेंग की आलोचना ख्रुश्चेव के संशोधनवाद और चीन पर साम्राज्यवादी आक्रमणों से जुड़ी हुई है। माओ त्सेतुंग ने पेंग तेहुआई और चांग वेंशियन की कठोर आलोचना करते हुए कहा कि उनके विचारों से संशोधनवाद और साम्राज्यवाद के दबाव के कारण बुर्जुआ अस्थिरता पैदा हो गई थी।

इस संदर्भ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास में निम्नलिखित टिप्पणी की गई है :

> 1958 के आर्थिक कार्य के लिए मार्गदर्शक विचारधारा में 'वाम' त्रुटियों की समझ की कमी के कारण, पूरी पार्टी में माओ त्सेतुंग की अत्यधिक प्रतिष्ठा तथा पार्टी में बढ़ती हुई व्यक्ति पूजा के कारण तथा कुछ लोगों के द्वारा आग की लपट में घी डालने के काम की वजह से, लूशान सम्मेलन में माओ के भाषण के बाद वातावरण बहुत तनावपूर्ण हो गया।...बिना किसी सबूत के पेंग तेहुआई पर आरोप लगाया गया कि 'उनके विदेशी ताकतों से गैरकानूनी संबंध हैं' और उन्होंने एक सैनिक षड्यंत्र शुरू कर रखा है जो पार्टी को तोड़ने और चेयरमैन माओ को सत्ता से गिराने की कोशिश कर रहा है।[35]

दक्षिणपंथी अवसरवाद के दोषी के रूप में पेंग, हुआंग, चांग और चोउ को पार्टी, सरकार और सेना के उच्च पदों से हटा दिया गया।

इस प्रकार, हू शेंग के मतानुसार, पेंग और उनके मित्रों के सही विचारों की आलोचना उन्हें अतार्किक कहकर की गई। हठपूर्वक कहा गया कि लंबी छलांग एक महान सफलता थी और 'चीन की अर्थव्यवस्था का अनुपात बिलकुल सामान्य और संतुलित है।' राष्ट्र के आर्थिक और राजनीतिक जीवन में तनावपूर्ण परिस्थिति की उपेक्षा करते हुए उन्होंने आग्रह किया :

> देश में राजनीतिक और आर्थिक परिस्थिति बेहतर है।...परिवारों के साथ कार्य और उत्पाद के अनुबंध की प्रणाली जन-कम्यूनों में शुद्धीकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत विकसित हुई थी। इन्हें 'पूंजीवादी मार्ग' पर चलना बताया गया और इसलिए उनका दमन कर दिया गया।[36]

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के अधिकृत इतिहास में कहा गया है :

> सबसे बुरी बात यह थी कि कृषि के उत्पादन में भारी कमी हो गई थी।..1957 की तुलना में 1960 में शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में अनाज का औसत उपभोग 19.4 प्रतिशत कम हो गया था। इसमें ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति उपभोग में 23.7 प्रतिशत गिरावट आई थी। सरकारी आंकड़ों के अनुसार पिछले साल की तुलना में 1960 में देश की जनसंख्या में एक करोड़ की गिरावट हुई।...यह एक बहुत ही दुखद था; आशा यह थी कि लोग शीघ्र से शीघ्र सुखी और समृद्ध जीवन बिताएंगे। उसके विपरीत इस 'प्रगति की लंबी छलांग' और जन-कम्यून आंदोलन की विफलता अत्यंत विपदाजनक नतीजा थी और भविष्य के लिए गंभीर सबक थी।[37]

निष्कर्ष के रूप में कुछ टिप्पणियां

जोसेफ पीटर्सन चीन की लंबी छलांग के सर्वेक्षण के उपरांत अपना निष्कर्ष निम्नलिखित शब्दों में अभिव्यक्त करते हैं :

> इसमें संदेह नहीं कि लंबी छलांग के नाम से प्रसिद्ध सभी नीतियों ने आधुनिक काल की अति विचित्र आर्थिक उथल-पुथल को जन्म दिया।...चीन का नेतृत्व बार-बार दावा करता है कि उसने मार्क्सवादी सिद्धांतों को चीन की विशेष परिस्थितियों के अनुसार लागू किया था। परंतु उनके संपूर्ण आर्थिक लेख से यह बिलकुल प्रकट नहीं होता कि वे दूसरे समाजवादी देशों के समृद्ध आर्थिक अनुभव का अध्ययन करना चाहते हैं अथवा उसे अच्छी तरह से समझने की उत्कट इच्छा रखते हैं । बल्कि इसके विपरीत, एक सुदृढ़ प्रवृत्ति है कि चीन और उसके वैभवशाली सामंती अतीत को सभी चीजों की माप का पैमाना बनाया जाए। अगर कोई सुझाव देता कि अन्य देशों की भूलों से सीखना चाहिए तो वे कह बैठते कि सुझाव देने वाला चीन को नहीं

> समझता। अत: उन्होंने जिन सिद्धांतों को विकसित किया है, वे अत्यधिक संवेदनशील सामंती राष्ट्रवाद के खंडित अंश हैं, या प्रकृतिवादियों, दक्षिण यूरोप के अराजक-सिंडीकेटवादियों, फ्रांसीसी फूरियेवादियों और रूस के मार्क्सवादियों के सिद्धांतों की प्रतिध्वनियां हैं।[38]

पीटर्सन का मत है कि माओ त्सेतुंग ने समाजवादी अर्थव्यवस्था के मुख्य नियम की अवहेलना की अर्थात नियोजित और आनुपातिक विकास के नियम को अस्वीकार कर दिया। समाजवादी देश के उद्योगों के बीच पारस्परिक अंतर्निर्भरता होना जरूरी है। किसी एक उद्योग का उत्पाद परिमाण में पर्याप्त, गुणवत्ता में उपयुक्त और समयबद्ध होना चाहिए जिससे उसका उपयोग कच्चे माल और अंतिम उपभोक्ता के बीच ठीक से किया जा सके। हम सबका अभिप्राय है कि उत्पादों का अनुपात सही होना चाहिए, समय पर उनकी उपलब्धि होनी चाहिए और श्रम, पदार्थों और मुद्रा के प्रवाह में संतुलन बनाए रखना चाहिए। परंतु माओ त्सेतुंग का नेतृत्व इनमें किसी चीज को जरूरी नहीं समझता। जिन अर्थशास्त्रियों ने इसका उल्लेख किया, उन्हें दक्षिणपंथी अवसरवादी, सिद्धांतहीन और बुर्जुआ कहकर तिरस्कृत किया गया। लंबी छलांग के समर्थकों ने इन अर्थशास्त्रियों की कठोर आलोचना और निंदा की।

'प्रगति की लंबी छलांग' की रणनीति की आलोचना करते हुए पीटर्सन ने कहा :

> चीन के नेताओं ने समाजवादी देशों के आर्थिक अनुभवों को अस्वीकार कर दिया, प्राचीन चीन के ग्रामीण निम्न बुर्जुआ वर्ग के आवेशपूर्ण राष्ट्रवाद के दलदल में उतरकर अपनी लक्ष्यहीन हताशा का परिचय दिया और वे आधुनिक उद्योगीकृत समाजवादी अर्थव्यवस्था के निर्माण के कठिन कठोर कार्य में सक्षम और सफल नहीं हुए। ऐसा करने में उन्होंने दो मुख्य त्रुटिपूर्ण आकलन किए। पहला यह कि उन्होंने समाजवाद के निर्माण में शहर के श्रमजीवी वर्ग की भूमिका को अपेक्षाकृत कम महत्व दिया और तदनुसार कृषकों की भूमिका का आकलन बढ़ा-चढ़ाकर किया। इसी प्रकार उन्होंने औद्योगिक उत्पादन की भूमिका का आकलन घटाकर किया और कृषि को अपेक्षाकृत अधिक महत्व दिया। उद्योग को उन्होंने कृषि के सहायक का दर्जा किया।[39]

लेनिनवादी स्थिति इससे भिन्न है, मशीनों का उत्पादन करने वाले और कृषि के पुनर्गठन में सक्षम बड़े उद्योग ही समाजवाद का एकमात्र भौतिक आधार बन सकते हैं।' परंतु माओवादी दृष्टिकोण ने लंबी छलांग के दौर में लेनिन के इस विचार को अस्वीकार कर दिया और कहा, 'कृषि और हल्के उद्योग लंबी छलांग की रफ्तार से आगे बढ़ेंगे और अपने पीछे-पीछे भारी उद्योग को भी खींच लेंगे।' आधुनिक स्थितियों में कोई उद्योग 'किसी दूसरे उद्योग को अपने पीछे नहीं खींच सकता।' वस्तुत: 'ऐसे खोखले शब्द उस संकल्प को छिपाते हैं जिसके द्वारा भारी उद्योगों को अत्यधिक आवश्यक पूंजी से वंचित कर दिया गया।'

उनका दूसरा त्रुटिपूर्ण आकलन वास्तविक अंतर्राष्ट्रवाद के महत्व को लेकर था। उन्होंने 'अपने देश तथा अन्य देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय आदान-प्रदान के महत्व को, श्रमजीवियों के संपर्क की भूमिका को, कम करके आंका।' यदि चीन के श्रमिक और कृषक 'विदेशों में जाकर, चाहे ये देश पूंजीवादी हों या समाजवादी, अपने सहकर्मियों को काम करते देखते तो वे अच्छी तकनीकों को ग्रहण कर सकते और चीन में प्रचलित तकनीकों के बारे में आत्म-संतुष्ट राष्ट्रवाद की प्रवृत्ति से ऊपर उठ सके होते।'[40]

इतिहासकार त्सोंग हुआईवेन का मत है कि पेंग तेहुआई, हुआंग केचंग, चोउ श्याओचो और चांग वेंशियन ने लंबी छलांग की नीतियों की सही और सकारात्मक आलोचना की थी। उसका कहना है कि 'पेंग और उनके समर्थकों पर आक्रमण सर्वथा अनुचित और लक्ष्यहीन था।' वस्तुत:

> उनके विरुद्ध यह संघर्ष पार्टी के आंतरिक राजनीतिक जीवन के मानकों का उल्लंघन करता था; प्रत्येक स्तर पर बहुमतवादी लोकतंत्र का नियंत्रण बढ़ाता था; माओ त्सेतुंग की स्वेच्छाचारिता को बढ़ावा देता था और व्यक्ति-पूजा को प्रोत्साहन देता था। लूशान सम्मेलन में पार्टी के अंतर्गत विचारधारा संबंधी मतभेदों की व्याख्या वर्गीय संदर्भों में की गई और उसे बुर्जुआ तथा सर्वहारा वर्गीय लाइनों के बीच संघर्ष के रूप में परिभाषित किया गया। अत: लूशान की बैठक ने समाजवादी समाज के अंतर्विरोधों की प्रकृति के बारे में गलतफहमी पैदा कर दी जिनके नतीजे बहुत कष्टदायक निकले। ये दुष्परिणाम इस सम्मेलन के तुरंत बाद तक ही सीमित नहीं रहे उन्होंने 'सांस्कृतिक क्रांति की अराजकता को भी प्रोत्साहन दिया।'[41]

माओ त्सेतुंग की मृत्यु और चीन की राजनीति में तंग श्याओपिंग के उत्थान ने लंबी छलांग और सांस्कृतिक क्रांति के युग को चीन के विचारात्मक मानचित्र से सदा के लिए निर्वासित कर दिया। तंग श्याओपिंग ने लंबी छलांग के काल में माओ त्सेतुंग का समर्थन किया था किंतु सांस्कृतिक क्रांति के समय उनका साथ छोड़ दिया था। उन्होंने अतीत की नीतियों से तीव्र विच्छेद की पहल की। इस संबंध में कल्पना मिश्रा का कहना है :

> एक दशक के अंदर चीन के आर्थिक परिदृश्य में दूरगामी परिवर्तन हो गए। विशेष आर्थिक क्षेत्रों का उदय हो गया; ग्रामीण बाजारों, निजी उद्यमों, स्टाक एक्सचेंजों और चीन के विदेशी संयुक्त उपक्रमों ने चीन की अर्थव्यवस्था का रूपांतरण कर दिया। कृषि और उद्योग के क्षेत्र में अनुबंध उत्तरदायित्व प्रणाली लागू की गई और इसी के साथ उपभोक्तावाद तथा मुनाफा कमाने का औचित्य स्थापित हो गया। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सुधारवादी नेतृत्व प्रौद्योगिकी, व्यापार और निवेश को आकर्षित करने के लिए व्यापक संबंधों को समर्थन और प्रोत्साहन देने लगा।[42]

कल्पना मिश्रा का विचार है कि जैसे-जैसे चीन के मार्क्सवादी 'मार्क्सवाद के 'संकट' के समाधान के प्रयास में निरंतर सक्रिय होगे और रचनात्मक तरीके से उसका समन्वय

लोकतांत्रिक उदारवाद और कन्फ्यूशियन मानवतावाद से करने की चेष्टा करेंगे , वैसे-वैसे उनके बौद्धिक चिंतन की दिशा उत्तर-माओवाद से आगे उत्तर-मार्क्सवाद की ओर बढ़ती जाएगी।'[43]

महान लंबी छलांग के संदर्भ में अनेक विचार पेश किए जाते रहे हैं। इस लेखक ने कुछ महत्वपूर्ण इतिहासकारों और अर्थशास्त्रियों के मतों का परिचय दिया है। इन सभी तथ्यों तथा तर्कों को सामने रखकर सही निष्कर्ष पर पहुंचना आसान नहीं लगता फिर भी इस दिशा में हमें कोशिश जरूर करनी चाहिए।

जहां तक महान लंबी छलांग के उद्देश्य का संबंध है, वह अपनी जगह पर ठीक था। माओ यदि यह चाहते थे कि लोग समझें कि फौलाद का अधिक उत्पादन चीन के औद्योगिक विकास के लिए जरूरी है तो यह समझ गलत नहीं थी। यदि वे इस क्षेत्र में बरतानिया में हो रहे स्टील/फौलाद के उत्पादन को छूना चाहते थे तो यह लक्ष्य भूल नहीं थी। यदि वे फौलाद के उत्पादन के जरिए किसानों में तकनीकी समझ पैदा करना चाहते थे तो इसमें कोई बुराई नहीं थी लेकिन वे भूल गए कि एक विशाल देश में किसी भी नए प्रयोग को सफल बनाना अति कठिन कार्य है। आर्थिक क्षेत्र में प्रयोग को सफल बनाने के लिए मंजा हुआ काडर होना जरूरी है। इस ओर उन्होंने तथा चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने विशेष ध्यान नहीं दिया। नारे प्रेरणा तो दे सकते हैं लेकिन तकनीकी बारीकियों को सुलझाने के लिए उस क्षेत्र का ज्ञान होना जरूरी है। और यही कारण था कि भट्ठियों से जो लोहा/ फौलाद निकला उसमें 30 लाख टन औद्योगिक प्रयोग में नहीं लाया जा सकता था फिर भी 80 लाख टन उत्तम श्रेणी का था। क्या यह बड़ी उपलब्धि नहीं थी?

लंबी छलांग पर सोचते हुए एक बात और ध्यान में रखनी चाहिए कि इन वर्षों में प्राकृतिक आपदा ने ऐसा रंग दिखाया जो दुनिया के इतिहास में इतने बड़े पैमाने पर कम देखने को मिलती है। 1959 से यह सिलसिला जो शुरू हुआ तो आगे भी चलता रहा जिसके कारण लाखों लोगों को न केवल अनेक प्रकार की कठिनाइयां झेलनी पड़ीं बल्कि बहुत से लोगों को मौत का शिकार भी होना पड़ा। बाढ़, सूखा तथा बीमारियों का कारण माओ नहीं थे और इन लोगों की मौत का जिम्मेदार लंबी छलांग को समझना भारी मूर्खता है। माओ ने अनेक गलतियां कीं, वे खुद भी इन्हें स्वीकार करते हैं लेकिन वे दानव नहीं थे। चीन की जनता से उन्हें बहुत प्रेम था और वे उनका भविष्य उज्ज्वल देखना चाहते थे। इसी जोश में वे लंबी छलांग लगा बैठे जो आर्थिक रूप से असफल सिद्ध हुई।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 292 (पाद टिप्पणी).
2. वही, पृ. 292.
3. *पेकिंग रिव्यू*, नं. 36, 6 सितंबर 1963.
4. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 293.

5. वही, पृ. 294.
6. क्वान फेंग, *चे-शुएह येन-च्यू* में उद्धृत, नं. 5, 1958, पृ. 1-8.
7. ई.एल. व्हीलराइट और ब्रूस मैकफार्लेन, *दि चाइनीज रोड टु सोशलिज्म*, पृ. 43
8. ली फू-चून, *रिपोर्ट आन दि फर्स्ट फाइव ईयर प्लान*, पृ. 48-50.
9. व्हीलराइट तथा मैकफार्लेन, *दि चाइनीज रोड टु सोशलिज्म*, पृ. 4.
10. वही, पृ. 51-52.
11. वही, पृ. 52.
12. वही, पृ. 53
13. वही, पृ. 54.
14. *चेन-मिन जिह-पाओ* (संपादकीय), 8 फरवरी 1960.
15. क्वान ता-तुंग, *चेन-मिन जिह-पाओ*, 19 अगस्त 1960.
16. वही, 30 दिसंबर 1960.
17. *शांशी जिह-पाओ* (संपादकीय), 12 जनवरी 1960.
18. हवांग येन, *चेन-मिन जिह-पाओ*, 2 अगस्त 1960.
19. चेन यिंग-चुन, *कैंटन नान फांग जिह पाओ*, नं. 2338, अगस्त 1960.
20. यांग ची-शिएन, *पेकिंग ता-कुंग पाओ*, 11 दिसंबर 1961
21. *लंदन टाइम्स*, 17 अप्रैल 1962.
22. व्हीलराइट और मैकफार्लेन, *दि चाइनीज रोड टु सोशलिज्म*, पृ. 52
23. फ्रांज शूरमान और ओरवील शैल (संपा.) *कम्युनिस्ट चाइना*, पृ. 397.
24. वही, पृ. 398.
25. वही, पृ. 402-03.
26. वही, पृ. 405-08.
27. वही, पृ. 411.-10.
28. वही, पृ. 422.
29. ताला एल. यांग, *कैलेमिटी एंड रिफार्म इन चाइना*, पृ. VII.
30. वही, पृ. VIII.
31. वही, पृ. 7.
32. वही, पृ. 240.
33. वही, पृ. 310; देखें अमर्त्य सेन *इंडियन डेवलपमेंट* पृ. 382-85.
34. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 557
35. वही, पृ. 560.
36. वही, पृ. 563.
37. वही, पृ. 565.
38. जोसेफ पीटर्सन, *दि ग्रेट लीप-चाइना*, पृ. 337-338
39. वही, पृ. 340-41.
40. वही, पृ. 341.
41. त्सोंग ह्वाईवेन, *ईयर्स आफ ट्रायल टर्मोइल एंड ट्रायम्फ*, पृ. 99.
42. कल्पना मिश्र, *फ्राम पोस्ट-माओइज्म टु पोस्ट-मार्क्सिज्म*, पृ. 1.
43. वही, पृ. 215.

अध्याय चौदह

महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति

सांस्कृतिक क्रांति के उद्‌गम

ज्यां दाबिए के कथन के अनुसार चीन के कम्युनिस्टों ने, सांस्कृतिक क्रांति और उसके विविध स्वरूपों के कारणों का पूर्ण विश्लेषण प्रस्तुत नहीं किया है। उसके मतानुसार प्रत्येक समाजवादी प्रणाली को, पूंजीवाद से, और चीन के मामले में सामंतवाद और पूंजीवाद दोनों से, कुछ अंतर्विरोध और विकार विरासत में प्राप्त होते हैं, जो सत्ता के लिए नए वर्ग संघर्ष का आधार प्रदान करते हैं। चीन की सांस्कृतिक क्रांति इसी वर्ग संघर्ष का उदाहरण है।[1]

सिद्धांत में, समाजवाद एक संक्रमणकालीन सामाजिक व्यवस्था है जो पूंजीवादी शासन प्रणाली के उन्मूलन के बाद आता है और जिसका कार्य साम्यवाद के आगमन की तैयारी करना है। साम्यवाद वर्गविहीन समाज की संकल्पना करता है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक उत्पाद का एक अंश अपनी आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए प्राप्त करेगा, जहां सभी सामाजिक विषमताओं को समाप्त कर दिया जाएगा और राज्य क्रमशः लुप्त हो जाएगा।

माओ त्सेतुंग के अनुसार, यह संक्रमण काल अनिवार्य रूप से इतिहास का बहुत लंबा युग होगा। इस चरण के अंतर्विरोध और असमानताएं मूल रूप से ऐसे सामाजिक कारक से पैदा होती हैं, जिसके उद्‌गम इतिहास के अंधेरों में छिपे हैं, अर्थात श्रम का विभाजन। कई सदियों से, नगर को ग्राम से अलग रखकर, उद्योग की शाखाओं और व्यवसायों के अलगाव द्वारा, विशेषीकरणों, विशेषज्ञों और लकीरों से बंधे, यांत्रिक चिंतन के सृजन के फलस्वरूप, श्रम के इस विभाजन ने मानवीय समाजों में गंभीर भेदभाव पैदा कर दिए हैं। मनुष्य को अपने स्वरूप से अलग करने के चलते यह प्रत्येक प्रकार के अलगाव के लिए उत्तरदायी है।...सामंतवाद और पूंजीवाद के अवशेषों के प्रभाव समाजवादी शासन में भी कायम रहते हैं जिनका खात्मा एक ही कठोर प्रहार से करना असंभव है।

विश्वविद्यालय ऐसा क्षेत्र है जो विज्ञान और श्रम के बीच विभाजन उत्पन्न कर विषमता को पवित्रता प्रदान करता है। वह ज्ञानवादी बुद्धिजीवी को श्रमजीवी से पृथक करते हुए उन्हें उत्पादन के विरोधी ध्रुवों पर खड़ा कर देता है। चूंकि समाजवादी देशों को इंजीनियरों और तकनीशियनों की आवश्यकता है इसलिए वे विश्वविद्यालयों के बिना काम नहीं चला सकते। चीन में विश्वविद्यालय विचारधारा और संस्कृति के स्तर पर सामंतवाद

और पूंजीवाद के गढ़ बने रहे, हालांकि चीन की अर्थव्यवस्था में उत्पादन के सामंतवादी और पूंजीवादी संबंधों को समाप्त कर दिया गया था और राज्य के ढांचे पर कम्युनिस्ट पार्टी का नियंत्रण हो चुका था।

चीन में बुद्धिजीवी वांछनीय विशिष्ट वर्ग बने रहे। शिक्षा भी वर्गोन्मुख बनी रही। निर्णय की वास्तविक शक्ति फिसलकर प्रशासकों और तकनीशियनों के सामाजिक तबके के पास पहुंचने लगी, जिनके हित और विचार बुनियादी तौर से श्रमिकों के हितों और विचारों के विपरीत थे। बिलकुल ऐसी ही स्थिति साहित्य और कलाओं के क्षेत्र में भी कायम थी। सामंतवादी और पूंजीवादी समाज में संस्कृति अल्प संख्या का विशेषाधिकारी होती है। नव-जनवादी और समाजवादी चीन में संस्कृति ऊंचे सामाजिक तबके तक संकुचित बनी रही। साहित्य और कलाएं वर्ग-विभक्त समाज में संपत्तिशाली वर्ग की विरासत का हिस्सा बन जाती हैं। चीन में कला और साहित्य थोड़े से विशेषाधिकार-प्राप्त लोगों तक अब भी सीमित थे। ज्यां दौबिए का कथन है :

> अत: समाजवादी शासन पणालियों को काफी संख्या में ऐसे बुद्धिजीवी विरासत में मिलते हैं जिन्होंने पूर्ववर्ती प्रणाली में रहते हुए ऐसी संस्कृति प्राप्त की है जो अंततः वर्गीय श्रेष्ठता की धारणा पर आधारित होती है...इनकी आदतें और मानसिकता मजदूरों के स्वभाव और मनोविज्ञान से बिलकुल भिन्न होती हैं...परंतु श्रम के विभाजन के सबसे प्रभावी अस्त्र शासितों और शासकों के संबंधों में निहित होते हैं। जिनमें शक्ति के प्रयोग का अधिकार निहित है और जिनका कार्य शक्तिशाली के आदेशों का पालन करना है, उनके बीच...एक अंतर्विरोध होता है, और इस अंतर्विरोध का अस्तित्व जिस प्रकार अन्य प्रणालियों में होता है, उसी प्रकार समाजवादी प्रणालियों में भी होता है।[2]

चीन सदृश समाजवादी देशों मे राज्य के बने रहने के कारणों में एक यह है कि कार्य के आधार पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद के समुचित विभाजन की जरूरत पड़ती है। परंतु राज्य का अस्तित्व फिर शासकों और शासितों के बीच एक अन्य असमानता को जन्म देता है। शासक वर्ग विशेषाधिकारों को प्राप्त कर सकता है और श्रम के अनुसार वेतन पाने के समाजवादी सिद्धांत से अपने को मुक्त कर सकता है। यह प्रवृत्ति कम्युनिस्ट पार्टी और राज्य के प्रशासन के कुछ हिस्सों में बनी रह सकती है जिनकी प्रमुख विशेषताएं अहंवाद और व्यक्तिवाद हैं :

> यदि यह प्रवृत्ति बढ़ती है तो उसके खिलाफ संघर्ष प्रशासनिक और राजनीतिक तंत्र को लपेटकर एक भीषण संघर्ष बन जा सकता है। इस संदर्भ में, महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति, जिसकी शुरुआत माओ त्सेतुंग ने 1965 में चीन में की, पूर्णतः तर्कसंगत मार्क्सवादी कोशिश मालूम होती है। मार्क्सवादी के रूप में, माओ त्सेतुंग का विश्वास था कि मानव समाज साम्यवाद की दिशा में विकसित होंगे, परंतु

> उनका यह भी विचार था कि इस लक्ष्य को पाने के लिए किसी भी समाजवादी सरकार को ऐसे बदलाव के अनुकूल परिस्थितियों के निर्माण के लिए हरेक संभव प्रयास करना चाहिए।...अत: 'सांस्कृतिक क्रांति' शब्द की व्याख्या उसके व्यापक अर्थ में ही करनी चाहिए, अर्थात सभ्यता का निर्माण करने वाले सभी विविध अंगों के अर्थ में।[3]

माओ त्सेतुंग द्वारा कल्पित सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के बहुत से पहलू हैं। शिक्षा के सुधार दो धारणाओं पर आधारित थे: सर्वश्रेष्ठ शिक्षा किसी कार्य के व्यावहारिक प्रयोग से प्राप्त होती है, न कि किताबी ज्ञान से; प्रोन्नति का आधार अभिजनीय मानक नहीं होने चाहिए; इसमें विद्यार्थी के राजनीतिक और विचारधारात्मक ज्ञान और सामूहिक उद्यम में निष्ठा पर भी विचार किया जाना चाहिए। साहित्य और कलाओं के क्षेत्र में, सांस्कृतिक क्रांति का लक्ष्य उन सभी बुद्धिजीवियों को उनके पदों से हटाना था जिनके बारे में यह समझा जाता था कि वे अब भी बुर्जुआ और सामंती विचारों से प्रभावित थे। परंतु ज्यां दौबिए का मत है :

> सांस्कृतिक क्रांति का केंद्र बिंदु शासकों और शासितों के बीच, सत्ताधारियों और जनता के बीच के संबंधों में अंतर्निहित था। माओ त्सेतुंग ने इस बात पर बल दिया कि यह एक राजनीतिक क्रांति भी है।[4]

निश्चित रूप से यह माओ के सिद्धांत का अंग है जिसके अनुसार क्रांति को अंतहीन संघर्ष के रूप में चित्रित किया जाता है। यह उस लड़ाई का भी अंतर्निहित कारण है जो माओ और उनके समर्थकों ने पार्टी के विपक्षी नेताओं के गुट के खिलाफ लड़ी। यह संघर्ष खासकर राज्य के प्रधान ल्यू शाओछी के विरुद्ध था, जिसके लिए सांस्कृतिक क्रांति विदेशों में अधिक विख्यात है। माओ त्सेतुंग ने तत्कालीन फ्रांस के संस्कृति उपमंत्री आंद्रे माल्लरो को बताया था कि कम्युनिस्ट पार्टी के सामान्य सदस्य अन्य मनुष्यों से भिन्न नहीं थे और वे आजीवन क्रांति में संलग्न नहीं रहना चाहते थे।

सत्ता पर अधिकार करने के बाद, कुछ नेताओं को ऐशो-आराम की जिंदगी बसर करने का चस्का लग गया। उन्होंने भौतिक और वैतनिक विशेषाधिकारों को प्राप्त करने की चेष्टा की। इस चरण में अभी केवल नौकरशाही प्रवृत्ति का दुर्गुण मौजूद था। यदि यह प्रक्रिया जारी रहती तो बुरी आदतें भ्रष्टाचार पैदा कर सकती थीं और कुछ नेताओं की क्रांतिकारी निष्ठा नष्ट कर सकती थी। ऐसे सरकारी नेताओं को क्रांतिकारी राजनीति अतंत: असहनीय हो जाती है। फिर वे इसका दमन करने के लिए प्रत्येक उपाय करते हैं।

चीन के साम्यवादियों ने कहा कि सांस्कृतिक क्रांति सर्वहारा वर्ग और बुर्जुआ वर्ग के बीच के संघर्ष का परिचायक थी। कुछ लोगों को आश्चर्य हुआ कि चीन की साम्यवादी शासन प्रणाली के अंतर्गत उस बुर्जुआजी के विरुद्ध दूसरी क्रांति की जरूरत पड़ी, जिसको दो दशक पहले आर्थिक और राजनीतिक सत्ता से वंचित कर दिया गया था। यह कथन

परंपरागत बुर्जुआजी के संदर्भ में असत्य हो सकता है लेकिन जनवादी चीन में एक नवीन बुर्जुआ वर्ग सामाजिक असमानताओं के निरंतर अस्तित्व के कारण अवश्य विकसित हो गया था। इसी नवीन बुर्जुआ वर्ग ने माओ त्सेतुंग के नेतृत्व में शुरू की गई सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति का दृढ़ता के साथ प्रतिरोध किया।

बाहर से देखने पर कम्युनिस्ट पार्टी के अंदर मौजूद विभिन्न पक्षों के बीच के संघर्ष सर्वहारा वर्गीय क्रांतिकारियों के आपसी संघर्ष प्रतीत होते हैं जिनमें विरोधी गुट समान रू" से मार्क्सवादी विश्वासों से प्रेरित दिखाई पड़ते हैं परंतु वास्तव में वे वर्ग संघर्ष की नई पद्धति की अभिव्यक्ति हैं। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के प्रकट रूप से अजेय ढांचे के नीचे, और मार्क्सवाद के प्रति घोषित निष्ठा के बावजूद, अंतहीन और गुप्त लड़ाइयां लड़ी जाती रहीं। ल्यू शाओछी और माओ त्सेतुंग के बीच के संघर्ष को इसी नजरिए से देखना चाहिए। वह इन दोनों नेताओं का कोई व्यक्तिगत झगडा नहीं था और न ही इसे इन दोनों के बीच का शुद्ध और सरल मताग्रही विवाद माना जा सकता है।

यह संघर्ष वास्तव में वर्गीय अंतर्विरोधों की संपूर्ण शृंखला की अभिव्यक्ति था। इस विवाद में सामाजिक और वैचारिक दोनों तरह के मुद्दे थे जैसे भौतिक विशेषाधिकार, नौकरशाही की प्रवृत्तियां, और माओ त्सेतुंग की क्रांतिकारी नीतियों के साथ तालमेल। माओ की कार्यनीतियां भी काफी जटिल थीं। उनका उद्देश्य अपने विपक्षियों को केवल उनके पदों और दायित्वों से वंचित करना नहीं था। माओ त्सेतुंग का प्रयास था कि ल्यू शाओछी की नीतियों का सामाजिक और वैचारिक आधार दुर्बल कर दिया जाए।

चीनी सांस्कृतिक क्रांति का बुनियादी और अंतिम लक्ष्य मानवीय आत्मा का पुनर्निर्माण करना था। उनके नारे 'व्यक्तिवाद के विरुद्ध लड़ो' का लक्ष्य विश्व की समष्टिवादी धारणा की प्रधानता को स्थापित करना था। इसके लिए अतीत से विरासत में प्राप्त परंपरागत स्वार्थ प्रेरित दृष्टि का, जिसे मनुष्य वर्तमान में भी जी रहा था त्याग करना आवश्यक था। अत: माओ त्सेतुंग ने घोषणा की कि भौतिक प्रेरकों को अपनाना चाहिए। इससे माओ का तात्पर्य था कि श्रमजीवी और सत्ताधारी दोनों को क्रांतिकारी आस्था के आधार पर समाजवाद के लिए कार्य करना चाहिए।

'ए हिस्टरी आन दि चाइनीज कल्चरल रिवोल्यूशन' में ज्यां दौबिए का कथन ध्यान देने योग्य है :

> इसका उद्देश्य विचारों में पूर्ण परिवर्तन और स्वार्थवाद का पूर्ण लोप था। यह मुद्रा-धन और भौतिक वस्तुओं की पूजा के विरुद्ध एक चुनौती थी न कि स्वयं मनुष्य के विरुद्ध जैसा कुछ पश्चिमी टीकाकार समझते हैं। मेरे विचार से उन्होंने इस पर सावधानी से विचार नहीं किया है। बल्कि इसके विपरीत मुझे लगता है कि यह मानव जाति में असीम विश्वास का संकेत है, क्योंकि पूर्ण तर्क इस विश्वास पर केंद्रित है कि मानवता अपनी विचारधारात्मक जंजीरों से अपने को मुक्त कर सकती है।[5]

पार्टी की सत्ता के शीर्ष पर और पार्टी की विभिन्न शाखाओं में विपक्षियों की उपस्थिति ने माओ त्सेतुंग के कार्य को और भी कठिन और जटिल बना दिया। इसके अलावा, उनके विरोधियों ने भी घोषणा की कि वे भी मार्क्सवादी और माओवादी दोनों हैं। वे अपने विचारों को गुप्त और अपने तक सीमित रखते थे। यदि सोवियत शैली का शुद्धीकरण किया जाता और उच्च श्रेणी के सत्ताधारियों को तुरंत दंडित कर दिया जाता तो पार्टी की शाखाएं, जहां विपक्ष का समर्थन था, साफ छूट जातीं। माओ त्सेतुंग की कार्यनीति थी कि शत्रु को धीरे-धीरे अपने पदों को छोड़ने के लिए विवश कर दिया जाए। उनका प्रयास था कि विपक्ष को परंपरा की मदद से चूहे की तरह सत्ता को 'कुतरने' से रोक दिया जाए और उसे खुले मैदान में घसीटकर उसका असली रूप प्रकट किया जाए।

चूंकि इस बात का खतरा था कि ताकत अदृश्य रूप से फिसल कर नवीन बुर्जुआ वर्ग के हाथों में पहुंच रही है, इसलिए माओ त्सेतुंग ने निश्चय किया कि जनता का आह्वान किया जाए और वह सभी स्तरों पर पार्टी और राज्य के नेताओं और उच्च 'काडरों' के आचरण की जांच करे। इस बात का निर्णय जनता करेगी कि उसके शासकों में कौन विश्वास के योग्य है और कौन उग्र अपराधों और भ्रष्टाचार के दोषी है जिनकी निंदा और भर्त्सना की जानी चाहिए। इन आलोचनाओं और निंदाओं का जवाब देने के लिए जब विपक्षी अपने मुंह खोलेंगे, तो उनका चेहरा सारी दुनिया देख लेगी।

आर्थिक मुद्दों को लेकर माओ त्सेतुंग और ल्यू शाओछी के बीच मतभेद तीव्र रूप धारण करते चले गए और इनका बुरा नतीजा भी निकला। इस संदर्भ में हमें एडगर स्नो का मत भी देखना चाहिए जो उन्होंने अपनी पुस्तक *चाइना'ज लौंग मार्च* में पेश किया है।

हमें अपने पाठकों को यह बात याद दिलाना जरूरी है कि एडगर स्नो पहले अमरीकी पत्रकार थे जिन्होंने कठिन हालात में सबसे पहले चीन के उन क्षेत्रों का दौरा किया जहां कम्युनिस्टों ने अपना झंडा गाड़ दिया था। वे जून 1936 में माओ त्सेतुंग से पहली बार मिले। उन्होंने कम्युनिस्ट आंदोलन की सफलता के बाद भी चीन से संबंध रखा और माओ से उनके गहरे संबंध रहे। एडगर स्नो ने कहा :

> आत्मपरक कारकों को राजनीतिक यथार्थ से पूर्णत: अलग नहीं किया जा सकता। निस्संदेह माओ-ल्यू संघर्ष मुख्यत: उपायों और उद्देश्यों के बारे में बुनियादी मतभेदों से जुड़ा था। यह संघर्ष महान चीनी क्रांति के भाग्य पर असर डालता था जिसमें निश्चित रूप से व्यक्ति पूजा की भूमिका भी शामिल थी।

सांस्कृतिक क्रांति की अर्थनीति

शंघाई में सांस्कृतिक क्रांति के एक कार्यकर्ता का उदाहरण देकर जोन राबिन्सन कहती हैं :

> बुर्जुआ क्रांति संपत्ति को सुरक्षित रखती है। सर्वहारा वर्गीय क्रांति संपत्ति को छीन लेती है। संपत्तिशाली वर्ग अपनी संपत्ति वापस लेने का प्रयत्न करता है। इतिहास में

अनेक बार क्रांति के बाद प्रतिक्रांति सफल हो जाती है। सोवियत संघ में इस प्रतिक्रांति को पराजित कर दिया गया था और निजी संपत्ति का रूपांतरण कर दिया गया था, परंतु उन्होंने सांस्कृतिक क्रांति क्रियान्वित नहीं की। बुर्जुआ विचारधारा में परिवर्तन नहीं किया गया और सर्वहारा वर्ग की सत्ता भ्रष्ट हो गई।...सोवियत संघ में संशोधनवाद का दर्दनाक सबक हमें चेतावनी देता है कि संपत्ति का उन्मूलन काफी नहीं है, क्रांति को अर्थव्यवस्था के ऊपरी ढांचे में क्रियान्वित करना आवश्यक है।[6]

परंतु जोन राबिन्सन का कथन है कि इस सवाल का एक दूसरा पक्ष भी है :

ऊपरी ढांचे की प्रतिक्रिया आधार पर भी होती है। विशेषज्ञों और साधारण मजदूरों के बीच जनवादी संबंध फैक्टरी में उत्पादन को कैसे प्रभावित करते हैं? निजी मुनाफे के खिलाफ अभियान कृषि से बाजार में आने वाले अधिशेष को किस प्रकार प्रभावित करता है? ... क्या उद्योगीकरण को किसानों के शोषण और उत्पीड़न के बिना क्रियान्वित किया जा सकता है? ... निचले स्तर पर लोकतंत्र के आधार पर समाजवाद कैसे स्थापित किया जाए? ... चीन के विषय में कुछ स्पष्ट तथ्य हैं, जिनसे कोई इनकार नहीं कर सकता। विघटन, दुर्भिक्ष और अराजकता की भविष्यवाणियां झूठ साबित हुई हैं। चीन ने अपने सभी ऋणों का भुगतान कर दिया है और स्वयं विकासशील देशों की सहायता कर रहा है किंतु खुद किसी तरह की मदद नहीं ले रहा है। उसने 1959-61 के कठिन वर्षों को मुद्रास्फीति के बिना झेल लिया और उसकी मुद्रा भी कुछ अन्य देशों की भांति आज भी स्थिर है। व्यापार में संतुलन है, और उसके 'अल्पविकसित' स्वरूप में परिवर्तन धीरे-धीरे हो रहा है। पहले तो तैयार माल का आयात और कच्चे माल का निर्यात किया जाता था।[7]

हान सूयिन कहती हैं कि सांस्कृतिक क्रांति भी माओ त्सेतुंग की सभी लंबी यात्राओं की भांति बहुस्तरीय गतिविधि है। उनका मत है कि इस घटना के बारे में लोगों को सर्वाधिक भ्रांति है और उसके चित्रण में भी सर्वाधिक त्रुटियां हुई हैं। वे कहती हैं :

1949 के बाद सत्रह वर्षों में चीन की आर्थिक वृद्धि की गति इतिहास में अभूतपूर्व रही है। अगले दशक में यह रफ्तार दोगुनी हो सकती है क्योंकि अब चीन का आर्थिक आधार 1949 की बुनियाद से बिलकुल भिन्न और अत्यधिक शक्तिशाली है। फलत: जैसा कि ऐसे विकासों में होता है, अब अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में प्रगति रेखागणितीय मानकों के अनुसार द्रुत गति से होगी।[8] (अंकगणितीय प्रगति की मिसाल : 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8 और रेखागणितीय प्रगति का उदाहरण : 1, 2, 4, 8, 16, 32, 64, 128)

माओ त्सेतुंग की क्रांतिकारी हिंसा की संकल्पना का एक विवेकशील पहलू है जिसे पश्चिमी आलोचनाओं में अकसर उपेक्षित कर दिया जाता है :

> चेयरमैन माओ की शिक्षा है कि हमें इस संघर्ष को विवेक के साथ चलाना चाहिए, बलप्रयोग द्वारा नहीं। हमें... इसी आदेश के अनुसार कार्य करना चाहिए। विवेक की नीति पर आचरण करना तथा बलप्रयोग और शक्ति के उपयोग को पूर्ण निषेध महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति में अत्यधिक महत्वपूर्ण है।[9]

इमी प्रकार माओ त्सेतुंग के शुद्धीकरण अभियानों ने राष्ट्र के द्रुत आर्थिक विकास और सर्वतोमुखी आधुनिकीकरण में कोई बाधा नहीं डाली। यही बात सांस्कृतिक क्रांति पर भी लागू होती है। हान सूयिन इसको प्रमाणित करती हैं:

> 1966 संभवत: चीन के इतिहास में एक निर्णायक वर्ष सिद्ध होगा: स्वतंत्र आधुनिक और सर्वतोमुखी राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की उपलब्धि के लिए आर्थिक प्रगति पर आधारित भौतिक अग्रगामी छलांग का निर्णय, परमाणु शस्त्रों और प्रक्षेपास्त्रों के आविष्कारों द्वारा सैनिक क्षेत्र में प्रगति, एवं सांस्कृतिक क्रांति जिसके अंतर्गत 70 करोड़ लोगों की मनोवृत्ति और समाजवादी नैतिकता के पुनर्निर्माण के लिए एक विशाल राजनीतिक तथा मनोवैज्ञानिक अभियान शुरू हुआ।[10]

सांस्कृतिक क्रांति के समय सर्वोच्च शक्ति चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति के एक सांस्कृतिक क्रांतिकारी 'ग्रुप' में निहित कर दी गई, जिसके प्रमुख सदस्य थे: माओ त्सेतुंग, चियांग छिंग (माओ की पत्नी), चोउ एनालाई, चेन पोता और कांग शेंग। सांस्कृतिक क्रांति को जनवरी 1967 और सितंबर 1968 के बीच 29 प्रांतीय क्रांतिकारी राजनीतिक मामलों की निगरानी करनी थी। यही व्यवस्था प्रदेश, जनपद, नगरपालिका और कम्यून के स्तरों पर भी की गई। फैक्टरियों के प्रबंध और संचालन में कम्युनिस्टों और विशेषज्ञों के बीच सहयोग होता था।

सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के समय चीन की नियोजन व्यवस्था, व्हीलराइट और मैकफार्लेन के अनुसार, निम्नलिखित बिंदुओं पर आधारित थी :

1. उत्पादन की केंद्रीय योजना को उद्योगों के बीच प्रत्यक्ष परामर्श और सौदेबाजी से संयुक्त कर दिया गया था, खासकर प्रांतीय स्तर पर।
2. लोगों के पुनर्निवेश और उनकी अवमूल्यन राशियों के उपयोग द्वारा उद्योगों को अपने वित्तीय प्रबंधन की अनुमति नहीं थी, सभी मुनाफों को राज्य को हस्तांतरित किया जाता था।
3. उद्योगीय प्रेरक नैतिक और विचारधारा पर आधारित थे। 'राजनीति को लाभों' की तुलना में 'अधिक महत्व' दिया जाता था।
4. वेतनों को पूर्वनिर्धारित किया जाता था; उनका आर्थिक परिणामों से प्रत्यक्ष संबंध नहीं था।
5. कुछ वस्तुओं, जैसे कपास और कच्चे माल की राशनिंग की जाती थी और उन्हें 'सब्सिडी' भी दी जाती थी। कीमतों को एक समान कर दिया गया था और

उनका निर्धारण प्रशासन करता था। चूंकि लाभों का राज्य को हस्तांतरण किया जाता था, इसीलिए कीमतों और करों में उतार-चढ़ाव की जरूरत कम थी।

6. चूंकि वेतनों और आयों पर प्रत्यक्ष नियंत्रण था, इसीलिए व्यक्तिगत आयकरों की कोई आवश्यकता नहीं थी।

सांस्कृतिक क्रांति ने योजना प्रणाली में औपचारिक परिवर्तन नहीं किए थे। वास्तविक परिवर्तन यह था कि अब सभी स्तरों पर सांस्कृतिक क्रांति के लिए नियुक्त क्रांतिकारी समितियां ही आर्थिक प्रशासन पर पूर्ण निगरानी रखती थीं। कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने 8 अगस्त 1966 को घोषणा की, 'हमारा उद्देश्य ऐसे सभी ऊपरी ढांचों का पुनर्निर्माण और सुधार करना है, जो समाजवादी आर्थिक आधार के प्रतिकूल हैं।'[11]

वास्तविक रूप से महत्वपूर्ण परिवर्तन प्रेरणाओं और मनोवृत्ति के स्तर पर हुआ था। कारखानों में अतिरिक्त कार्यों, बोनसों, इनामों, और 'लाभों की सर्वोच्चता' की नीतियों का उन्मूलन कर दिया गया। कुशलता के सचूक के रूप में लाभ की अस्वीकृति कर दी गई। आर्थिक विकास के क्षेत्र में माओ त्सेतुंग की इच्छा थी कि स्वहित के स्थान पर नैतिक प्रेरकों को प्रोत्साहन दिया जाए। माओवादी कहते थे, 'पहले जनता को समृद्ध करो और फिर तुम भी समृद्ध हो जाओगे।' परंतु ल्यू शाओछी जैसे संशोधनवादियों का कथन था, 'पहले अपने को समृद्ध करो और फिर तुम जनता को भी समृद्ध कर दोगे।' विश्व के गरीबों की आशा इन दो आदर्शों में से किसमें निहित है?[12]

माओ त्सेतुंग ने ल्यू शाओछी की आर्थिक नीतियों की, जो 'स्वार्थ निरोधी' रणनीति से संघर्ष में बाधा डाली थीं, निम्नलिखित आलोचना प्रस्तुत की :

1. ल्यू शाओछी के 'सत्तर बिंदुओं के घोषणापत्र' में उद्योगों में श्रमिकों के नियंत्रण और 'राजनीति की सर्वोच्चता' का कोई उल्लेखन नहीं था। उसमें भौतिक प्रेरकों को प्राथमिकता दी गई, बोनसों को सर्वोच्च बताया गया था, जिसमे उद्योगीकरण की उपलब्धि शुद्ध रूप से आर्थिक तरीकों द्वारा ही की जाएगी।
2. कृषि के क्षेत्र में 'सान जी यी बाओ' (अपने निजी भूखंडों पर खेती की नीतियों) ने कुलकवाद, धनी किसानवाद और पूंजीवाद को बढ़ावा दिया है।
3. कृषि ब्रिगेडों के कार्यों में उसने स्वैच्छिक सार्वजनिक सेवा के स्थान पर 'कार्य बिंदुओं' के सिद्धांत को क्रियान्वित किया।
4. बुखारिन की भांति उसने तर्क दिया कि जैसे-जैसे समाजवाद की प्रगति होगी, वैसे-वैसे चीन में वर्ग संघर्ष समाप्त हो जाएगा।
5. उसने इस बात से इनकार किया कि चीन के समाजवादी निर्माण में 'राजनीतिक कार्य आर्थिक कार्य की जीवनशक्ति' है।
6. उसने पार्टी अनुशासन को सर्वोच्च सिद्धांत के रूप में मान्यता दी और इस बात से इनकार किया कि 'अल्प संख्या प्रायः सही होती है' और उसे विद्रोह करने का अधिकार है।

सांस्कृतिक क्रांति के काल में चीन की प्रौद्योगिक नीति की निम्नलिखित विशेषताएं थीं:

1. प्रतिरक्षा क्षेत्र को छोड़कर बड़े औद्योगिक कारखानों में निवेश कठोरतापूर्वक सीमित है; प्रांतों को प्रोत्साहन दिया जाता है कि वे सैनिक आक्रमण का सामना करने के लिए स्वावलंबी 'आधार क्षेत्र' बनाने का प्रयास करें।
2. लघु और मध्यम दर्जे के उद्योगों की स्थापना की जाती है; उन्हें प्रांतीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए स्थानीय वित्तीय संसाधनों और कच्चे माल पर निर्भर रहना सिखाया जाता है ताकि राज्य पर उनकी निर्भरता न्यूनतम रहे।
3. छोटे, स्वावलंबी उद्योगों की स्थापना को बढ़ावा दिया जाता है जिनका संचालन 'लाल जनता' करती है, तकनीशियन नहीं करते। इन उद्योगों का उपयोग राजनीति और विचारधारा के शिक्षा केंद्रों के रूप में किया जाता है। उद्योग को शुद्ध आर्थिक इकाई के रूप में नहीं देखा जाता, जहां आर्थिक कार्यक्षमता को असंदिग्ध प्राथमिकता दी जाए।
4. अनेक औद्योगिक कारखानों में, जहां अंतिम उत्पादों का निर्माण होता है, मशीनों के औजारों और कल-पुरजों के निर्माण को भी बढ़ावा और प्रोत्साहन दिया जाता है।
5. विदेशी मशीनी डिजाइन के अनुकरण को दक्षिणपंथी आर्थिक नीति के प्रौद्योगिक पूर्वग्रह पर आधारित समझा जाता है। इसे निरंतर बदलने की चेष्टा की जाती है।
6. बहुत से कारखानों में श्रमिकों ने सोवियत या पश्चिमी डिजाइन में सुधार किया है जो श्रमिकों की संभावित योग्यता का प्रमाण है कि वे नवीकरण के मामले में विशेषज्ञों को भी मात दे सकते हैं।
7. स्वयं मजदूरों के सुझावों पर आधारित परिवर्तनों द्वारा प्रक्रियाओं के मशीनीकरण को प्रोत्साहन देने के प्रयत्न किए जा रहे हैं।
8. उत्पादन प्रक्रियाओं में, जहां मशीनीकरण से काम लिया जा सकता है, श्रम-सघन पद्धतियों का उपयोग किया जाता है जैसे मशीन के विभिन्न हिस्सों को जोड़ना और पैकेज का काम।
9. विभिन्न मशीनों के जोड़ने के काम में हिस्सों को एक मशीन में रूपांतरित करते समय 'वेल्डिंग' और कीलों का उपयोग किया जाता है।
10. सुदक्ष बाजार निकासों के निर्माण पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
11. जहां विदेशी मशीनों और प्रौद्योगिकी को ऋण के रूप में या किराए पर लिया जाता है वहां उनकी नवीनतम डिजाइन की मांग की जाती है ताकि वे जल्दी बेकार न हो जाएं।

सांस्कृतिक क्रांति के समय चीन में 70,000 कम्यून थे। कम्यून में कुछ हजार से लेकर 50,000 सदस्य तक होते थे। कार्य संपादन, वर्षा की मात्रा, और भूमि की उर्वरता की दृष्टि

से उनके बीच बहुत भिन्नताएं थीं। उनमें सर्वत्र पानी के भंडारण, अनुर्वर भूमि को उपजाऊ बनाने और उत्पादन को बढ़ाने पर एवं नैतिक और ममष्टिवादी प्रेरकों पर विशेष जोर दिया जाता था। स्वावलंबन तथा स्थानीय पहल भी कुछ अन्य पहलू थे जिन पर खास ध्यान दिया जाता था। माओ त्सेतुंग के विचारों को पढ़ने के लिए भी किसानों को उत्साहित किया जाता था :

> चीन की आर्थिक योजना प्रणाली की व्याख्या करने में पश्चिमी अर्थशास्त्रियों को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। यह इस कारण है क्योंकि चीन की प्रणाली में बहुत से गैर-आर्थिक उद्देश्यों को अपना लिया जाता है।...पश्चिम में औद्योगिक क्रांति का विस्फोट ऐसी ऐतिहासिक परिस्थिति में हुआ जिसमें बाजार संस्थाएं, स्वहित और उससे जुड़े रिवाज पहले ही प्रभुताशील हो चुके थे। यह चीन के विषय में सच नहीं था। वहां बाजार पर आश्रित समाज का कोई लंबा पूर्ववर्ती इतिहास नहीं था। समाजवादी चीन अचानक बुनियादी तौर से सामंती और अर्ध-औपनिवेशिक संबंधों से निकलकर छलांग लगाकर व्यापारिक और औद्योगिक संबंधों के युग में प्रवेश कर गया। ल्यू शाओछी ने कोशिश की कि इन पूंजीवादी संबंधों में से कुछ को उस अर्थव्यवस्था में शामिल कर दिया जाए जिसमें केंद्रीय नियोजन मुख्य मार्गदर्शक शक्ति है।...माओवादियों का मत है कि समाज का संगठन किसानों और श्रमजीवी वर्ग के दृष्टिकोण के अनुसार होना चाहिए...सामान्य कल्याण का कार्य तभी पूरा हो सकता है जब इन वर्गों को सामाजिक उत्पाद में समुचित हिस्सा दिया जाए।[13]

माओ के कथनानुसार 'उपभोक्ता समाज' की समाप्ति के उपरांत ही अर्थात 'जब उपभोक्ता नगरों का रूपांतरण उत्पादक नगरों मे कर दिया जाए, तभी जनता की शक्ति का सुदृढ़ीकरण संभव हो सकता है।'[14]

यह लगभग वही बात है जिसका उल्लेख गांधी ने भारत के संदर्भ में किया था।

सांस्कृतिक क्रांति का प्रारंभ

10 नवंबर 1965 को शंघाई में वेनहुई बाओ ने याओ वेनयुआन का एक लेख 'नए ऐतिहासिक नाटक पर टिप्पणी' शीर्षक से प्रकाशित किया। इसने वह चिनगारी लगाई जिससे सांस्कृतिक क्रांति की ज्वाला फैलने लगी। फरवरी 1965 में माओ त्सेतुंग की पत्नी और उनकी सेक्रेटरी चियांग छिंग, चांग चुनछियाओ से मिलने शंघाई गईं। चांग शंघाई नगरपालिका पार्टी कमेटी के सेक्रेटरी थे। उन्होंने वू हान के नाटक 'हाई रूई अपने पद से बरखास्त क्यों किया गया' की आलोचना प्रकाशित कराई जिसमें आलोचक याओ वेतनयुआन ने आरोप लगाया कि यह नाटक माओ त्सेतुंग द्वारा पेंग तेहुआई की बरखास्तगी की प्रच्छन्न निंदा के उद्देश्य से लिखा गया था। इस नाटक में 'हाई रूई' का चरित्र पेंग तेहुआई को और 'सम्राट' का चरित्र माओ त्सेतुंग को प्रतिबिंबित करता था।

वू हान इतिहासकार और पेइचिंग का उपमहापौर था। उसका नाटक मिंग राजवंश के एक सम्मानित शाही गवर्नर के बारे में था जिसको सम्राट ने अन्यायपूर्वक उसके पद से बरखास्त कर दिया था। यह स्पष्ट रूप मे चीन की ऐतिहासिक परंपरा के अनुकूल था कि समसामयिक राजनीतिक विवाद में ऐतिहासिक विषयों का भी उपयोग किया जाए।

> यह विचित्र लग सकता है कि माओ के निर्देश पर लिखे हुए लेख को पेइचिंग के प्रत्येक सरकारी प्रकाशन ने छापने से इनकार कर दिया। माओ चीनी क्रांति के जनक थे लेकिन अपने देश की राजधानी में एक लेख प्रकाशित कराने में असमर्थ थे। इससे पता चलता है कि जिस पार्टी की स्थापना में उनका प्रमुख योगदान था, उसी पार्टी में, उनकी शक्ति क्षीण हो गई थी। ... परंपरागत गुरिल्ला कार्यनीति का उपयोग करते हुए, माओ ने अपना हमला एक छोटे शत्रु पर कर दिया। एक वर्ष में संघर्ष का क्षेत्र बढ़ाकर उन्होंने उसको विशाल अभियान का रूप दे दिया जिसका उद्देश्य 'पूंजीवादी मार्ग' पर चलने वाले सभी सत्ताधारियों को अपदस्थ करना था।[15]

माओ त्सेतुंग ने अनुभव किया कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति के अधिकांश नेता उनका विरोध करते हैं। अत: उन्होंने 1965 की गरमियों से बड़ी सतर्कता के साथ ऐसे संघर्ष के पक्ष में जनमत तैयार करने का प्रयत्न शुरू कर दिया, जो गृहयुद्ध के स्तर तक पहुंच सकता था। कठोरता से नियंत्रित पार्टी ढांचे को प्रभावित करने में असमर्थ माओ त्सेतुंग ने आम जनता और सेना पर ध्यान केंद्रित किया। उन्हें अपनी नवीन क्रांति का आधार बनाया। अगर जनता के विद्रोह का सामाजिक आधार न होता तो वे उस सामाजिक विप्लव की ज्वाला भड़काने में सक्षम न होते जिसका विस्फोट एक वर्ष बाद शुरू हो गया। सांस्कृतिक क्रांति के विदेशी समालोचक प्रायः इस कारक की उपेक्षा कर देते हैं।

लिन प्याओ चीनी क्रांति के एक महान सेनानायक थे। 1965 तक उन्होंने सेना का एक आदर्श क्रांतिकारी संगठन के रूप में निर्माण पूरा कर लिया था। सेना ने ही माओ की सूक्तियों का संकलन कर 'छोटी लाल किताब' का प्रकाशन किया था। राष्ट्रीय फौजी अखबार *लिबरेशन आर्मी डेली* ने माओ त्सेतुंग के चिंतन का देश भर में प्रचार करना प्रारंभ कर दिया। यह शीघ्र स्पष्ट हो गया कि राष्ट्रीय पार्टी अखबार, *पीपुल्स डेली* और सेना का अखबार, *लिबरेशन डेली* दो परस्पर विरोधी राजनीतिक नीतियों का प्रचार कर रहे थे। अप्रैल 1966 में माओ की कार्यनीतिक विजय हुई जब *लिबरेशन डेली* ने *पीपुल्स डेली* की संपादकीय नीति पर आधिपत्य कर लिया। तभी यह संभव हो सका कि सांस्कृतिक क्रांति के पक्ष में एक विशाल और समन्वित विचारधारात्मक अभियान को प्रारंभ किया जाए।

विदेशी और आंतरिक घटनाएं एक-दूसरे से जुड़ी थीं। अमरीका द्वारा उत्तरी वियतनाम में सैनिक हस्तक्षेप और उसके बाद फरवरी 1965 में उत्तरी वियतनाम पर भीषण बमवर्षा ने अंदरूनी मोरचे पर क्रांतिकारी नवीकरण के अभियान की शुरुआत करने की माओ त्सेतुंग की योजना में गंभीर बाधा डाली। 1965 में, चीन के नेताओं में विदेशी नीति के

विषय में एक बहस लगातार जारी रही। एडगर स्नो ने बताया कि 1965 की सर्दियों में ल्यू शाओछी ने चीनी सोवियत गठबंधन को फिर से सक्रिय करना चाहा, जिसमे चीन की दक्षिणी सीमा को अमरीकी आक्रमण के खतरे से सुरक्षित रखा जा सके।

पीपुल्स लिबरेशन आर्मी (जनमुक्ति सेना) के चीफ आफ स्टाफ लो रूछिंग ने मई 1965 में एक सैद्धांतिक लेख प्रकाशित किया, जिसमें उन्होंने कहा कि चीन वियतनाम में सेना भेज सकता है। इस लेख में अमरीका को चेतावनी दी गई कि परमाणु आयुधों पर उसका एकाधिकार खत्म हो चुका है, जिसका अभिप्राय था कि रूस और चीन दोनों के पास परमाणु निरोधक हैं। परंतु माओ का कहना था कि किसी भी अन्य मुद्दे की तुलना में संशोधनवाद के विरुद्ध संघर्ष को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। उन्होंने चीन की सीमाओं के बाहर चीनी सेना को भेजने का विरोध किया।

माओ चाहते थे कि सेना का उपयोग उनकी सांस्कृतिक क्रांति के राजनीतिक आधार के रूप में किया जाए। उन्होंने अनुभव किया कि वियतनाम में चीन की सेना को भेजकर उनके प्रतिद्वंद्वी एक ही बार में राष्ट्रीय राजनीति में जनमुक्ति सेना को तटस्थ कर देंगे। यदि अमरीका के विरुद्ध चीन रूस की सहायता लेता है तो चीन की भूमि पर रूस के नौ सैनिक और वायु सैनिक अड्डों की स्थापना हो जाएगी। यह ल्यू शाओछी के लिए उपयुक्त था, क्योंकि यह चीन की आंतरिक राजनीति पर रूसी प्रभाव को बढ़ाता था; आगामी सांस्कृतिक क्रांति में इन्हीं ल्यू शाओछी को 'चीन का ख्रुश्चेव' और संशोधनवादी बताकर उनकी घोर निंदा की गई।

माओ त्सेतुंग और लिन प्याओ दोनों अमरीका के विरुद्ध युद्ध से बचना चाहते थे और इसके साथ ही सोवियत प्रभाव की संभावना को भी रोकना चाहते थे क्योंकि यह ल्यू शाओछी के पक्ष में जाता। लिन प्याओ ने माओ की स्तुति और प्रशंसा करते हुए एक लेख लिखा जिसमें उन्हें विश्व क्रांति का महान नेता बताया। इस लेख में उन्होंने विश्व के सभी क्रांतिकारी राष्ट्रों से अनुरोध किया कि वे अपनी राष्ट्रीय क्रांतियों मे आत्मनिर्भरता की माओ त्सेतुंग की रणनीति का अनुसरण करें। नवंबर 1965 में लो रूछिंग को चीफ आफ स्टाफ के पद से हटा दिया गया। इस प्रकार माओ त्सेतुंग सेना और विदेश नीति पर अपना नियंत्रण स्थापित करने में सफल हो गए। अब वे निश्चित होकर सांस्कृतिक कार्यक्रम में अपने विशेष कार्यक्रम की शुरुआत कर सकते थे।

इसमें कोई शक नहीं कि माओ त्सेतुंग की सटीक राजनीतिक समझ थी। उन्होंने तुरंत भांप लिया कि समाजवादी रूस में समाजवादी मूल्यों को ठुकराया जा रहा है और इन हालात पर उन्होंने जो विचार रखे वे अधिकतर ठीक थ लेकिन 'संशोधनवाद' को सबसे बड़ा दुश्मन समझना उनकी भूल थी। चीन का कम्युनिस्ट पार्टी भी इसी समझ का शिकार हो गई लेकिन ऐसे भी नेता थे जो इस समझ से सहमत नहीं थे।

समाजवादी रूस से टकराव ने न केवल अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन को भारी क्षति पहुंचाई बल्कि चीन की कम्युनिस्ट पार्टी में एक अस्वस्थ माहौल पैदा हो गया। जिसने भी माओ का विरोध किया उसको 'संशोधनवादी' या रूस समर्थक समझा जाने

लगा। उधर रूस के नेताओं ने भी चीनी नेताओं को लताड़ बतानी शुरू कर दी। दुनिया भर में ऐसे हालात पैदा हो गए जिसने पूंजीवादी खेमे को बल प्रदान किया। खास तौर से अमरीका ने इन हालात का पूरा-पूरा लाभ उठाया और देखते-देखते संसार के कई देशों से समाजवादी व्यवस्था उखड़ गई।

1966 की ग्रीष्म ऋतु में महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति ने नए चरण में प्रवेश किया। माओवादियों ने अब पेइचिंग के प्रचार तंत्र पर एकाधिकार कर लिया और पार्टी की पेइचिंग नगर समिति का भी उन्मूलन कर दिया। पेइचिंग का महापौर पेंग चेन, जो पोलिट ब्यूरो का सदस्य भी था, लो रूछिंग जो सेना का चीफ आफ स्टाफ था, तथा लू तिंगयी, जो केंद्रीय समिति के प्रचार अनुभाग का प्रधान था, इन सभी की इस समय प्रतिक्रांतिकारियों के रूप में सार्वजनिक निंदा की गई। ल्यू शाओछी और अन्य नेताओं को आशा थी कि माओ त्सेतुंग के साथ समझौता हो जाएगा। परंतु माओ दृढ़ संकल्प के साथ अपनी क्रांति को कीमत की परवाह किए बिना अंतिम नतीजे तक ले जाना चाहते थे।

पीपुल्स डेली पर अब माओवादी शक्तियों का नियंत्रण था। उसने अपने संपादकीय में लिखा कि यदि बुर्जुआ वर्ग के प्रतिनिधियों को पार्टी मे निकाला नहीं गया तो चीन का भाग्य भी रूस जैसा होगा। माओ के अनुसार सोवियत संघ में 'ख्रुश्चेव के संशोधनवादी गुट' ने पार्टी, सेना और राज्य का नेतृत्व हड़प लिया था। चीन में 'सांस्कृतिक क्रांति प्रारंभ से ही सांस्कृतिक मामलों की आलोचना तक सीमित नहीं थी; वह वास्तव में राजनीतिक संघर्ष को भी प्रतिबिंबित करती थी।'[16]

चेयरमैन माओ चीन की कम्युनिस्ट पार्टी से ही अनुरोध कर रहे थे कि वह अपने विरुद्ध संघर्ष करे। यह कार्य ऐसा था जिसे पार्टी नहीं कर सकती थी और न करना चाहती थी। जब 1966 की गरमियों में माओ त्सेतुंग दक्षिण चीन गए तो उन्होंने जन आंदोलन की बागडोर ल्यू शाओछी, तंग श्याओफिंग और केंद्रीय समिति के सचिवालय को सौंप दी। पेइचिंग के वरिष्ठ पार्टी नेता, ल्यू शाओछी और तंग श्याओफिंग ने वरिष्ठ कार्यकर्ताओं के कार्यदलों को विश्वविद्यालयों और अन्य शहरी सांस्कृतिक केंद्रों में भेज दिया। इन कार्यदलों ने अपने कार्य की व्याख्या करते हुए कहा कि वे गैर-पार्टी बुद्धिजीवियों और 'बुर्जुआ अकादमिक अधिकारियों' पर प्रहार के द्वारा पार्टी संगठन की रक्षा करेंगे।

इन कार्यदलों ने विद्यार्थियों, शिक्षकों, गैर-पार्टी लोगों और निम्न स्तर के कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं को प्रतिक्रांतिकारी बताकर उनकी कठोर आलोचना की। इसका नतीजा यह हुआ कि जन आंदोलन का दमन किया गया और 'पचास दिनों के सफेद आतंक' के शिकार साधारण पार्टी सदस्य और विद्रोही व्यक्ति हुए। माओ त्सेतुंग अचानक वूहान में प्रकट हुए। जुलाई मध्य में उन्होंने यांगत्सी नदी को नाटकीय शैली में तैरकर पार किया और अपने शारीरिक बल और मानसिक ऊर्जा का परिचय दिया। पेइचिंग लौटकर उन्होंने विद्यार्थी विद्रोहियों को अपने समर्थन की घोषणा की।

चीनी ख्रुश्चेव के रूप में ल्यू शाओछी

माओ त्सेतुंग ने जन आंदोलन का दमन करने के लिए पार्टी के नौकरशाहों की तीखी आलोचना की। उन्होंने ल्यू शाओछी को पद से हटाने के लिए तथा अपने उत्तराधिकारी और घनिष्ठ क्रांतिकारी साथी के रूप में लिन प्याओ की प्रोन्नति के लिए पार्टी की केंद्रीय समिति में बहुमत प्राप्त कर लिया। पार्टी के जिन नेताओं ने जन आंदोलन का दमन किया था उन पर आरोप लगाया गया कि वे माओ त्सेतुंग की 'सर्वहारा वर्गीय लाइन' के विरुद्ध 'बुर्जुआ प्रतिक्रियावादी लाइन' का अनुसरण कर रहे हैं। इसके बाद से सांस्कृतिक क्रांति ने संपूर्ण चीन को अत्यंत जटिल और जीवंत आंदोलन में लपेट लिया, जो आधुनिक चीनी इतिहास का सबसे बड़ा राजनीतिक आंदोलन था। जिस तरह माओ ने ल्यू शाओछी को लपेटा, वह उनकी राजनीतिक भूल थी।

1966 से 1969 तक दुनिया ने उस दृश्य को देखा जिसमें करोड़ों चीनियों ने ऐसे विराट विप्लवी आंदोलन में भागीदारी की जिसका ध्येय विश्व की सबसे बड़ी जनसंख्या वाले देश की संस्थाओं का रूपांतरण करना था। माओ त्सेतुंग किसी भी राज्य के पहले ऐसे प्रधान थे जिन्होंने आधुनिक युग में जनता के राजनीतिक विद्रोह को राष्ट्र की शासन प्रणाली के स्थायी लक्षण के रूप में संस्थाबद्ध कर दिया।

माओ त्सेतुंग चीन में ल्यू शाओछी और उसके गुट के 'संशोधनवाद' के विरुद्ध लड़ रहे थे। वे उन्हें चीन का ख्रुश्चेव कहते थे क्योंकि वे माओ के अनुसार, चीन में सोवियत संशोधनवादी नीतियों का अनुसरण कर रहे थे। 'मूलतः सांस्कृतिक क्रांति समाजवाद के सोवियत माडल की राष्ट्रव्यापी अस्वीकृति और निरंतर क्रांति के नए दर्शन पर आधारित साहसी प्रयोग की स्वीकृति थी। माओ ने घोषणा की कि प्रत्येक सदी में दो या तीन सांस्कृतिक क्रांतियां अवश्य की जानी चाहिए।' फ्रांस के संस्कृति मंत्री आंद्रे मालरो को एक इंटरव्यू में माओ ने बताया :

> संशोधनवाद से क्रांति की मृत्यु का पता चलता है। हमने अभी जो काम सेना में किया, उसे सर्वत्र करना चाहिए। मैंने आपको बताया कि क्रांति एक भावना भी है। यदि हम उसे रूसियों की भांति अतीत की भावना बना दें तो सब कुछ नष्ट हो जाएगा। हमारी क्रांति केवल भूतकाल का स्थिरीकरण या स्थिरता नहीं हो सकती।[17]

यह महत्वपूर्ण है कि महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति की सार्वजनिक परिभाषा में कहा गया था कि यह संघर्ष सर्वहारा वर्गीय नीति और बुर्जुआ संशोधनवादी नीति के बीच का द्वंद्वात्मक संघर्ष है। इस संबंध में डेविड और नैंसी मिल्टन का मत है:

> संशोधनवाद से चीनियों का स्पष्ट तात्पर्य सोवियत रूसी संशोधनवाद से था और इसीलिए माओ के मुख्य प्रतिद्वंद्वी ल्यू शाओछी को 'चीन का ख्रुश्चेव' घोषित किया गया था। इस चाल द्वारा अंतर्राष्ट्रीय मोरचे के संघर्ष को चीनी साम्यवाद के इतिहास में सबसे बड़े घरेलू राजनीतिक संघर्ष से जोड़ दिया गया था।[18]

साठ के दशक के मध्य में, चीन की कम्युनिस्ट पार्टी में कई करोड़ सदस्य थे और पार्टी का शासन तंत्र सोवियत पार्टी के तंत्र से मिलता-जुलता था। उस पर पार्टी के प्रथम उपाध्यक्ष ल्यू शाओछी, केंद्रीय समिति के प्रथम सचिव तंग श्याओफिंग, पेइचिंग के मेयर पेंग चेन ओर पोलिट ब्यूरो का नियंत्रण था। चीन की अर्थव्यवस्था के औद्योगिक सेक्टर में, इन नेताओं ने सोवियत पद्धति के नियमों, विनियमों और पद्धतियों को प्रस्तावित और क्रियान्वित किया गया था। चीन में शिक्षा प्रणाली पर सोवियत, अमरीकी और कन्फ्यूशियन धारणाओं और संकल्पनाओं का प्रभाव था।

माओ त्सेतुंग के अनुसार इन सामाजिक ढांचों और विचारधाराओं ने सोवियत संघ में एक अभिजन-शासित तंत्र की रचना की थी और अगर चीनी व्यवस्था में परिवर्तन नहीं किए गए तो यहां भी परिणाम वैसे ही होंगे। रूसी कारक, जिसका प्रतीक 'चीनी ख्रुश्चेव' ल्यू शाओछी था, सांस्कृतिक क्रांति के काल में चीन की आंतरिक राजनीति के साथ गंभीर रूप से जुड़ गया था। सोवियत नौकरशाही पद्धति से बचाव के प्रयास ने ही महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के लिए औचित्य प्रदान किया था।

1927 से 1949 के बीच में चीनी प्रतिक्रांति के विरुद्ध लंबे क्रांतिकारी युद्ध के वर्षों में, भौगोलिक दृष्टि से दो पृथक पार्टी संगठनों का सह अस्तित्व स्थापित हो गया था। एक शासक दल का निर्माण माओ त्सेतुंग और लंबी यात्रा के योद्धाओं ने मुक्त प्रदेशों में किया था। किसानों के साथ घनिष्ठ संबंध विकसित कर, मुक्त प्रदेशों की कम्युनिस्ट पार्टी ने जनता पर आधारित शासन प्रणाली स्थापित की जिसे नीचे के स्तर पर व्यापक जन समर्थन प्राप्त था। क्वोमिन्तांग शासित क्षेत्रों में, जो सफेद आतंक से त्रस्त थे ,ल्यू शाओछी तथा अन्य कम्युनिस्टों ने एक भूमिगत पार्टी संगठन का निमाण किया जो गोपनीयता और कठोर पदानुक्रम पर आधारित था।

माओवादियों के कथनानुसार कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में राजनीतिक विभाजन का यही मुख्य कारण था। 1949 में जनवादी गणतंत्र की स्थापना के बाद नेतृत्व की दो अंतर्विरोधी शैलियां और पद्धतियां अस्तित्व में आ गई थीं। सांस्कृतिक क्रांति के समय युन्नान को राष्ट्र के सम्मुख जनता के लिए अनुकरणीय आदर्श प्रतिमान के रूप में प्रस्तुत किया गया। संदेह की सूई भूमिगत पार्टी संगठन की दिशा में गई, जिसका विकास क्वोमिन्तांग शासित क्षेत्रों में या जापनी आधिपत्य के क्षेत्रों में हुआ था। डेविड और नैंसी मिल्टन तथा शूरमान का कथन है :

> ल्यू शाओछी और अन्य नेता, जो नागरिक परंपरा का प्रतिनिधित्व करते थे, ग्रामीण अर्थनीति की समस्याओं के बारे में औद्योगिक दृष्टिकोण रखते थे और व्यवस्थित उन्नति का पूर्वग्रह उनके चिंतन में था। उनका शीघ्र ही पार्टी के माओवादी पक्ष के साथ, जिसने कृषक जनता की चेतना जगाकर क्रांति को विजय दिलाई थी, संघर्ष छिड़ गया। प्रारंभ से ही माओ त्सेतुंग ने अर्थव्यवस्था के व्यापक विकास का समर्थन किया था। वे विकास की ऐसी रणनीति को क्रियान्वित करना चाहते थे जो

> पिछड़ेपन पर हमला करने के लिए आम जनता को उत्साहित और सचेत करने पर आधारित हो।[19]

सांस्कृतिक क्रांति के काल में, नेतृत्व के स्तर पर नीति संबंधी संघर्षों के बारे में तथ्यों को दस्तावेजी सबूतों के साथ विस्तार से प्रचारित किया गया था। इनमें 1950 के दशक की घटनाओं का उल्लेख भी था। उस समय शांशी प्रांत में ल्यू शाओछी ने किसानों को परस्पर सहायता टीमों के निर्माण से रोका था, जो वास्तव में कृषि सहकारिता का बिलकुल प्रारंभिक स्वरूप था। ल्यू शाओछी ने महसूस किया कि किसान सामूहिक कृषि की दिशा में बहुत जल्दी और तेज रफ्तार से आगे बढ़ रहे थे।

माओ त्सेतुंग ने इस नीति को तुरंत बदला और किसानों की परस्पर सहायता टीमों का समर्थन करते हुए कहा कि उनकी प्रगति कृषि सहकारिता के सही स्वरूप की दिशा में [illegible] रही थी। ऐतिहासिक साक्ष्य इस बात का समर्थन करते हैं कि ल्यू शाओछी मशीनीकरण द्वारा कृषि के उत्पादन में वृद्धि के पक्ष में थे। इसके विपरीत माओ त्सेतुंग चाहते थे कि सामूहिक प्रयास के लिए किसानों में चेतना उत्पन्न करने की नीति का अनुसरण किया जाए। सांस्कृतिक क्रांति के काल में लाल रक्षकों ने आरोप लगाया कि तंग श्याओफिंग ने कहा था, 'बिल्लियां काली हों या सफेद, जब तक वे चूहों को पकड़ सकती हैं, तो सब कुछ ठीक है।' तग श्याओफिंग उत्पादन की सामूहिक पद्धतियों की तुलना में निजी पद्धतियों की तारीफ कर रहे थे। ल्यू शाओछी ने भी ग्रामीण क्षेत्रों में निजी भूंखडों के विस्तार और स्वतंत्र बाजार की वापसी की नीति का समर्थन किया था। यह स्पष्ट करता है :

> माओ गरीब किसानों के अग्रणी प्रतिनिधि थे, जो क्रांति के सबसे जुझारू योद्धा थे। वे निरंतर इस बात को कहते थे कि उद्योगीकरण की प्राप्ति उसी वर्ग के शोषण द्वारा नहीं होनी चाहिए जिसने यह क्रांति की थी। माओवादियों ने हमेशा इस बात को समझा कि निजी खेती की वापसी गांवों में अमीर और गरीब के बीच एक नया ध्रुवीकरण जल्दी ही पैदा कर देगी।[20]

माओ त्सेतुंग और ल्यू शाओछी के बीच संघर्ष का मुख्य मुद्दा पार्टी, सेना, अर्थनीति और शिक्षा के क्षेत्रों में संगठन और विचारधारा की सोवियत पद्धतियों के पार जाने का था। 1966 में माओ अकेले पड़ गए थे और कम्युनिस्ट पार्टी के निर्णयकारी तंत्र को नियंत्रित करने में असमर्थ हो गए थे। इस तंत्र पर अब ल्यू शाओछी, पेंग चेन और तंग श्याओफिंग का नियंत्रण स्थापित हो गया था। साठ के दशक के पूर्वार्ध का वर्णन करते हुए माओ ने कहा था : 'वे मुझे बुद्ध मानकर आदर देते थे लेकिन कोई मेरी बात सुनने के लिए तैयार नहीं था।'

लू शानान सम्मेलन में जब संशोधनवादियों ने माओ की नीतियों पर हमला किया तो 'माओ ने उनका तीव्र विरोध करते हुए कहा कि यदि मेरी नीतियों को अस्वीकार किया

जाता है तो मैं फिर से पहाड़ी क्षेत्रों में जाकर सत्ताधारियों से लड़ने के लिए किसान सेना का संगठन करूंगा।'[21]

लाल रक्षकों का अभ्युदय

ल्यू शाओछी और तंग श्याओफिंग जन आंदोलन को नेतृत्व प्रदान करने में असमर्थ रहे। नेतृत्व के स्तर पर, चेयरमैन माओ, प्रतिरक्षा मंत्री लिन प्याओ और प्रधानमंत्री चोउ एनलाई तथा एक सांस्कृतिक क्रांति ग्रुप ने राष्ट्र के नेतृत्व की बागडोर अपने हाथों में ले ली। इसमें माओ की पत्नी चियांग छिंग, माओ के सेक्रेटरी चेन पोता, कुछ युवा बुद्धिजीवी और कुछ वयोवृद्ध पार्टी नेता शामिल थे। केंद्रीय समिति के नाम से कार्य करते हुए इस सांस्कृतिक क्रांति ग्रुप ने सेना, सरकार और जन आंदोलन को निर्देश देना प्रारंभ कर दिया। प्रांत, जनपद, नगर स्तर की पार्टी समितियों को निलंबित कर दिया गया क्योंकि नए नेतृत्व को विश्वास नहीं था कि वे जन आंदोलन का संचालन कर सकती थीं।

राजनीतिक मंच पर हजारों की संख्या में लाल रक्षकों और विद्रोहियों के संगठनों का उदय हुआ। उनके द्वारा ही सांस्कृतिक क्रांति की राजनीति को व्यावहारिक रूप दिया गया। पश्चिमी प्रेक्षकों ने राष्ट्र की राजनीति में एक प्रमुख राजनीतिक शक्ति के रूप में लाखों युवा लाल रक्षकों के अभ्युदय का स्वागत नहीं किया बल्कि उनके विरुद्ध सूचनाएं भेजीं। 'कुछ पत्रकारों ने उनके आंदोलन की तुलना मध्य युग के बालकों के क्रूसेड से की तथा अन्य संवाददाताओं ने युवा विद्रोहियों के लांछनों और हमलों से क्षुब्ध वयोवृद्ध साम्यवादियों के प्रति नई सहानुभूति का प्रदर्शन किया।'[22]

> इतिहास में ऐसे अवसर बहुत कम आए हैं जब अनियंत्रित जन-लोकतंत्र ने लंबे समय तक अपना प्रभाव स्थापित किया हो; सांस्कृतिक क्रांति का पहला वर्ष ऐसा ही समय था।...पेइचिंग में लाल रक्षक आंदोलन का प्रारंभिक काल उत्साह, जीवंतता और अशांति का ऐसा ही युग था। माध्यमिक स्कूलों और विश्वविद्यालयों के छात्रों से निर्मित लाल रक्षकों के संगठनों ने उल्लेखनीय अनुशासन और उद्दंडता, परिपक्वता और मूर्खता, सूक्ष्य दृष्टि और भोलेपन का प्रदर्शन किया।...तथ्य यह है कि छात्र लाल रक्षकों ने सांस्कृतिक क्रांति की धारणाओं का प्रचार संपूर्ण देश में कर दिया। उन्होंने साबित कर दिया कि वे बहुत अच्छे संगठनकर्ता और प्रचारक थे।...सांस्कृतिक क्रांति के पहले चरण का नेतृत्व विद्यार्थियों ने किया परंतु आगामी चरणों में इसका नेतृत्व सेना और श्रमिकों ने संभाल लिया।[23]

लाल रक्षकों ने लोगों के बीच विद्रोह की धारणा का प्रसार किया लेकिन संस्थापित पार्टी नौकरशाही ने पूंजीवाद के मार्ग पर चलने वालों का दमन करने वाले उस जन आंदोलन का प्रतिरोध किया। पार्टी के अधिकारियों ने अपनी रक्षा के लिए और सच्चे विद्रोहियों का विरोध करने के लिए अपने जन संगठन स्थापित किए। ऐसे संगठन तब ध्वस्त हो गए जब

पार्टी के साधारण सदस्यों को पता चला कि वे चेयरमैन माओ की 'लाइन' का विरोध कर रहे थे। इन मुश्किलों को स्वीकार करते हुए माओ त्सेतुंग ने कहा :

> वर्तमान महान सर्वहारा क्रांति अत्यधिक कठिन है।...जो विचारधारात्मक गलतियां करते हैं और जिनका हमारे साथ शत्रुतापूर्ण विरोध है, वे एक दूसरे के साथ इस प्रकार मिश्रित हो गए हैं कि उनमें कुछ समय के लिए भेद कर पाना कठिन हो गया है।[24]

लाल रक्षकों के सामने समस्या यह थी कि प्रत्येक संगठन के अंदर 'पूंजीवादी पथ के पथिकों' की पहचान कैसे की जाए और जन संगठनों में प्राय: इस बात पर मतभेद रहता था कि कौन नेता और उच्चस्तरीय कार्यकर्ता अच्छे हैं और कौन बुरे। प्राय: जनता जांच-पड़ताल और अनुसंधान द्वारा नेताओं का मूल्यांकन सही ढंग से कर लेती थी लेकिन अनेक मामलों में लंबे क्रांतिकारी योगदान करने वाले काडरों को दंडित किया गया हालांकि उनके भटकाव मामूली थे। कुछ अन्य 'काडर' अपने बुरे कारनामों पर परदा डालने में कामयाब हुए और सजा से बच निकले।

माओ त्सेतुंग को आशा थी कि कम्युनिस्ट पार्टी स्वयं अपने घर को स्वच्छ करने में पहल करेगी लेकिन उनकी यह आशा पूरी नहीं हुई। शंघाई में पुराने घाघ पार्टी लीडरों ने जनता को धोखे और भ्रम में रखने के लिए सभी हथकंडों का प्रयोग किया। प्रबंधकों और पार्टी अधिकारियों ने स्वयं हड़तालें कराकर उद्योगों, यातायात और बंदरगाहों में काम को ठप कर दिया। उन्होंने बोनसों और वेतनवृद्धि द्वारा मजदूरों को रिश्वतें देने की चेष्टा की। विद्रोही मजदूरों ने पहचान लिया कि उनके पुराने अधिकारियों ने उन्हें धोखा दिया है। मजदूरों ने विद्रोह द्वारा, जिसको 'जनवरी का तूफान' कहा गया, सत्ता पर कब्जा कर लिया। माओ त्सेतुंग ने सत्ता पर इस क्रांतिकारी आधिपत्य का स्वागत किया और उसे श्रमिक वर्ग की एक महान विजय बताया। दस लाख विद्रोही श्रमिकों और लाल रक्षकों ने सड़कों पर परेड की और अपने क्रांतिकारी साथियों से अपील की कि वे अन्य नगरों में उनके उदाहरण के अनुसार काम करें। उसके बाद शंघाई के विदोहियों ने कारखानों, अखबार के दफ्तरों और सरकारी कार्यालयों पर कब्जा कर लिया।

सांस्कृतिक क्रांति की असफलता

सांस्कृतिक क्रांति ने अब एक नए चरण में प्रवेश किया अर्थात नीचे से विद्रोह के द्वारा सत्ता पर कब्जा करना। माओ ने दुनिया को अचरज में डाल दिया जब उन्होने लाखों-करोड़ों चीनियों से अनुरोध किया कि वे कम्युनिस्ट पार्टी से सत्ता छीन लें और पार्टी के मुख्यालय पर हमला बोलें परंतु उसका उद्देश्य कम्युनिस्ट पार्टी को नष्ट करना नहीं था बल्कि उनकी क्रांतिकारी ऊर्जा का नवीकरण करना और उसके क्रांतिकारी ध्येय को पुन: प्राप्त करना था। वे राष्ट्र से अनुरोध कर रहे थे कि 'क्रांति को अंत तक ले जाया जाए।'

परंतु शंघाई की नीति को देश के अन्य भागों में ऐसी सफलता नहीं मिली। संभवत:

देश में अन्य कहीं भी शंघाई जैसी अनुशासित, परिपक्व और ऐतिहासिक रूप से चेतनायुक्त श्रमजीवियों की वर्गीय शक्ति नहीं थी। नीचे से सत्ता पर अधिकार करने की रणनीति इसलिए भी सफल न हो सकी क्योंकि विपक्ष नई क्रांतिकारी समितियों के अंदर घुसपैठ कर चुका था और भीतर से आंदोलन पर आघात कर रहा था। 1967 के वसंत तक, सभी संगठन 'माओ त्सेतुंग चिंतन' का ध्वज लहरा रहे थे और अनेक लोग 'लाल झंडे का उपयोग लाल झंडे के विरोध के लिए कर रहे थे।' सांस्कृतिक क्रांति अब क्रांतिकारी नारों और शब्दाडंबर में लुप्त हो गई।

पेइचिंग में सांस्कृतिक क्रांति के नेता आपस में बंटे हुए थे और जन आंदोलन को स्पष्ट दिशा देने में सक्षम नहीं थे। सांस्कृतिक क्रांति के अंतिम दो वर्षों में जन आंदोलन घड़ी के पेंडुलम की तरह दक्षिणपंथ से वामपंथ और वामपंथ से उग्र वामपंथ के बीच तेजी से घूम रहा था। चीन के समाज में अशांति और अराजकता फैल गई थी और ऐसी स्थिति में मूर्त लक्ष्य अदृश्य हो गया था। माओ त्सेतुंग ने घोषणा की कि कम्युनिस्ट पार्टी के 95 प्रतिशत नेता और कार्यकर्ता अच्छे हैं परंतु जन आंदोलन के एकदम निचले स्तर पर उन हजारों अधिकारियों को अपने पदों पर वापस लाना मुश्किल था, जिनकी पहले तीव्र आलोचना और निंदा हो चुकी थी। जन आंदोलन के तूफान के बीच और उसके समाप्त होने पर भी शीर्षस्थ नेताओं में विभाजन था। इस मामले को लेकर उनमें एक मत नहीं था कि कितने और किन 'काडरों' को फिर से अपने पदों पर बैठाया जाए और किन्हें दंडित रहने दिया जाए।

चीन की सांस्कृतिक क्रांति का 'नेतृत्व नेताओं का एक नया गठबंधन कर रहा था, और जैसा अन्य क्रांतियों के समय विश्वभर में हुआ है, इस गठबंधन में भी क्रांतिकारी आंधी के दौरान फूट पड़ गई। 1967 की गरमियों में, वूहान में दक्षिणपंथी गदर के दमन के बाद, देश में एक उग्र- वामपंथी लहर फैल गई। पेइचिंग में केंद्रीय सांस्कृतिक क्रांति ग्रुप के एक गुट ने प्रधानमंत्री चोउ एनलाई को पदच्युत करने के लिए एक विशाल छात्र प्रदर्शन का आयोजन किया और स्वतः सत्ता पर आधिपत्य करने का प्रयास किया।'[25]

माओ त्सेतुंग ने महसूस किया कि क्रांति की आंधी अब राज्य के ढांचों के विघटन का खतरा पैदा कर रही थी। उन्होंने प्रधानमंत्री चोउ एनलाई के समर्थन में हस्तक्षेप किया और लिन प्याओ तथा सेना की सहायता से सांस्कृतिक क्रांति के उग्र-वामपंथी गुट का दमन कर दिया गया। सांस्कृतिक क्रांति ग्रुप के असंतुष्टों को जेल भेज दिया गया। 1967 की शरद ऋतु (सितंबर-अक्तूबर) में सेना से अनुरोध किया गया कि वह गुटों के संघर्ष में मध्यस्थता करने के लिए विश्वविद्यालयों तथा अन्य संगठनों में प्रवेश करे।

जन मुक्ति सेना (पीपुल्स लिबरेशन आर्मी) की भूमिका प्रशंसनीय थी। माओ की सूक्तियों की छोटी लाल किताब लेकर क्रांतिकारी सैनिक स्कूलों, विश्वविद्यालयों और कारखानों में पहुंचे और संघर्षरत गुटों को विचारधारा के सवालों पर मार्गदर्शन देकर उनके विवादों को शांत करने की चेष्टा की। इन राजनीतिक सिपाहियों ने आलोचना तथा आत्म-आलोचना द्वारा विद्रोही गुटों को फिर से एक गठबंधन में लाने के लिए राष्ट्रव्यापी अभियान

चलाया। इस प्रकार प्रत्येक चीनवासी क्रांति की प्रेरणा शक्ति और लक्ष्य दोनों बन गया। राष्ट्रीय नारा था कि 'स्वार्थ से लड़ो और संशोधनवाद की आलोचना करो।'

एकता स्थापित करने में और पार्टी तथा राज्य के टूटे ढांचे का फिर से निर्माण करने की प्रक्रिया में दो वर्ष लगे। परंतु समाज के रूपांतरण का कार्य अधूरा ही रह गया :

> संभवत: माओ त्सेतुंग की सबसे बड़ी निराशा यह थी कि सांस्कृतिक क्रांति निष्ठावान क्रांतिकारी उत्तराधिकरियों के एकीकृत ग्रुप को उत्पन्न करने में असफल रही। 1970 में चेन पोता के पतन और 1971 में लिन प्याओ के 'कंलक' और निधन ने सांस्कृतिक क्रांति के दो शीर्षस्थ नेताओं को मंच से हटा दिया। निस्संदेह चीन में ऐसे ग्रुप मौजूद थे जो समझते थे कि सांस्कृतिक क्रांति अपनी सीमा के बाहर निकल गई थी और कुछ ऐसे ग्रुप भी थे जो मानते थे कि यह अपने लक्ष्य से बहुत पिछड़ गई थी। परंतु माओ ने स्वयं स्वीकार किया है कि भविष्य की पहले से कोई गारंटी नहीं हो सकती। यह अगली पीढ़ी पर निर्भर है कि वह अपने भविष्य के बारे में तय करे।[6]

इतना बड़ा कदम उठाने से पहले माओ के लिए यह जरूरी था कि वे पार्टी के एक बड़े भाग को राजनीतिक रूप से तैयार करते। लौंग मार्च में भारी क्षति के बावजूद चीन की कम्युनिस्ट पार्टी अपनी राजनीतिक एकता को बरकरार रख पाई और कुछ ही नेता तथा उनके समर्थक टूटे। लेकिन सांस्कृतिक क्रांति में पार्टी के आपसी झगड़ों ने एक भयंकर रूप धारण कर लिया। इसका इस आंदोलन पर गहरा प्रभाव पड़ा और देखते-देखते सांस्कृतिक क्रांति दिशाहीन हो गई।

एक पिछड़े हुए देश में, जिसने एक लंबे समय तक चारों ओर तबाही ही तबाही देखी थी, निर्माण को प्रथम स्थान मिलना चाहिए था। आर्थिक रूप से चीन को प्रबल बनाना लाजिमी था। पहली योजना सफल सिद्ध हुई लेकिन लंबी छलांग की विफलता से माओ की साख को धक्का लगा। इस समय माओ को समझ लेना चाहिए था कि जो लोग उनके साथ संकट के समय कंधे से कंधा मिलाकर चलते रहे थे, वे उनके शत्रु नहीं थे। चीन के आर्थिक विकास को लेकर मतभेद होना स्वाभाविक था। लेकिन माओ ने जल्दबाजी दिखाई और जिस तरह सांस्कृतिक क्रांति को इलाज के बतौर पेश किया उससे चीन आर्थिक संकट में घिर गया और राजनीतिक रूप से पार्टी को भारी क्षति उठानी पड़ी।

चीन के इतिहास में हमेशा माओ त्सेतुंग का नाम अमर रहेगा लेकिन जब सांस्कृतिक क्रांति की बात आएगी उनके ऊपर उंगलियां उठती रहेंगी।

आलोचनात्मक समीक्षा

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के हू शेंग द्वारा संपादित अधिकृत इतिहास में बताया गया है :

> दसवीं राष्ट्रीय पार्टी कांग्रेस के बाद चियांग छिंग, चांग चुनछियाओ,याओ वेनपुआन

> और वांग होंगवेन ने 'चार लोगों के गुट' का गठन किया। इस गुट ने पार्टी की केंद्रीय समिति के पोलिट ब्यूरो पर अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया। चियांग छिंग गुट की शक्ति शीघ्र बढ़ने लगी और वह निडर होकर अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने तथा पार्टी और राज्य की सत्ता पर कब्जा करने का प्रयास करने लगा। परंतु लिन प्याओ घटना के कारण पार्टी सदस्यों और नेताओं की चेतना और सूझ-बूझ बढ़ने लगी। सांस्कृतिक क्रांति के समर्थन अथवा निषेध का मुद्दा उत्तरोत्तर तीव्र संघर्ष का रूप ग्रहण करने लगा।[27]

चीन के नेताओं के लिए 1976 का वर्ष शुभ नहीं था। चीन के सर्वोच्च नेताओं चोउ एनलाई, चू ते और माओ त्सेतुंग की एक के बाद एक मृत्यु हो गई। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के उपर्युक्त इतिहास में कहा गया है :

> सांस्कृतिक क्रांति एक दशक से अधिक चली। यह 'वामपंथी' त्रुटियों का युग था।. . निरंतर उथल-पुथलों ने...पार्टी, राज्य और चीनी जनता को बहुत नुकसान और कष्ट पहुंचाए।...इन विपत्तियों ने, जो चीन के जनवादी गणतंत्र को स्थापना के बाद अधिकतम गंभीर थे, पार्टी के संगठन और राज्य की सत्ता को कमजोर कर दिया। काडरों की विशाल संख्या तथा असंख्य साधारण नागरिकों पर अत्याचार किया गया। लोकतंत्र और कानून को कुचल दिया गया और संपूर्ण देश राजनीतिक और सामाजिक संकट से ग्रस्त हो गया।[28]

चेयरमैन माओ की 9 सितंबर 1976 को मृत्यु हो गई। 6 अक्तूबर को उन्हीं लोगों ने, जिनको माओ ने 'पूंजीवादी पथ के पथिक' कहा था, माओ त्सेतुंग की पत्नी चियांग छिंग तथा उनके तीन अन्य सहयोगियों चांग चुनछियाओ, याओ वेनयुआन और वांग होंगवेन को कैद कर जेल में डाल दिया। यह दुस्साहसी कार्य वे माओ त्सेतुंग के जीवन काल में नहीं कर सके थे। दिसंबर 1976 में 'नए संशोधनवादी नेतृत्व' ने 'सांस्कृतिक क्रांतिकारियों' के दमन के लिए राष्ट्रव्यापी अभियान चलाया और उन्हें गिरफ्तार कर जेलों में डाल दिया। तथाकथित 'गैंग आफ फोर' अर्थात चियांग छिंग और उसके तीन सहयोगियों पर मुकदमे चलाए गए और उन्हें दंडित किया गया।

हू शेंग द्वारा संपादित इतिहास में सांस्कृतिक क्रांति की ओलचना निम्नलिखित शब्दों में की गई है :

> दस वर्षों में राष्ट्रीय आय की दृष्टि से 500 अरब युआन की हानि हुई। लोगों के जीवन स्तर में भी गिरावट आई। विज्ञान, संस्कृति और शिक्षा के क्षेत्र में गंभीर हानि हुई।...आधिभौतिकता और आदर्शवाद का बोलबाला था। अराजकतावाद और उग्र व्यक्तिवाद का उत्कर्ष था। 'सांस्कृतिक क्रांति' को ... गलत नेतृत्व ने प्रारंभ किया था और उसका लाभ प्रतिक्रांतिकारी गुटों ने उठाया। 'सांस्कृतिक क्रांति' के अभियान की शुरुआत माओ त्सेतुंग ने की थी। इसलिए वही मुख्य रूप से उसकी तमाम वामपंथी

> गलतियों के लिए जिम्मेदार थे, जो इतने लंबे समय तक जारी रहीं।...माओ त्सेतुंग एक अमूर्त संकल्पना के शिकार थे, जिसका वास्तविकता से कोई संबंध नहीं था।... जब वे इन गंभीर गलतियों को कर रहे थे तो हमेशा यही सोचा कि उनका सिद्धांत और व्यवहार मार्क्सवादी था...इसी में उनकी त्रासदी निहित थी।[29]

त्सोंग हुआइबेन ने इसका मूल्यांकन करते हुए इन शब्दों में अपने विचार व्यक्त किए हैं :

> चार के गुट के पतन के बाद, पुनर्निर्माण के सभी क्षेत्रों में जनता के राजनीतिक उत्साह और उसकी पहल में वृद्धि हुई तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में अल्प काल में ही उन्नति शुरू हो गई।...जैसे-जैसे देश की अर्थव्यवस्था और वित्तीय परिस्थिति में सुधार हुआ वैसे-वैसे जीवन स्तर में भी उन्नति हुई। फिर भी 'सांस्कृतिक क्रांति से उत्पन्न विचारधारात्मक भ्रांतियों पर पूर्ण विजय प्राप्त न हो सकी।'[30]

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के तंगवादी इतिहास में सांस्कृतिक क्रांति में माओ त्सेतुंग की भूमिका का अंतिम मूल्यांकन इन शब्दों में किया गया है :

> जब वे सांस्कृतिक क्रांति कर रहे थे, जो कुल मिलाकर एक भारी त्रुटि थी, तो उन्होंने अनेक विशिष्ट मुद्दों पर पुनर्विचार किया और अपनी भूलों को सुधार लिया। ... उन्होंने लिन प्याओ गुट के सदस्यों को महत्वपूर्ण काम सौंपे थे। परंतु इस प्रतिक्रांतिकारी ग्रुप के पूर्ण विनाश के संघर्ष में भी उन्होंने ही नेतृत्व प्रदान किया। उन्होंने एक समय चियांग छिंग और उसके गुट में असीमित विश्वास प्रकट किया था। परंतु उन्होंने उसकी महत्वपूर्ण आलोचनाएं भी कीं।... इसके आधार पर ही बाद में 'चार के गुट' के विरुद्ध पार्टी के आगामी संघर्ष को चलाया जा सका और उसका विनाश संभव हुआ। ... 'सांस्कृतिक क्रांति' के काल में हमारी पार्टी विनष्ट नहीं हुई और अपनी एकता को कायम रख सकी; राज्य परिषद और जन मुक्ति सेना भी अपने उन सभी कर्तव्यों को निभा सकी जिनकी उससे आशा की गई; समाजवाद के आधारों का अस्तित्व सुरक्षित रहा, समाजवादी आर्थिक निर्माण की प्रगति जारी रही; हमारे देश की एकता भी सुरक्षित रही और उसने अंतर्राष्ट्रीय मंच पर महत्वपूर्ण भूमिका निभाई; ये सभी तथ्य उस महान भूमिका के अभिन्न अंग हैं, जिसे माओ त्सेतुंग ने इस कठिन समय में निभाया।[31]

हू शेंग द्वारा संपादित इतिहास में सांस्कृतिक क्रांति का मूल्यांकन और उससे प्राप्त शिक्षाओं का वर्णन निम्नलिखित शब्दों में किया गया है :

> सांस्कृतिक क्रांति समाजवाद के निर्माण में विशिष्ट चीनी मार्ग की खोज में पथभ्रष्ट होने का नतीजा थी; यह एक त्रुटिपूर्ण सिद्धांत के मार्गदर्शन में एक त्रुटिपूर्ण व्यवहार की मिसाल थी। उसने बहुत ही नग्न रूप से पार्टी और राज्य के कार्यों और ढांचे के दोषों को प्रकट किया। उसने हमें कुछ गंभीर शिक्षाएं दीं जिससे हम भविष्य में एक

> और 'सांस्कृतिक क्रांति' को या ऐसे विपदाजनक विप्लवों को न दोहराएं और ऐसी त्रुटियों से बच सकें। 'सांस्कृतिक क्रांति' के सबकों का वैज्ञानिक सारांश हमें चीनी विशेषताओं के संदर्भ में समाजवाद के निर्माण के सही मार्ग को खोजने में और इस मार्ग पर प्रगति करने और विजय पाने में सहायक होगा।[32]

चियांग छिंग प्राय: महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के बारे में भाषण देती थीं। उन्होंने युवा क्रांतिकारियों से एक बार कहा था, 'यदि मेरी बातों में सच्चाई है, तो तुम उन्हें याद रखना; यदि नहीं तो मेरी आलोचना करना, मुझ पर हमला करना या मुझे जला देना।'[33] चोउ एनलाई ने एक सभा में पूछा था, 'तुमने कितनी बार कामरेड चियांग छिंग की स्पीच का रिकार्ड सुना?...कम से कम दो बार? पांच बार?...तुम उस भाषण से बहुत कुछ सीख सकते हो।'[34] जोन आफ आर्क को अपनी देशभक्ति के लिए जीवित जला दिया गया। माओ की पत्नी को सांस्कृतिक क्रांति का समर्थन करने के लिए अपने जीवन के अंतिम वर्ष कारावास में काटने पड़े। एक क्वोमिन्तांग सेनाध्यक्ष की विधवा, हान सूयिन ने अपनी कृति *चीन 2001* में लिखा :

> भविष्य में अधिक वस्तुपरक दृष्टिकोण...सांस्कृतिक क्रांति का पुनर्मूल्यांकन करेगा और उसे चीन में समाजवाद की प्रगति के लिए सर्वाधिक सार्थक कदम मानेगा, जो भविष्य की लंबी यात्रा के लिए अपरिहार्य था।[35]

संदर्भ और टिप्पणियां

1. ज्यां दौबिए, *ए हिस्टरी आफ दि चाइनीज कल्चरल रिवोल्यूशन*, पृ 4.
2. वही, पृ. 6
3. वही, पृ. 7-8.
4. वही, पृ 9
5. वही, पृ 13.
6. व्हीलराइट और मैकफार्लेन, *दि चाइनीज रोड टु सोशलिज्म*, पृ. 7.
7. वही, पृ 8-9.
8. हान सूयिन, *चाइना इन दि ईयर* 2001, पृ. 169-64.
9. वही, पृ 163 उद्धृत
10. वही, पृ. 163.
11. व्हीलराइट और मैकफार्लेन, *दि चाइनीज रोड टु सोशलिज्म*, पृ. 141.
12. वही, पृ 153; देखिए गर्ले 'इकानामिक डेवलपमेंट आफ कम्युनिस्ट चाइना'.
13. वही, पृ. 197.
14. माओ त्सेतुंग, *सेलेक्टेड वर्क्स*, खंड II, पृ. 365.
15. मिल्टन दपंती और शूरमान (संपा.), *पीपुल्स चाइना*, पृ. 225.
16. वही, पृ. 237-38.

17. वही, पृ. 217.
18. वही, पृ. 221.
19. वही, पृ. 222.
20. वही, पृ. 224.
21. वही, पृ. 224.
22. वही, पृ 229.
23. वही, पृ. 229–30.
24. वही, पृ. 230–31.
25. वही, पृ 233
26. वही, पृ. 233–34.
27. हू शेंग (संपा), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 684.
28. वही, पृ 712-13
29. वही, पृ. 713-15.
30. त्सोंग ह्वाईवेन, *ईयर्स आफ ट्रायल, टर्मोइल एंड ट्रायम्फ*, पृ 180
31. हू शेंग (संपा), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ 715-16.
32. वही, पृ. 716.
33. मिल्टन दंपती और शूरमान (संपा). *पीपुल्स चाइना*, पृ 341
34. वही, पृ. 351.
35. हान सूयिन, *चाइना इन दि ईयर 2001*, पृ. 193

अध्याय पंद्रह

सोवियत-चीनी संघर्ष

चीन का विश्व दृष्टिकोण

सामान्य रूप से, मार्क्सवादियों की भांति चीन के कम्युनिस्ट नेता भी विश्व इतिहास में विश्वास करते हैं। वे मानते हैं कि विश्व की दिन-प्रतिदिन की असंबद्ध घटनाएं भी एक बुनियादी ऐतिहासिक प्रक्रिया को अभिव्यक्त करती हैं और संपूर्ण विश्व को परस्पर एक-दूसरे से जुड़ी हुई प्रणाली में रूपांतरित कर देती हैं। उनका विश्वास है कि इस प्रक्रिया को विश्लेषण के जरिए समझा जा सकता है और उससे शक्ति संबंधों की दूरगामी प्रवृत्तियों के बारे में अनुमान लगाया जा सकता है। इसके अलावा, उनकी सोच के अनुसार मानवता की बुनियादी स्थिति संघर्ष और द्वंद्व की है।

चीन के बहुत से मार्क्सवादियों का तर्क है, इस संघर्ष में, हमेशा एक क्रांतिकारी वामपंथ, एक प्रतिक्रियावादी दक्षिणपंथ और एक मध्यवर्गी केंद्र होता है, जो उन दोनों के बीच एक अस्पष्ट दृष्टिकोण अपनाता है :

> उनकी आत्मछवि है कि वे क्रांतिकारी वामपंथ के अभिन्न अंग हैं और समझते हैं कि सफल संघर्ष के लिए शत्रुओं और मित्रों की सावधानी से पहचान करना आवश्यक है क्योंकि उनका चरित्र समय और परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहता है। वे इसे विश्व दृष्टिकोण कहते हैं। अमरीकी इसे वैश्विक पैमाने पर ऐसे व्यवस्था विश्लेषण के रूप में देख सकते हैं जिसमें अपने लिए कार्य संबंधी संकेत निहित होते हैं।[1]

चीन की वैदेशिक नीति की व्याख्या पारंपरिक शब्दों में अन्य देशों के साथ संबंधों के आधार पर तथा बुनियादी हितों और प्रतिबद्धताओं के संदर्भ में भी की जा सकती है। फिर भी चीन के विश्व दृष्टिकोण के विश्लेषण के बिना यह व्याख्या अपर्याप्त और दोषपूर्ण होगी। इस विश्व दृष्टिकोण पर चीन में उसके अकादमिक, राजनीतिक और प्रशासनिक मंडलों में निरंतर बहस जारी रहती है और इसलिए यह जनता और सरकार के बीच में एक कड़ी प्रदान करता है। जैसा अन्य देशों में होता है, विशिष्ट देशों के साथ विशिष्ट संबंधों की जटिलताओं के बारे में सामान्य रूप से जानकारी नहीं होती। इसी प्रकार चीन की प्रतिबद्धताएं, उनकी प्रकृति और सीमा भी, स्पष्ट नहीं रहती है।

चीन में ऐसे मार्क्सवादियों की कमी नहीं जिनका विश्वास है कि विश्व दृष्टिकोण, प्रतिबद्धताओं और नीतियों के बीच में समरूपता होनी चाहिए। परंतु विश्व निरंतर बदलता रहता है, तदनुसार इनमें भी परिवर्तन होता है। बदलती हुई वास्तविकता से विश्व दृष्टिकोण

के निर्माण की प्रक्रिया में धैर्य के साथ कार्य और कठिन संघर्ष जरूरी है। परिस्थितियों के अनुकूल संशोधित विश्व दृष्टिकोण के आधार पर धैर्य और ऊर्जा के साथ राजनीतिक कार्य में फिर से जुट जाना भी उतना ही आवश्यक है। *पीपुल्स डेली* अपने छह पृष्ठों में दो पृष्ठों पर केवल वैदेशिक मामलों की चर्चा करता है। यह समाचारपत्र पार्टी तथा राज्य के शीर्षस्थ काडरों के प्रमुख मतों को अभिव्यक्त करता है। चीनियों के लिए, विदेश नीति इतना संवेदनशील मामला है कि प्रस्तुत 'लाइन' स्पष्ट और सुसंगत होनी चाहिए जिससे चीन के मित्र और शत्रु चीन की स्थिति को अच्छी तरह समझ लें और किसी भ्रम की गुंजाइश न रहे।

एक पक्ष की ओर झुकाव

1949 में जब चीन के जनवादी गणतंत्र की स्थापना हुई, तो चीन ने सोवियत संघ को अपने आंतरिक विकास के लिए एक प्रतिमान के रूप में स्वीकार किया और अपनी वैदेशिक नीति में बिना किसी शर्त अपने परम मित्र सोवियत रूस के साथ गठबंधन कर लिया। माओ त्सेतुंग ने एक पक्ष की ओर झुकाव की नीति की घोषणा की। इसका तात्पर्य था कि समाजवादी शिविर, जिसका नेतृत्व सोवियत संघ करता था, और पूंजीवादी खेमे, जिसका प्रधान अमरीका था, के बीच जारी संघर्ष में जनवादी चीन ने निर्णायक रूप से चयन कर लिया था कि वह समाजवादी खेमे के साथ ही रहेगा। इसमें द्वैधता का सिद्धांत भी निहित था : सोवियत संघ से मित्रता और अमरीका से शत्रुता।

पहले दशक में जनवादी चीन की विदेश नीति, उसकी घरेलू नीति की भांति, कई चरणों से गुजरी। 1955 के आसपास, सोवियत गुट के साथ घनिष्ठ मित्रता और गैर-साम्यवादी विश्व के साथ अलगाव के बाद, चीन ने अपनी वैदेशिक नीति का क्षेत्र बढ़ाया और विश्व समुदाय में प्रवेश किया। उसने अनेक देशों के साथ द्विपक्षी संबंध स्थापित किए और अमरीका से भी संबंध सुधारने की इच्छा प्रकट की। परंतु 1957 से फिर उसके संबंधों में कठोरता आई। 1950 के दशक के अंत में चीन के सबसे महत्वपूर्ण वैदेशिक संबंधों में नाटकीय परिवर्तन दिखाई पड़ा। चीन-सोवियत विवाद उठ खड़ा हुआ। जिस दशक की शुरुआत सोवियत संघ के साथ असीमित मैत्रीपूर्ण गठबंधन से हुई थी, उसी का अंत दोनों देशों के बीच बढ़ती हुई कटुता और वैमनस्य के साथ हुआ।

शूरमान और शेल के अनुसार, 1949 से अब तक चीन की वैदेशिक नीति का मुख्य आधार सोवियत संघ और अमरीका के साथ उसके संबंधों में निहित रहा है। उनका मत है कि इन महाशक्तियों के बीच संबंधों का एक त्रिकोण मौजूद है. जिससे इनमें किन्हीं दो के आपसी संबंधों में परिवर्तन का प्रभाव तीसरी शक्ति पर निश्चित रूप से पड़ता है। यह चीन-सोवियत विवाद से बिलकुल स्पष्ट हो जाता है जिसमें सोवियत संघ और अमरीका के बीच बढ़ते हुए शांति संबंध चीन और सोवियत संघ के बीच विभाजन के प्रधान कारण बन गए।

हालांकि चीन-सोवियत संबंधों में पहले चरण में स्पष्ट परिवर्तन दिखाई पड़ा, लेकिन चीन-अमरीकी संबंधों में कोई प्रकट बदलाव दिखाई नहीं दिया। चीन और अमरीका इस दशक की शुरुआत से अंत तक एक दूसरे के दुश्मन ही बने रहे। 1950 के दशक में चीन की विदेश नीति मुख्यत: सोवियत संघ के साथ उसके संबंधों द्वारा ही निर्धारित होती थी। चीन ने प्रत्येक सोवियत वैदेशिक नीति का समर्थन किया और उसके घनिष्ठ मैत्रीपूर्ण संबंध समाजवादी शिविर के देशो तक ही सीमित थे। जब सोवियत संघ ने पश्चिम के पूंजीवादी देशों के प्रति नरम रुख अपनाया तो चीन ने भी अपने राजनयिक संबंधों में नरमी दिखाई। चीन की यह लचीली नीति बांडुंग सम्मेलन में सक्रिय भागीदारी में प्रकट हुई। यह कानफ्रेंस 1955 में इंडोनेशिया में हुई जिसमें एशिया और अफ्रीका के स्वतंत्र देशों ने भाग लिया। 1956 में चीन ने अमरीका से संबंध सुधारने का इरादा प्रकट किया।

जब ख्रुश्चेव ने स्तालिन की कठोर आलोचना की, तो चीनी नेतृत्व को बहुत धक्का लगा। जब पोलैंड और हंगरी के सोवियत रूस से बंधन ढीले पड़ने लगे तो परदे के पीछे मे चीनियों ने उन्हें प्रोत्साहन दिया। लेकिन जब हंगरी के विद्रोह का रूसियों ने दमन किया तो चीन के नेतृत्व ने सोवियत संघ को पूरा समर्थन दिया। शूरमान और शेल का कथन है :

> 1957 के अंत में, जब माओ त्सेतुंग को विश्वास हो गया कि शस्त्रास्त्रों के क्षेत्र में प्रमाणित सोवियत प्रगति ने विश्व के शक्ति संतुलन में परिवर्तन कर दिया है, तो उसे प्रोत्साहन मिला कि वह चीन में 'लंबी छलांग लगाने' का खतरा मोल ले और देश से बाहर स्वतंत्र वैदेशिक नीति का अनुसरण करे।[2]

परंतु जब यह मित्रता वैमनस्य में बदल गई, तो भी चीन का भाग्य सोवियत संघ से घनिष्ठतापूर्वक जुड़ा हुआ था। जब भी सोवियत संघ ने पूंजीवादी गुट के साथ कोई छोटा सा समझौता किया, तो चीन के कम्युनिस्ट नेताओं ने हर दफा सोवियत कम्युनिस्ट नेताओं के इस कार्य की भरपूर निंदा की। कुछ वर्षों के बाद, ऐसी सोवियत चालों की चीन ने और भी तीखी प्रतिक्रियाएं जारी रखीं। चीनी नेता अब एक पक्ष के प्रति अपना झुकाव छोड़ चुके थे और अपनी स्वतंत्रता की घोषणा साहसपूर्ण करते थे। लेकिन वे विश्व पर शासन करने के लिए और चीन की घेराबंदी करने के लिए सोवियत-अमरीकी षड्यंत्रों की बात भी करते थे। विवाद की कटुता के बावजूद, चीन अब भी अपने को समाजवादी शिविर का सदस्य मानता था। इस प्रकार, प्रेम और घृणा में, अब भी दोनों देश एक दूसरे से जुड़े हुए थे।

जब चीन एक साम्राज्य था, तो उसने किसी भी अन्य राष्ट्र को अपने समकक्ष मानने से इनकार कर दिया था। ह्रास के युग में उसने 'बर्बर देशों के प्रबंधन' की कूटनीति अपनाई और किसी भी विदेशी राज्य के साथ जुड़ने से इनकार कर दिया। 1949 के बाद चीन स्वेच्छा से समाजवादी गुट का सदस्य बन गया। डीन रस्क ने ताना कसा कि वह 'स्लाविक मांचुओं' और रूस की कठपुतली बन गया है। एक संप्रभु और स्वतंत्र राष्ट्र सामान्य गठबंधन की जरूरतों से आगे बढ़कर दूसरी महाशक्ति की अधीनता क्यों स्वीकार कर रहा

था? दूसरे शब्दों में चीन सोवियत पक्ष की ओर क्यों झुक रहा था जबकि वह स्वयं भविष्य में एक महाशक्ति बनने की क्षमता रखता था।

विचारधारा की समानताओं और शिविर की आंतरिक प्रतिबद्धताओं ने दोनों राष्ट्रों को एकत्र कर दिया था। परंतु पार्टी से पार्टी के संबंध, वैचारिक कारक और गुट की सदस्यता भी घनिष्ठ चीन-सोवियत गठबंधन की पूरी व्याख्या नहीं कर सकते थे। हमें याद रखना चाहिए जब चीन ने एक तरफ झुकने का फैसला किया, तो विश्व में कटु शक्ति युद्ध जारी था। चीनियों ने सोचा कि दोनों विरोधी शिविरों में देर-सवेर आपसी हिंसात्मक संघर्ष होगा। चीन ने देखा कि अमरीका समाजवादी देशों के विरुद्ध गठबंधन पर गठबंधन बनाए चला जा रहा था।

इसके अतिरिक्त, अमरीका यूरोपीय और एशियाई महाद्वीपों की सीमाओं को घेर कर सैनिक, नौसैनिक और वायु सैनिक अड्डों का एक घेरा बना रहा था। चूंकि चीन उसके आक्रमण का एक प्रमुख निशाना था इसलिए सोवियत संघ के साथ संपूर्ण एकजुटता ही उसे इस भयानक अमरीकी खतरे के विरुद्ध रक्षा की संभावना प्रदान कर सकती थी। 1950 के गठबंधन की शर्तों के अनुसार, सोवियत संघ ने चीन पर अपनी रक्षात्मक परमाणविक छतरी को तान दिया था। पचास के दशक की शुरुआत में इस रक्षात्मक ढाल की चीन को सख्त जरूरत थी।

प्रारंभ से ही ताइवान (जहां च्यांग कोई शेक ने चीन की मुख्य भूमि से भागकर शरण ली थी) चीन और अमरीका के बीच झगड़े का एक खास मुद्दा बन गया क्योंकि अमरीका च्यांग कोई शेक का संरक्षक बन गया था। ताइवान प्रश्न के दो पहलू थे। पेइचिंग एक तरफ ताइवान को चीन का एक प्रांत मानता था जिसे स्वाधीन कराना और मातृभूमि से जोड़ना उसका कर्तव्य था। दूसरी ओर ताइवान मुख्य भूमि के विरुद्ध भावी खतरा था क्योंकि वहां पर मौजूद क्वोमिन्तांग सरकार का संकल्प था कि वह चीन में कम्युनिस्ट शासन का उन्मूलन करेगी। इसके अलावा ताइवान चीन के खिलाफ अमरीकी सशस्त्र शक्ति की वास्तविक और सांकेतिक कड़ी था।

इसलिए शुरू के दौर में सोवियत ढाल और अमरीकी खतरा चीन की विदेश नीति के मूल कारक थे। इसका अर्थ था कि यदि इनमें कोई कारक बदलता तो उसके फलस्वरूप चीनी की विदेश नीति में भी परिवर्तन होता। जून 1959 में सोवियत संघ ने परमाणु भागीदारी समझौते को (जिसे अक्तूबर 1957 में दोनों पक्षों ने स्वीकार किया था) रद्द कर दिया। जब खुश्चेव ने कैंप डेविड में आइजनहावर से भेंट की और एक समझौते पर दस्तखत किए, तो माओ त्सेतुंग के लिए उसका केवल एक अर्थ था। उन्होंने महसूस किया कि खुश्चेव पूंजीवाद के साथ शांतिपूर्ण अस्तित्व के बदले चीन के साथ अपने गठबंधन के प्रति द्रोह और विश्वासघात कर रहे हैं। जब खुश्चेव चीन गए तो उन्होंने माओ त्सेतुंग से अनुरोध किया कि वे ताइवान में यथास्थिति को मान लें जिससे मामला ज्यादा बिगड़ गया। इस संबंध में शूरमान और शेल का कहना है :

> **जब सोवियत परमाणु ढाल और चीन के लिए सोवियत समर्थन खतरे में पड़ गए, तो चीनियों ने संपूर्ण संबंधों पर पुनर्विचार शुरू कर दिया। इस प्रकार 1950 के दशक के बंधुत्व पर आधारित संबंध 1960 के दशक के अत्यधिक कटु वैमनस्य में बदल गए।**[3]

रूस, चीन और अमरीका के संबंधों के बारे में, पश्चिमी लेखकों द्वारा प्रस्तुत त्रिकोणीय धारणा के अनुसार इसका चीन-अमरीकी संबंध पर असर पड़ना लाजिमी था। परंतु न तो चीन और न ही अमरीका ने आपसी संबंधों में सुधार के लिए कोई पहल की। 1961–62 में लाओस पर जेनेवा सम्मेलन में चीन और अमरीका दोनों ने भाग लिया, परंतु वहां प्रमुख प्रतिपक्षी सोवियत संघ और अमरीका ही थे, चीन नहीं था। दरअसल रूस के नेताओं से अपने विवाद के बावजूद चीन के डेलीगेशन ने सोवियत मार्गदर्शन का अनुसरण किया।

चीन-सोवियत विवाद के प्रारंभिक वर्षों में, चीन का यही विचार था कि विश्व की घटनाएं और उसके विचारधारात्मक और राजनीतिक दबाव रूसियों को विवश कर देंगे कि वे पूंजीवादी गुट के साथ शांतिपूर्ण अस्तित्व की अपनी नीति छोड़ दें। चीन चाहता था कि दोनों देशों के बीच वैसे ही मैत्रीपूर्ण संबंधों की स्थापना हो जाए जैसे 1954 और 1956 के बीच में थे जब दोनों समाजवादी राष्ट्र घनिष्ठ और मैत्रीपूर्ण गठबंधन में समान स्तर के साझीदार थे। परंतु जैसे जैसे 1960 का दशक आगे बढ़ा, चीन सोवियत संघ को लेकर निराश होता चला गया। तदुपरांत चीन ने एशियाई, अफ्रीकी और लैटिन अमरीकी राष्ट्रों के बीच अपने नए मित्रों की खोज शुरू कर दी। साठ के दशक के प्रारंभिक वर्षों में चीन ने महसूस किया कि उसे चारों ओर से विरोधी देशों ने घेरकर नाकेबंदी कर दी है : अमरीका, सोवियत संघ, भारत और जापान।

गठबंधन और मित्रता

डोक बार्नेट का कथन है कि 1949 के पूर्व चीन की कम्युनिस्ट पार्टी से सोवयत संघ के संबंध केवल पार्टी स्तर तक सीमित थे। 1928 से 1949 तक राज्य स्तर के संबंध क्वोमिन्तांग सरकार से ही थे। जब कम्युनिस्ट सेना से पराजित होने पर च्यांग काई शेक शासन नानकिंग से कैंटन स्थानांतरित हुआ तो सोवियत राजदूत ही एकमात्र ऐसा विदेशी राजनयिक था जो नानकिंग सरकार के साथ-साथ कैंटन पहुंचा।

चूंकि सभी देशों की वैदेशिक नीतियों की जड़ें इतिहास में होती हैं, इसलिए रूसी-चीनी संबंधों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का संक्षिप्त ज्ञान उपयोगी होगा। चीन में रूस की पहली रुचि इस बात में थी कि मध्य एशिया और साइबेरिया की रूसी सीमाओं की सुरक्षा की जाए और चीन में, खासकर सिंकियांग, मंचूरिया और कोरिया में, रूस के विशिष्ट हितों की रक्षा की जाए। रूसी सुदूर पूर्व को जापानी विस्तारवाद से खतरा था। फरवरी 1945 की याल्टा कानफ्रेंस में स्टालिन ने इन क्षेत्रों में सोवियत शक्ति के विस्तार के लिए पश्चिमी

देशों का समर्थन प्राप्त कर लिया।

बार्नेट के कथनानुसार क्वोमिन्तांग सरकार ने इन सभी शर्तों के लिए मजबूरी में अपनी स्वीकृति दे दी। 1950 में चीन की कम्युनिस्ट सरकार ने उन्हें शर्तों के साथ और कठोर समय सीमाओं के अंतर्गत मंजूरी दे दी। मंचूरिया में रूसी रेल मार्ग को रूस ने 1852 में चीन को वापस कर दिया। जब 1954 में ख्रुश्चेव चीन यात्रा पर गए तो रूस ने अपने सभी विशिष्ट अधिकारों को भी छोड़ दिया।

चीन के साथ रूस के राज्य स्तर के संबंधों का भी एक सकारात्मक पक्ष था। 1945 के पूर्व रूस चीन को जापानी विस्तारवाद के विरुद्ध रक्षा-कवच मानता था। क्वोमिन्तांग सरकार को रूसी सहायता उसकी क्रांतिकारी क्षमता के बारे में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के निर्णयों पर आधारित थी परंतु वह सोवियत वैदेशिक नीति के हितों को भी पूरा करती थी। डाक बार्नेट का कथन है :

> जब 1930 के दशक के मध्य में चीन-जापान युद्ध का खतरा बढ़ रहा था, तो स्तालिन ने नानकिंग सरकार में 1938 के प्रारंभ में रुचि ली और च्यांग कोई शेक के साथ आपसी सहायता संधि पर हस्ताक्षर किए। अगस्त 1945 में मास्को ने नानकिंग के साथ एक और समझौता किया तथा वादा किया कि वह केवल राष्ट्रवादी सरकार को ही नैतिक और सैनिक समर्थन देगा। जापान की पराजय ने रूसी विदेश नीति के निर्धारक कारकों में एक को निश्चित रूप से दूर कर दिया।[4]

इस काल में सोवियत और चीनी कम्युनिस्ट पार्टियों के बीच पार्टी स्तरीय संबंधों के अनेक पहलू अब भी स्पष्ट नही हैं। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना कोमिन्टर्न के समर्थन से हुई थी परंतु अप्रैल 1927 की शंघाई प्रतिक्रांति के बाद ही सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की शंघाइ स्थित केंद्रीय समिति को समर्थन दिया। चियांग्शी काल में सोवियत और चीनी कम्युनिस्ट पार्टियों के संबंधों की पूरी और स्पष्ट जानकारी नहीं है। शियान प्रकरण के समय च्यांग काई शेक को मुक्त करने के निर्णय में स्तालिन की भी कुछ भूमिका थी। लेकिन युन्नान काल में सोवियत संघ और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के बीच घनिष्ठ संपर्क के अधिक प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। बार्नेट का मत है:

> इस बात के पर्याप्त साक्ष्य हैं कि युद्ध के दौरान और उसके तुरंत बाद सोवियत नेता चीनी कम्युनिस्टों के भविष्य की संभावनाओं के बारे में अनिश्चित थे, परंतु इस बात ने उन्हें (1945--46 के दौरान) चीनी कम्युनिस्टों को भरपूर भौतिक सहायता देने से रोका नहीं।[5]

लेकिन शूरमान और शेल इस मत से असहमत हैं। वे महसूस करते हैं कि चीन के गृहयुद्ध में रूसी बिलकुल तटस्थ रहे और च्यांग कोई शेक के साथ उन्होंने बिलकुल सही संबंध कायम रखे।

1949 के पूर्व उनके पार्टी स्तर के संबंध मुख्यत: विचारधारात्मक और राजनीतिक थे

और उनका संबंध साम्यवादी आंदोलन के प्रमुख सैद्धांतिक और व्यावहारिक मुद्दों से था। युन्नान काल में दोनों पार्टियों के बीच व्यावहारिक मुद्दों पर सामान्य सहमति थी। फिर भी माओ त्सेतुंग ने अपनी कृति *आन न्यू डेमोक्रेसी* में चीनी क्रांति की अद्वितीयता का उल्लेख किया और तीसरी दुनिया के देशों के लिए उसकी सार्थकता बताई।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना के बाद से ही चीनी कम्युनिस्टों ने अपने को सोवियत संघ के नेतृत्व में एक अंतर्राष्ट्रीय आंदोलन का अंग समझा। 1936 से 1945 तक दोनों पार्टियों के बीच के संबंध पूर्ण रूप से सिद्धांत और विचारधारा के क्षेत्र तक सीमित थे। शूरमान और शेल इस संदर्भ में एक उपयुक्त सवाल उठाते हैं ·

> यह बात स्पष्ट है कि चीनी कम्युनिस्टों ने 1949 के पहले और बाद में भी सोवियत संघ द्वारा प्रतिपादित सैद्धांतिक स्थितियों से अपने मतभेद अनेक बार प्रकट किए। परंतु एक प्रश्न यह है कि दोनों पार्टियों के बीच विचारधारा का ऐसा जुड़ाव था कि जब चीनी कम्युनिस्ट सोवियत सिद्धांत से मतभेद व्यक्त करते भी तो वे उसे स्वीकृत मार्क्सवादी-लेनिनवादी ढांचे के भीतर रहकर ही करते हैं। यहां तक कि तीव्रतम विवाद के समय भी कोई बाहरी दर्शक दोनों स्थितियों के बीच कोई बहुत स्पष्ट अंतर देखने में असफल रहता है।[9]

जब चीन की नवीन जनवादी सरकार को सोवियत संघ ने मान्यता दे दी, तो उसके बाद सोवियत संघ और चीन के बीच मित्रता, गठबंधन और आपसी सहायता की तीस वर्षीय संधि हुई। 1950 में इस संधि पर हस्ताक्षर होने के बाद दोनों देशों के बीच राज्य स्तरीय और पार्टी स्तरीय दोनों प्रकार के संबंधों की स्थापना हुई। पेईचिंग ने मास्को को घरेलू वैदेशिक नीति के क्षेत्र में कुछ रियायतें दे दीं और उनके एवज में उसे आधुनिक इतिहास में सबसे ज्यादा बड़े आर्थिक सहयोग के अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रम का लाभ प्राप्त हुआ।

कुछ पश्चिमी लेखकों का कथन है कि रूस काओ कांग के माध्यम से मंचूरिया पर अपना नियंत्रण स्थापित करना चाहता था लेकिन यह विवादास्पद सवाल है। इस काल में चीन ने सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी की प्राथमिकता को पूर्ण मान्यता दी और मैत्री के इस युग में नए सिद्धांत के रचनाकार के रूप में माओ त्सेतुंग के विचारों का उल्लेख कम कर दिया गया।

1950 में हुई तीस वर्षीय संधि दो समाजवादी देशों के बीच एक महत्वपूर्ण घटना थी। दूसरे महायुद्ध की तबाही से जूझ रहे सोवियत संघ के लिए अपने देश को खुशहाली के मार्ग पर खड़ा कर देना ही एक जबरदस्त चुनौती थी लेकिन ऐसे कठिन समय में भी रूस के साम्यवादी नेता यह समझते थे कि चीन में स्थापित समाजवादी राज्य को आर्थिक रूप से मजबूत बनाना जरूरी है। साम्यवादी भाईचारे की भावना से प्रेरित होकर ही स्तालिन ने चीन को आर्थिक सहायता देने का फैसला किया।

चीन में सोवियत संघ के 'विशिष्ट अधिकारों' की समाप्ति के बाद दोनों देशों के बीच राज्य स्तर के संबंधों में गुणात्मक अंतर आया। पार्टी स्तर के मतभेद राज्य स्तरीय संबंधों के

क्षेत्र में भी जा पहुंचे। माओ त्सेतुंग और ख्रुश्चेव की व्यक्तिगत मित्रता से लोक स्तरीय सद्भावना को प्रोत्साहन मिला परंतु 1956 में सोवियत संघ की बीसवीं पार्टी कांग्रेस में ख्रुश्चेव द्वारा स्तालिन की कठोर आलोचना ने चीन की कम्युनिस्ट पार्टी को विचलित कर दिया। उसने महसूस किया कि इससे अंतर्राष्ट्रीय साम्यवादी एकता को आघात लगेगा।

शूरमान और शेल का विचार है कि इसके कारण अप्रत्यक्ष रूप से 'चीन में माओ त्सेतुंग की स्थिति में अवनति हुई। सितंबर 1956 में चीन की आठवीं कांग्रेस में उनकी अद्वितीयता पर विशेष जोर नहीं दिया गया।'

चीन को आशंका थी कि यह समाजवादी गुट की एकजुटता के लिए हानिकर होगा। यह सच साबित हुआ। पोलैंड और हंगरी में, रूस के आंतरिक पार्टी संघर्ष में और मई 1957 में चीन के आंतरिक पार्टी संघर्ष में इन आशंकाओं की पुष्टि हो गई। परंतु जून 1957 में पोलैंड और हंगरी की परिस्थितियों पर काबू पा लिया गया। ख्रुश्चेव अविवादित सोवियत नेता के रूप में उभरकर आए। माओ त्सेतुंग ने 'दक्षिणपंथियों' के विरुद्ध सफल अभियान छेड़ा। अक्तूबर 1957 के तीसरे प्लेनम में माओ त्सेतुंग का पलड़ा भारी रहा।

1957 के अंत तक स्पूतनिक और अंतरमहाद्वीपीय प्रक्षेपास्त्रों के आविष्कारों ने सोवियत संघ की अंतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा और शक्ति में अभूतपूर्व वृद्धि कर दी। नवंबर में माओ त्सेतुंग ने सोवियत संघ की दूसरी और आख़िरी यात्रा की। रूस और चीन ने परमाणु आयुधों की भागीदारी के बारे में समझौता किया। 1958 और 1960 की ग्रीष्म ऋतु के बीच चीन और रूस के आपसी व्यापार में बहुत बड़ा उछाल आया। इसका अर्थ है कि इस संबंध में दोनों देशों के बीच कोई न कोई व्यापक समझौता अवश्य हुआ होगा। माओ त्सेतुंग ने घोषणा की :

> समाजवादी शिविर का एक प्रधान होना चाहिए और वह सोवियत समाजवादी गणतंत्रों का संघ ही हो सकता है।[8]

गठबंधन के परीक्षण के रूप में कोरिया युद्ध

कोरिया के युद्ध का प्रारंभ गठबंधन का पहला यथार्थ परीक्षण था। चीनी-सोवियत भागीदारी ने इस परीक्षण में पूरी सफलता प्राप्त की। उत्तर कोरिया की सरकार की रक्षा के लिए चीन को युद्धक्षेत्र में उतरना पड़ा। चीनी सेनाओं ने समाजवादी शिविर के हित में इस संग्राम में प्रमुख योगदान किया। संघर्ष का मुख्य दायित्व उठाकर, चीन ने सोवियत संघ को युद्ध में प्रत्यक्ष भागीदारी के कर्तव्य से मुक्त कर दिया। इसके एवज में रूस ने बड़े पैमाने पर शस्त्रास्त्रों और अन्य जरूरी साज-सामान की आपूर्ति की।

इसने न केवल चीन को युद्ध लड़ने की क्षमता प्रदान की बल्कि थल सेना और वायु सेना के आधुनिकीकरण का अवसर भी प्रदान किया। मास्को के साथ पेइचिंग के गठबंधन और रूस के अधिकार में परमाणु शस्त्रास्त्रों ने 'अमरीकी साम्राज्यवादियों' को यालू नदी

पार करने और मंचूरिया पर आक्रमण करने से रोक दिया। स्पष्ट है कि इस लड़ाई के खास जोखिमों और खर्चों को मुख्य रूप से चीनी कम्युनिस्टों को ही उठाना पड़ा। संभवत: चीनी नेताओं के लिए हरजाना संतोषजनक नहीं था।

सितंबर में, जब प्रधानमंत्री चोउ एनलाई मास्को में थे, तो सोवियत संघ पोर्ट आर्थर में ठहरने के लिए राजी हो गया और पेइचिंग की सहमति मे बंदरगाह पर दोनों देशों का संयुक्त नियंत्रण स्थापित हो गया। इसके बारे में बार्नेट का कहना है :

> कोरिया की लड़ाई चूंकि जारी थी और साम्यवादी चीन के पास वृहद नौसेना नहीं थी इसलिए पेइचिंग ने वास्तव में इस अड्डे पर रूसी नियंत्रण को कायम रखने की इच्छा प्रकट की हो, लेकिन चीन की भूमि पर रूस के विशिष्ट अधिकारों को लंबे समय तक कायम रखने के बारे में चीन की भावनाएं मिश्रित रहीं।[9]

मास्को की बातचीत में कोरियाई युद्ध के समापन की समस्या पर भी विचार किया गया। आगामी धटनाओं से साबित होता है कि स्तालिन की तुलना में चीनी कम्युनिस्ट संभवत: लड़ाई को खत्म करने के लिए अधिक उत्सुक थे और अपने आप को युद्ध के दायित्व से यथाशीघ्र मुक्त करना चाहते थे। मार्च 1953 तक, स्तालिन की मृत्यु से पहले तक, पानमुनजोम युद्धविराम वार्ता में गतिरोध कायम रहा, लेकिन स्तालिन की मृत्यु के चार दिन बाद ही चोउ एनलाई ने नए प्रस्ताव रखे। ये प्रस्ताव भारत द्वारा पहले प्रस्तुत प्रस्तावों से मिलते-जुलते थे। इन्हें कम्युनिस्ट शक्तियों ने पहले अस्वीकृत कर दिया था लेकिन अब उन्हीं के आधार पर सभी महत्वपूर्ण मुद्दों का समाधान संभव हो गया।

स्तालिन के जीवन के अंतिम वर्षों में, सोवियत-चीनी गठबंधन बहुत सुदृढ़ था और दोनों पक्षों में उत्साहपूर्ण सहयोग कायम रहा। गठबंधन के दोनों भागीदारों की ओर से सोवियत प्राथमिकता को मान लिया गया था। चीन के साम्यवादी स्तालिन की सराहना और सोवियत नीतियों की प्रशंसा करते हुए कभी थकते नहीं थे। वे स्वयं अपने देश के जनमानस में सोवियत-प्रेम को विकसित करने का निरंतर प्रयास करते थे।

उत्तर-स्तालिन संबंध

समाजवादी शिविर में माओ त्सेतुंग की प्रतिष्ठा स्तालिन की मृत्यु के पहले ही बढ़ने लगी थी परंतु स्तालिन के उत्तराधिकारियों ने चीनी साम्यवादियों को उत्तरोत्तर अधिक सम्मान देना शुरू कर दिया। उन्होंने चीन को कुछ महत्वपूर्ण सुविधाएं प्रदान कीं और कुछ अतिरिक्त आर्थिक सहायता भी दी। इसने चीनी-सोवियत गठबंधन को और भी ज्यादा मजबूत किया और कलह के कुछ पुराने स्रोतों का खात्मा किया। इससे साम्यवादी गुट के अंतर्गत चीन के प्रभाव में धीरे-धीरे वृद्धि हुई। स्तालिन की अंतिम यात्रा में चोउ एनलाई को अन्य शीर्षस्थ सोवियत नेताओं के समक्ष सम्मानित स्थान दिया गया।

शीर्षस्थ सोवियत नेताओं की पहली चीन यात्रा 1954 में हुई। जब ख्रुश्चेव और बुलगानिन चीन गए तो उन्होंने चीन के साम्यवादी नेताओं के प्रति बहुत आदर भाव दिखाया। ख्रुश्चेव ने कहा कि साम्यवादी चीन 'एक महाशक्ति' है और घोषणा की कि महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति के बाद चीन की जनवादी क्रांति की विजय विश्व इतिहास की सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना थी। इसकी 'एशिया के राष्ट्रों के लिए सर्वाधिक सार्थकता थी।' उन्होंने चीनी साम्यवादियों की प्रशंसा करते हुए कहा कि उन्होंने मार्क्सवाद लेनिनवाद को 'सृजनात्मक रूप से क्रियान्वित किया है' और घोषणा की कि 'सोवियत संघ और चीनी जनवादी गणतंत्र शांति, लोकतंत्र और समाजवाद के शिविर के दो अजेय आधार हैं।'[10]

ख्रुश्चेव के स्तालिनवाद विरोधी अभियान के संदर्भ में इटली के साम्यवादी दल के नेता तोग्लियात्ती ने घोषणा की कि अब 'बहुकेंद्रीय साम्यवाद' का युग प्रारंभ हो रहा है। इसने पोजनान के दंगों, सोवियत-पोलिश संबंधों में संकट, और हंगरी के विद्रोह को प्रेरित किया। चीन के साम्यवादियों ने साम्यवाद विरोध पर ख्रुश्चेव की 'लाइन' को स्वीकार नहीं किया और इतिहास में स्तालिन की भूमिका का अपना स्वतंत्र और अपेक्षाकृत अधिक सकारात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत किया।

1956–57 के दौरान, पेइचिंग ने मास्को और पूर्वी यूरोप की सरकारों के बीच मध्यस्थता की सार्थक राजनीतिक भूमिका निभाई :

> यह स्पष्ट था कि साम्यवादी चीन ने संपूर्ण समाजवादी गुट की राजनीतिक और विचारधारात्मक स्थिति को परिभाषित करने में एक महत्वपूर्ण पहल की। इसके परिणामस्वरूप, गुट के नेतृत्व में, कम से कम राजनीतिक और विचारधारात्मक क्षेत्र में चीन की स्थिति सोवियत संघ के लगभग समान हो गई।[11]

स्तालिन के बारे में चीनी साम्यवादियों ने कहा कि उन्होंने अपनी भूमिका को बढ़ा-चढ़ा कर देखा था और कुछ महत्वपूण मामलों में उन्होंने अवास्तविक और त्रुटिपूर्ण निर्णय किए थे। इनमें 'खासकर युगोस्लाविया के बारे में उनका गलत फैसला भी शामिल है।' इसके बावजूद, उन्होंने मार्क्सवाद-लेनिनवाद को सृजनात्मक तरीके से लागू किया था। अपनी गंभीर गलतियों के बावजूद, स्तालिन एक महान मार्क्सवादी-लेनिनवादी थे। उनकी यह बात गलत थी कि साम्यवादी क्रांतिकारियों को अपने हमले का मुख्य निशाना मध्यम-मार्गियों को बनाना चाहिए। सही नीति तो उन्हें अपने पक्ष में लाना या उनको तटस्थ करना है। फिर भी हमें स्तालिन की कृतियों को एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक विरासत के रूप में स्वीकार करना चाहिए.....जिनमें उन्होंने लेनिनवाद का समर्थन किया और सोवियत संघ के निर्माण के अनुभवों का संक्षेप में बिल्कुल सही वर्णन किया।[12]

इस प्रकार चीन के साम्यवादियों ने स्तालिन के विषय में ख्रुश्चेव की प्रारंभिक, सामान्य निंदा को अस्वीकार कर दिया और इस मुद्दे पर एक उचित दृष्टिकोण अपनाया।

1956 के अंत तक, ख्रुश्चेव ने भी अनुभव किया कि स्तालिन के बारे में शुरुआती दौर

में की गई निंदा स्तालिन के साथ न्याय नहीं थी। कुछ भी हो, उन्होंने इस प्रश्न पर अपने उग्रवादी दृष्टिकोण को पहले से नरम बनाया और धीरे-धीरे चीनी दृष्टिकोण के निकट पहुंच गए।

चीनी-सोवियत संघर्ष

हैरी जिलमैन के अनुसार बीसवीं पार्टी कांग्रेस के बाद, चीन और सोवियत संघ के बीच मनमुटाव की स्थिति शुरू हो गई थी। अगले दशक में यह संघर्ष बंद कमरों में तर्क-विर्तक और अप्रत्यक्ष आलोचना से आगे बढ़कर खुले कटाक्षों, व्यंग्यों और गालियों के चरण में प्रवेश कर गया।

दोनों पक्षों ने 1963 में अपने गुप्त समझौतों के रहस्य प्रकट कर दिए जिनसे पता चला कि परदे के पीछे विभिन्न मुद्दों पर दोनों देशों के बीच आपसी संघर्ष लगातार बढ़ता रहा था। 1956 के बाद से, चीनी-सोवियत संघर्ष लगातार जारी रहा, उसमें कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन भी हुए और कुछ घटनाओं की वजह से उनके संघर्ष की कुटता बढ़ गई। इस संघर्ष का एक पहलू सत्ता के विषय में विवाद है:

1. 1956 से यह विवाद सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी और अन्य कम्युनिस्ट पार्टियों के संबंधों को परिभाषित करने के बारे में रहा है,
2. 1957 से यह विवाद समाजवादी गुट और साम्यवादी आंदोलन की एकीकृत नीति को निश्चित करने के बारे में रहा है, और
3. 1958 से यह विवाद साम्यवादी नीति के प्रतिपादन में सोवियत तथा चीनी राष्ट्रीय हितों की मात्रा निर्धारित करने के विषय में रहा है।

सोवियत संघ और जनवादी चीन के बीच राष्ट्रीय हितों के निम्नलिखित मुद्दों ने उनके आपसी संघर्ष को तीव्र कर दिया :

1. सोवियत संघ को परमाणु हथियारों के निर्माण में चीन की मदद करनी चाहिए? यदि हां तो कितनी और कैसे?
2. ताइवान को मुक्त कराने की चीनी महत्वाकांक्षा के समर्थन में सोवियत संघ किन जोखिमों को उठाने के लिए सहमत हो सकता है?
3. संयुक्त राज्य अमरीका से तनावों को कम करने की दिशा में सोवियत संघ किस सीमा तक चीन की भावनाओं पर ध्यान दे सकता है?
4. अल्पविकसित देशों में क्रांतिकारी सशस्त्र विद्रोहों का समर्थन साम्यवादी शिविर किस सीमा तक कर सकता है?
5. चीन की अर्थव्यवस्था के निर्माण और विकास के लिए सोवियत संघ कितनी सहायता प्रदान कर सकता है?

6. सोवियत संघ का भारत जैसे देशों के साथ क्या और कैसा संबंध होना चाहिए, जहां राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग का शासन है और जिनके बारे में जनवादी चीन की अपनी समझ है ?

पहले मुद्दे की बात करें तो सोवियत संघ ने 1957 में चीन के परमाणु कार्यक्रम के लिए सहायता देना स्वीकार किया लेकिन लगभग अठारह महीनों के बाद 1959 में रूसी नेता अपने इस वादे से मुकर गए। इसके बावजूद, चीन ने 1964 में परमाणु बम का सफल परीक्षण कर लिया।

ताइवान की मुक्ति के संबंध में, रूस ने दुस्साहसी नीति अपनाने के विरुद्ध सलाह दी और चीन से कहा कि क्वेमोय और मात्सू पर जारी बमबारी को वह शीघ्र रोक दे। चीन की नौसैनिक शक्ति कमजोर थी। उधर ताइवान की रक्षा के लिए अमरीका का सातवां जहाजी बेड़ा तैनात था।

अमरीका के साथ तनाव घटाने की वार्ताओं के बारे में चीन को संदेह था कि सोवियत संघ ऐसा चीन के राष्ट्रीय हितों की कीमत पर कर रहा था। सोवियत संघ ने चीन को विश्वास में लिए बिना इस विषय में समझौते की बातचीत शुरू कर दी। अतः चीन ने कैंप डेविड में ख्रुश्चेव आइजनहावर समझौते का विरोध किया।

चीन इस समय, तृतीय विश्व में क्रांतिकारी सशस्त्र संघर्षों का समर्थन कर रहा था और चाहता था कि संपूर्ण साम्यवादी गुट ऐसा ही करे। परंतु इस मुद्दे पर सोवियत संघ साम्यवादी चीन से सहमत नहीं था। अन्य देशों में सशस्त्र विद्रोहों को सक्रिय प्रोत्साहन देना सोवियत संघ की दृष्टि से शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के सिद्धांत के प्रतिकूल था।

सोवियत संघ की आर्थिक सहायता की मात्रा परिमाण को चीन अपर्याप्त मानता था। 1960 में जब सोवियत संघ ने अपनी आर्थिक सहायता के संपूर्ण कार्यक्रम को अचानक रद्द कर दिया और अपने तकनीशियनों को वापस बुला लिया तो दोनों देशों के बीच कूटनीतिक विभाजन की गति और भी तेज हो गई।

चीन को गुटनिरपेक्ष देशों के राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग के साथ, खासकर भारत की नेहरू सरकार के साथ, सोवियत संघ की मित्रता की नीति बिलकुल नापसंद थी। 1962 में चीनी भारतीय सीमा संघर्ष के प्रश्न पर सोवियत संघ के तथाकथित भारत प्रेम पर आधारित तटस्थता की चीन ने तीव्र आलोचना की। चीन के अनुसार रूस ने समाजवादी बंधु और बुर्जुआ मित्र के बीच संघर्ष में बुर्जुआ भारत का पक्ष लिया था।

दोनों कम्युनिस्ट दल चीनी कम्युनिस्ट पार्टी तथा सोवियत रूस की कम्युनिस्ट पार्टी समय की मांग को समझने में असफल रहे और अपने राष्ट्रीय हितों से ऊपर नहीं उठ पाए। विचारों में किन्हीं मुद्दों को लेकर मतभेद एक बात है लेकिन एक राज्य का दूसरे राज्य से संबंध भी समाप्त कर देना बहुत बड़ी भूल थी। एशिया तथा अफ्रीका में उभरते हुए जन

संघर्षों को और बढ़ते हुए कम्युनिस्ट आंदोलन को चीन की कम्युनिस्ट पार्टी और रूस की कम्युनिस्ट पार्टी की मुठभेड़ ने गहरी चोट पहुंचाई।

विभाजन की दिशा में प्रगति

मास्को में द्विपक्षी चीनी-सोवियत वार्ताओं के तीन सप्ताह पूर्व चीनियों ने सोवियत संघ की राजधानी मास्को में फिर संपूर्ण विश्व में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी को लिखे गए पत्र को प्रकाशित कर दिया। यह पत्र 14 जून 1963 का था। इस पत्र में पहली बार खुले शब्दों में सोवियत संघ की घरेलू नीतियों की तीव्र आलोचना की गई थी। इस पत्र में यह घोषणा भी की गई कि जिस कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व सोवियत रूस की पार्टी की समझ का समर्थन जारी रखेगा, चीन की कम्युनिस्ट पार्टी उसे विभाजित करने की चेष्टा करेगी।

सोवियत नेतृत्व ने इस पत्र के विरुद्ध तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की। जिन अधिकारियों ने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के इस पत्र का मास्को में वितरण किया था उन्हें औपचारिक रूप से निष्कासित कर दिया गया। 13 जुलाई को सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी ने अपने पक्ष को प्रस्तुत करते हुए एक पत्र प्रकाशित किया। ख्रुश्चेव ने आरोप लगाया कि चीन का पत्र उनके नेतृत्व को स्वदेश और विदेशों में दुर्बल करने का एक प्रयास है। इसी समय सोवियत संघ ने अमरीका के साथ आंशिक परमाणु परीक्षण प्रतिबंध समझौता किया। सोवियत प्रचार-पत्र ने चीनियों के विरुद्ध आरोप लगाया कि वे परीक्षण प्रतिबंध संधि को अस्वीकार करने के बाद स्वयं परमाणु आयुधों को प्राप्त करने के लिए कृतसंकल्प हैं और चीन को एक विशाल परमाणु शक्ति बनाना चाहते हैं।

चीनी-सोवियत संघर्ष अब चरम सीमा पर पहुंच गया था। इसके बारे में हैरी गिल्मैन का कहना है :

> सोवियत रूसी नेता माओ को सठियाया हुआ बुड्ढा, 'त्रात्स्कीवादी' अत्याचारी और नस्लवादी कहते थे जो विश्वयुद्ध की लालसा पाले हुए थे। बदले में, चीनी ख्रुश्चेव को कायर विश्वासघाती, द्रोही या गद्दार के रूप में चित्रित करते थे, जिन्होंने 'साम्राज्यवाद' के साथ गठबंधन कर लिया था, सोवियत संघ में पूंजीवाद को वापस लाने की कोशिश कर रहे थे और विश्व भर में मार्क्सवाद-लेनिनवाद को दुर्बल करने के प्रयास में लगे थे।

1966 के वसंत में चीनी-सोवियत फूट और भी तीखी हो गई थी। 1964 की शरद ऋतु में चीन का प्रथम परमाणु विस्फोट हुआ, जिसमें दोनों समाजवादी देशों को और भी अधिक विभाजित कर दिया। ख्रुश्चेव के पतन से चीनी-सोवियत संबंधों में किसी प्रकार का सुधार नहीं आया। चीन के समाचारपत्रों ने ख्रुश्चेव के पतन का स्वागत किया। सोवियतों ने चीन

के विरुद्ध अपने व्यंग्य-वाणों में कमी कर दी, परंतु दोनों देशों के आपसी संबंधों में कोई वास्तविक नरमी नहीं आई।

वियतनाम युद्ध का विस्तार भी इस विभाजन में प्रमुख कारक के रूप में उभरा। सोवियतों ने चीन पर आरोप लगाया कि उसने उत्तरी वियतनाम का समर्थन करने के लिए 'संयुक्त कार्यवाही' के सभी सोवियत प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया। चीन वियतनाम को भेजी जाने वाली सोवियत सैनिक सहायता के आने-जाने में भी बाधा डालता है। चीन ने उत्तर दिया कि सोवियत संघ और संयुक्त राज्य अमरीका आपस में सांठ-गांठ कर शत्रु देशों का एक घेरा बनाकर चीन की नाकेबंदी करने की चेष्टा कर रहे हैं। 24 मार्च 1966 के *मास्को लेटर* ने घोषणा की :

> चीनी जनता को विश्वास दिलाया जा रहा है कि सोवियत संघ उनके प्रमुख शत्रुओं में एक है...तथ्य बताते हैं कि चीनी कम्युनिस्ट नेता अपनी वैदेशिक राजनीतिक गतिविधियों का निशाना साम्राज्यवादी शक्तियों के विरुद्ध इतना नहीं रखते जितना सोवियत संघ और समाजवादी वैश्विक प्रणाली के विरुद्ध रखते हैं।...विश्व नगर के विरुद्ध विश्व ग्राम के संघर्ष के रूप में क्रांति की धारणा...श्रमिक वर्ग के विश्व ऐतिहासिक मिशन के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांत का पूर्ण खिलाफ है।[14]

पेइचिंग लेटर ने इन सभी आरोपों को अस्वीकार कर दिया। चीन ने कहा कि वह न तो युद्ध-लोलुप है, न मिथ्या क्रांतिकारी, और न ही दुस्साहसी। वह त्रात्स्कीवाद, मताग्रहवाद, विभाजनवाद या महाशक्ति अहंकारवाद का दोषी भी नहीं है। *पेइचिंग लेटर* ने घोषणा की :

> स्तालिन की निंदा करते समय, आप मार्क्सवाद-लेनिनवाद, सोवियत संघ, चीन, जनता और विश्व के सभी मार्क्सवादियों-लेनिनवादियों की भी निंदा कर रहे थे।....स्तालिन की मृत्यु के बाद, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं ने...जर्मन सोशल डेमोक्रेटों, बर्नस्टाइन और काउत्सकी के घिसे-पिटे रास्ते को अपना लिया, जिन्होंने मार्क्स, एंगेल्स और मार्क्सवाद के साथ विश्वासघात किया था। इसके फलस्वरूप सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी आधुनिक संशोधनवाद का केंद्र बन गई है।[15]

व्यंग्योक्तियों की लगातार लड़ाई

चीन-सोवियत संबंधों में मार्च 1966 में एक नाटकीय मोड़ आया जब चीन ने 23वीं सोवियत पार्टी काग्रेस में भाग लेने के सोवियत निमंत्रण को ठुकरा दिया। उसके बाद से सोवियत संघ और चीन के बीच पार्टी स्तर के सभी संबंध टूट गए। व्यंग्यों तथा कटाक्षों के बावजूद अभी तक दोनों देशों के बीच विशिष्ट संबंध बने हुए थे। सब कुछ होने पर भी, यह कलह एक ही समाजवादी परिवार के दो रूठे हुए भाइयों के बीच ही थी।

इसके पूर्व, चीन के विश्व दृष्टिकोण के अनुसार संसार दो प्रमुख गुटों—साम्राज्यवादी

और समाजवादी शिविरों—में विभक्त था और इन दोनों के बीच तटस्थ देश थे। चीन के अनुसार, सोवियत संघ ने अब समाजवादी शिविर के साथ द्रोह और गद्दारी की है, उसने अपने राष्ट्रीय स्वार्थ को संपूर्ण शिविर के हितों से ऊपर माना है और चीन के राष्ट्रीय हितों की अवहेलना करते हुए वह अमरीका के साथ सांठ-गांठ कर रहा है :

> मार्च 1966 तक चीन की पार्टी स्तरीय व्यंग्योक्तियों का प्रमुख लक्ष्य था कि सोवियत संघ को संपूर्ण समाजवादी शिविर के प्रति अपनी प्रतिबद्धता के लिए मजबूर कर दिया जाए। उससे अपील की जा रही थी कि वह अमरीका से अपने उभरते हुए विशिष्ट संबंधों को तोड़कर साबित करे कि वह समाजवादी परिवार में वापस आ गया है। परंतु 1966 के बाद चीनियों ने यह निष्कर्ष निकाला कि सोवियत संघ अब अपरिहार्य रूप से 'संशोधनवादी' और 'बुर्जुआ' तो बन ही गया है, समाजवादी शिविर की संपूर्ण धारणा ही निरर्थक हो गई है।[16]

साम्राज्यवाद से चीनियों का अभिप्राय किसी विशाल देश द्वारा अपनी आर्थिक और सैनिक शक्ति के जरिए साम्राज्य का निर्माण करना है। 1969 के बाद उन्होंने अमरीका के साथ सोवियत रूस को दूसरी साम्राज्यवादी ताकत (सामाजिक साम्राज्यवादी शक्ति) के रूप में जोड़ दिया। हालांकि उन्होंने फ्रांसीसी और ब्रिटिश नव-उपनिवेशवाद, भारतीय विस्तारवाद और जापानी सैन्यवाद की भी निंदा की; परंतु उन्होंने केवल अमरीका और सोवियत रूस को साम्राज्यवादी माना। लेकिन उन्होंने यह बात भी कही कि जब सोवियत साम्राज्यवाद का उदय हो रहा है, तो इसी के साथ अमरीकी साम्राज्यवाद का अस्त शुरू हो गया है (क्योंकि उसका ह्रास अनिवार्य था) इसलिए सोवियत साम्राज्यवाद ज्यादा खतरनाक है।

अगर अमरीकी साम्राज्यवाद युद्ध का स्थायी स्रोत था तो यही बात सोवियत 'सामाजिक साम्राज्यवाद' पर भी लागू होती थी। चीनी नेता देशों, राष्ट्रों और जनता को विश्व राजनीति की वास्तविक इकाइयां मानते थे। उनका कहना था कि साम्राज्यवाद राष्ट्रीय संप्रभुता का उल्लंघन है। साम्राज्यवाद के विरुद्ध स्वाधीनता के लिए संघर्ष न्यायपूर्ण संघर्ष है। वे इस सिद्धांत के उदाहरण के रूप में स्वतंत्रता के लिए अमरीकी युद्ध का उल्लेख करते थे।

पाकिस्तान के लिए चीन के समर्थन की व्याख्या उनकी सोवियत विरोधी वैदेशिक नीति के संदर्भ में की जा सकती है। चीन का भारत विरोध भी उनकी सोवियत विरोधी नीति का एक पहलू था। पाकिस्तान से पूर्व बंगाल के संबंध-विच्छेद को उन्होंने पाकिस्तान की राष्ट्रीय संप्रभुता का उल्लंघन माना था। जिस तरह जापान ने चीन के प्रांत मंचूरिया को जीतकर उसे 'मांयूकुआ' नाम देकर एक कठपुतली सरकार बना दी थी, चीनी कहते थे कि उसी प्रकार भारत ने बंगलादेश को जीतकर उसे 'भारतीय मांयूकुआ' बनाकर वहां एक कठपुतली सरकार कायम कर दी थी। चीनी भाषा का मिन-त्सू शब्द राष्ट्र और प्रजाति दोनों अर्थों में प्रयुक्त होता है। नैंसी मिल्टन इत्यादि का प्रश्न है :

> बंगलादेशियों को राष्ट्र क्यों न माना जाए जो पश्चिम पाकिस्तानी उपनिवेशवाद से

> अपनी मुक्ति की मांग कर रहे थे? विश्व में सभी जगह नस्ल और प्रजाति अति संवेदनशील समस्याएं हैं। इनमें चीन भी शामिल है। चीन का दृष्टिकोण है कि विश्व में आम तौर पर शक्तिशाली राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन चल रहे हैं, परंतु व्यावहारिक कारणों से, चीन उनमें केवल कुछ आंदोलनों को ही अपना समर्थन दे सकता है।[17]

चीन पाकिस्तान की क्रूर सैन्यवादी सरकार का, जिसने शेख मुजीबुर्रहमान के अनुसार, पूर्वी बंगाल में तीस लाख बंगालियों की हत्या की थी, इसीलिए समर्थन करता था क्योंकि उसकी दृष्टि में स्वतंत्र बंगलादेश भारतीय विस्तारवाद और सोवियत सामाजिक साम्राज्यवाद का सृजन था।

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने स्वेच्छापूर्वक तय किया कि वह बलप्रयोग द्वारा ताइवान, हांगकांग और मकाओ को मुक्त नहीं करेगी। उसने निर्णय लिया कि वह इंडोचीन में भी सशस्त्र हस्तक्षेप नहीं करेगी जहां अमरीकी साम्राज्यवाद अत्याधुनिक हथियारों द्वारा लोकप्रिय विद्रोहों का क्रूर दमन कर रहा था। परंतु चीनी सेनाओं ने सोवियत सेनाओं के विरुद्ध उत्तरी सीमाओं पर बार-बार मुठभेड़ जारी रखीं। इसी प्रकार चीन ने हिमालय की ऊंचाइयों पर भारत के साथ अनावश्यक युद्ध लड़ा। अंत में चीन ने बहादुर वियतनामियों को सबक सिखाने का दुस्साहस किया जब उन्होंने पहले ही कथित 'अस्त होते हुए' अमरीकी साम्राज्यवाद को पराजित कर दिया था। सच तो यह है कि भारत, सोवियत संघ और वियतनाम के साथ चीन के इन सीमावर्ती युद्धों का मार्क्सवाद-लेनिनवाद से कोई लेना-देना नहीं था।

माओ त्सेतुंग ने कहा था कि हमें मुख्य अंतर्विरोध तथा गौण अंतर्विरोध के बीच भेद करना चाहिए। माओ त्सेतुंग के अनुसार इस समय मुख्य अंतर्विरोध दोनों साम्राज्यवादों (सोवियत और अमरीकी) और सभी अन्य सामाजिक-राजनीतिक सत्वों के बीच है। माओ त्सेतुंग ने यह तर्क भी प्रस्तुत किया कि हमें मुख्य शत्रु, गौण शत्रु, अस्थायी मित्रों और अप्रत्यक्ष मित्रों के बीच भी फर्क करना चाहिए। डेविड मिल्टन, नैंसी मिल्टन और फ्रांज शूरमान का कथन है :

> इस विश्व दृष्टिकोण ने उन्हें मुश्किल में डाल दिया। बंगलादेश के उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है। पाकिस्तान एक 'मित्र' है जिसने अपने को अमरीकी प्रभाव से मुक्त कर लिया, लेकिन रूस से अपने आपको स्वतंत्र रखा। वह पहले भी चीन को शत्रुओं के द्वारा घेरने की अमरीकी नीति में शामिल नहीं हुआ और इसके बजाए चीन के निकट पहुंचता गया। इसका कारण था कि चीन और पाकिस्तान के नेता भारत सरकार के प्रति वैर भाव रखते थे। परंतु चीन की दृष्टि में, वस्तुपरक रूप से पाकिस्तान के ये कार्य साम्राज्यवाद पर प्रहार थे। जब भारतीय सेनाओं ने पूर्वी पाकिस्तान पर आक्रमण किया तो इसका उद्देश्य ऐसे आंदोलन का समर्थन करना था जिसे विश्व के अधिकांश लोग सच्चा राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन मानते थे। लेकिन चीनियों ने उसे भारतीय विस्तारवाद का उदाहरण माना, जिसने पूर्वी बंगाल में रूसी साम्राज्यवादी शक्ति को पैर जमाने का मौका दे दिया।[18]

सोवियत विरोधी तीखी व्यंग्योक्तियों के मुताबिक रूस 'सामाजिक साम्राज्यवादी' देश है। इसके कारण चीन को अपने विश्व दृष्टिकोण में परिवर्तन करना आवश्यक हो गया था। पचास के दशक में माओ त्सेतुंग ने कहा था कि दो विरोधी शिविरों के बीच एक 'मध्यवर्ती क्षेत्र' है। साठ के दशक में उन्होंने एक 'मध्यवर्ती क्षेत्र' की धारणा को 'दो मध्यवर्ती क्षेत्रों' की धारणा में विकसित कर दिया। पहले मध्यवर्ती क्षेत्र में एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका के गरीब देश थे और दूसरे में पश्चिमी यूरोप के विकसित देश और कनाडा शामिल थे। कुछ समय बाद दूसरे मध्यवर्ती क्षेत्र में पूर्वी यूरोप के समाजवादी देशों और जापान को भी शामिल कर लिया गया। वे चीन को विकासशील देश के रूप में पहले मध्यवर्ती क्षेत्र में स्थित मानते हैं जो शीघ्रता से दूसरे मध्यवर्ती क्षेत्र की दिशा में प्रगति कर रहा था।

खुले चीनी-सोवियत संघर्षों की शुरुआत 1962 में हुई जब चीनियों ने सोवियत संघ पर आरोप लगाया कि वह सिंकियांग में अशांति भड़का रहा है। परंतु सर्वाधिक गंभीर मुठभेड़ें 1969 में उसूरी नदी पर हुईं जहां सोवियत सुदूर पूर्व और चीन के पूर्वोत्तर प्रांत (मंचूरिया) की सीमाएं मिलती हैं। यहां खुली लड़ाई छिड़ गई जिसमें दोनों पक्षों के बहुत से सैनिक हताहत हुए। झगड़े की जड़ प्रकट रूप में उसूरी नदी का एक अस्थिर टापू था और दोनों देश उस पर अपना स्वामित्व जता रहे थे :

> इस मुठभेड़ की गंभीरता की वजह यह थी कि 1969 में सोवियत संघ ने आधुनिक हथियारों से लैस दस लाख से भी अधिक सोवियत सैनिकों को चीनी-सोवियत और चीनी-मंगोलिया सीमाओं पर तैनात कर रखा था और चीन की मुक्ति फौज का अधिकांश भी चीन के उत्तरी प्रांतों में रूस से टक्कर लेने के लिए मुस्तैद था। इधर पिंग-पोंग कूटनीति द्वारा चीन की दोस्ती अमरीका से बढ़ रही थी। हजारों अमरीकी यात्री चीन आ रहे थे जिन्हें बड़े उत्साह से उन भूमिगत शरणस्थलों को दिखाया जा रहा था जिन्हें सोवियत आक्रमण से रक्षा के लिए बनाया गया था।[19]

जब चीनी-सोवियत व्यंग्योक्तियां पार्टी स्तर पर जारी थीं तो राज्य के स्तर पर औपचारिक विवाद का मामला दोनों देशों के बीच सीमाओं के निर्धारण का प्रश्न था। चीनी 'असमान संधियों' का सवाल उठा रहे थे, जिनके द्वारा सत्रहवीं सदी के उत्तरार्ध और अठारहवीं सदी के पूर्वार्ध में रूस ने पूर्वी साइबेरिया के अधिकांश पर कब्जा किया था। सोवियतों का आरोप था कि चीन उनकी राष्ट्रीय भूमि पर लालच भरी निगाहें डाल रहा है। चीनी नेताओं का जवाब था कि वे उस भूभाग की वापसी नहीं चाहते और केवल यह चाहते हैं कि 'असमान संधियों' की मौजूदगी को मान लिया जाए।

तंगवादी चीन और सोवियत विघटन

चीन में तंग श्याओफिंग के उत्कर्ष के बाद, दोनों देशों के बीच व्यंग्यों और कटाक्षों की

लड़ाई पहले से कम शत्रुतापूर्ण हो गई। इस संबंध में इतिहासकार त्सेंग हुआईवेन का कहना है :

> 1970 के दशक में अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति ने नया रूप लिया। दो विराट शक्तियों (सुपर पावर) के बीच सैनिक बल का संतुलन सोवियत संघ के पक्ष में हो गया। तेजी से बढ़ती हुई अपनी सैनिक ताकत का सहारा लेकर वह विश्व भर में अपने पैर फैलाने लगा। सर्वोच्चता के विश्वव्यापी द्वंद्व में सोवियत संघ का रुख आक्रामक था जबकि अमरीका की नीति रक्षात्मक थी। एशिया के रंगमंच पर सोवियत संघ ने अपनी फौजों को संपूर्ण चीनी-सोवियत और चीनी-मंगोल सीमा पर तैनात रखा, कंपूचिया पर आक्रमण में वियतनाम की मदद की और स्वयं चीन के पड़ोसी देश, अफगानिस्तान पर कब्जा कर लिया। सोवियत संघ चीन की सुरक्षा के लिए तीन दिशाओं से खतरा उत्पन्न कर रहा था।[20]

इसके विपरीत त्सोंग चीनी-अमरीकी सहयोग के बारे में खुशी से फूला नहीं समाता :

> संयुक्त राज्य अमरीका विश्वव्यापी सोवियत आक्रमण से प्रभावित था और विश्व मंच पर चीन के बढ़ते हुए महत्व को समझ रहा था....उसने चीन के बारे में अपनी नीति बदलने का निर्णय किया...फरवरी 1972 में राष्ट्रपति निक्सन चीन आया और चेयरमैन माओ और प्रधानमंत्री चोउ एनलाई से मिला...1978 के अंत में कार्टर प्रशासन ने...माना कि...'चीन केवल एक है और ताइवान उसका हिस्सा है।' (चीन के दुश्मन सोवियत संघ और भारत इस बात को 1949 में ही मान चुके थे।)जनवरी 1979 में उप-प्रधानमंत्री तंग श्याओफिंग अधिकृत यात्रा पर अमरीका गए जहां अमरीका की जनता और सरकार ने उनका बड़े उत्साह से स्वागत किया। तंग और राष्ट्रपति कार्टर ने चीनी-अमरीकी सहयोग के एक समझौते पर दस्तखत किए।[21]

वह आगे कहता है, अस्सी के दशक में विश्व की परिस्थिति में और भी अधिक उथल-पुथल हुई।....चीन सर्वोच्चता का प्रबल विरोधी है, जिसका वास्तविक अभिप्राय यह है कि वह 'प्रभुत्व जमाने की सोवियत नीति' और 'उसके सामाजिक साम्राज्यवाद' का विरोध दृढ़ संकल्प के साथ करता है।[22] त्सोंग आगे कहता है, पाकिस्तान के साथ चीन के संबंध और भी अधिक घनिष्ठ हो गए हैं।...कुछ मोड़ों और झड़पों के बाद चीन-भारत संबंध भी सुधर रहे हैं।[23]

चीन की नजर में प्रतिक्रांतिकारी तख्तापलट के षड्यंत्र में ब्रेजनव ख्रुश्चेव के साथ मिला हुआ था और बाद में उसने उसी को हरा कर स्वयं सत्ता छीन ली। ब्रेजनेव का सत्ता ग्रहण ख्रुश्चेव की प्रतिक्रांति का ही नया रूप है। वास्तव में ब्रेजनेव दूसरा ख्रुश्चेव है।...संशोधनवाद द्वारा सत्ता ग्रहण करने का अर्थ बुर्जुआजी द्वारा सत्ता ग्रहण है। सोवियत संघ अब बुर्जुआजियों के अधिनायक तंत्र के अधीन है, यह बड़े बुर्जुआ वर्ग का अधिनायक तंत्र है, यह जर्मन फासिस्ट-टाइप की तानाशाही है, बिलकुल हिटलर-टाइप की तानाशाही।[24]

यह अर्थहीन चीनी प्रवचन आगे भी जारी रहता है :

> यह शानदार थीसिस सोवियत संशोधनवादी सामाजिक साम्राज्यवाद के वर्गीय तत्वों और सामाजिक भूलों को, उसके फासीवादी चरित्र को प्रकट करती है।...इस नए टाइप के नौकरशाही एकाधिकारी पूंजीपति वर्ग ने समाजवादी स्वामित्व को पूंजीवादी पथ के पथिकों के स्वामित्व में बदल दिया है और समाजवादी अर्थव्यवस्था को पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में रूपांतरित कर दिया है।[25]

इस विश्लेषण में आगे बताया गया है :

> अधिकाधिक मुनाफा प्राप्त करने के लिए और अपने प्रतिक्रियावादी शासन को कायम रखने के लिए, यह नए किस्म का नौकरशाही एकाधिकारी पूंजीपति वर्ग न केवल अपने देश की जनता का शोषण और उत्पीड़न करता है, बल्कि वह उन्मत्त होकर विस्तार और आक्रमण में संलग्न हो जाता है, विश्व के पुनर्विभाजन में वह विश्व साम्राज्यवाद की मंडली में शामिल होता है और सर्वाधिक घृणित सामाजिक-साम्राज्यवादी नीतियों को अपनाता है।[26]

इस आलोचना की त्रासदी यह है कि माओवादी तथा अन्य उग्र वामपंथी चीन के वर्तमान साम्यवादी नेताओं की इन्हीं कठोर शब्दों में आलोचना करते हैं क्योंकि स्वयं माओ ने भी इन्हें 'पूंजीवाद पथ का पथिक' कहा था। रूस और चीन के संबंधों का सामान्यीकरण तभी हुआ जब सोवियत संघ में गोर्बाचेव सत्ता में आए। वे 1989 में चीन यात्रा पर आए और 1991 में च्यांग त्सैमिन ने इसके जवाब में सोवियत संघ की यात्रा की।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास में कहा गया है, चीनी-सोवियत संबंधों की पुनर्स्थापना ने दोनों देशों के बीच 1960 और 1970 के दशकों के संघर्ष की स्थिति को समाप्त कर दिया लेकिन उस गठबंधन को पुनर्जीवित नहीं किया जिसका अस्तित्व 1950 के दशक में था।[27] चीन के संबंध रूस से और भी सुधर गए जब सोवियत संघ के विघटन के बाद येल्तसिन सत्ता में आया। पूर्वी यूरोप और भूतपूर्व सोवियत गणतंत्रों में साम्यवाद की समाप्ति के बाद 'सहअस्तित्व के पांच सिद्धांतों' को फिर गतिशील कर दिया गया और इन देशों के साथ चीन के संबंधों का सामान्यीकरण हो गया। इसका एकमात्र अपवाद जर्मन जनवादी गणतंत्र (पूर्वी जर्मनी) था, जो शीघ्र ही जर्मन संघीय गणतंत्र (पश्चिम जर्मनी) का अभिन्न अंग बन गया।[28]

चीनी-सोवियत संबंध परिवर्तनों के अनेक चरणों से गुजरे, जिनकी शुरुआत 1950 में गठबंधन, मित्रता और आपसी सहायता की संधि से हुई। यह संधि तीस वर्षों के लिए हुई थी। कुछ मतभेदों के बावजूद, चीनी-सोवियत संबंधों के पहले दशक में दोनों समाजवादी देशों के बीच हार्दिक सहयोग और भाईचारा कायम रहा। दूसरे दशक के आरंभ में ही सोवियत संघ ने चीन को आर्थिक सहायता देने का कार्यक्रम रद्द कर दिया, घरेलू नीति के सवालों पर भेद उत्पन्न हुए,और विदेश नीति के मुद्दों पर भी आपसी संघर्ष बढ़ने लगा।

सोवियत नेतृत्व ने लंबी छलांग और सांस्कृतिक क्रांति के माओवादी सिद्धांतों की हंसी उड़ाते हुए उन्हें चीनी नेतृत्व की गंभीर मताग्रहवादी त्रुटियां बताया।

1960 और 1970 के दशकों में विदेश नीति के मुद्दों पर बढ़ते हुए विभाजन, व्यंग्योक्तियों के वैचारिक युद्ध और चीनी-सोवियत तथा चीनी-मंगोल सीमाओं पर विशाल सैन्य बलों की तैनाती का युग आया। इसी युग में चीन ने भारत, सोवियत संघ और वियतनाम के साथ सीमायुद्ध भी लड़े। इस चरण में दोनों 'समाजवादी विशाल राष्ट्र' भयानक वैचारिक और राजनीतिक संग्रामों में लगे रहे। 1980 के दशक में चीनी-सोवियत संबंधों का तीसरा चरण शुरू हुआ जब गोर्बाचेव ने पहल करते हुए तंगवादी चीन के साथ सोवियत संबंधों का सामान्यीकरण किया।

1990 के दशक के प्रारंभ में सोवियत संघ का विघटन हो गया। येल्तसिन ने एक 'नवीन आर्थिक-वित्तीय कुलीन वर्ग' और साम्यवाद-विरोधी अभिजन के प्रतिनिधि के रूप में रूस का शासन-भार संभाला। आश्चर्य की बात है कि उत्तर-साम्यवादी रूस और जनवादी चीन के संबंधों में क्रमशः सुधार हुआ।

पुतिन की हाल में हुई चीन यात्रा के दौरान फिर दोनों राष्ट्रों के बीच संबंध स्थापित होने की संभावना लगती है। शायद दोनों राष्ट्रों के नेता अब अमरीका की बढ़ती हुई दादागिरी से चौकन्ने हो गए हैं।

इस संदर्भ में हमें एक बात हमेशा याद रखनी चाहिए कि यदि पड़ोसी राज्य अपने मतभेदों को कम करने की दिशा में कदम उठाएं तो अमन का माहौल पैदा होगा। चाहे रूस हो चाहे चीन हो और चाहे भारत या पाकिस्तान, इनकी प्रगति एक दूसरे के साथ अच्छे संबंध स्थापित करने में ही निहित है। तनाव का माहौल हथियारों पर बेहिसाब धन खर्च करने के लिए उकसाता है जिसका अर्थ है लोगों की दशा सुधारने के लिए कम से कम धन रह जाना। चीन और रूस ने अपने संबंध बिगाड़कर खोया ही है और जो कुछ आंख बंद करके वहां के नेताओं ने किया, उससे दूर-दूर तक मार्क्सवाद का नाता नहीं था। मार्क्सवाद बुद्धि को चमकाने का ज्ञान है न कि उसको गुमराह करने का मंत्र।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. नैंसी एंड डेविड मिल्टन और शूरमान (संपा.), *पीपुल्स चाइना*, पृ. 391.
2. एफ. शूरमान और ओ. शेल (संपा.), *कम्युनिस्ट चाइना*, पृ 228
3. वही, पृ. 230.
4. वही, पृ. 234.
5. वही, पृ. 235.
6. वही, पृ. 236.
7. वही, पृ. 240.
8. वही, उद्धृत, पृ. 421.
9. ए. डोक बार्नेट, *कम्युनिस्ट चाइना एंड एशिया*, पृ. 245.

10. वही, पृ. 247.
11. वही, पृ. 249.
12. माओ का लेख वही उद्धृत, पृ. 250.
13. हैरी गिलमैन, 'दि सिनो-सोवियत कनफ्लिक्ट', *प्राब्लस आफ कम्युनिज्म*, पृ. 284.
14. *मास्को लेटर*, वही उद्धृत, पृ. 486-88.
15. *पेचिंग लेटर*, वही उद्धृत, पृ. 492-93.
16. मिल्टन दंपती और शूरमान (संपा.) *पीपुल्स चाइना*, पृ. 392.
17 वही, पृ. 394.
18. वही, पृ. 397.
19. वही, पृ. 401
20. त्सोंग ह्वाइवेन, *ईयर्स आफ ट्रायल, टर्मोइल एंड ट्रायम्फ*, पृ 279.
21. वही, पृ. 280.
22. वही, पृ. 282-84.
23. वही, पृ. 285.
24. मिल्टन दंपती और शूरमान (संपा.), पीपुल्स चाइना, पृ. 450.
25. वही, पृ. 452.
26. वही, पृ. 451-52.
27. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ कम्युनिस्ट चाइना*, पृ. 826.
28. वही, पृ 826-27

अध्याय सोलह

चीनी साम्यवाद : एक समीक्षा

माओ के चिंतन की मौलिकता

नव-जनवाद के सिद्धांत का प्रतिपादन करते हुए माओ त्सेतुंग ने 1940 में स्पष्ट कर दिया था कि यद्यपि चीनी क्रांति का तात्कालिक उद्देश्य बुर्जुआ जनवादी क्रांति को साम्यवादी दल के नेतृत्व में क्रियान्वित करना था परंतु उसका अंतिम उद्देश्य चीन में समाजवाद का निर्माण और विकास है। यदि हम इस संदर्भ में देखें तो नव-जनवाद पर माओ का लेख उस संपूर्ण आंदोलन का अखंड अंग था जिसे 1940 के दशक के शुरू के वर्षों में उन्होंने एक स्वतंत्र संगठन के रूप में कम्युनिस्ट पार्टी के लक्ष्यों को परिभाषित करने के लिए चलाया। इसका उद्देश्य पार्टी के चरित्र को शुद्ध करना भी था जो संयुक्त मोरचे में भागीदारी की वजह से धूमिल हो चुका था। वे न्यूनतम और अधिकतम लक्ष्यों के संदर्भ में पार्टी की सैद्धांतिक स्थिति को भी स्पष्ट करना चाहते थे। सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया में पार्टी की सुनिश्चित दिशा का प्रतिपादन करना आवश्यक हो गया था।

वास्तव में अपनी कृति *नव-जनवाद के बारे में* के द्वारा माओ त्सेतुंग ने मार्क्सवादी लेनिनवादी सिद्धांत के विकास में एक मौलिक योगदान किया था। अत: इसे 1935 में कोमिन्टर्न द्वारा संयुक्त मोरचे के विषय में पारित प्रस्ताव की विस्तृत व्याख्या मात्र नहीं माना जा सकता। महत्वपूर्ण यह था कि यह मौलिक योगदान चीन से आया था। अत: इस दृष्टि से अब माओ की गणना मार्क्सवाद के महान सिद्धांतकारों में की जा सकती थी। विश्व कम्युनिस्ट आंदोलन के संदर्भ में (जिस पर पिछले दशकों में स्तालिन का वर्चस्व रहा था) माओ त्सेतुंग की एक मौलिक सिद्धांतकार के रूप में मान्यता चीनी साम्यवादी आंदोलन के प्रति सोवियत सदाशयता को प्रकट करती है।

यह सच है कि पिछले वर्षों में कोमिन्टर्न तथा सोवियत नेताओं ने भी चीनी परिस्थितियों के विशेष सैद्धांतिक विश्लेषण प्रस्तुत किए थे, जिनमें सदैव माना गया था कि चीन की अपनी खास 'ऐतिहासिक विशेषताएं' हैं। 1924-27 के पहले क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट संयुक्त मोर्चे के समय और हुनान-चियांग्शी सीमांत क्षेत्र के सोवियत काल (1931-34) में भी ऐसा ही हुआ था। 1935 में जब कोमिन्टर्न ने वैश्विक संदर्भ में फासिस्ट ताकतों से संघर्ष करने के लिए फिर संयुक्त मोरचे की नीति को स्वीकार किया तो चीन को इस संबंध में मास्को द्वारा विशिष्ट दिशा प्रदान करने का कोई इरादा दिखाई न पड़ा।

इसका एक कारण यह हो सकता था कि कोमिन्टर्न की दृष्टि में चीन का महत्व घट

गया था। दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि कोमिन्टर्न के सातवें प्लेनम में वांग मिंग ने चीन में संयुक्त मारेचे की नीति पर जो वक्तव्य दिया था उसे चीनी पार्टी के लिए समुचित सैद्धांतिक मार्गदर्शन मान लिया गया था। अत: चीन पर अलग से विचार नहीं किया गया।

अत: यह विचार सही है कि 'चीनी क्रांति की ऐतिहासिक विशिष्टताओं' पर विशेष बल देते हुए एक नए सिद्धांत के सृजन की प्रेरणा स्वयं माओ त्सेतुंग से प्रारंभ हुई। इस प्रेरणा के गंभीर अभिप्राय थे। इसका मंतव्य था कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी परंपरा में नवीकरण का एकमात्र स्रोत मास्को नहीं था। इन नवीकरणों के स्रोत विश्व साम्यवादी आंदोलन के अन्य क्षेत्र भी हो सकते थे। इसका तात्पर्य था कि मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन की परंपरा में मौलिक योगदान द्वारा उसे और आगे विकसित किया जा सकता था और चीन में माओ त्सेतुंग वही मौलिक योगदान कर रहे थे।

इस संदर्भ में देखा जाए तो *नव-जनवाद* युन्नान काल में चीनी साम्यवाद की भावना का सही प्रतिबिंब था। इसी काल में साम्यवादी आंदोलन ने मुखर होकर अपनी क्रियाओं के सभी क्षेत्रों में स्वयं अपने व्यक्तित्व को दृढ़ता से अभिव्यक्त किया। कम्युनिस्ट पार्टी ने स्वयं अपनी कार्य पद्धति विकसित की और बड़ी तेजस्विता के साथ अपना राष्ट्रीय चरित्र प्रकट किया। परंतु माओ का *नव-जनवाद* अपनी सकारात्मक विषयवस्तु की दृष्टि से कितना मौलिक है और कितना केवल मार्क्सवादी-लेनिनवादी परंपरा का पुनर्कथन...यह प्रश्न विवादित हो सकता है।

ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक पूछते है : क्या वास्तव में यह मार्क्सवाद-लेनिनवाद-स्तालिनवाद के ज्ञान-कोष में एक मौलिक विकास है? 1940 तक मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शास्त्रीय विद्या इतनी अधिक विकसित हो गई थी कि उसकी बुनियादी मान्यताओं के आधार पर उसका आगे विकास करना असंभव था। स्वयं स्तालिन के नवीकरण भी लेनिन द्वारा प्रदत्त तत्वों के तात्कालिक पुनर्गठन मात्र थे। ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक का मत है :

> 'बहरहाल मौलिकता' के संकीर्ण अर्थ में भी पूर्ववर्ती कम्युनिस्ट सिद्धांत के प्रकाश में *नव-जनवाद* का ईमानदारी से परीक्षण करने पर उसके बारे में किए गए दावों का औचित्य सिद्ध नहीं होता। चीनी कम्युनिस्ट आंदोलन के अंतर्गत माओ त्सेतुंग के वास्तविक नवीकरण मार्क्सवादी सिद्धांत की तुलना में व्यावहारिक राजनीतिक क्षेत्र में अधिक हुए।[1]

उदाहरणार्थ, अर्ध-उपनिवेशी और अर्ध-सामंती देश के रूप में चीन की धारणा 1922 में ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की दूसरी कांग्रेस में प्रस्तुत कर दी गई थी। इसी प्रकार चीनी क्रांति की तात्कालिक अवस्था की कल्पना बुर्जुआ जनवादी चरण के रूप में करना कोमिन्टर्न के दस्तावेजों में बिखरा पड़ा है। यह धारणा कि चीनी क्रांति रूसी क्रांति का अनुगमन नहीं करेगी क्योंकि साम्राज्यवाद का कारक उन्हें एक दूसरे से अलग करता है और इसके फलस्वरूप चीन का राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग (क्वोमिन्तांग के माध्यम से) अब भी

क्रांतिकारी भूमिका निभा सकता है, 1925-27 में त्रात्स्की के विरुद्ध स्तालिन की मुख्य युक्ति थी।

इसी प्रकार राज्य की प्रणाली की यह धारणा भी उतनी नई नहीं है कि यह 'बुर्जुआ तानाशाही' अथवा 'सर्वहारा अधिनायकत्व न होकर' 'अनेक वर्गों का संयुक्त अधिनायक तंत्र' हो सकती है। इसका उपयोग 1927 में स्तालिनवादी नेतृत्व ने चीनी कम्युनिस्टों के वूहान सरकार में शामिल होने का औचित्य जताने के लिए किया था। किसानों की समस्या पर विशेष बल 1940 में चीनी साम्यवाद की कृषक-आधारित प्रकृति का सही चित्रण करता है, परंतु यह भी कोई नवीन सिद्धांत नहीं था। कोमिन्टर्न के केंद्रीय समिति के सातवें प्लेनम ने 1926 में ही किसान समस्या की केंद्रीयता की घोषणा कर दी थी। परंतु कोमिन्टर्न की शर्त थी कि किसान आंदोलन पर सर्वहारा वर्ग का नेतृत्व होना चाहिए।

लेकिन माओ का संपर्क चीन के श्रमिक वर्ग से भौगोलिक-राजनीतिक कारणों से टूट गया था। वे अधिक सतर्क किंतु अस्पष्ट भाषा में कहते हैं, मजदूरों के बिना, चीनी क्रांति सफल नहीं होगी क्योंकि वे जनता के सर्वाधिक क्रांतिकारी अंश हैं।[2] परंतु सिद्धांत के क्षेत्र में उनके इस कथन में कोई नवीनता नहीं है। अंतत: सुन यातसेन के जनता के तीन सिद्धांतों का 'बुर्जुआ-जनवादी क्रांति' के बुनियादी कार्यों से समीकरण प्रथम क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट संयुक्त मोरचे के दौरान वाद-विवाद का लोकप्रिय विषय था।

ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक की दृष्टि में माओ के *नव-जनवाद* लेख में न केवल किसी सैद्धांतिक नवीकरण का अभाव है, बल्कि उन महत्वपूर्ण विकासों का उल्लेख भी नहीं है, जो चीनी कम्युनिस्ट आंदोलन में वास्तव में हुए थे। 1940 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के पास अपना भूभागीय आधार, अपना सैन्य बल और बढ़ता हुआ कृपक जनाधार था। एक स्वतंत्र शक्ति, जिसकी शक्ति के अपने प्रभावकारी स्रोत थे, के रूप में कम्युनिस्ट क्वोमिन्तांग से मुठभेड़ के लिए तैयार थे। जापानी आक्रमण के विरुद्ध छापामार युद्ध की शैली का प्रयोग वे प्रभावकारी ढंग से कर रहे थे।

फिर भी माओ त्सेतुंग ने 1940 में *नव-जनवाद* में कम्युनिस्ट पार्टी की इन महत्वपूर्ण मौलिक उपलब्धियों का उल्लेख नहीं किया। अमरीकी लेखकों का मत है कि माओ त्सेतुंग ने जान-बूझकर इन मौलिक विकासों की चर्चा नहीं की क्योंकि ये उपलब्धियां क्वोमिन्तांग नेताओं में अविश्वास और रोष उत्पन्न कर सकती थीं। जब तक माओ त्सेतुंग क्वोमिन्तांग-कम्युनिस्ट गठबंधन को जापानी साम्राज्यवादी आक्रमण से लड़ने के लिए कायम रखना चाहते थे तब तक कम्युनिस्ट पार्टी की राजनीतिक और सैनिक स्वतंत्रता पर विशेष बल देना उपयुक्त नहीं था। ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक का निष्कर्ष है :

> संक्षेप में *नव-जनवाद* एक मार्क्सवादी-लेनिनवादी ढांचा है, जो जितना प्रकट करता है, उतना ही छिपाता है। सैद्धांतिक मौलिकता के उसके दावों के बावजूद, यह वास्तव में माओ त्सेतुंग की मौलिक उपलब्धियों का चित्रण करने में असफल है। उनकी ये उपलब्धियां सक्रिय राजनीति की समझ और दक्षता में निहित थीं। हमें

> माओ की सच्ची मौलिकता को उनके राजनीतिक कार्य के क्षेत्र में और उनके उन लेखों में खोजना चाहिए जिनमें वे राजनीतिक कार्य की प्रत्यक्ष रूप से चर्चा और व्याख्या करते हैं।

वे आगे कहते हैं :

> इसके अतिरिक्त, *नव-जनवाद* के विषय में सैद्धांतिक नवीकरण के दावे और लेखक के लिए सिद्धांतकार होने के दावे विश्व साम्यवादी आंदोलन में एक अभूतपूर्व परिघटना को उजागर करते हैं। इस परिघटना को अभी तक मास्को ने स्वीकार किया है परंतु भविष्य में इसके प्रति उसका रवैया सोवियत-चीनी कम्युनिस्ट संबंधों के भविष्य का मूल्यवान संकेत होगा।[3]

संयुक्त सरकार की संकल्पना

युन्नान में 25 अप्रैल से 11 जून 1945 तक चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की सातवीं कांग्रेस हुई, जिसमें माओ त्सेतुंग ने मिली-जुली सरकार की स्थापना और उसके कार्यों तथा लक्ष्यों के विषय में एक विस्तृत रिपोर्ट पढ़ी। क्वोमिन्तांग सरकार से इस विषय में कम्युनिस्ट पार्टी की वार्ता 1944 के शुरुआती महीनों से चल रही थी। माओ त्सेतुंग ने इसमें बहुदलीय संयुक्त सरकार की संकल्पना प्रस्तुत की और उसके सैद्धांतिक आधार का विवेचन किया। यह सैद्धांतिक आधार लचीला था। यह कम्युनिस्ट पार्टी को जनवरी 1946 के एक समझौते के अनुसार क्वोमिन्तांग के साथ मिलकर संयुक्त सरकार के निर्माण की अनुमति देता था। यह क्वोमिन्तांग के अलावा कम्युनिस्ट पार्टी और डेमोक्रेटिक लीग जैसी छोटी पार्टियों की मिली-जुली सरकार के निर्माण की अनुमति भी देता था। यही तो अक्तूबर 1949 में पेइचिंग में हुआ।

माओ की इस रिपोर्ट का विषय यह है कि चूंकि चीन अब भी बुर्जुआ-जनवादी क्रांति के चरण में है, इसलिए सभी लोकतांत्रिक दलों को मिलकर संयुक्त नव-जनवादी सरकार का निर्माण करना चाहिए। कम्युनिस्ट पार्टी ने यह घोषणा की कि वह सभी राजनीतिक दलों की संयुक्त सरकार की स्थापना के पक्ष में है। यह घोषणा क्वोमिन्तांग शासित क्षेत्रों में बहुत लोकप्रिय हुई। अधिकांश राजनीतिक व्यक्ति क्वोमिन्तांग के एकदलीय शासन से असंतुष्ट थे।

1949 में क्वोमिन्तांग की पराजय के बाद (इस बात के बावजूद कि प्रभावकारी शक्ति कम्युनिस्ट पार्टी में केंद्रित थी)'जनता के जनवादी अधिनायकत्व' की व्याख्या ऐसी संयुक्त सरकार के रूप में की जा सकती थी जो चार वर्गों यानी श्रमिकों, कृषकों, निम्न पूंजीपतियों और राष्ट्रीय पूंजीपतियों के *गठबंधन पर आधारित थी*। इन चार वर्गों का नेतृत्व मजदूर वर्ग करता था। 1949 में जनवादी चीन की केंद्रीय सरकार का औपचारिक स्वरूप

मिली-जुली सरकार जैसा ही था जिसमें कम्युनिस्ट पार्टी के अलावा डेमोक्रेटिक लीग सहित छोटी पार्टियों के प्रतिनिधि भी शामिल किए गए थे। राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन में भी देश के विभिन्न जनसमूहों, धार्मिक नेताओं, अल्पसंख्यक प्रजातियों और विशिष्ट व्यक्तियों को शामिल किया गया था। गृहयुद्ध के पूर्व, गृहयुद्ध के समय और कम्युनिस्ट पार्टी की विजय के उपरांत संयुक्त सरकार की संकल्पना चीन के सभी क्रांतिकारी तत्वों में लोकप्रिय और प्रभावकारी सिद्ध हुई।

संयुक्त सरकार के बारे में माओ द्वारा प्रस्तुत इस अभिलेख की विशेषता यह है कि इसमें कृषक वर्ग की भूमिका को सबसे अधिक महत्व दिया गया है। माओ त्सेतुंग लिखते हैं, कम्युनिस्ट पार्टी की सुदृढ़ कृषि नीति है, वह कृषकों के हितों के लिए लड़ती है और उन्हें अपना परम मित्र मानती है। इसलिए स्वाभाविक रूप से वही कृषकों का नेतृत्व करती है।[4] इन वक्तव्यों द्वारा माओ त्सेतुंग ने कम्युनिस्ट पार्टी के सिद्धांत कि क्रांति का नेतृत्व श्रमिक वर्ग करता है और यथार्थ कि इसका व्यावहारिक नेतृत्व कृषक वर्ग के हाथ में है, के बीच सामंजस्य बिठाने की चेष्टा की। माओ की कृषि नीति को केंद्रीय विशेषता यह है कि किसान को अपनी भूमि का मालिक बनाया जाए। अत: 1950 में जनवादी चीन की स्थापना के बाद भी माओ त्सेतुंग की उद्घोषित नीति वही थी जिसका सुन यातसेन ने तीन दशक पहले प्रतिपादन किया था।

माओ त्सेतुंग ने *संयुक्त सरकार* संबंधी अभिलेख में कहा कि उनका लक्ष्य नव-जनवादी अर्थनीति को लागू करना होगा। इस अर्थव्यवस्था को राज्य, पूंजीपति और सहकारी संघ मिलकर चलाएंगे। इसमें यह घोषणा भी की गई कि जनवादी चीन में सभी धर्मों को स्वतंत्रता दी जाएगी और सभी चीनी नागरिकों को समान नागरिक और राजनीतिक अधिकार प्राप्त होंगे। संयुक्त सरकार और नव-जनवादी अर्थव्यवस्था संपूर्ण संक्रमण काल में कायम रहेगी। अगला समाजवादी चरण कब शुरू होगा, इसके बारे में इस अभिलेख में कोई सूचना नहीं है। परंतु यह स्पष्ट कहा गया है कि संक्रमण काल की अवधि बहुत लंबी होगी।

दिसंबर 1947 में माओ त्सेतुंग ने केंद्रीय समिति के सामने *वर्तमान परिस्थितियां और हमारे कार्य* शीर्षक रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए कहा, पूंजीवादी अर्थव्यवस्था राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का अभिन्न अंग है। इसे लंबे समय तक अपने अस्तित्व को जारी रखने की अनुमति होनी चाहिए, राष्ट्रीय स्तर पर क्रांतिकारियों की विजय हो जाने के उपरांत भी। परंतु 'लंबे समय' की यह अवधि माओ के सभी लेखों में अनिश्चित रहती है। माओ की संयुक्त सरकार की संकल्पना का आधार नव-जनवादी राजनीति, नव-जनवादी अर्थनीति और नव-जनवादी संस्कृति है।

संयुक्त सरकार का विचार एक प्रकार से क्वोमिन्तांग के साथ कम्युनिस्ट पार्टी के संयुक्त मोरचे की धारणा का ही विस्तार था। यह जापान विरोधी संघर्ष के दौरान मुक्त आधार क्षेत्रों में स्थापित तीन-तिहाई प्रणाली का राष्ट्र स्तरीय स्वरूप था। मुक्त क्षेत्रों के प्रशासन में एक-तिहाई कम्युनिस्ट, एक-तिहाई अन्य लोकतांत्रिक दलों के प्रतिनिधि और

एक-तिहाई स्वतंत्र व्यक्ति होते थे।

1944 की शरद ऋतु में अमरीकी सैनिक मिशन ने युन्नान जाकर माओ त्सेतुंग से संपर्क स्थापित किया। यह जून 1944 में अमरीकी उपराष्ट्रपति हेनरी वैलेस की चुंगकिंग यात्रा का परिणाम था। जुलाई 1944 में राष्ट्रपति रूजवेल्ट का सुझाव था कि चीन की राष्ट्रवादी (क्वोमिन्तांग)और कम्युनिस्ट सेनाओं को जनरल स्टिलवेल की एकीकृत कमान के अधीन कर दिया जाए। स्टुअर्ट श्रैम का कथन है :

> चीनी सेनाओं की एकीकृत कमान की योजना के स्वाभाविक निष्कर्ष के रूप में अमरीकी सरकार ने शीघ्र ही चीन के लिए कम्युनिस्ट भागीदारी के आधार पर संयुक्त सरकार की स्थापना का प्रस्ताव किया। इस विचार का चुंगकिंग (क्वोमिन्तांग सरकार की युद्धकालीन राजधानी) स्थित कम्युनिस्ट प्रतिनिधि ने तुरंत स्वागत किया और उसके बाद युन्नान (कम्युनिस्ट सरकार की तत्काली राजधानी) स्थित नेताओं ने इस प्रस्ताव का औपचारिक रूप से समर्थन कर दिया।[5]

च्यांग काई शेक के अनुरोध पर रूजवेल्ट ने जनरल स्टिलवेल को चीन से वापस बुला लिया और एकीकृत कमान की बात खत्म हो गई। अमरीकी राजदूत गौस, जिसने कम्युनिस्टों और क्वोमिन्तांग की संयुक्त सरकार का सुझाव दिया था, त्यागपत्र देकर अमरीका लौट गया। नए अमरीकी राजदूत पैट्रिक हर्ली ने चीनी सेनाओं की संयुक्त कमान, संयुक्त राष्ट्रीय सरकार और संयुक्त सैनिक परिषद के प्रस्ताव प्रस्तुत किए जिन्हें युन्नान की कम्युनिस्ट सरकार ने स्वीकार कर लिया परंतु चुंगकिंग की क्वोमिन्तांग सरकार ने इनमें कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई।

जापान के आत्मसमर्पण के बाद क्वोमिन्तांग और कम्युनिस्टों की वार्ताएं जारी रहीं परंतु दोनों पक्ष गृहयुद्ध की तैयारियां करते रहे। चुंगकिंग में 43 दिनों तक च्यांग काई शेक और माओ त्सेतुंग के बीच बातचीत चली :

> यह अनुभव करते हुए कि वे इतने शक्तिशाली नहीं थे कि राष्ट्रीय सरकार में भागीदारी की मांग कर सकें कम्युनिस्टों ने संयुक्त सरकार की मांग नहीं रखी और कहा कि च्यांग काई शेक की वर्तमान सरकार लोकतांत्रिक सुधारों को क्रियान्वित करे।...माओ का स्पष्ट तर्क यह था कि यदि वे यथास्थिति को किसी न किसी रूप में कायम रख सके तो क्वोमिन्तांग का भ्रष्टाचार और अकुशलता और फलत: उसके राजनीतिक और सैनिक तंत्र का विघटन कम्युनिस्टों को अंतत: देश का नेतृत्व संभालने के लिए सक्षम बना देगा।[6]

जनता का जनवादी अधिनायकत्व

1 जुलाई 1949 को माओ त्सेतुंग ने *जनता का जनवादी अधिनायकत्व* शीर्षक से एक

महत्वपूर्ण लेख प्रकाशित किया। कम्युनिस्ट पार्टी की विपक्ष की भूमिका समाप्त हो रही थी और वह चीन में शासन की बागडोर संभालने वाली थी। यद्यपि इस लेख की सीमाएं नव-जनवाद के सिद्धांत के अंतर्गत हैं, लेकिन कुछ अंश नए हैं और लेखक की प्राथमिकताओं में भी कुछ अंतर आया है। अब माओ ऐसी शासन प्रणाली की स्थापना के इच्छुक थे जो चीन में समाजवाद के निर्माण और विकास में सहायक सिद्ध हो सके।

माओ त्सेतुंग की यह कृति दो भागों में विभाजित है। पहले भाग में लेखक की विश्व दृष्टि के अनुसार आधुनिक चीन के इतिहास की व्याख्या है। दूसरे भाग में पार्टी के सामने उठे कुछ बुनियादी मुद्दों के बारे में पार्टी के विचारों का स्पष्टीकरण किया गया है। इसमें माओ त्सेतुंग कम्युनिस्ट नीतियों के विषय में उठाई गई आपत्तियों का उत्तर देते हैं। पहला भाग इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि वह जनवादी अधिनायकत्व के समय आधुनिक चीन के इतिहास के प्रति साम्यवादी दल का परिप्रेक्ष्य वक्तव्य है।

दूसरे अनुभाग में माओ सर्वप्रथम साम्यवादी दल की वैदेशिक नीति का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि जनवादी चीन का निश्चित झुकाव सोवियत संघ के पक्ष में रहेगा। ब्रांट, श्वार्ज और फेयरबैंक का 1952 में निष्कर्ष था कि इससे यह सिद्ध नहीं होता कि सोवियत संघ और चीन के बीच कोई मतभेद है ही नहीं लेकिन इससे यह भी साबित नहीं होता कि उनके बीच कुछ मतभेद निश्चित रूप से हैं। माओ इस समय स्वेच्छा से घोषणा कर रहे थे कि वे स्तालिन के पक्षधर हैं।

परंतु सवाल भावात्मक प्रतिबद्धता का नहीं है। चीन और सोवियत संघ के बीच वस्तुपरक स्तर पर राष्ट्रीय हितों का टकराव संभव था। युगोस्लाविया भी समाजवादी शिविर में रहने का इच्छुक था लेकिन राष्ट्रीय हितों के टकराव की वजह से उसे शिविर से निकलना पड़ा। चीन के संदर्भ में भी इस प्रकार के विच्छेद की संभावना थी। लेनिन को साम्यवादी जगत के अंतगर्त शक्ति-केंद्रित कलहों का पूर्वाभास नहीं था परंतु इतिहास ने सिद्ध कर दिया कि विचारधारा राष्ट्रीय हितों के आधार पर विभक्त देशों को एक शिविर के अंतर्गत नहीं रख सकती।

घरेलू नीति के संदर्भ में *जनता के जनवादी अधिनायकत्व* का लक्ष्य *नव-जनवाद* की धारणा को नई परिस्थितियों के अनुकूल बनाना था। लोकतांत्रिक अधिनायक तंत्र का विचार नया नहीं है। 1905 में लेनिन ने भी मजदूरों और किसानों के लोकतांत्रिक अधिनायक तंत्र का उल्लेख किया था। लेनिन के अनुसार यह राज्य लोकतांत्रिक होगा क्योंकि वह रूसी जनता के विशाल बहुमत का प्रतिनिधित्व करेगा। यह अधिनायक तंत्र प्रतिक्रियावादी वर्गों के लिए होगा क्योंकि उन्हें जनतांत्रिक अधिकारों से वंचित कर दिया जाएगा। चूंकि रूस में कभी 'लोकतांत्रिक अधिनायक तंत्र' की स्थापना हो न सकी, इसलिए लेनिन को इस प्रश्न का सामना नहीं करना पड़ा कि अधिनायक तंत्र, अर्थात एकल और समरूप नीति का प्रवर्तक शासन तंत्र, विविध पार्टियों की संयुक्त सरकार का संचालन कैसे कर सकता है, खासकर जब ये दल विभिन्न वर्गों के हितों का प्रतिनिधित्व करते हों।

लेनिन ने स्वयं संकेत दिया था कि इस तरह का द्विवर्गीय अधिनायक तंत्र अस्थिर और

अल्पकालिक सिद्ध होगा। युन्नान काल में, माओ त्सेतुंग जब जनवादी अधिनायकत्व का उल्लेख कर रहे थे तो उनका झुकाव उसके लोकतांत्रिक पहलुओं की ओर अधिक था। इस समय चीन के कम्युनिस्टों की मुख्य समस्या यह थी कि डेमोक्रेटिक लीग जैसी छोटी पार्टियों और स्वतंत्र व्यक्तियों की तीसरी शक्ति को कैसे अपने पक्ष में किया जाए। अब स्थिति बदल गई थी क्योंकि कम्युनिस्ट पार्टी के पास अंतिम निर्णय की शक्ति आ गई थी यद्यपि सार्वजनिक और सरकारी पदों पर काफी संख्या में गैर-कम्युनिस्ट नियुक्त किए गए थे और कम्युनिस्ट पार्टी उनका सहयोग चाहती थी।

परिवर्तित स्थिति में, कम्युनिस्ट पार्टी एकल, सुदृढ़ और श्रमरूप नीति क्रियान्वित करना चाहती थी और इसलिए 'जनवादी अधिनायकत्व' के फार्मूले में जनवाद का वजन कम और तानाशाही का वजन अधिक हो गया था। फिर भी यह अधिनायक तंत्र चार वर्गों का था जिनमें श्रमिकों और कृषकों के अतिरिक्त निम्न पूंजीपतियों और राष्ट्रीय पूंजीपतियों को भी शामिल किया गया था और उनके प्रतिनिधियों को भी विविध राजनीतिक दलों के माध्यम से जनवादी चीन के केंद्रीय मंत्रिमंडल में पद दिए गए थे।

नई शासन प्रणाली विविध दलों की संयुक्त सरकार का अधिनायकत्व से सामंजस्य किस प्रकार करती है? इसका सहज उत्तर है कि 'श्रमिक वर्ग के नेतृत्व' के द्वारा और श्रमिक वर्ग से अभिप्राय है साम्यवादी दल का। नेतृत्व का तात्पर्य है कि संपूर्ण प्रभावी शक्ति और पूर्ण राजनीतिक पहल अब कम्युनिस्ट पार्टी के पास है। राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन में सभी फैसले, अनेक दलों की उपस्थिति के बावजूद, एकमत से होते हैं। संयुक्त सरकार के गैर-कम्युनिस्ट दलों के संगठनों का अस्तित्व नहीं है। वे केवल अब अतीत के प्रेत हैं। इन दलों का एक अखबार है, जिसका मुख्य संपादक कम्युनिस्ट है और उपसंपादक अन्य दलों से हैं। इसलिए 'जनता के जनवादी अधिनायकत्व' की राजनीतिक सार्थकता लगभग समाप्त हो चुकी है।

परंतु संक्रमण काल में माओ त्सेतुंग 'सभी लाभकारी पूंजीवादी कारकों का उपयोग करना चाहते थे।' भूमि कृषकों की निजी संपत्ति है। राष्ट्रीय पूंजीपति उद्योगों के मालिक हैं। व्यापार और उद्योग में निम्न पूंजीपति वर्ग भी योगदान कर रहा है। माओ की दृष्टि में *नव-जनवाद* और *नव-जनवादी अधिनायकत्व* के बीच निरंतरता थी लेकिन एक सैद्धांतिक विकास भी था क्योंकि इसके द्वारा उन्होंने अन्य राजनीतिक 'ग्रुपों' को जनवादी सरकार के प्रशासनिक ढांचे में शामिल कर लिया। माओ ने 'जनता के जनवादी अधिनायकत्व' के माध्यम से नए शासन तंत्र के अंतर्गत ऐसी तीसरी शक्तियों को शामिल कर लिया, जो अन्यथा सरकार के प्रति तटस्थ, असंतुष्ट और रुष्ट रह सकती थीं।

जनता के जनवादी अधिनायकत्व द्वारा माओ त्सेतुंग ने शत्रुओं और मित्रों में विभेदीकरण को प्रस्तुत किया है। प्रथम दृष्टि में यह विभाजन स्पष्ट रूप से वर्गीय आधार पर दिखाई देता है। *जनता* में सर्वहारा, कृषक, निम्न पूंजीपति वर्ग और राष्ट्रीय पूंजीपति वर्गीकृत हैं। जमींदार और नौकरशाह पूंजीपति जनता के प्रतिक्रियावादी शत्रु वर्ग हैं। परंतु यह भेद शब्दशः लागू नहीं होता। कृषक या राष्ट्रीय पूंजीपति व्यवहार में 'जनता' के शत्रु हो सकते

हैं और जमींदार तथा भूतपूर्व नौकरशाह पूंजीपति सुधरने पर 'जनता' के मित्र बन सकते हैं। अर्थनीति के अलावा विचारधारा और सांस्कृतिक परंपरा भी व्यक्तियों की राजनीति का निर्धारण करती है। इस संबंध में माओ त्सेतुंग का कहना है :

> अनेक दशकों का अनुभव...हमें जनता के जनवादी अधिनायकत्व को अमल में लाना सिखाता है।...जनता के लिए लोकतंत्र और प्रतिक्रियावादियों के ऊपर अधिनायक तंत्र...ये दोनों पहलू समन्वित होकर जनता के जनवादी अधिनायकत्व का निर्माण करते हैं।[7]

जनवादी राज्य तंत्र जमींदारों, दलाल और नौकरशाह पूंजीपतियों का कठोरता से दमन करता है। जहां तक राष्ट्रीय बुर्जुआजी का सवाल है, माओ ने कहा था :

> जब समाजवाद के निर्माण का समय आएगा अर्थात निजी उद्यमों के राष्ट्रीकरण का, तो हम उन्हें शिक्षा देने और नए सांचे में ढालने का काम और आगे बढ़ाएंगे। जनता के पास एक शक्तिशाली राज्य तंत्र है...हमें राष्ट्रीय बुर्जुआ वर्ग के विद्रोह से डरने की जरूरत नहीं है।[8]

इसी संदर्भ में हू शेंग की राय भी देखी जानी चाहिए :

> चीनी जनक्रांति की महान विजय न केवल राष्ट्रीय संदर्भ में अभूतपूर्व थी, बल्कि ऐतिहासिक दृष्टि से उसका विश्वव्यापी महत्व था। इसकी गणना अक्तूबर समाजवादी क्रांति और द्वितीय विश्वयुद्ध में फासीवाद की पराजय के साथ की जा सकती थी।...चीनी जनता की यह विजय चीन में मार्क्सवाद-लेनिनवाद की जीत भी थी। इसमें मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सार्वभौम सिद्धांतों का चीनी क्रांति के मूर्त व्यवहार के साथ समन्वय किया गया था। इसलिए यह माओ त्सेतुंग के चिंतन की विजय भी थी।[9]

माओ का संक्रमणकालीन नेतृत्व

संक्रमण काल में जनवादी चीन के समक्ष दो महत्वपूर्ण कार्य थे। पहला कार्य संपूर्ण देश पर मजबूती से राजनीतिक नियंत्रण स्थापित करना था। दूसरा कार्य युद्ध से क्षत-विक्षत अर्थव्यवस्था का पुनर्निर्माण करना था ताकि भविष्य में आर्थिक विकास की नींव डाली जा सके। माओ की इच्छा थी कि राजनीतिक स्थिरता और आर्थिक प्रगति की दिशा में चीन का मार्गदर्शन किया जाए। इस कार्य के लिए उन्हें तीन दशकों का राजनीतिक अनुभव प्राप्त था। इसमें जापान के विरुद्ध छापामार युद्ध और क्वोमिन्तांग के विरुद्ध गृहयुद्ध के अनुभव भी शामिल थे। उन्होंने जन-समर्थन का महत्व समझा था और जन-दिशा, जन-अभियान और जन-नीति की पद्धतियों को भी सीखा था।

चीन 1949 में निर्धन और अल्पविकसित देश था। आधुनिक औद्योगिक क्षेत्र बहुत

संकुचित था और उस पर मुख्य रूप से विदेशी स्वामित्व था। लगभग 80 प्रतिशत जनता कृषि पर निर्भर थी। व्हीलराइट और ब्रूस मैकफार्लेन के शब्दों में :

> चीन का औद्योगिक आधार और मूल ढांचा 1914 में रूस के औद्योगिक ढांचे और स्वतंत्र होने पर भारत के औद्योगिक ढांचे से भी छोटा था। इसके अ[illegible]ा जो उद्योग कायम थे, उनकी हालत भी खराब थी; कृषि के उत्पादन में भारी क[illegible] हो गई थी; अल्पविकसित यातायात प्रणाली दशकों से युद्ध जारी होने की वजह से नष्ट-भ्रष्ट हो चुकी थी; और चीन आधुनिक काल की सर्वाधिक पीड़ादायक मुद्रास्फीति से ग्रस्त था।[10]

माओ त्सेतुंग की तात्कालिक रणनीति राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का इस प्रकार पुनरुद्धार करना था जिससे भविष्य में अर्थव्यवस्था के समाजवादी रूपांतरण में सुविधा हो। पहले तीन वर्षों में बैंकों, वाणिज्य, रेल मार्गों, इस्पात तथा अन्य भारी उद्योगों का राष्ट्रीकरण कर दिया गया। भूमि सुधार द्वारा जमींदारों और धनी किसानों की भूसंपत्तियों का पुनर्वितरण निर्धन किसानों में कर दिया गया। परंतु न तो उद्योग और न ही कृषि के क्षेत्र में निजी संपत्तियों का बड़े पैमाने पर अधिग्रहण किया गया।

एकमात्र अपवाद 'नौकरशाह पूंजीपतियों' के बारे में था जिनकी निजी संपत्तियों का राष्ट्रीकरण कर दिया गया। इसके विपरित राष्ट्रीय पूंजीपतियों को अनुमति दी गई कि वे अपनी संपत्तियों द्वारा उत्पादन करें। उन्हें उनके निवेशों पर ब्याज दिया जाता था और प्रबंधन और संचालन के ऊंचे वेतन भी। राज्य संयुक्त स्वामित्व में राज्य-निजी उद्योगों की स्थापना भी करता था। मशीनों के उत्पादन पर राज्य का पूर्ण स्वामित्व था।

भूमि सुधार का प्रारंभ 1949 के पहले मुक्त क्षेत्रों में किया गया और उसे 1952 तक पूर्ण कर लिया गया। पुनर्वितरण द्वारा 30 करोड़ से अधिक किसानों को अतिरिक्त भूमि का आवंटन किया गया। परंतु भूमि के समानीकरण की प्रक्रिया अभी पूरी नहीं हुई थी। मध्यम किसानों की संख्या में भारी वृद्धि हुई किंतु धनी और निर्धन किसानों का अस्तित्व भी कायम रहा। इस चरण में चीन छोटे भूस्वामी कृषकों का देश बन गया।

जनवादी सरकार का लक्ष्य भूमि का पूर्ण समानीकरण करना था परंतु इस समय इसके लिए भौतिक और राजनीतिक परिस्थितियां अनुकूल नहीं थीं। चीन में मशीनीकरण की मात्रा, वैज्ञानिक मानव-शक्ति, कुशल श्रमशक्ति और तत्संबंधी चेतना में काफी कमी थी। परंतु माओ द्वारा प्रतिपादित पुनरुद्धार की सभी नीतियां सफल रहीं।

ऐश ब्रुक के अनुसार 1952 तक चीन की अर्थव्यवस्था सामान्य हो गई। प्रशासन का भ्रष्टाचार खत्म हो गया। मुद्रा प्रणाली स्थिर हो गई और राष्ट्रव्यापी कर प्रणाली का प्रवर्तन कर दिया गया। जनवादी सरकार ने सार्वजनिक स्वास्थ्य और स्वच्छता का एक विस्तृत कार्यक्रम चलाया; और उपलब्ध भोजन तथा कपड़ों के समान और न्यायोचित वितरण का प्रबंध किया।[11]

प्रथम पंचवर्षीय योजना के लिए माओ ने सोवियत माडल का चयन किया। उनका

लक्ष्य व्यापक औद्योगिक ढांचे की आधारशिला रखना था। इसलिए 50 प्रतिशत से अधिक राशि पूंजी वस्तुओं के उद्योगों को आवंटित की गई। उपभोक्ता वस्तुओं और हलके उद्योगों की तुलना में भारी उद्योगों के विकास को प्राथमिकता दी गई। कृषि को केवल 6.2 प्रतिशत राशि दी गई। माओ त्सेतुंग ने कहा, 'सोवियत संघ से शिक्षा ग्रहण करो।'[12]

बहरहाल चीनियों ने सोवियत माडल को बहुत लचीले ढंग से लागू किया। मूल रूप में नियोजन पद्धति बहुत केंद्रीकृत थी और सभी महत्वपूर्ण लक्ष्यों का निर्धारण पेइचिंग के मंत्रालय करते थे। ये मंत्रालय ही विभिन्न उद्योगों के लिए उत्तरदायी थे। परंतु चीन जैसे विशाल और जटिल देश में इस प्रणाली ने बरबादी और अव्यवस्था को बढ़ावा दिया। इसलिए 1957 के अंत में उद्योगों पर नियंत्रण का पर्याप्त मात्रा में विकेंद्रीकरण कर दिया गया। उपभोक्ता उद्योग आम तौर पर प्रांतीय प्रशासनों को सौंप दिए गए। केंद्रीय सरकार प्रत्यक्ष रूप से पूंजी वस्तुओं के उद्योगों अर्थात मुख्यतः मशीनों के उत्पादन का नियंत्रण करती थी तथा शेष अर्थव्यवस्था की निगरानी और देखभाल करती थी।

माओ त्सेतुंग ने रूस जाकर सोवियत संघ के साथ आर्थिक सहायता के बारे में समझौता किया। अत: सोवियत संघ ने, 1953 से 1967 तक तीन पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत लगभग 300 आधुनिक औद्योगिक कारखानों की स्थापना का वचन दिया और उनके संचालन के लिए चीनी तकनीशियनों को प्रशिक्षित करने का दायित्व भी स्वीकार किया। 1960 में यह समझौता टूट गया किंतु तब तक 154 परियोजनाएं पूर्ण हो चुकी थीं। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अधिकांश लक्ष्यों को प्राप्त कर लिया गया था। इस प्रकार माओ त्सेतुंग के नेतृत्व में चीन में समाजवादी संक्रमण का कार्य पूरा हो गया था। अधिकृत आंकड़ों के अनुसार योजना काल में औद्योगिक उत्पादन में 128.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई। यह 18 प्रतिशत की औसत वार्षिक वृद्धि थी।

कृषि के क्षेत्र में माओ त्सेतुंग की रणनीति थी कि शुरू में किसानों को आपसी सहायता टीमों में संगठित किया जाए और अगले चरण में सहकारी समितियों का विकास किया जाए। 1955 के उत्तरार्ध में सहकारिता आंदोलन की गति तेज कर दी गई। माओ त्सेतुंग ने कहा :

> पिछले कुछ वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों में पूंजीवाद की स्वत:स्फूर्त शक्तियों में निरंतर वृद्धि हो रही है; सभी स्थानों पर नए धनी किसान उभरकर आ रहे हैं और अनेक खुशहाल मध्यम किसान धनी कृषक बनने का प्रयत्न कर रहे हैं। दूसरी ओर बहुत से निर्धन किसान अब भी गरीबी में जी रहे हैं क्योंकि उनके पास उत्पादन के साधनों का अभाव है।[13]

माओ त्सेतुंग ने *कृषि सहकारी संघों के प्रश्न* पर एक लेख लिखते हुए कहा :

> यदि हम कृषि सहकारी संघों की समस्या का समाधान लगभग तीन पंचवर्षीय योजनाओं के काल में नहीं करते...यदि हमारी खेती छोटे पैमाने पर कृषि से बड़े

> पैमाने पर यंत्रचालित कृषि की ओर लंबी छलांग नहीं लगाती और नई भूमि को उर्वर बनाकर उन पर राज्य द्वारा संगठित फार्म स्थापित नहीं करती, जिन पर नए आवासी मशीनों से खेती कर सकें...तो हमें अपने समाजवादी उद्योगीकरण में भयंकर कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा और हम उसे पूरा नहीं कर सकेंगे।[14]

समाजवादी संक्रमण की उपलब्धियों के बावजूद, माओ त्सेतुंग उनसे संतुष्ट नहीं थे। कृषि का विकास द्रुत गति से नहीं हो रहा था। करों की वसूली पिछले तीन वर्षों में 29.1 प्रतिशत से घटकर 25.1 प्रतिशत हो गई थी। माओ त्सेतुंग ने निश्चय किया कि वे इन समस्याओं का समाधान तीन तरीकों से करेंगे :

1. 1955-56 में कृषि सामूहिक फार्मों में तेजी से वृद्धि;
2. 1958 में कम्यून प्रणाली की स्थापना; तथा
3. 1958-59 में औद्योगिक क्षेत्र में प्रगति की लंबी छलांग।

निरंतर क्रांति का सिद्धांत

1956 के अंत में, समाजवादी रूपांतरण की प्रक्रिया पूरी हो गई और समाजवादी निर्माण का चरण प्रारंभ हुआ। चीन के साम्यवादी नेताओं के समक्ष इस समय कुछ अनुत्तरित प्रश्न थे? क्या चीन में समाजवादी रूपांतरण की गति आवश्यकता से अधिक तेज थी? समाजवादी समाज में व्यक्ति पूजा की घटना क्यों घटी? समाजवादी व्यवस्था के निर्माण में संशोधनवादी और प्रतिक्रांतिकारी प्रवृत्तियां क्यों प्रकट होती हैं? क्या समाजवादी रूपांतरण के बाद वर्ग संघर्ष समाप्त हो जाता है? निरंतर क्रांति के सिद्धांत का क्या तात्पर्य है?

इन प्रश्नों के संबंध में वरिष्ठ चीनी नेताओं के बीच गंभीर मतभेद थे। इन प्रश्नों पर माओ ने अपने चिंतन को समन्वित रूप से 27 फरवरी 1957 के उस भाषण में व्यक्त किया जो उन्होंने सर्वोच्च राज्य सम्मेलन के ग्यारहवें अधिवेशन में पढ़ा। इसका शीर्षक था *जनता के बीच के अंतर्विरोधों का सही समाधान।* माओ ने इस भाषण में समाजवादी निर्माण के मूल सिद्धांतों का विस्तृत विवेचन किया। माओ ने समाजवादी निर्माण के संदर्भ में वर्ग संघर्ष के परिदृश्य का विश्लेषण किया। उन्होंने जनता और उसके शत्रुओं के बीच उत्पन्न होने वाले अंतर्विरोधों को परिभाषित किया।

वर्ग संघर्ष के इस परिप्रेक्ष्य में माओ त्सेतुंग ने बाद में निरंतर क्रांति के सिद्धांत का प्रतिपादन किया। 1957 के प्रारंभ में माओ द्वारा अंतर्विरोधों के समाधान की पद्धति से ऐसा आभास हुआ कि पूर्वी यूरोप में जो संशोधनवादी प्रवृत्तियां उभर रही थीं, उनका चीन में निराकरण कर लिया जाएगा। इसके लिए यह आवश्यक था कि सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व में प्रतिक्रांतिकारियों के विरुद्ध निरंतर वर्ग संघर्ष चलाया जाए। निरंतर क्रांति के द्वारा ही समाजवाद को प्रतिक्रांतिकारियों के आक्रमण से बचाया जा सकता है।

चाओ यांग का कथन है, 'समाजवादी समाज का निरीक्षण करने में विपरीत तत्वों की एकता के मार्क्सवादी-लेनिनवादी नियम का पालन करते हुए चैयरमैन माओ ने अपनी महान कृति में सर्वहारा वर्ग के बीच के अंतर्विरोधों, विभिन्न वर्गों और वर्ग संघर्ष के अस्तित्व को व्यापक रूप से बताया; समाजवादी समाज में दो तरह के अंतर्विरोधों—हमारे और दुश्मन के बीच के अंतर्विरोध तथा जनता के बीच के अंतर्विरोध—के अस्तित्व का सिद्धांत प्रस्तुत किया तथा सर्वहारा के अधिनायकत्व के तहत क्रांति को निरंतर जारी रखने के महान सिद्धांत की घोषणा की।[15] माओ त्सेतुंग का मत है :

> वर्ग संघर्ष अभी समाप्त नहीं हुआ है। सर्वहारा वर्ग और पूंजीपति वर्ग के बीच का वर्ग संघर्ष, विभिन्न राजनीतिक शक्तियों के बीच का वर्ग संघर्ष तथा विचारधारा के क्षेत्र में सर्वहारा वर्ग और पूंजीपति वर्ग के बीच का संघर्ष अब भी दीर्घकालीन और विषम वर्ग संघर्ष बना रहेगा। यहां तक कि कभी-कभी वह बहुत तीक्ष्ण हो जाएगा। सर्वहारा वर्ग अपनी विश्व दृष्टि के अनुसार दुनिया को बदलना चाहता है और पूंजीपति अपनी विश्व दृष्टि के अनुसार। यह सवाल वास्तव में अभी तक तय नहीं हुआ है कि अंत में समाजवाद विजयी होगा या पूंजीवाद।[16]

राजनीतिक और आर्थिक स्तरों की तुलना में सांस्कृतिक स्तर पर पूंजीवादी प्रभाव 1957 में भी सुदृढ़ था। इसलिए माओ का अनुरोध था कि समाजवादी काल में भी वर्ग संघर्ष जारी रहना चाहिए। यही वह मूल आधार है जिस पर निरंतर क्रांति के सिद्धांत की रचना हुई है। यद्यपि माओ ने प्रतिक्रियावादियों के विरोध में इस भाषण में निरंतर क्रांति का आह्वान किया किंतु उनका निम्नलिखित वक्तव्य वर्ग संघर्ष की निरंतरता का खंडन करता है :

> समाजवादी समाज के अंतर्विरोध मूल रूप से पुराने समाजों (उदाहरणार्थ पूंजीवादी समाज) के अंतर्विरोधों से भिन्न होते हैं। पूंजीवादी समाज में अंतर्विरोधों की अभिव्यक्ति विकट शत्रुता और विरोध में, तीव्र वर्ग संघर्ष में होती है। पूंजीवादी व्यवस्था द्वारा उनका हल नहीं हो सकता बल्कि समाजवादी क्रांति ही उनका हल कर सकती है। इसके विपरीत समाजवादी समाज में व्याप्त अंतर्विरोधों की स्थिति भिन्न है। वे शत्रुतापूर्ण नहीं हैं। उनका समाधान समाजवादी व्यवस्था के अंतर्गत बारी-बारी से किया जा सकता है।[17]

माओ के अनुसार विचारधारात्मक संघर्षों का एक रूप शिक्षा का जन-अभियान था और उनका विश्वास था कि शुद्धीकरण आंदोलन, दक्षिणपंथ विरोधी अभियान अथवा समाजवादी शिक्षा आंदोलन सांस्कृतिक विकृतियों का समाधान करने में सक्षम हैं। इसलिए माओ ने इस समय तक अपने विचारधारात्मक संघर्ष को निरंतर क्रांति के सिद्धांत से समन्वित नहीं किया था।

1958 के मध्य से 1960 के अंत तक प्रगति की लंबी छलांग की अवधि में माओ त्सेतुंग की नीति को कुछ सफलताएं तो कुछ विफलताएं मिलीं। 1958 के उत्साहपूर्ण जन

उभार ने नई नीति की लोकप्रियता को सिद्ध कर दिया। परंतु 1958 के अंत तक गंभीर आर्थिक मुश्किलें सामने आने लगी थीं। दिसंबर 1958 में माओ त्सेतुंग ने लंबी छलांग की नीतियों को अधिक लचीला बनाने का प्रयास किया। पार्टी की केंद्रीय समिति ने जन-कम्यूनों की समस्या पर एक प्रस्ताव स्वीकार किया जिसमें निरंतर क्रांति का संकेत था :

> हम मानते हैं कि जनवादी क्रांति और समाजवादी क्रांति के बीच तथा समाजवाद और साम्यवाद के बीच न तो किसी 'बड़ी दीवार' का अस्तित्व है और न ही इसके अस्तित्व की अनुमति दी जा सकती है। साथ ही हम विभिन्न चरणों में क्रांति के विकास के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांत के पक्षधर हैं। हमारी यह मान्यता है कि गुणात्मक रूप से भिन्न इन चरणों के बीच मतिभ्रम नहीं होना चाहिए।[18]

चीनी अध्ययन के विशेषज्ञ मनोरंजन महंती ने निरंतर क्रांति की निम्नलिखित व्याख्या की है :

1 सत्ता में रहने के लिए पूंजीपति वर्ग आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक उपाय अपनाता है। राजनीतिक सत्ता से वंचित होने पर भी पूंजीपति वर्ग समाजवादी समाज में उसके कुछ क्षेत्रों में शक्तिशाली बना रहता है।
2. वर्ग संघर्ष क्रांतिकारी संघर्ष है। पूंजीपति वर्ग के सत्ता से च्युत होने के बाद भी इस वर्ग के साथ सर्वहारा वर्ग का संघर्ष चलता रहता है।
3. क्रांतिकारी संघर्ष को निरंतर चलाकर ही पूंजीपति वर्ग को फिर से सत्ता में आने से रोका जा सकता है। कुछ कम्युनिस्ट पार्टियां क्रांतिकारी संघर्ष को जारी रखे रहती हैं। वे कम्युनिस्ट पार्टियां बुर्जुआ वर्ग की सत्ता में वापसी को रोक सकती हैं।

निरंतर क्रांति के सिद्धांत की आनुभविक व्याख्या निम्नांकित विधि से की जा सकती है :

1. पूंजीपति वर्ग ने हंगरी और चेकोस्लावाकिया में समाजवादी व्यवस्था को उखाड़ फेंकने का प्रयास किया। सोवियत संघ की राजनीतिक और आर्थिक नीतियों में बुर्जुआ प्रवृत्तियां सक्रिय हैं। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के कुछ नेताओं द्वारा बुर्जुआ नीतियां शुरू की गईं और अमल में लाई गईं। अत: राजनीतिक और आर्थिक सत्ता से वंचित होने पर भी पूंजीपति वर्ग सांस्कृतिक क्षेत्रों और संक्रमणकालीन आर्थिक रूपों का उपयोग करता है।
2. लेनिन के नेतृत्व में क्रांतिकारी वर्ग संघर्ष के माध्यम से क्रांति जनवादी से समाजवादी अवस्था तक जारी रही। माओ के नेतृत्व में सर्वहारा वर्ग की अगुआई में जनवादी क्रांति विविध क्रांतिकारी संघर्षों के जरिए समाजवादी क्रांति की अवस्था तक जारी रही। इसलिए सर्वहारा वर्ग को क्रांतिकारी वर्ग संघर्ष तब तक चलाते रहना चाहिए जब तक साम्यवाद की अवस्था न आ जाए

> और पूंजीपति वर्ग की राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक सत्ता का स्थान पूरी तरह साम्यवाद न प्राप्त कर ले।[19]

महान लंबी छलांग

1958 तक माओ त्सेतुंग ने कम्युनिस्ट पार्टी में काफी शक्ति अर्जित कर ली थी। उन्होंने विकास की नई रणनीति तय करने के लिए पार्टी की अनेक बैठकों में वक्तव्य दिए। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि वर्ग संघर्ष 'दीर्घकालिक, जटिल और बारंबारता मूलक है।' उन्होंने 'दो भागों के बीच संघर्ष के कुछ और दौर' चलाने की आवश्यकता बताई। इन्हीं परिस्थितियों में मई 1958 में होने वाली पार्टी की आठवीं कांग्रेस की विज्ञप्ति के निम्नलिखित शब्द अर्थपूर्ण हैं :

> "अधिवेशन में शुद्धीकरण अभियान की सफलता, दक्षिणपंथियों के विरुद्ध संघर्ष की सफलता और समाजवादी निर्माण के काम में *लंबी छलांग* की नीति प्रकट हुई है। यह अपने आपमें ऐसा अधिवेशन है जिसका उद्देश्य काम की शैली में सुधार करना, अंतर्राष्ट्रीय संशोधनवाद और दक्षिणपंथ तथा पार्टी में घुस आए प्रांतीयतावादी और राष्ट्रीयवादी तत्वों का विरोध करना है। यह अधिवेशन अपने आप में एक लंबी छलांग है।[20]

दसवीं पार्टी कांग्रेस में केंद्रीय समिति की रिपोर्ट पर एक प्रस्ताव में कहा गया :

> यह कांग्रेस कामरेड माओ त्सेतुंग के प्रस्ताव पर पार्टी की केंद्रीय समिति द्वारा प्रस्तुत आम कार्य दिशा को स्वीकृति देती है। इसके अंतर्गत भरपूर प्रयास द्वारा समाजवाद का निर्माण करने और अधिक महान, श्रेष्ठतर और लाभप्रद परिणामों को द्रुत गति से प्राप्त करने के कार्यक्रम आते हैं।[21]

व्हीलराइट और मैकफार्लेन का कहना है कि अधिकांश पश्चिमी प्रेक्षकों की भ्रांतिपूर्ण धारणा है कि लंबी छलांग कम्यूनों के निर्माण तथा घर के पिछवाड़े इस्पात की भट्ठियां लगाने का मिश्रण थी। कम्यून प्रणाली का उद्देश्य कृषि क्षेत्र में समाजवाद को सुदृढ़ करना, कृषि अधिशेष की वृद्धि करना और स्थानीय कृषि और अन्य निवेश योग्य अवसरों का विस्तार करना था।

लंबी छलांग का उद्देश्य 'दो पैरों पर चलने' की नीति द्वारा द्रुत गति से औद्योगिक विकास करना भी था। इसका अर्थ था कि मध्यम, लघु और विशाल उद्योगों का एक साथ विकास किया जाए और स्वदेशी तकनीकों और आधुनिक पद्धतियों का उपयोग किया जाए। यह 'त्वरित उद्योगीकरण' का कार्यक्रम था। इसका संदर्भ कृषि क्षेत्र में समाजवाद में निहित था। यह शहरों की ओर बड़े पैमाने पर श्रम का स्थानांतरण रोकना चाहता था।[22]

जन-कम्यून न तो केवल नए प्रशासनिक केंद्र थे न ही उन्हें उद्योगों के विकेंद्रीकरण

की पद्धति मात्र माना जा सकता है। वे मुख्य रूप से कृषि क्षेत्र में समाजवाद, सामूहिक श्रम, सामूहिक जीवन-शैली, ग्रामों में नई गतिविधियों की शुरुआत के क्षेत्र में नए माओवादी प्रयोग थे। सिंचाई और नहर निर्माण के लिए और जल भंडारण के लिए कम्यून बहुत उपयोगी सिद्ध हुए। सितंबर 1958 तक 7,50,000 कृषि सहकारी संघों को 23,384 कम्यूनों में पुनर्गठित कर दिया गया जिनमें 90 प्रतिशत किसान परिवार शामिल हो गए।

माओ की महत्वाकांक्षा थी कि प्रौद्योगिक दृष्टि से अल्प-विकास के बावजूद, चीनी समाज कम्यूनों के माध्यम से समाजवाद के अंतिम (साम्यवादी) चरण में द्रुत गति से प्रवेश कर सकेगा। यह महत्वाकांक्षा कई कारणों से पूरी न हो सकी। माओ की धारणा थी कि नैतिक प्रेरक बहुत शक्तिशाली होते हैं। प्रगति की लंबी छलांग के दौरान माओ त्सेतुंग ने आर्थिक नियोजन के संबंध में दो सिद्धांतों का प्रतिपादन किया :

> पहला, कि अर्थव्यवस्था पूर्व निर्धारित ऐतिहासिक चरणों को लांघ सकती है, कि मार्क्सवाद में कोई 'डोमीनो' (28 गोटियों का एक खेल) सिद्धांत लागू नहीं होता जो यह कहे कि समाजवाद और साम्यवाद को तब तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी जब तक उत्पादक शक्तियों का एक निश्चित स्तर तक विकास न हो जाए।
>
> दूसरा, कि सामाजिक संगठन, नैतिक दृष्टिकोण और लोगों के आपसी संबंध उत्पादन स्तर की वृद्धि पर एकांगी बल देने से अधिक महत्वपूर्ण हैं।[23]

लंबी छलांग के दौरान माओवादी दावा कर रहे थे कि कम्यूनों के माध्यम से चीन शीघ्र ही साम्यवाद के लक्ष्य को प्राप्त कर लेगा। माओवादियों के अनुसार वैचारिक-नैतिक प्रेरक आर्थिक-भौतिक प्रेरको की तुलना में जनता की उत्पादक शक्ति बढ़ाने में अधिक समर्थ होते हैं। लेकिन चीनी कम्युनिस्ट पार्टी माओ के इस आदर्शवाद से पूर्णतः सहमत नहीं थी। 'जन-कम्यून संबंधी कुछ प्रश्नों के बारे में' शीर्षक एक प्रस्ताव चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की आठवीं केंद्रीय समिति के छठे प्लेनम ने 10 दिसंबर 1958 को स्वीकार किया। इसमें संक्रमण काल के चरणों के बारे में कहा गया था :

> समाजवाद से साम्यवाद में संक्रमण के संबंध में, हमें अपनी प्रगति समाजवाद के चरण पर ही नहीं रोक देनी चाहिए और न ही हमें समाजवादी चरण को छलांग लगाकर पार करने का सपना देखना चाहिए।...समाजवाद से साम्यवाद में संक्रमण उत्पादक शक्तियों के एक निश्चित विकास के स्तर पर निर्भर है। कठिन संग्राम के तीन वर्ष और ऊर्जापूर्ण कार्य के कई वर्ष देश के आर्थिक चेहरे में विशाल परिवर्तन कर सकते हैं। फिर भी मशीनीकरण की उच्चतर मात्रा को प्राप्त करने के लिए हमें लंबी यात्रा तय करनी है और उससे भी ज्यादा लंबी दूरी हमें सामाजिक उत्पादों के प्रचुर बाहुल्य तथा श्रम के घंटों के अति न्यूनीकरण को पाने के लिए पार करनी होगी। वस्तुतः इन सबके बिना मानवीय समाज के विकास के उच्चतर चरण (साम्यवाद) में प्रवेश की बात करना असंभव है।

प्रस्ताव में आगे कहा गया :

> *हमें ऐसी निराधार घोषणाएं नहीं करनी चाहिए कि जन-कम्यून 'संपूर्ण जनता के स्वामित्व की स्थापना तुरंत कर लेंगे' या 'साम्यवाद में तुरंत प्रवेश कर सकेंगे'।*[24]

हू शेंग संपादित चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अधिकृत इतिहास में लिखा है :

> 'प्रगति की लंबी छलांग' शुरू करने का प्रस्ताव पार्टी की इस इच्छा का संकेत था कि चीनी समाजवादी निर्माण के मार्ग की खोज में कुछ नई संभावनाओं का प्रयास किया जाए। इतिहास ने सिद्ध कर दिया कि यह प्रयत्न विफल हुआ। परंतु 1958 में 'प्रगति की लंबी छलांग' का प्रस्ताव तत्कालीन ऐतिहासिक विकासों की पृष्ठभूमि में किया गया था।[25]

उस समय पार्टी पर दक्षिणपंथ विरोधी संघर्ष का असर था। पार्टी ने महसूस किया कि इस संघर्ष में जीत ने समाजवादी निर्माण के लिए जनता में प्रचुर उत्साह भर दिया है। शुद्धीकरण अभियान के समय कुछ उद्योगों और ग्रामीण क्षेत्रों में द्रुत गति से उत्पादन में वृद्धि हुई थी। माओ त्सेतुंग को विश्वास था कि पार्टी में द्रुत गति से विकास के विरोधी गलती पर हैं। उन्हें प्रादेशिक और स्थानीय नेताओं ने बताया कि वे आर्थिक क्षेत्र में अधिक, द्रुततर और बहुमुखी विकास के पक्षधर हैं।

परंतु हू शेंग का कहना है कि लंबी छलांग का प्रस्ताव पार्टी के ऐतिहासिक अनुभवों के प्रतिकूल था और उसने माओ त्सेतुंग की व्यक्ति पूजा को बढ़ावा दिया :

> नए सुझावों ने वास्तव में पार्टी और जनता के सफल अनुभवों की उपेक्षा कर दी। आर्थिक पुनरुद्धार और प्रथम पंचवर्षीय योजना के क्रियान्वयन से प्राप्त सभी अनुभवों को नकार दिया गया। कार्य का आधार यथार्थ से विच्छिन्न कल्पना और उत्साह बन गया।...नए सुझावों ने वस्तुतः पार्टी की केंद्रीय समिति के सामूहिक अनुभव और विवेक की भी अवहेलना कर दी और सामूहिक नेतृत्व के सिद्धांत और पार्टी के लोकतांत्रिक केंद्रवाद का नाश कर दिया। इस प्रकार, व्यक्तिगत स्वेच्छाचारी निर्णयों और व्यक्ति पूजा की प्रवृत्ति का विस्तार हुआ।[26]

1959–61 में चीन में दुर्भिक्षों, बाढ़ों और महामारियों का प्रकोप हुआ। डाली एल. यांग के शब्दों में माओ त्सेतुंग की लंबी छलांग दुर्भिक्ष की छलांग बन गई :

> माओ की कृषि दृष्टि लंबी छलांग के उत्साह में अपने शिखर पर पहुंच गई, परंतु शीघ्र ही वह गहरी पीड़ा की घाटियों में गिर गई। प्रगति की लंबी छलांग की पहल करने में माओ और उनके सहकर्मी कितनी भी सदिच्छा से प्रेरित क्यों न रहे हों, वे निश्चित रूप से विश्व इतिहास के सबसे भयानक दुर्भिक्ष की घटना के लिए अंशतः दोषी थे। नरक का रास्ता सदिच्छाओं से भरा हुआ है।[27]

सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति

1966 से 1976 तक का दशक आधुनिक चीन के इतिहास में सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति का समय है। यह क्रांति को निरंतर जारी प्रक्रिया के रूप में देखने की माओवादी संकल्पना के अनुकूल थी। इस संकल्पना का केंद्रीय विचार यह है कि वर्तमान परिस्थिति की निरंतर समीक्षा द्वारा पूर्ववर्ती शोषक वर्गों को पुन: सत्ता में आने से रोकने के लिए निरंतर वर्ग संघर्ष तथा 'विचारधारात्मक सुधार' और 'शुद्धीकरण अभियान' चलाने की आवश्यकता है।

सांस्कृतिक क्रांति के पूर्व इनके उदाहरण थे :1930 के दशक के भूमि सत्यापन आंदोलन, 1940 के दशक का शुद्धीकरण आंदोलन, 1950 का बुद्धिजीवियों के बीच विचारधारात्मक सुधार अभियान, 1951 का भ्रष्टाचार, बरबादी और नौकरशाही के विरुद्ध आंदोलन, 1952 का रिश्वत, करों की चोरी, धोखाधड़ी, सरकारी संपत्ति की चोरी और राज्य के गोपनीय आर्थिक तथ्यों की चोरी के विरुद्ध आंदोलन और 1957 का नौकरशाही के विरुद्ध नया शुद्धीकरण अभियान।

माओ त्सेतुंग को विश्वास था कि समाजवादी समाज को अनेक अंतर्विरोध और विकार विरासत के रूप में अपने पूर्ववर्ती पूंजीवादी समाज से, और चीन के दृष्टांत में, सामंतवाद से भी प्राप्त होते हैं। साम्यवाद समतावादी सामाजिक प्रणाली चाहता है और राज्य तथा वर्गों का उन्मूलन करना चाहता है। परंतु पूंजीवाद से साम्यवाद में संक्रमण द्रुत गति से नहीं हो सकता।

1966 में चीनी समाजवादी समाज में भी अनेक अंतर्विरोध थे और अनेक असमानताएं थीं। मानसिक और शारीरिक श्रम के बीच भेदभाव था। बुद्धिजीवी निर्देश देते थे, श्रमजीवी इन निर्देशों के अनुसार श्रम करते थे। विशेषज्ञों और अकुशल श्रमिकों के बीच में गहरी खाई थी। विश्वविद्यालय विज्ञान और श्रम के बीच में विभेदीकरण का औचित्य स्थापित करते थे। कला और साहित्य विकृतियां और विषमताओं का पोषण करते थे।

पूंजीवादी और सामंतवादी समाजों में संस्कृति उच्चतर वर्ग का विशेपाधिकार होती है। समाजवादी क्रांति अधोरचना के स्तर पर होती है। वह अधिरचना में तात्कालिक परिवर्तन नहीं कर पाती। सत्ता से च्युत शोषक वर्ग संस्कृति को अपना रक्षा कवच बना लेते हैं। माओ त्सेतुंग के अनुसार सांस्कृतिक क्रांति की आवश्यकता और औचित्य इसी गंभीर तथ्य में अंतर्निहित है। पूंजीवाद से साम्यवाद के बीच लंबा ऐतिहासिक संक्रमण काल होता है। इस काल में पूंजीपति वर्ग अवशिष्ट आर्थिक विशेषाधिकारों और संस्कृति पर अपने नियंत्रण के माध्यम से पुन: राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने का प्रयास करेगा। अत: सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति भी वर्ग संघर्ष है, जिसके द्वारा श्रमिक वर्ग पूंजीपति वर्ग को पुन: सत्ता में आने से रोकता है। ऐसी सांस्कृतिक क्रांति की संक्रमण काल में एक बार नहीं, अनेक बार आवश्यकता पड़ेगी। ज्यां दौबिए का कथन है :

> परंतु राज्य का अस्तित्व एक अन्य विषमता को कायम रखता है, अर्थात शासकों और शासतों के बीच।....यह प्रवृत्ति कम्युनिस्ट पार्टी और राज्य के कुछ तत्वों में मौजूद रह सकती है जिनमें व्यक्तिवाद और अहंवाद के दुर्गुण पाए जाते हैं। यदि यह बढ़ती है तो उसके विरुद्ध संघर्ष प्रमुख संग्राम का रूप ले सकता है क्योंकि यह प्रशासनिक और राजनीतिक ढांचे के अंतर्गत लड़ा जाता है। इसलिए यह राज्य की सत्ता को प्रत्यक्ष रूप से सलंग्न कर लेता है।[28]

इस संदर्भ में माओ त्सेतुंग की सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति बिलकुल तर्कसंगत मार्क्सवादी कोशिश थी। इस क्रांति का उद्देश्य तात्कालिक चीन के प्रशासनिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक अधिरचना में मौलिक परिवर्तन लाना था। इसलिए हमें 'सांस्कृतिक क्रांति' को उसके व्यापकतम स्वरूप में ग्रहण करना चाहिए अर्थात यह सभ्यता में समाहित उसके त्रिविध अंगों पर लागू होती थी।

सर्वप्रथम यह उच्च शिक्षा के अभिजन स्वरूप का अंत करना चाहती थी। वह बौद्धिक वर्ग के दंभ और श्रमजीवियों के प्रति उनके तिरस्कार की भावना का दमन करना चाहती थी। सांस्कृतिक क्रांति द्वारा माओ त्सेतुंग चाहते थे कि क्रांतिकारी और सर्वहारा मूल्यों पर आधारित नवीन साहित्य और नूतन कला का सृजन किया जाए। इस संदर्भ में पेइचिंग ओपेरा (संगीत नाटिका) की माओ द्वारा तीव्र आलोचना का दृष्टांत महत्वपूर्ण है। अतः ज्यां दौबिए का मत है :

> सांस्कृतिक क्रांति का केंद्रबिंदु शासकों और उनके द्वारा शासित लोगों के बीच का, सत्तासंपन्न लोगों और जनता के बीच का, संबंध है। माओ त्सेतुंग ने बल देकर कहा कि यह राजनीतिक क्रांति है और उसके विकास के काल में समाचारपत्र निरंतर कहते रहे कि यह आधारभूत प्रश्न है। यह अंतर्निहित पहलू स्वयं ऐतिहासिक घटनाओं में अभिव्यक्त हुआ।[29]

सांस्कृतिक क्रांति ने वर्ग संघर्ष की आवश्यकता को रेखांकित किया और सर्वहारा वर्ग तथा जनता को उसमें योगदान देने के लिए प्रेरित किया। इसका केंद्रबिंदु संशोधनवाद के विरुद्ध संघर्ष को तेज करना था। 16 मई 1966 को प्रसारित एक पत्र में माओ त्सेतुंग ने ल्यू शाओछी और तंग श्याओफिंग द्वारा संचालित 'सांस्कृतिक क्रांति' के अभियान की निंदा की। केंद्रीय समिति के ग्यारहवें अधिवेशन ने सांस्कृतिक क्रांति के बारे में सोलह-सूत्री निर्णय किया जिसमें सिद्धांत, रणनीति और कार्यदिशा को निर्धारित किया गया।

माओ ने कहा, किसी भी राजसत्ता को उखाड़ फेंकने के लिए हमेशा यह बात जरूरी होती है कि सबसे पहले जनमत तैयार किया जाए और विचारधारा के क्षेत्र में काम किया जाए। यह क्रांतिकारी वर्ग और प्रतिक्रांतिकारी वर्ग दोनों के लिए सही है।[30] माओ त्सेतुंग का मत था कि ल्यू शाओछी और पेंग चेन जैसे संशोधनवादियों ने सर्वहारा विरोधी नीतियों और विचारों को प्रोत्साहन देने के लिए अपने पदों का प्रयोग किया था।

कुछ लोगों को आश्चर्य हो सकता है कि माओ ने सांस्कृतिक क्रांति को बुर्जुआजी और सर्वहारा वर्ग के बीच का वर्ग संघर्ष क्यों बताया। कम्युनिस्ट शासन ने लगभग दो दशक पूर्व क्रांति के फलस्वरूप बुर्जुआ वर्ग का विध्वंस कर दिया था और उसे राजनीतिक और आर्थिक सत्ता से वंचित कर दिया था। इस संबंध में ज्यां दौबिए की टिप्पणी है :

> यह कथन मिथ्या है यदि इसका तात्पर्य परंपरागत चीनी बुर्जुआ वर्ग से हो जो वस्तुत: अपने पूर्ववर्ती अस्तित्व की छाया मात्र रह गया था। फिर भी इस वक्तव्य की सचाई महसूस की जा सकती है अगर इसका अभिप्राय उस नव-बुर्जुआ वर्ग से हो जिसने विषमताओं की निरंतर उपस्थिति के कारण विशेषाधिकारों को प्राप्त कर लिया है और उन्हें बढ़ाने का वे प्रयास कर रहे हैं। माओ के क्रांतिकारी विचारों के विरुद्ध यही नव-बुर्जुआ वर्ग अपने हितों की रक्षा के लिए स्वयं अपने राजनीतिक विचारों को लादने का प्रयत्न कर रहा था।[31]

माओ त्सेतुंग का कार्य इस बात से और अधिक कठिन और जटिल हो गया कि प्रतिक्रांतिकारी बुर्जुआ तत्व पार्टी के शीर्षस्थ पदों पर, कम्युनिस्ट पार्टी के संपूर्ण संगठन में, राज्य के महत्वपूर्ण पदों पर, और प्रचार माध्यमों में कार्यरत थे। अत: माओ के लिए आवश्यक हो गया कि वे राष्ट्रीय स्तर पर छात्रों, युवकों, श्रमिकों और साधारण जनों का आह्वान करें कि वे पूरी लगन और ऊर्जा के साथ पहले ऐसे नेताओं और काडरों की पहचान करें जो रूढ़िवादी, नौकरशाही और जन विरोधी प्रवृत्तियों से प्रेरित नीतियों का अनुसरण करते हैं और फिर उनके विरुद्ध अभियान और आंदोलन प्रारंभ करें।

सांस्कृतिक क्रांति का एक पहलू चीनी-सोवियत संघर्ष में निहित है। माओ की दृष्टि में ख्रुश्चेव के स्तालिन विरोधी कार्यक्रम का एक अत्यंत विनाशकारी पक्ष भी था। चीनी कम्युनिस्टों की धारणा थी कि इस अभियान द्वारा ख्रुश्चेव ने सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व तथा अन्य मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांतों का परित्याग कर दिया है। माओ के अनुसार सोवियत संघ में एकाधिकारी नौकरशाही पूंजीवाद की स्थापना हो गई थी जिसका अंत सोवियत संघ में पूर्ण पूंजीवादी प्रणाली की वापसी में होना था।

माओ त्सेतुंग की दृष्टि में ख्रुश्चेववाद न केवल सोवियत संघ के लिए बल्कि समाजवादी चीन के लिए भारी विपत्ति का संकेत था। माओ ने चीनी गणराज्य के अध्यक्ष ल्यू शाओछी को 'चीन के ख्रुश्चेव' की पदवी दी थी। माओ के अनुसार वे एक प्रतिक्रांतिकारी गुट के सहयोग से चीन में ख्रुश्चेव-समर्थक संशोधनवादियों की सत्ता स्थापित करने का प्रयास कर रहे थे। अत: सांस्कृतिक क्रांति द्वारा माओ सोवियत संशोधनवादियों द्वारा चीन पर प्रभुत्व स्थापित करने के संभावित प्रयास के विरुद्ध भी संघर्ष कर रहे थे।

राष्ट्रव्यापी अराजकता?

1966 में चीन ने राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का सफलतापूर्वक पुनर्गठन कर लिया था और सभी

आर्थिक मुश्किलों को हल कर लिया था। तीसरी पंचवर्षीय योजना शुरू हो गई थी। तंग श्याओफिंग की विचारधारा से प्रेरित चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास में बताया गया है : 'बस इसी समय सांस्कृतिक क्रांति' घटित हुई। उस समय इसे 'सांस्कृतिक क्रांति' का नाम दिया गया लेकिन यह क्रांति थी ही नहीं।' इसी इतिहास में आगे लिखा है :

> इस तथाकथित 'महान क्रांति' का प्रारंभ और नेतृत्व माओ त्सेतुंग ने पूंजीवाद की वापसी को रोकने के लिए, पार्टी की शुद्धता कायम रखने के लिए और चीन का अपना समाजवादी रास्ता खोजने के लिए किया। परंतु उन्होंने यह नहीं समझा कि समाजवादी चरण में वर्ग संघर्ष का विस्तार करना गलत है, और उन्होंने पार्टी तथा राज्य की परिस्थिति का गलत मूल्यांकन किया।...उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण सैद्धांतिक मुद्दों और नीतियों के बारे में भ्रांतिपूर्ण निर्णय किए। फलत: वे शत्रुओं और मित्रों में भेद न कर सके, उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि पार्टी के केंद्रीय प्राधिकरणों में संशोधनवाद व्याप्त है और पार्टी तथा राज्य में पूंजीवाद की पुन: संस्थापना का खतरा है।

हू शेंग संपादित इतिहास का निष्कर्ष है कि सांस्कृतिक क्रांति 'वास्तव में आंतरिक अव्यवस्था थी, जिसने चीनी समाजवाद के विकास को बहुत हानि पहुंचाई।'[32] माओ त्सेतुंग ने सांस्कृतिक क्रांति के अवसर पर ल्यू शाओछी, पेंग चेन इत्यादि नेताओं के साथ तंग श्याओफिंग को भी 'पूंजीवादमार्गी' बताया था किंतु सेनाध्यक्ष लिन प्याओ, जिन्होंने पहले माओ का साथ दिया किंतु बाद में माओ की हत्या का असफल प्रयास किया, के पतन के बाद माओ ने तंग को क्षमा कर दिया। 1976 में चीन के तीन बड़े नेताओं, चोउ एनलाई, चू तेह और माओ त्सेतुंग की मृत्यु हो गई।

उनके पश्चात तंग श्याओफिंग ने चीनी गणतंत्र और कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व संभाला। उन्होंने माओ की सांस्कृतिक क्रांति के दस वर्षों को राष्ट्रव्यापी अराजकता का युग बताया। तंग के अनुसार माओ का यह संदेह और आरोप निराधार था कि पार्टी के केंद्रीय प्राधिकरणों पर तथाकथित पूंजीवादमार्गियों ने कब्जा कर लिया था। माओ ने अपनी इस 'अराजक-क्रांति' को 'सांस्कृतिक' केवल इसलिए कहा क्योंकि उसकी शुरुआत पेइचिंग ओपेरा *हाई रुई की पद से बरखास्तगी* से हुई थी और प्रारंभ में माओवादियों ने शिक्षा पद्धति, साहित्यिक शैली और कलात्मक विधाओं को अपनी आलोचना का निशाना बनाया था।

स्वयं माओ त्सेतुंग ने स्वीकार किया था कि उनकी यह क्रांति बुनियादी रूप से राजनीतिक क्रांति थी। हू शेंग तथा त्सोंग ह्वाईवेन का कहना है कि चूंकि माओ त्सेतुंग ने परिस्थिति का सही आकलन नहीं किया और गलत नीतियों, पद्धतियों और सिद्धांतों को लागू करने की चेष्टा की, इसलिए परिणाम भी उनकी इच्छा के अनुकूल नहीं हुए बल्कि उन्होंने लिन प्याओ और च्यांग छिंग को षड्यंत्र करने के लिए उपयुक्त अवसर प्रदान किए।

लिन प्याओ, चेन पोता, च्यांग छिंग इत्यादि एक ओर अपने षड्यंत्र रच रहे थे, दूसरी

और उन्होंने माओ का रूपांतरण पूजा की प्रतिमा में कर दिया था। लिन प्याओ ने सेना के प्रेस में माओ के उद्धरणों को संकलित कर 'छोटी लाल किताब' छपाई जिसका लाल रक्षकों ने संपूर्ण देश में वितरण किया। लिन प्याओ ने माओ को आगामी विश्व क्रांति का सर्वोच्च नेता बताया। ये नीतियां माओपंथियों के 'वाम' अवसरवाद और विचलन को अभिव्यक्त करती थीं। इसके बारे में हू शेंग का कहना है :

> इन पदोन्नतिवादियों ने पार्टी की केंद्रीय समिति में अपनी शक्ति का उपयोग 'क्रांति' के लाल झंडे को फहराने के लिए किया और व्यक्ति पूजा में अंध श्रद्धा दिखाई....उन्होंने अवसरवादियों, दुस्साहसियों और भ्रष्टाचारियों के एक गुट को उत्तेजित कर और उनके साथ षड्यंत्र रचकर जनता में उन्माद फैलाया और 'पार्टी समितियों को लात मारकर अपनी क्रांति की।' इसने 'सब कुछ मुरदाबाद' का अबाधित, अराजकतावादी ज्वार उठाया और राज्य को तथा सामान्य रूप से सामाजिक व्यवस्था को अपार क्षति पहुंचाई। चीन में जनवादी गणतंत्र की स्थापना के बाद समाजवाद के उद्देश्यों को इसके कारण सर्वाधिक क्षति पहुंची।[33]

उधर माओ त्सेतुंग को विश्वास था कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी में संशोधनवादियों का वर्चस्व स्थापित हो गया है। उन्होंने एक वार्ता में वियतनाम के नेता हो ची मिन्ह से कहा :

> हम सब की आयु सत्तर वर्ष से ज्यादा है। मार्क्स कभी भी हमें अपने पास बुला सकते हैं। इस धरती पर हमारा उत्तराधिकारी कौन होगा? बर्नस्टाइन, या काउत्स्की, या ख्रुश्चेव? कोई नहीं जानता। इसलिए समय रहते हमें इसकी तैयारी कर लेनी चाहिए।[34]

इसके बाद माओ त्सेतुंग ने चेन पोता की अध्यक्षता में च्यांग छिंग, कांग शेंग तथा चांग चनुछियाओ का एक विशिष्ट ग्रुप बनाया जो 'सांस्कृतिक क्रांति' का मुख्यालय बन गया। लाल रक्षकों का देशव्यापी आंदोलन शुरू हो गया और माओ के नेतृत्व में इस विशिष्ट ग्रुप ने लाल रक्षकों को आदेश दिया कि वे जिन सांस्कृतिक, शैक्षणिक, शासकीय और औद्योगिक संस्थानों को सामंती, बुर्जुआ और संशाधनवादी समझते हैं, उन पर आक्रमण करें और उनसे जुड़े नेताओं और व्यक्तियों को लांछित और प्रताड़ित करें।

कम्युनिस्ट पार्टी की समितियों और राज्य संस्थानों के सदस्यों को 'दुष्टों का गिरोह', 'बुर्जुआजी के प्रतिनिधि', 'प्रतिक्रियावादी प्राधिकरण' और 'प्रतिक्रांतिकारी संशोधनवादी' बताया गया। उन्हें आलोचना, अपमान, मारपीट और दमन का शिकार बनाया गया और उनके घरों की तलाशी ली गई। अक्तूबर 1966 की केंद्रीय समिति की बैठक में ल्यू शाओछी और तंग श्याओफिंग के बारे में कहा गया कि वे 'जनता के दमन और सक्रिय क्रांतिकारियों पर आक्रमण की प्रतिक्रियावादी बुर्जुआ लाइन' का अनुसरण कर रहे हैं।

हू शेंग के अनुसार इसके बाद संपूर्ण चीन में, स्कूलों और कारखानों में, पार्टी और सरकारी दफ्तरों में, लाल रक्षकों ने क्रांतिकारी उद्दंडता दिखाई। माओ ने अपनी पत्नी च्यांग

छिंग को 8 जुलाई के पत्र में लिखा :

> व्यापक अव्यवस्था के माध्यम से ही देश में व्यवस्था स्थापित हो सकती है। इससे सिद्ध होता है कि जनता आंदोलन में पूर्णतः सक्रिय हो गई है। क्रांति ने शत्रु को अव्यवस्थित कर दिया और जनता को संयमी बना दिया।[35]

यह माओ का द्वंद्वात्मक चिंतन था। हान सूयिन का मत है :

> यद्यपि यह सच है कि इस विप्लव काल में त्रुटियां और उग्रताएं दिखाई पड़ीं, किंतु कुछ वर्षों के बाद संभवतः अधिक वस्तुपरक दृष्टिकोण से सांस्कृतिक क्रांति का पुनर्मूल्यांकन किया जाएगा और उसे चीन में समाजवाद के लिए सर्वाधिक सार्थक कदम माना जाएगा।...यह प्रशासकीय और पार्टी संगठनों के लिए ऐसा माडल विकसित कर सकता है जो विश्व के सभी क्रांतिकारी आंदोलनों को प्रभावित करने में सक्षम हो।[36]

स्वयं माओ त्सेतुंग का सांस्कृतिक क्रांति के बारे में निष्कर्ष था :

> सांस्कृतिक क्रांति ने ल्यू शाओछी, पेंग, लो, लू और यांग को निष्कासित कर दिया। यह बहुत बड़ी उपलब्धि थी। कुछ क्षतियां भी उठानी पड़ीं। कुछ अच्छे काडरों का पुनरोदय अभी नहीं हो सका है। हमारे काडरों की विशाल बहुसंख्या अच्छी है। बुरे लोग बहुत अल्प संख्या में हैं।...हमारा सिद्धांत है कि हम 'अतीत की त्रुटियों से सीख लेकर भविष्य में उनसे बचें' और 'बीमारी का इलाज करके बीमार को बचाएं।' एकजुट होकर हमें और भी बड़ी जीतें प्राप्त करनी हैं।[37]

एडगर स्नो हू शेंग के मत से बिलकुल असहमत हैं :

> माओ के चिंतन ने 1970 तक संपूर्ण राष्ट्र को इन उद्देश्यों से अनुप्राणित कर दिया था : शहर और गांव के बीच भेदों को तेजी से खत्म करना; मजदूर, किसान, सैनिक, काडर, और तकनीकी-विशेषज्ञ के भौतिक और सांस्कृतिक स्तरों और अवसरों की समानता बढ़ाना, प्रत्येक की शिक्षा और जीवन के अनुभव में कार्य और कक्षा में तालमेल; बुद्धिजीवियों और सरकारी अधिकारियों में बुर्जुआ विचारों और उनके अवशेषों का विनाश, छात्रों और श्रमिकों को एकजुट कर और श्रम के अभ्यास को कक्षा के सिद्धांत से जोड़कर उच्चतर शिक्षा का सर्वहाराकरण; सार्वजनिक स्वास्थ्य और चिकित्सा सेवाओं को ग्रामीण जनता तक पहुंचाना; प्रत्येक नागरिक को सैनिक शिक्षा देना और सेना से शिक्षा ग्रहण करना; देश-विदेश में, सुशिक्षित और सर्वतोमुखी प्रतिभा वाले युवकों की एक ऐसी पीढ़ी का सृजन करना जो जनसेवा के आदर्शों से प्रेरणा ले, निजी संपत्ति के प्रति तिरस्कार का भाव रखे और 'ऐसी विश्व दृष्टि के लिए समर्पित हो जो क्षुधा, लोभ, अज्ञान, युद्ध और पूंजीवाद से अंतिम मुक्ति में विश्वास रखती हो।'[38]

जनता और कम्युनिस्ट पार्टी

प्रत्येक क्रांतिकारी की भांति माओ के लिए भी केंद्रीय समस्या यह थी कि समाज के मौलिक रूपांतरण के लिए प्रभावशाली नेतृत्व और व्यापक जन भागीदारी के बीच तालमेल किस तरह बैठाया जाए। लेनिन के शिष्य के रूप में वे इस दुविधा को लोकतांत्रिक केंद्रवाद की संकल्पना द्वारा प्रस्तुत करते हैं, लेकिन उनके प्रतिपादन की कुछ विशेषताएं हैं जो क्रांति के प्रति उनके रुख को मौलिक बना देती हैं।

माओ इस संकल्पना को केवल पार्टी या राज्य की संरचना तक सीमित नहीं रखते बल्कि चीनी समाज की भावना तथा नेताओं और जनता के संबंधों पर भी लागू करते हैं। यह तथ्य लेनिन और माओ के चिंतन के बीच अंतर को प्रकट करता है। लेनिन जनता की स्वत:स्फूर्त प्रवृत्तियों में अविश्वास करते थे जब तक उन पर पार्टी का नियंत्रण न हो। लेनिनवादी होने के बावजूद माओ जनसमुदाय के स्वत:स्फूर्त कार्यों में अधिक विश्वास करते हैं। यह विचार समाज में अशांति भी उत्पन्न कर सकता है जैसा सांस्कृतिक क्रांति में हुआ लेकिन अंतिम विश्लेषण में जनता के सृजनात्मक उभार और आंदोलन को शक्ति भी प्रदान करता है।

माओ त्सेतुंग ने इस संकल्पना की व्याख्या 30 जनवरी 1962 को 7,000 पार्टी काडरों को संबोधित करते हुए की थी। इस भाषण में माओ ने केंद्रवाद की तुलना में लोकतंत्र को प्राथमिकता दी : 'लोकतंत्र के बिना किसी प्रकार का सही केंद्रवाद नहीं हो सकता क्योंकि लोगों के विचारों में अंतर होता है, और यदि चीजों की उनकी समझ में एकता नहीं है, तो केंद्रवाद स्थापित नहीं किया जा सकता।'[39] केंद्रवाद सर्वप्रथम सही विचारों का केंद्रीकरण है।

चीन में यह काल संकट का था। प्रगति की लंबी छलांग दुर्भिक्ष तथा अन्य प्राकृतिक आपादाओं में बदल गई थी। माओ चाहते थे कि पार्टी के काडर लोगों को निडर होकर बोलने का मौका दें। परंतु बीस साल पहले 1942 में माओ पार्टी की एकता के लिए अधिक चिंतित थे तो उन्होंने कहा था, 'कम्युनिस्ट पार्टी को न केवल लोकतंत्र की जरूरत है, बल्कि केंद्रवाद की उससे भी अधिक जरूरत है।' उस समय माओ जापान विरोधी संघर्ष तथा क्वोमिन्तांग विरोधी रक्षात्मक अभियान के लिए संपूर्ण पार्टी काडरों और नेताओं को एकजुट करना चाहते थे। 1973 में सांस्कृतिक क्रांति के अनुभव के बाद माओ ने पार्टी के नए संविधान में इन शब्दों को शामिल किया :

> हमें ऐसा राजनीतिक माहौल बनाना चाहिए जिसमें केंद्रवाद और लोकतंत्र, अनुशासन और आजादी, उद्देश्य की एकता और व्यक्ति के लिए मन की शांति दोनों उपलब्ध हों।[40]

यह सच है कि माओ के नेतृत्व में इसका पूर्णत: पालन नहीं हुआ परंतु इसे कपट नहीं माना जा सकता। इन समस्याओं में माओ की दिलचस्पी का एक और उदाहरण माओ द्वारा

नौकरशाही प्रवृत्ति की तीव्र आलोचना है। परंतु इसे भी छल कहकर इसकी व्याख्या पार्टी में प्रतिद्वंद्वी नेतृत्व से बदले के रूप में की जा सकती है। सांस्कृतिक क्रांति से दस वर्ष पहले माओ ने इस संबंध में अप्रैल 1956 में 'दस महान सुझावों' का प्रतिपादन किया था। नौकरशाही प्रवृत्ति पर अंकुश लगाने के लिए माओ का सुझाव था कि पार्टी और राज्य के शासनांगों में दो-तिहाई नौकरशाहों की छंटनी कर देनी चाहिए। चोउ एनलाई ने बताया कि सांस्कृतिक क्रांति के दौरान पेइचिंग में 80 प्रतिशत नौकरशाहों की छुट्टी कर दी गई, हालांकि उनमें कुछ को प्रांतीय या जनपदीय स्तरों पर नियुक्त कर दिया गया।

जनवरी 1962 में 7,000 काडरों के सम्मेलन में भी माओ ने नौकरशाहों के विस्तार की ही नहीं उनके दुर्व्यवहार और अहंकार की भी तीव्र आलोचना की। उन्होंने कहा, तुम्हारे बीच में जो...लोगों को बोलने नहीं देते, जो सोचते हैं कि वे शेर हैं और उनके गुप्तांग के बालों को कोई छू नहीं सकता...वे असफल होंगे। लोग फिर भी बातें करेंगे। तुम समझते हो कि तुम जैसे चीतों के गुप्तांग के बालों को हाथ लगाने की कोई हिम्मत नहीं करेगा? मूर्खों, लोग तो यही करेंगे। इसी बात को नरम शब्दों में माओ ने दोहराया :

> लोगों को बोलने दो। इससे आसमान नहीं टूटेगा और न तुम्हें पद से हटाया जाएगा। यदि तुम दूसरों को बोलने नहीं दोगे, तो वह दिन अवश्य आएगा जब तुम्हें निकाल बाहर कर दिया जाएगा।[41]

1966-69 में माओ त्सेतुंग ने स्वयं जन-विप्लव को उत्तेजित किया और प्रारंभिक चरणों में लगा कि वे अराजकता को बढ़ावा दे रहे हैं, और पार्टी तथा राज्य की नौकरशाही में अपने प्रतिद्वंद्वियों को कमजोर करने की कोशिश में लगे हुए हैं। स्टुअर्ट श्रैम की स्वीकारोक्ति है : 'अंत में बहुत से लोगों (जिनमें मैं भी शामिल था) की कल्पना के विपरीत, वे लेनिनवाद के बुनियादी सिद्धांतों के प्रति लगभग सुदृढ़ रूप से प्रतिबद्ध रहे।' माओ ने लाल रक्षकों को नारा दिया था, 'विद्रोह करना सर्वथा उचित है।' यह उन्हें पार्टी और राज्य के खिलाफ असीमित हिंसा की प्रेरणा देता था। माओ ने सफाई से इसे बदल दिया, 'प्रतिक्रियावादियों के विरुद्ध ही विद्रोह उचित है[42]' अतः आत्म-अभिव्यक्ति के रूप में विद्रोह का कोई औचित्य नहीं। यह उचित तभी है जब यह राजनीतिक रूप से सही ध्येयों के लिए किया जाए।

यदि माओ त्सेतुंग काडरों और जनसमुदाय के बीच की खाई को पाटना चाहते थे तो केवल इसलिए नहीं कि वे नौकरशाही से लड़ रहे थे बल्कि वे समझते थे कि चीन में समाजवाद के उत्कर्ष के लिए प्रत्येक व्यक्ति की ऊर्जा अपेक्षित है। माओ की आस्था में, सामाजिक परिवर्तन के लिए इस ऊर्जा के समुचित उपयोग के संबंध में कुछ विचार अंतर्निहित हैं, जिनके आधार पर जनसमुदाय को अपनी भूमिका निभाने के लिए शिक्षित किया जा सकता है।

शिक्षा, संस्कृति और क्रांति

दिसंबर 1970 में माओ ने एडगर स्नो को बताया कि सांस्कृतिक क्रांति के शुरुआती दौर में जनता ने उन्हें चार उपाधियां दी थीं...महान नेता, महान शिक्षक, महान सर्वोच्च सेनापति, महान राष्ट्राध्यक्ष। वे चाहते थे कि उनका स्मरण सिर्फ एक शिक्षक के रूप में किया जाए।[43] माओ ने अपना जीवन चांगशा मे स्कूल अध्यापक के रूप में शुरू किया था। क्रांति के बारे में उनके चिंतन में शिक्षा की भूमिका का विशेष महत्व है क्योंकि इसी उपकरण द्वारा नए मनुष्यों का सृजन किया जाता है।

उनका कहना था कि नई शिक्षा में रटंत विद्या, शास्त्र विद्या, शिष्य पर गुरु की सत्ता, व्यवहार-शून्यता, उत्पादन से अलगाव, अभिजनवाद और वर्ग संघर्ष के नकार की कोई जगह नहीं हो सकती। शिक्षा का ध्येय चीनी जनमानस के परंपरागत विचारों को और सामंती-बुर्जुआ समाज से प्राप्त आदतों को बदलना है। अत: शिक्षा प्रणाली और राजनीतिक क्रांति, आर्थिक क्रांति तथा सांस्कृतिक क्रांति के बीच चोली-दामन का साथ है।

परंतु किताबी शिक्षा में माओ को अधिक विश्वास नहीं था :

> हमें बहुत ज्यादा किताबें नहीं पढ़नी चाहिए। हमें मार्क्सवादी पुस्तकों को पढ़ना चाहिए, किंतु बहुत अधिक नहीं।...यदि हम बहुत किताबें पढ़ेंगे तो हम किताबी कीड़े, मताग्रही और संशोधनवादी बन जाएंगे।[44]

माओ द्वारा विद्या की प्रतिमा के पारंपरिक पूजन के परित्याग का संबंध वृद्धावस्था की अपेक्षा युवावस्था के गौरव में विश्वास से है। माओ ने कहा, 'समग्र चीनी क्रांतिकारी आंदोलन का स्रोत युवा छात्रों और बुद्धिजीवियों के कार्य में निहित है।' 1958 में माओ के शब्द थे :

> प्राचीन काल से चिंतन के नवीन संप्रदायों का सृजन सदैव युवाओं ने किया जो बहुत विद्वान नहीं थे। कन्फ्यूशियस ने तेईस वर्ष की आयु में अपना चिंतन शुरू किया; और ईसा मसीह का ज्ञान कितना था?...मार्क्स भी बहुत युवा थे जब उन्होंने द्वंद्वात्मक भौतिकवाद का सृजन किया। उन्होंने भी अपने ज्ञान का विस्तार बाद में किया।...जब युवा लोग किसी सत्य को समझ लेते हैं तो वे अजेय हो जाते हैं, और वृद्ध लोग उनका मुकाबला नहीं कर सकते।[45]

1966 में माओ त्सेतुंग ने अपने भतीजे को विनम्रतापूर्वक बताया :

> पहले मैं प्राइमरी स्कूल का प्रिंसिपल और मिडिल स्कूल का शिक्षक था। अब मैं केंद्रीय समिति का सदस्य हूं और पहले मैं क्वोमिन्तांग के एक विभाग का प्रधान था। लेकिन जब मैं ग्रामीण क्षेत्रों में गया और कुछ वक्त किसानों के साथ बिताया, तो मैं उनके ज्ञान के भंडार को देखकर चौंक गया। मैंने महसूस किया कि उनकी जानकारी बहुत विशाल थी और मैं उनकी बराबरी नहीं कर सकता बल्कि मुझे उनसे बहुत कुछ

> सीखना था।...तुम तो केंद्रीय समिति के सदस्य भी नहीं हो, क्या हो? तब तुम्हारा ज्ञान किसानों से बढ़कर कैसे हो सकता है?[46]

इस विचार की तार्किक पराकाष्ठा माओ के दिसंबर 1968 के उस आदेश में दिखाई दी, जिसमें उन्होंने कहा कि शिक्षित युवकों को ग्रामीण क्षेत्रों में 'गरीब और निम्न-मध्यम किसानों द्वारा पुनः शिक्षा प्राप्त करने के लिए' भेजना चाहिए। माओ का यह दृढ़ विचार था कि युवाओं की शिक्षा को वर्ग संघर्ष और उत्पादन से जोड़ना चाहिए। माओ ने कन्फ्यूशियन परंपरा की शिक्षा की निंदा वर्गीय आधार पर की और कहा कि उसमें उद्योग और कृषि की कोई चर्चा नहीं है।

माओ त्सेतुंग ने कहा कि शिक्षकों को अपने ज्ञान को रहस्य नहीं बनाना चाहिए और छात्रों को स्वाध्याय के लिए प्रेरित करना चाहिए। शैक्षिक सुधार की समस्या मुख्यतः शिक्षकों की समस्या है। उन्हें चाहिए कि वे विद्वान-नौकरशाहों के दृष्टिकोण और मिथ्या अहंकार को त्यागने का प्रयास करें। 1964 में उन्होंने अपने भतीजे माओ युआन शिन से कहा कि 'वर्ग संघर्ष तुम्हारे अध्ययन का अनिवार्य विषय होना चाहिए।'[47] जब तक 'तुम वर्ग संघर्ष को नहीं समझते, तुम्हें विश्वविद्यालय का स्नातक नहीं माना जा सकता।' उन्होंने आगे कहा, 'मैं तो हरे-भरे जंगलों की यूनिवर्सिटी का स्नातक हूं। मैंने वहीं कुछ सीखा था।'[48]

'हरे जंगल' सभी देशों में बागियों की शिक्षा भूमि होते हैं। माओ का अभिप्राय यहां च्यांग्शी और युन्नान के छापामार युद्ध और किसानों के वर्ग संघर्ष से है। माओ का तात्पर्य है कि वास्तविक शिक्षा जीवन के क्रांतिकारी अनुभवों से प्राप्त होती है। माओ त्सेतुंग का मत है :

> जब वर्ग संघर्ष घटित होता है, तभी दर्शन की संभावना हो सकती है। आचरण के बिना ज्ञानशास्त्र पर बहस करना समय नष्ट करना है।...उत्पीड़क उत्पीड़ितों का उत्पीड़न करते हैं। उत्पीड़ितों के लिए जरूरी है कि वे पहले संघर्ष करें और मुक्ति का रास्ता निकालें और उसके बाद ही वे दर्शन की ओर देखना शुरू कर सकते हैं। इसलिए जब लोगों ने इस संघर्ष को अपना प्रस्थान बिंदु बनाया, तभी मार्क्सवाद-लेनिनवाद आया और उन्होंने दर्शन को खोज लिया। हमने इसका स्वयं अनुभव किया है। अन्य लोग मुझे मारना चाहते थे, च्यांग काई शेक भी मुझे मारना चाहता था। इसलिए हम वर्ग संघर्ष में जुट गए और दार्शनिक चिंतन करने लगे।[49]

विकास का द्वंद्ववाद

प्रायः कहा जाता है कि चीनी क्रांति का सोवियत माडल से अंतर किसानों की भूमिका की प्रकृति और महत्व में निहित है और यह अंतर माओ त्सेतुंग के सिद्धांतों में दिखाई पड़ता

है। परंतु शहरों और गांवों के बीच के द्वंद्ववाद को हमें उन सभी अंतर्विरोधों के परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए जो समाज और विश्व के बारे में माओ की दृष्टि में अंतर्निहित हैं।

अप्रैल 1956 में 'दस महान संबंधों पर' अपने भाषण में माओ ने दस अंतर्विरोधों की चर्चा की जो चीनी अर्थव्यवस्था और शासन प्रणाली के चरित्र को तय करते थे। परंतु यह सूची चीन के आर्थिक विकास के सभी पहलुओं का स्पर्श नहीं करती। सामाजिक परिवर्तन की कुछ अन्य समस्याओं की चर्चा माओ ने 20 मार्च 1958 को चेंगतू में की जिसमें उन्होंने श्रम-सघन नीति और मशीनीकरण के बीच तथा समाजवादी रूपांतरण में 'सोच-विचार' और 'जल्दबाजी' के बीच तनाव का उल्लेख किया।

हम माओ के राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक चिंतन की व्याख्या में उनके द्वंद्ववादी दर्शन की उपेक्षा नहीं कर सकते। उनके चेंगतू भाषण से स्पष्ट है कि माओ की सोच में अमूर्त संकल्पनाओं और मूर्त नीतियों के बीच घनिष्ठ संबंध था। यह खेती के औजारों से शुरू हुआ और मानव तथा विश्व के भविष्य के बारे में माओ के विचारों के साथ समाप्त हुआ। इसके विपरीत, अगस्त 1964 के भाषण में वे दर्शन का विवेचन चीनी क्रांति के इतिहास के दृष्टांतों द्वारा करते हैं।

अंतर्विरोधों की व्याख्या में माओ परिघटना के चरित्र का वर्णन ऐसे विपरीतों की एकता और संघर्ष के रूप में करते हैं जो एक दूसरे में रूपांतरित हो सकते हैं। इस विचार का विवेचन उनके लेख *आन कंट्राडिक्शन* के पांचवें पैराग्राफ में हुआ है।[50] कुछ आलोचकों का मत है कि माओ का विवेचन शुद्ध लेनिनवादी नहीं है क्योंकि उसमें बौद्ध और ताओ द्वंद्ववाद के अंश हैं। चीनी चिंतन के विवेचन में उनकी सार्थकता है। वे विकास और ह्रास के द्वंद्व का प्रतिपादन करते हैं जिसमें मार्क्स-लेनिन के उद्देश्यपूर्ण अग्रगामी रूपांतरण के लिए कोई जगह नहीं है। माओ 'नकार' के 'नकार' की हीगेलवादी धारणा को नहीं मानते क्योंकि उनके अनुसार हर एक 'नया नकार' एक स्वीकार ही है।

इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि माओ के द्वंद्ववाद में मार्क्सवादी-लेनिनवादी तत्व प्रधान नहीं हैं। उनकी प्रधानता के बावजूद, माओ द्वंद्ववाद की भारतीय-चीनी (बौद्ध-ताओ) परंपरा से प्रभावित है। नहीं तो वे यह नहीं कहते कि साम्यवादी (राज्यविहीन और वर्गहीन) समाज के बाद उससे भी श्रेष्ठतर समाज की स्थापना हो सकती है या मानव जाति के विनाश के बाद घोड़े या अन्य पशु-पक्षी किसी अन्य सभ्यता की शुरुआत करेंगे, जो संभवतः हमारी सभ्यता से अधिक प्रगतिशील होगी। तथाकथित प्रलय के विचार से डरने की जरूरत नहीं क्योंकि वह किसी नए युग की शुरुआत या 'निर्वाण' की दशा हो सकती है। संभव है माओ की ये व्यंग्योक्तियां हों परंतु स्टुअर्ट श्रैम के अनुसार वे चीनी दर्शन के प्रभाव को प्रकट करती हैं।[51]

माओ की नीति तथा नेतृत्व की शैली पर चीनी द्वंद्ववाद का असर है। वे कहते हैं, 'बसंत और ग्रीष्म के तत्व शरद और शीत ऋतुओं में अंतर्निहित हैं।' ताओवादी द्वंद्ववाद में प्रकृति की *लय* का महत्व है। माओ आर्थिक विकास में द्वंद्ववाद को लागू कर उत्पादन की सही *लय* 'द्रुत' और 'मंद' के विपरीतों की एकता द्वारा प्राप्त करना चाहते थे। मार्च

1958 में वे गृहयुद्ध के अनुभवों में द्वंद्व की परिकल्पना करते हैं...युद्ध की भी *लय* होती है जो 'घनघोर रण' और 'विश्राम तथा सुदृढ़ीकरण' के विपरीतों की एकता में दिखाई पड़ती है।

'द्रुत' और 'विलंबित' लयों की द्वंद्वतादी संकल्पना आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं के माओवादी समाधानों में सन्निहित है। 'प्रगति की लंबी छलांग' के बारे में माओ ने कहा कि अभी इसमें दस तूफानों का वेग है लेकिन शीघ्र ही यह शांत आकाश में विलीन भी हो जा सकता है। उन्होंने 'यथार्थवाद' और 'रोमांसवाद', 'परिश्रम और स्वप्न' की एकता का उल्लेख भी किया। माओ के चिंतन में द्वंद्ववाद के मुख्य दृष्टांत हैं...नगरों और ग्रामों का संघर्ष और सामंजस्य, आधुनिक और परंपरागत चीनी प्रौद्योगिकियों का वैपरीत्य और समन्वय।

पश्चिमी प्रेक्षकों ने रूसी और चीनी क्रांतियों के बीच जिस अंतर को रेखांकित किया स्वयं माओ ने उसका उल्लेख इन शब्दों में किया : 'रूस में क्रांति नगरों से शुरू होकर ग्रामों में विकसित हुई किंतु हमारे देश में यह ग्रामों से शुरू होकर नगरों में विकसित हुई।'[52] लेकिन मार्च 1949 में माओ ने घोषणा की कि अब चीन के नगर ग्रामीण क्षेत्रों का नेतृत्व करेंगे।[53] परंतु माओ त्सेतुंग ली ताचाओ से सीखी हुई 'लोकवादी' (कृषकवादी) मानसिकता से कभी अपने को पूर्णत: मुक्त नहीं कर सके।

सांस्कृतिक क्रांति में लाल रक्षकों से पहले माओ ने कहा कि किसानों से सीखो; फिर छात्रों से कहा कि लाल सेना के सैनिकों (वरदीधारी किसानों) से सीखो; और अंत में उन्होंने कहा कि शंघाई के मजदूरों से सीखो। माओ यहां कन्फ्यूशियन पूर्वग्रह से कि मानसिक श्रम शारीरिक श्रम से श्रेष्ठतर है और मार्क्सवादी विचार से कि मजदूर की क्रांतिकारिता किसान की विप्लवी प्रकृति से उच्चतर है, समान रूप से संघर्ष कर रहे थे।

माओ त्सेतुंग फ्रांसीसी किसानों के बारे में मार्क्स की उक्ति को चीन के लिए सार्थक नहीं मानते कि किसान सिर्फ 'बोरी में भरे हुए आलू' हैं जो 'ग्रामीण मूर्खता' में डूबे हुए हैं। 1926 में माओ ने कहा था कि चीनी किसान चीनी सैनिकों से अधिक क्रांतिकारी हैं। यह संभवत: तात्कालिक विचलन था क्योंकि माओ मार्क्स और लेनिन के निष्ठावान शिष्य भी हैं और कहते हैं कि क्रांति में सर्वहारा नेतृत्व आवश्यक है।

मार्च 1958 में उन्होंने 'दो पैरों पर चलने' की कार्यदिशा का प्रतिपादन किया अर्थात चीनी और आधुनिक तकनीकों का तालमेल किया जाए। उन्होंने कहा कि करोड़ों चीनी किसान अपने कंधों पर सामान ढोते हैं। यदि इस प्रथा को समाप्त कर वे सामान को लाने-ले जाने के लिए किसी यंत्रचालित वाहन का उपयोग करने लगें तो यह चीनी समाज के लिए महान तकनीकी क्रांति होगी। यह परिवर्तन कृषि के मशीनीकरण को प्रोत्साहन देगा और श्रम की कुशलता बढ़ाएगा। आर्थिक विकास की दिशा में लंबी छलांग का यह एक उदाहरण होगा। इस संबंध में स्टुअर्ट श्रैम का मत है :

माओ की दृष्टि में आर्थिक विकास वक्र और ऊर्ध्वगामी प्रक्रिया है जिसमें भौतिक

और मानवीय संसाधनों में क्रमिक वृद्धियां एक दूसरे को जोड़ती हैं और मजबूत करती हैं तथा इनके द्वारा निरंतर अग्रगामी परिवर्तन होता जाता है। आर्थिक समस्याओं पर उनके परिप्रेक्ष्य का धरातल बहुत विस्तृत है जिसमें राजनीतिक आंदोलन और राजनीतिक परिवर्तन दोनों उद्योगीकरण की पूर्वशर्त और सहगामी कारकों के रूप में शामिल हैं। विपरीतों के युगल उनकी समझ के अनुसार विकास के द्वंद्ववाद में शामिल हैं। इनका संबंध केवल आर्थिक क्रियाओं की गति और पद्धति से ही नहीं बल्कि अन्य चीजों से भी है; जैसे केंद्र और प्रांतों से, या राज्य और उत्पादन की इकाइयों से। ये युगल समग्र सामाजिक प्रयास में केंद्रीय नियंत्रण और अनुशासन के मुकाबले जमीनी भागीदारी और उत्साह बढ़ाने में काम आते हैं।[54]

आधुनीकीकरण और राष्ट्रीय गौरव

माओ त्सेतुंग के अनुसार चीनी समाज के आधुनिकीकरण और उसके गरिमापूर्ण राष्ट्रीय इतिहास के बीच भी द्वंद्वात्मक संबंध है। यह द्वंद्व न केवल चीनी प्रौद्योगिकी और पश्चिमी प्रौद्योगिकी के बीच है, बल्कि चीनी और पश्चिमी विचारों और परंपराओं के बीच भी है। माओ इस बात को स्वीकार नहीं करते कि अनेक कारकों की जटिल अंत:क्रिया में प्रगति और विकास के प्रेरक सदैव नगरों में निहित होते हैं। यह दृष्टिकोण माओ के इस दृढ़ विश्वास पर आधारित है कि चीनियों को यह नहीं समझना चाहिए कि वे विदेशियों के मुकाबले हीन हैं।

यही माओ के उस विद्रोह का केंद्रबिंदु है, जो उन्होंने न केवल सोवियत प्रभुत्व के विरुद्ध शुरू किया बल्कि मार्क्सवाद की समग्र यूरोप केंद्रित तर्क-पद्धति के खिलाफ भी किया। देनकौसे और श्रैम के अनुसार मार्क्स के लिए स्थिर और पिछड़े एशियाई समाजों की मुक्ति केवल उनके *यूरोपीकरण* द्वारा संभव है। लगभग ऐसे ही विचार पूर्वी देशों के बारे में लेनिन और अन्य रूसी कम्युनिस्टों ने अभिव्यक्त किए हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि मार्क्स और लेनिन नस्लवादी थे। उनका यह विचार कि यूरोप विकास के मामले में एशिया का मार्गदर्शन करे, दो धारणाओं पर आधारित था। उनकी मान्यता थी कि यूरोप में ही आधुनिक औद्योगिक श्रमिक वर्ग का अस्तित्व है और यह कि यूरोपीय पद्धति ही एशिया में द्रुत गति से उद्योगीकरण का रास्ता खोलकर एशियाई सर्वहारा वर्ग का निर्माण कर सकती है।[55]

इसका तात्पर्य था कि विश्व क्रांति का नेतृत्व यूरोप ही कर सकता है। 1917 के बाद नेतृत्व का अधिकर मास्को को मिल गया। दुर्भाग्य से यह अस्थायी व्यावहारिक निष्कर्ष यूरोप की तुलना में एशिया की हीनता की भावना को जन्म देता है। माओ के अनुसार लेनिन के उत्तराधिकारियों ने इस मानसिकता को अपना लिया था। दिसंबर 1970 में माओ ने एडगर स्नो को बताया कि रूसी 'चीनियों और अन्य बहुत से देशों के लोगों को हीनता की दृष्टि से देखते हैं।'[56] परंतु माओ इस विषय में एशियाई, विशेषत: चीनी संस्कृति की

हीनता के सिद्धांत या उस पर आधारित व्यावहारिक निष्कर्षों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे।

लेकिन माओ चीन के आर्थिक पिछड़ेपन और इस दशा से जुड़ी विशाल समस्याओं से अवगत थे। जनवरी 1958 में माओ ने कहा : 'हम कहते हैं कि हमारे देश की जनसंख्या, भूभाग, संसाधन आदि विशाल हैं और चार हजार वर्ष पुरानी हमारी संस्कृति और इतिहास है... हमने इसके बारे में बहुत डींगें हांकी हैं लेकिन हम बेल्जियम जैसे देश से भी अपनी तुलना नहीं कर सकते।' परंतु उन्हें विश्वास था कि चीन अपनी प्रतिभा और ऊर्जा से इन दुर्बलताओं को दूर कर सकता है :

> हमारा देश एक परमाणु की तरह है...जब इस परमाणु के केंद्र का विध्वंस करो तो जो तपन ऊर्जा उत्पन्न होगी उसमें वास्तव में अपार शक्ति होगी। हम उन चीजों को कर सकेंगे जो पहले नहीं कर सकते थे...हम प्रति वर्ष चार करोड़ टन इस्पात का उत्पादन करेंगे।[57] मार्च 1958 में माओ ने कहा कि चीन को सोवियत और विदेशी अनुभवों से सीखना चाहिए परंतु 'सीखने के दो तरीके हैं; सिर्फ नकल करना या सृजनात्मक भावना से उसे लागू करना। सोवियत पद्धतियों और परंपराओं का हूबहू आयात करने का अर्थ सृजनात्मक भावना का अभाव है।'[58] माओ का मत है कि चीन को समाजवाद के निर्माण के लिए मौलिक मार्ग चुनना चाहिए। श्रैम के अनुसार इस दृष्टि में न तो अलगाव की भावना थी और न ही नस्लवाद की।

अगस्त 1956 में माओ ने संगीतकारों की सभा में कहा था :

> कुछ लोग कहते हैं कि 'चीनी विद्या और शिक्षा सार तत्व है, और पाश्चात्य विद्या तथा शिक्षा व्यावहारिक प्रयोग के लिए है!' यह सही है या गलत? निश्चित रूप से यह गलत है। 'ज्ञान' शब्द का तात्पर्य मूल सिद्धांत से है।...मार्क्सवाद एक मूल सिद्धांत है, जिसकी उत्पत्ति पश्चिम में हुई। तो हम इस संबंध में चीनी और विदेशी का विभेद कैसे कर सकते हैं?[59]

इसका तात्पर्य यह नहीं कि माओ पश्चिमी और सोवियत मार्क्सवाद को चीन में हूबहू अपनाने के पक्षधर थे। बहुत पहले 1938 में ही उन्होंने 'मार्क्सवाद के चीनीकरण' की धारणा व्यक्त की थी। फिर भी माओ मानते रहे कि मार्क्सवाद एक सार्वभौम सिद्धांत है जो प्रत्येक देश की स्थिति और संस्कृति के अनुकूल है।

1960 के दशक में माओ के इस विचार में परिवर्तन हुआ। चीनी-सोवियत कलह के बाद, माओ ने 'समाजवाद के विशिष्ट चीनी मार्ग' के सिद्धांत का प्रतिपादन किया। वे पारंपरिक चीनी संस्कृति के अनेक पहलुओं और अंशों का सकारात्मक मूल्यांकन करने लगे। उन्होंने कहा कि कन्फ्यूशियस के चिंतन में अपने समय के हिसाब ये अनेक लोकतांत्रिक तत्व थे जिन्हें बाद के भाष्यकारों ने सामंतवादी व्याख्या के जरिए दूषित कर दिया।[60]

दिसंबर 1965 में माओ त्सेतुंग ने अगस्त 1956 के अपने विचार बिलकुल उलट दिए। उन्होंने कहा :

> छिंग राजवंश के अंत में कुछ लोगों का कहना था, 'चीनी ज्ञान सार-तत्व है, और पश्चिमी ज्ञान व्यवहार के लिए है'। सार-तत्व सामान्य दिशा की भांति है, जिसे बदला नहीं जा सकता। हम पश्चिमी ज्ञान को सार-तत्व के रूप में ग्रहण नहीं कर सकते और न हम लोकतांत्रिक गणराज्य का सारांश ही ले सकते हैं। हम न 'प्राकृतिक मानवाधिकारों' का उपयोग कर सकते हैं और न ही 'विकास के सिद्धांत' का।[61]

माओ के मत में यह बुनियादी परिवर्तन मार्क्सवाद के प्रति उनके बदले हुए मूल्यांकन की अभिव्यक्ति था। 1965 में वह माओ के लिए सार्वभौम, अपरिवर्तनीय 'मौलिक सिद्धांत' नहीं रह गया था, बल्कि वह भी पश्चिम के अनेक योगदानों में से एक था, जिसका आलोचनात्मक परीक्षण जरूरी था। चीन के लिए एकमात्र उपयोगी आयात पाश्चात्य प्रौद्योगिकी का ही हो सकता था।

साम्राज्यवाद और सामाजिक साम्राज्यवाद

1969 में नई केंद्रीय समिति को माओ ने सोवियत नेताओं के विषय में बताया, 'वे हमें निम्न बुर्जुआ वर्ग की पार्टी' कहते हैं। हम...कहते हैं कि वे बुर्जुआ अधिनायकवादी हैं और बुर्जुआ वर्ग की तानाशाही वापस ला रहे हैं।[62] श्रैम के अनुसार माओ का सोवियत नेताओं में अविश्वास 1958 के मध्य से शुरू हुआ न कि 1956 के स्तालिन विरोधी अभियान से। 10 मार्च 1958 को माओ ने अपने भाषण में कहा :

> जब स्तालिन की आलोचना की गई तो हम एक ओर प्रसन्न थे किंतु दूसरी ओर शंकालु भी। आवरण उठाना, अंधविश्वास को तोड़ना, दबाव से मुक्त करना और चिंतन को स्वतंत्र करना बहुत आवश्यक था। परंतु हम एक ही प्रहार में मारना उन्हें नहीं चाहते थे।[63]

माओ के अनुसार स्तालिन ने चीनी क्रांति के बारे में गलतियां की थीं। वे नहीं चाहते थे कि *हम 1945 में क्रांति करें।*

माओ ने कहा कि बुद्ध की प्रतिमाएं विशाल इसलिए होती हैं ताकि लोग उनसे भयभीत हों। चीनी कलाकार चित्रों में स्तालिन को माओ की अपेक्षा लंबे कद का दिखाते थे हालांकि वास्तव में वे छोटे कद के थे। माओ के अनुसार मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और *स्तालिन के सही पक्ष की पूजा उचित थी। परंतु स्तालिन के दोषों की आलोचना आवश्यक* थी। स्तालिन की समीक्षा से माओ का आत्मबल बढ़ा और सिद्धांतकार और रणनीतिकार के रूप में वे स्वयं अपना और चीनी क्रांति का मूल्यांकन बढ़ा-चढ़ाकर करने लगे।

1962 में माओ ने समाजवादी शिविर की संकल्पना त्याग दी। 1956 में माओ को

कोरिया में अमरीकी साम्राज्यवाद से युद्ध की स्मृति थी और उन्होंने चीनी जनता से इस घृणित साम्राज्यवाद के प्रति सचेत रहने के लिए कहा। 1958 में भी अमरीकी और जापानी साम्राज्यवाद चीनी जनता के प्रमुख शत्रु थे। 1959 में वे चीन में सोवियत हस्तक्षेप के प्रति अधिक चिंतित दिखाई पड़े। सितंबर 1962 में भी संपूर्ण विश्व और साम्राज्यवाद के बीच का अंतर्विरोध माओ की दृष्टि में मुख्य अंतर्विरोध था। 7,000 काडरों के सम्मेलन में माओ ने कहा कि वे सहअस्तित्व के आधार पर 'कम्युनिस्ट विरोधी, जन विरोधी साम्राज्यवादियों और प्रतिक्रियावादियों' के साथ राजनयिक संबंध स्थापित करने के लिए तैयार है, परंतु यह 'सभी देशों की जनता के साथ एकजुट होने' की नीति से बिलकुल भिन्न चीज होगी।

उसके तुरंत बाद माओ ने कहना शुरू किया कि विश्व में मुख्य अंतर्विरोध चीनी जनता समेत विश्व की जनता तथा 'साम्राज्यवाद' और 'सामाजिक साम्राज्यवाद' के बीच है। 'सोवियत सामाजिक साम्राज्यवाद' का उल्लेख 1968 में चेकोस्लोवाकिया पर सोवियत आक्रमण और ब्रेजनेव सिद्धांत की घोषणा के बाद जोर-शोर से शुरू हो गया। दो वर्ष पहले 1966 में माओ ने 'सांस्कृतिक क्रांति' के दो शत्रुओं में पहला नाम 'अमरीकी साम्राज्यवादियों' का और दूसरा नाम 'सोवियत संशोधनवादियों' का लिया था। माओ की दृष्टि में ये संशोधनवादी अब 'सामाजिक साम्राज्यवादियों' में रूपांतरित हो चुके थे।

वस्तुत: 7,000 काडरों की कानफ्रेंस में माओ त्सेतुंग ने पहली बार सोवियत संघ में 'संशोधनवादी' नेतृत्व के उन्मूलन का आह्वान किया। 1969 में उन्होंने व्यंग्यपूर्वक कहा, 'सोवियत संशोधनवादी कहते हैं कि चीन में सैनिक तंत्रीय-नौकरशाही प्रणाली स्थापित है।... जब वे देखते हैं कि हमारे अधिकारियों की सूची में बहुत लोग सेना से हैं तो वे हमें 'सैन्यवादी' कहते हैं। मैं समझता हूं कि नौकरशाही से उनका अभिप्राय मुझसे, चोउ एनलाई, कांग शेंग और चेन पोता से है। संक्षेप में, जो सैनिक वर्ग से नहीं हैं, वे सब नौकरशाही तंत्र के प्रतिनिधि हैं। इसलिए वे हमें सैनिक तंत्रीय-प्रशासकीय अधिनायक तंत्र का सामूहिक नाम देते हैं।'[64]

परिवर्तन और निडरता

माओ के जीवन के अंतिम वर्षों में चोउ एनलाई और तंग श्याओफिंग के समर्थकों तथा उग्र वामपंथी शंघाई रैडीकलों (जिनका नेतृत्व माओ की पत्नी च्यांग छिंग करती थी) के बीच तीखा ध्रुवीकरण हो गया। इन दोनों गुटों के बीच मौलिक मतभेद सांस्कृतिक क्रांति के अनुभव और उसकी विरासत पर केंद्रित थे। च्यांग छिंग और उसके साथी सांस्कृतिक क्रांति के समय समाजवादी समाज में बुर्जुआ और सर्वहारा वर्गों के बीच वर्ग संघर्ष पर विशेष बल देते थे और पूंजीवाद की पुन: स्थापना के खतरों से सावधान रहने का आह्वान करते थे।

वामपंथी उग्रवादियों की नीति थी कि विकास स्वदेशी अर्थनीति और प्रौद्योगिकी द्वारा

होना चाहिए। समूहीकरण का स्तर ऊंचा होना चाहिए, नैतिक प्रेरकों का उपयोग किया जाना चाहिए, और शिक्षा प्रणाली कार्य-अध्ययन के संयोजन और राजनीतिक विशेषताओं पर आधारित होनी चाहिए। तंग श्याओफिंग और उनके दक्षिणपंथी समर्थक माओवादियों की नीतियों में व्यापक परिवर्तन और सुधार करना चाहते थे। वे वर्ग और वर्ग संघर्ष के विचारों को चीनी अर्थव्यवस्था के विकास में बाधक समझते थे।[65]

इस काल में माओ त्सेतुंग की नीति व्यवहार में सुधारवादियों के अप्रत्यक्ष समर्थन और नरम आर्थिक नीतियों की उग्र वामपंथियों द्वारा कठोर शाब्दिक आलोचना को प्रोत्साहन देने की थी। माओ की अस्पष्ट भूमिका के कारण इन मतभेदों का कोई समाधान नहीं निकल रहा था बल्कि उनकी तीव्रता बढ़ती जा रही थी। वेतनों की स्तर प्रणाली और भौतिक प्रेरकों की आवश्यकता को अर्थव्यवस्था के विकास के लिए माओ ने स्वीकार कर लिया था लेकिन दूसरी ओर उनके संरक्षण में उग्र वामपंथी इन सुधारों के विरोध में प्रचार भी कर रहे थे।

'बुर्जुआ अधिकारों को सीमित करो' और 'सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व सुदृढ़ करो' के दो अभियान 1975-76 में चीनी संचार माध्यम ने जोर-शोर से चलाए। माओ के संरक्षण में इन अभियानों ने सुधारवादियों की आर्थिक नीतियों के औचित्य को चुनौती दी और उन्हें विचारधारा की दृष्टि से संदेहास्पद आर्थिक कार्यनीतियों बताया।

अत: 1970 के दशक के अंतिम वर्षों में तंग श्याओफिंग चेन युन नेतृत्व का मुख्य लक्ष्य दक्षिणपंथी नीतियों पर लगे विचारधारात्मक कलंक को दूर करना था और इसके लिए आवश्यक था कि निरंतर क्रांति और पूंजीवाद की पुन: स्थापना के सिद्धांतों को खारिज कर दिया जाए। इसलिए वर्ग संघर्ष और वर्ग पर 1978 के विवाद व्यवहार और समाजवाद के विकास की बहस से और आगे बढ़े। उनका ध्येय नीतिगत परिवर्तनों का औचित्य सिद्ध करना ही नहीं था बल्कि इन परिवर्तनों के अभिकर्ताओं (सुधारवादी नेताओं और पेशेवर बुद्धिजीवियों) को वैधता प्रदान करना भी था क्योंकि माओवादियों ने उन्हें 'पूंजीवाद-मार्गी' और 'बदबूदार नौवां संवर्ग' कहकर उनकी भर्त्सना की थी। इसके बारे में कल्पना मिश्र का कहना है :

> माओ के विपरीत, तंग श्याओफिंग ने बल देकर कहा कि असमान उत्पादक क्षमता और श्रम योगदान के अनुसार श्रमिकों को असमान वेतन देने का परिणाम सामाजिक ध्रुवीकरण न होकर 'सामान्य समृद्धि' होगा। 'औचित्यपूर्ण विषमताओं' के पक्ष में सुधारवादियों ने युक्ति प्रस्तुत की कि कार्य के अनुसार वितरण न करने का नतीजा यह हुआ कि परिश्रमी मजदूरों का शोषण अकर्मण्य मजदूर करने लगे।[66]

माओ अपने क्रांतिकारी साथियों से अकसर पूछते थे, तुमने कभी सावधानी से सोचा है कि समाजवाद का साम्यवाद में रूपांतरण किस प्रकार होगा?[67] माओ के लिए शुद्ध रूप से यह निश्चित करना आवश्यक था कि निरंतर फैलती हुई सामाजिक-आर्थिक विषमताएं आखिर हमें वर्गविहीन, राज्यविहीन समाज की दिशा में कैसे ले जा सकेंगी। परंतु उनके सुधारवादी

साथी विचारधारा संबंधी इन संदेहों को अप्रासंगिक कहकर टाल देते थे। माओ के उत्तराधिकारियों का तर्क था :

> दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य में मानसिक और शारीरिक श्रम के बीच का भेदभाव क्रमश: कम हो जाएगा। परंतु विशेष काल और परिस्थितियों में यह कुछ समय के लिए बढ़ भी सकता है। मानसिक और शारीरिक श्रम के भेदों को स्वीकार करना और कायम रखना भी उन स्थितियों को उत्पन्न करने का उपाय है जो इन भेदों का अंत में खात्मा कर देंगी।[68]

उत्तर-माओ चीन में 'दीर्घकालिक' निरंतर दूर खिसकता हुआ क्षितिज है। माओ के उत्तराधिकारी कार्य के अनुसार वितरण को समाजवाद के अनुकूल घोषित करते हैं लेकिन तंग श्याओफिंग के चीन में सार्वजनिक स्वामित्व (जो समाजवाद का मूल सिद्धांत है) निरंतर घट रहा है। तंगवादी लेखक राजनीति या विचारधारा के आधार पर वर्गों के माओवादी विभाजन को भी चुनौती दे रहे हैं। उन्होंने उत्पादन प्रणाली के आर्थिक कारकों को वर्गों की परिभाषा का एकमात्र आधार बताया है।

आर्थिक कारकों को वर्गीय पहचान के लिए निर्णायक बताकर तंग श्याओफिंग ने उन सभी नेताओं और काडरों को पुन: अपने पदों पर नियुक्त कर दिया जिन्हें 'पूंजीवाद-मार्गी' कहकर माओवादियों ने निष्कासित कर दिया था। माओ की पत्नी च्यांग छिंग समेत न केवल 'चार के गिरोह' को बल्कि हजारों 'वामपंथियों' और 'सांस्कृतिक क्रांतिकारियों' को कारागार में डाल दिया गया।

मार्च 1979 में तंग श्याओफिंग ने 'चार मूलभूत सिद्धांतों' पर अपने भाषण में पार्टी के अंतर्गत 'बुर्जुआजी' के अस्तित्व की संभावना से साफ इनकार कर दिया और कहा कि शोषण के खात्मे के बाद भविष्य में भी समाजवादी समाज में शोषक वर्गों का अभ्युदय असंभव है। जो माओवादी काल में प्रताड़ित हुए थे उन व्यक्तियों के लिए वर्ग की माओवादी परिभाषा की आलोचना करना स्वाभाविक है :

> बहरहाल वर्ग के माओवादी दृष्टिकोण में आदर्शवाद या मनमानापन का सैद्धांतिक आधार स्थापित करना मार्क्सवादी परंपरा की मान्यताओं के संदर्भ में कठिन है।...मार्क्स की परिभाषा आर्थिक सीमा में वर्ग को देखने का समर्थन नहीं करती।...मार्क्स ने आर्थिक निर्धारक के साथ ही राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक विशेषताओं को शामिल किया था।...मार्क्स ने...बुद्धिजीवियों को 'वैचारिक वर्ग' कहा था और वित्तीय पूंजीपतियों तथा औद्योगिक पूजीपतियों को भी 'दो भिन्न वर्ग' कहा था।[69]

अत: कल्पना मिश्र का निष्कर्ष है :

> बुद्धिजीवियों, पार्टी के सदस्यों, राज्य के प्रशासकों, कालेज के छात्रों, काडरों की संतान इत्यादि में माओ का अविश्वास मार्क्सवादी विश्लेषण की परंपरा में है। कुछ व्यक्तियों की पूंजीवाद-मार्गी या 'बुर्जुआजी' के रूप में पहचान सैद्धांतिक दृष्टि से

> सही थी क्योंकि जिन 'सामाजिक समूहों' के वर्ग का अनुमान उत्पादन के साधनों के आधार पर नहीं लगाया जा सकता उनके वर्गीय स्तर का अनुमान केवल उनकी विचारधारात्मक और राजनीतिक निष्ठा द्वारा ही लगाया जा सकता है। इसी प्रकार वर्ग के आचरण और अभिव्यक्ति पर माओ का आग्रह...'पिछड़ने' की मार्क्सवादी संकल्पना के अनुकल था। इस संकल्पना के मुताबिक संस्थागत और वैचारिक अधिरचना उत्पादन प्रणाली के विकास से 'पिछड़कर' दोनों के बीच विषम संबंध पैदा कर सामाजिक प्रगति को अवरुद्ध करती है।[70]

तंग श्याओपिंग 'चीनी विशेषताओं से युक्त समाजवाद' का निर्माण करना चाहते थे परंतु वर्तमान चीन में कृषि और उद्योगों का व्यापक निजीकरण हुआ है, विदेशी पूंजी के नियंत्रण में चौदह विशेष क्षेत्र स्थापित हैं, सार्वजनिक स्वामित्व का निरंतर ह्रास हुआ है, मुनाफा कमाना वैध हुआ है और उपभोक्तावाद का उत्कर्ष हो रहा है। सकल राष्ट्रीय उत्पाद में निरंतर वृद्धि हुई है, लेकिन यह माओ त्सेतुंग की संकल्पना और स्वप्नों का समाजवादी चीन नहीं है।

संदर्भ और टिप्पणियां

1. कानरेड ब्रांट, इत्यादि, *ए डाक्युमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 261.
2. वही, पृ. 262.
3. वही, पृ. 263.
4. वही, पृ. 286.
5. स्टुअर्ट श्रैम, *माओ त्सेतुंग*, पृ. 228.
6. वही, पृ. 237-238.
7. कानरेड ब्रांट, इत्यादि, *ए डाक्युमेंटरी हिस्टरी आफ चाइनीज कम्युनिज्म*, पृ. 456.
8. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड IV, पृ. 417-19.
9. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि कम्युनिस्ट पार्टी आफ चाइना*, पृ. 399-400.
10. व्हीलराइट और मैकफार्लेन, *दि चाइनीज रोड टु सोशलिज्म*, पृ 30
11. वही, पृ. 34.
12. वही, पृ. 35.
13. वही, पृ. 37.
14. माओ त्सेतुंग, *आन दि एग्रीकल्चरल क्वेश्चन*, पृ. 19.
15. चाओ यांग, *कांशसली स्टडी माओ 'ज थ्योरी*, पेकिंग रिव्यू, 30.1.1970.
16. *सेलेक्टेड वर्क्स आफ माओ त्सेतुंग*, खंड V, पृ. 402.
17. वही, पृ. 394.
18. वही, पृ. 405.
19. मनोरंजन महंती, *माओ त्सेतुंग का राजनीतिक चिंतन*, पृ. 96-97.
20. *डाक्युमेंटस एंड कमेंटरी*, पृ. 77.
21. वही (1956-59), पृ. 87.

22. व्हीलराइट और मैकफार्लेन, *दि चाइनीज रोड टु सोशलिज्म*, पृ. 43-44.
23. वही, पृ. 78.
24. वही, पृ. 80.
25. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि चाइनीज कम्युनिस्ट पार्टी*, पृ. 532.
26. वही, पृ. 535-536.
27. डाली एल. यांग, *कैलेमिटी एंड रिफार्म इन चाइना*, पृ. 41.
28. ज्यां दौबिए, *ए हिस्टरी आफ दि चाइनीज कल्चरल रिवोल्यूशन*. पृ. 7.
29. वही, पृ. 9.
30. मनोरंजन महंती, *माओ त्सेतुंग का राजनीतिक चिंतन*, पृ. 83.
31. ज्यां दौबिए, *ए हिस्टरी आफ दि चाइनीज कल्चरल रिवोल्यूशन*. पृ. 11-12.
32. हू शेंग (संपा.), *ए कंसाइज हिस्टरी आफ दि चाइनीज कम्युनिस्ट पार्टी*, पृ. 627
33. वही, पृ. 628.
34. वही, पृ. 634.
35. वही, पृ. 642.
36. हान सूयिन, *चाइना इन दि ईयर 2001*, पृ. 193.
37. स्टुअर्ट श्रैम (संपा.) *माओ त्सेतुंग अनरिहर्स्ड* में उद्धृत, पृ. 299.
38. एडगर स्नो, *चाइना 'ज लौंग रिवोल्यूशन*, पृ. 29.
39. स्टुअर्ट श्रैम (संपा.), *माओ त्सेतुंग अनरिहर्स्ड*, पृ. 12.
40 वही, पृ. 13.
41. वही, पृ. 14.
42. वही, पृ. 15.
43. एडगर स्नो, *चाइना 'ज लौंग रिवोल्यूशन*, पृ. 169.
44. स्टुअर्ट श्रैम (संपा.), *माओ त्सेतुंग अनरिहर्स्ड*, पृ. 19.
45. वही, पृ. 20.
46. वही, पृ. 21.
47 वही, पृ. 23.
48. वही, पृ. 24.
49. वही, उद्धृत, पृ. 212-13.
50. वही, उद्धृत पृ. 341-42.
51 वही, पृ. 27.
52 वही, पृ. 28.
53. माओ त्सेतुंग, *सेलेक्टेड वर्क्स*, खंड IV, पृ. 361.
54. स्टुअर्ट श्रैम (संपा.), *माओ त्सेतुंग अनरिहर्स्ड*, पृ. 31.
55. वही, पृ. 31.
56. वही, पृ. 175.
57. वही, पृ. 92-93.
58. वही, पृ. 34.
59. वही, पृ. 85-86
60. वही, पृ. 210-14.
61. वही, पृ. 234-35.
62. वही, पृ. 282.

63. वही, पृ. 101.
64. वही, पृ. 45.
65. कल्पना मिश्र, *फ्राम पोस्ट–माओइज्म टु पोस्ट–मार्क्सिज्म*. पृ. 117–18.
66. वही, पृ. 120.
67. रिचर्ड क्रास, *क्लास कानफ्लिक्टस इन चाइनीज सोशलिज्म*. पृ. 280.
68. शियु मूछियाओ, *चाइना 'ज सोशलिस्ट इकानामी*. पृ. 280.
69. कल्पना मिश्र, *फ्राम पोस्ट–मोओइज्म टु पोस्ट–मार्क्सिजम*, पृ. 127–28.
70. वही, पृ. 130-31.

अनुक्रमणिका

आप इन्हें भी पढ़ें

ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड

बी-7, सुभाष चौक, लक्ष्मी नगर, दिल्ली 110092

फोन : 22019320